पडता है कि इस समय आयुर्वेदोद्धारके संबन्धमें जैसा निस्सार प्रयत्न हो रहा है उससे उसकी उपयोगिताका लेश भी लोगोंके ध्यानमें नहीं आ सकता, अतः सुचारुरूपसे सुदृढ़ प्रयत्न होनेकी अति शीघ्र आवश्यकता है। सर्व साधारणको स्वशरीर-रक्षोपयोगी वैद्यक संबन्धी ज्ञान प्राप्त करनेके साधन और स्त्रियोंको अपने गर्भ व बालकोंका पालन-पोषण एवं गार्हस्थ्य जीवनको उत्तम दशामें लानेके लिये आवश्यक ज्ञान प्राप्त करनेकी सुविधाओंका प्रबन्ध सबसे प्रथम होना चाहिये। अथवा वैद्यकसंस्था-आयुर्वैदिक पाठशालाओंको स्थापित कर उनमें विद्यार्थियोंको अनुभवके साथ पूर्ण शिक्षा देनेका नियमबद्ध प्रबन्ध हो, आयुर्वेदीय सब प्रकारकी औषधोंका देशमें सर्वत्र प्रचुर प्रचार होकर, राजा रंक सबको समान रूपसे सुलभ इसके लिये एक विशाल कार्यालय खोलकर उसमें उनके निर्माणका विराट् आयोजन करते हुए स्थान स्थानपर उक्त कार्यालयकी शाखायें इस ढंगसे खोली जायँ कि जिससे यत्र तत्र धार्मिक धनिकों, सभाओं और संयुक्त-वाणिज्य-समितियों (कंपनियों) की ओरसे जो अंग्रेजी डाक्टरोंकी अध्यक्षतामें औषधोंके दातव्य औषधालय खोले जाते हैं वे विद्वान् वैद्योंके तत्त्वावधानमें देशी औषधोंके खोले जायें कि जिनसे " यस्य देशस्य यो जन्तुस्तज्जं तस्यौषधं स्मृतम् " इस सिद्धान्तके अनुसार प्रकृति विरुद्ध और धर्मरुद्ध अभक्ष्य, भक्षण और अपेय-पानरूप तामसी विदेशी चिकित्साके क्षणिक और कृत्रिम स्वास्थ्यके दुष्परिणामसे देशी जनता सदाके लिये रोगी अंग्रेजी औषधोंका दास न बनकर सात्विक धर्मानुकूल देशी चिकित्सामें यथार्थ लाभ उठाते हुए सदाके लिये स्वस्थ बने और साथ ही देशका धार्मिक और आर्थिक लाभभी हो।

जैन धर्म कि जिसकी मूल भित्ति " अहिंसा परमो धर्मः " इस वचन पर ही है उसके अनेक अनुयायी और शौच, आचार तथा

अहिंसाको प्रधान माननेवाले वैदिक धर्मानुयायी अनेक वैष्णवादि भी मद्यमांसादिनिर्मित अंग्रेजी औषधोंका स्वयं निःसंकोच व्यवहार करते हुए अन्य दीन अनाथोंके लिये भी डाक्टरोंकी निरीक्षकतामें अंग्रेजी औषधोंके दातव्य औषधालय खोलकर धर्मके बदले अपरिमित अधर्मका संग्रह कर रहे हैं यह कितने शोक और लज्जाकी बात है यह कहनेकी आवश्यकता नही।

ऐसी अवस्थामें आयुर्वेदकी उन्नति आवश्यक है इसे कौन न मानेगा; क्योंकि सारी देशोन्नतिका मूलाधार यही है यह इस लेखसे भली भांति प्रमाणित हो चुका।

परमावश्यक आयुर्वेदका विकास होनेके लिये सर्व प्रथम सबसे अधिक आवश्यकता तत्सबन्धी ग्रंथोंके प्रचुर परिमाणमें प्रकाशित होनेकी है। उनमेंसे बहुतसे ग्रंथोंके प्रकाशित होजानेपर भी अभी अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थरत्न अप्रकाशित ही हैं।

नवीन शोध, कलाकौशल, वाणिज्य, व्यवसाय और विद्यामें सभी यूरोपीय राज्योंकी अपेक्षा जो अमेरिका आगे बढा हुआ है और जहांके विद्वानोंका मत आज सारे संसारमें सर्वमान्य हो रहा है, वहांके अग्रगण्य विद्वान् कहते हैं कि "भारतीय प्राचीन वैद्यक शास्त्रानुसार रोगियोंका उपचार किया जाय तो आधुनिक मरणसंख्यामें बहुत बडी घटती हो" इसी प्रकार इंग्लैंड और जर्मनीके विद्वान् भी भारतीय वैद्यकको बडे आदरकी दृष्टिसे देखते हैं। जब कि हमारे देशबन्धु विदेशी टिंक्चर, वाइन आदि औषधोंकी चमक दमकपर मुग्ध होकर भारतीय प्राचीन वैद्यक शास्त्रकी हँसी उडाते हुए अपनी अल्पबुद्धिका परिचय दे रहे हैं तब पाश्चात्य विद्वान् हमारे शास्त्रोंके अनुसार नवीन शोध और अनुभव प्राप्त करनेमें तल्लीन होरहे हैं यह कैसे शोककी बात है पर ध्यान रहे कि वर्तमान समयमें जो बिना पढे लिखे मूर्खव्यक्ति वैद्य बननेका ढोंग रचते हैं और जो ज्ञानलवदुर्विदग्ध पण्डितंमन्य

प्राचीन वैद्यक ग्रंथोंके अस्त व्यस्त भाषान्तर कर उन्हें, प्रकाशित करते हुए ग्रन्थकार तथा प्रकाशकका नाट्य दिखाते हैं वह वैद्यक नहीं किंतु वैद्यकाभास है। जिसकी विदेशी विद्वान् मुक्तकण्ठसे भूरि भूरि प्रशंसा करते हैं वह भारतीय पुरातन वैद्यक उन्हीं ऋषि, महर्षियों व आचार्योंके बनाये हुए महानिबन्ध हैं कि जिन विख्यातनामा श्रीवाग्भटाचार्यभी हैं। सुनाजाता है कि इन्होंने वैद्यकसंबन्धी चार पांच ग्रंथ रचे हैं किंतु उनमेंसे संप्रति "अष्टाङ्गहृदय" और "रसरत्नसमुच्चय" ये दो ही उपलब्ध हैं। शोक है कि सामग्री न मिलनेके, कारण इनके जीवन वृत्तान्तके सम्बन्धमें हम कुछ भी नहीं लिख सकते। हमारे कतिपय अदूरदर्शी भाई यह आशंका करते हैं कि "अष्टाङ्गहृदय" की कृतिके साथ "रसरत्नसमुच्चय" कृति मिलती नहीं और चरक, सुश्रुत, वाग्भटके समय रसविद्याका प्रचार ही न था इससे "रसरत्नसमुच्चय" श्रीवाग्भटाचार्यका बनाया नहीं है। उन्हें यह सोचना चाहिये कि जब स्वयं वाग्भटाचार्य ही आरंभमें "एतेषां क्रियतेऽन्येषां तन्त्राण्यालोक्य संग्रहः" इत्यादि वाक्यके द्वारा अपनेको रचयिता न कहकर संग्रहकर्ता लिख रहे हैं तब उनकी संग्रह की हुई अन्य आचार्योंकी कृतिके साथ उनकी कृतिका मिलान कैसे मिल सकता है। और, जब कि चरकादिकोंने रसायन प्रकरणोंमें कहीं कहीं धातु भस्म और रसोंका उपयोग किया है तथा "शिवसंहिता" के, कुछ स्फुट भाग व "नागार्जुनसंहिता" के कुछ स्फुट अध्याय इस समय भी मिलते हैं एवं सिंहलद्वीपस्थ एक संन्यासीको ताडपत्र लिखित "रावणसंहिता" भी मिली है तब यह कैसे कहा जा सकता है कि रसविद्या चरकादिकोंके समयमें न थी। क्योंकि "शिवसंहितादि" रसग्रन्थ चरकादिकोंसे भी अतिप्राचीन हैं। ऐसी अवस्थामें पूर्वापर अनुसंधान न कर कूपमण्डूक—न्यायसे निर्मूल आक्षेप करना कदापि उचित नहीं। अस्तु।

इस " रसरत्नसमुच्चय " ग्रन्थकी हस्तलिखित प्रतियां तो यत्र तत्र उपलब्ध थीं किन्तु यह अमूल्य ग्रन्थरत्न सुचारुरूपसे अद्यावधि कहीं भी छपा न था। हां, कुछ दिन पहले पूनेमें ' आनन्दाश्रमकी ओरसे इसका एक संस्करण ऐसा प्रकाशित हुआ था जो बहुत ही अस्तव्यस्त और अनेक विचित्र टिप्पणियों द्वारा विद्वानोंको भी भ्रमजनक हो रहा था; इससे इसकी शुद्धप्रति प्राप्त कर इसे सर्वोपयोगी शुद्ध रूपमें प्रकाशित करनेकी चिरकालसे उत्कट उत्कण्ठा लग रहीथी। क्योंकि हम अपने सदाके नियमानुसार अप्राप्य ग्रन्थरत्नोंको येनकेनाप्युपायेन प्राप्त कर उन्हें सुचारुरूपसे प्रकाशित करनेकी चेष्टामें सतत उद्यत रहते हैं। तदनुसार जामनगर निवासी आयुर्वेद शास्त्रके अप्रतिम अनुभवी विद्वान् प्रज्ञाचक्षु जगत्प्रसिद्ध वैद्यराज बावाभाई (विजयशंकर) अचलजीके प्रधान शिष्य रसप्रसाद–औषधालयाध्यक्ष वैद्य राज जीवराम कालिदासजीके द्वारा शुद्ध प्रति प्राप्त कर आवश्यक परिवर्त्तन, परिवर्द्धन और परिष्करणोंद्वारा सुपरिष्कृत तथा गुजराती भाषानुवादसे विभूषित कर सं० १९६५ में इसका प्रथम संस्करण हमने प्रकाशित किया जिसका गुर्जर जनताने बडा गौरव किया किन्तु हिन्दी जनता इसके हिन्दी भाषानुवादसे अलंकृत संस्करणके लिये चिरकालसे नितान्त लालायित हो रही थी। उसके सदनुरोधसे उसी अपने गुर्जरभाषाविभूषित प्रथम संस्करणके आधारपर " आयुर्वेदोद्धारक–औषधालय " के अध्यक्ष तथा "वैद्य" नामक मासिकके सम्पादक वैद्यराज शंकरलाल हरिशंकरजीके द्वारा शुद्ध और सरल हिन्दी भाषानुवाद बनवाकर उससे विभूषित मूलसहित " रसरत्नसमुच्चय " का यह द्वितीय संस्करण अनेक नवीन विशेषताओंसे विशेषित कर प्रकाशित किया है, विशेष क्या लिखें ? दृष्टिगोचर होनेपर इसकी उत्तमताका अनुभव आप स्वयमेव करेंगे।

यह ग्रन्थ पूर्व और उत्तर नामक दो खण्डोंमें विभक्त है। पूर्व खण्डमें ग्यारह और उत्तर खण्डमें उन्नीस अध्याय हैं। आरंभमें ग्रन्थकारने पारदकी उत्तमता बतलाकर अभ्रक, वैक्रान्त, सुवर्णमाक्षिक, रौप्यमाक्षिक, गन्धक, हरताल, मनसिल आदि अनेक रस, उपरस, माणिक, मोती, मूंगा, पन्ना, पुखराज, हीरा, नीलम आदि रत्न, सोना, रूपा, तांबा, सीसा, रांगा, लोहा आदि धातु, और विष उपविष आदि अनेक खनिज पदार्थोंकी उत्पत्ति लक्षण, शोधन, मारण, जारण आदिका वर्णन किया है। तदनन्तर गुरु शिष्यके लक्षण, शिष्यको दीक्षा देनेका क्रम, रसशाला, रसस्थापन, रससिद्धिके लिये संग्राह्य पदार्थ, रससिद्धिके निमित्त भिन्न २ जनोंके सहायकी आवश्यकता, परिभाषा, खरल, मूषा, पुट व कोठी आदि यन्त्र बनानेकी रीति, औषधग्रहणपरिभाषा तथा पारदके संस्कार, पारदबन्ध तथा भस्म आदि बनानेकी रीति बताकर पूर्वखण्डकी समाप्ति की गयी है।

ज्वरप्रकरणसे उत्तरखण्डका प्रारंभ हुआ है। प्रत्येक रोगका संक्षिप्त निदान लिखकर चिकित्साके प्रकरण लिखे गये हैं। कतिपय बडे बडे रोगोंके उपचारार्थ सारे अध्याय भरमें रसादिकोंका वर्णन किया गया है। ज्वरप्रकरणके अनन्तर रक्तपित्त, श्वास, खांसी, क्षय, हृदयरोग, मदात्यय, वमन, तृष्णा, अर्श, उदावर्त, अतिसार, संग्रहणी, अजीर्ण, विषूचिका (कालरा) मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, प्रमेह, विद्रधि, वृद्धि, गुल्म, शूल, उदररोग, पाण्डु, कुष्ठ, वातरोग, वातरक्त, वन्ध्यास्त्रीरोग, बालरोग, उन्माद, अपस्मार, नेत्र-कर्ण-नासा-मुख-मस्तकरोग, भगंदर, क्षुद्ररोग, गलगण्ड, उपदंश, विषविकार आदि समस्त रोगोंकी चिकित्सा पृथक् पृथक् प्रकरणोंमें वर्णित है। उपसंहारमें रसायनप्रकरण, वाजीकरणप्रकरण, धातुकल्प, विषकल्प और रसकल्पका वर्णन कर ग्रन्थ समाप्त किया गया है।

उपरि लिखित रोगोंपचार यद्यपि अधिकांशमें रसोंद्वारा ही लिखा गया है तथापि सर्व साधारणके लाभार्थ प्रत्येक रोगपर सामान्य वनौषधियोंके सुलभ प्रयोग भी लिखे गये हैं इससे यह संग्रहग्रन्थ होनेपर भी विद्वद्वर्ग इसकी ओर सचकित आदरकी दृष्टिसे देखते हैं।

इस ग्रन्थकी लिखित और मुद्रित प्रतियोंसे प्रयोग ढूंढ निकालनेमें साधारण और विद्वान् सभीको बडी असुविधा थी। पूनेवाली छपी पुस्तकपर विविध पाठभेदसूचक अनेक टिप्पणियां शुद्ध पाठ निश्चित करनेमें व्यामोह उत्पन्न करती थीं, इससे उन भ्रामक टिप्पणियोंको निकाल शुद्ध और उचित पाठ बना दिया है। कई प्रयोगोंमें नामोंके शीर्षक थे ही नहीं, जिनमें थे उनमें कहीं कुछ आगे,कहीं कुछ पीछे, इस प्रकार नितान्त अस्तव्यस्त थे अतः उन्हें भी यथास्थान और यथार्थ रूपमें लिख दिया है। दूसरी असुविधा अनेक स्थलोंपर यह थी कि कितने ही रोगोंकी चिकित्साका आरंभ हो जानेपर भी उनका नाम व निदान न होनेके कारण वाचकको यह निश्चय करना कठिन था कि यह चिकित्सा किस रोगकी है, अतः शीर्षकमें रोगका नाम और संक्षिप्त निदान लिखकर यह दोष भी दूर कर दिया है। सबसे बडी अव्यवस्था यह थी कि किसी रोगकी चिकित्सामें प्रथम एक दो रस, फिर चूर्ण, फिर रस, फिर सामान्य उपाय, फिर तैल या गोली. फिर रस लिखा हुआ होनेके कारण किसी रोगपर किसी रस आदि विशेष प्रकारकी औषध देखनेके लिये सारा अध्याय बांचे विना पता लगना बडा कठिन था। इस कारण उचित परिवर्तन कर नियमानुसार रसादि औषधोंकी क्रमबद्ध योजना की है। जैसे कि क्षयप्रकरणमें प्रथम समस्त क्षयारिरस. फिर गोली, चूर्ण, तैल और अंतमें वनौषधियोंके क्षयहर सामान्य उपाय लिखे गये हैं। इस प्रकार उत्तरोत्तर क्रमबद्ध योजना होजानेसे चाहे जिस रोगपर चाहे जिस प्रकारकी औषध

सहजमें देखी जा सकती है। धातु, विष और रसकल्पमें यही क्रम रखा है। इतना सब होनेपर भी समस्त ग्रन्थका एक भी श्लोक घटाया बढाया नहीं, किंतु सर्व साधारणकी सुगमताके लिये आवश्यक और उचित योजनामात्र की है। आरंभमें पृष्ठाङ्क सहित विषय सूची लगी रहनेके कारण इच्छित विषय तत्काल ढूंढा जा सकता है।

उपसंहारमें विद्वान् वैद्य महोदय तथा सहृदय सद्गृहस्थोंसे सविनय निवेदन यह है कि वे इस अनुभवसिद्ध ग्रंथका संग्रह कर इसके द्वारा इच्छित लाभ उठाके प्राचीन ऋषि, मुनि और श्रीवाग्भटाचार्यजीको धन्यवाद दें जिससे हम भी अपना श्रम सफल समझें।

निवेदयिता—
गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना,
कल्याण—मुम्बई.

अथ ।

रसरत्नसमुच्चयस्थ विषयानुक्रमणिका ।

पूर्वखण्डः ।

विषय.	पृष्ठ.
प्रथमोऽध्यायः ।	
ग्रन्थकारकृत मङ्गलाचरण	१
भाषाटीकाकारकृत मंगलाचरण	”
अथ गृहीतसाहाय्यग्रन्थकृन्नामादि	२
हिमालयका वर्णन....	३
महादेवकी स्तुति	५
पारदकी महिमा	६
मूर्च्छितादि पारदके गुण	८
देहको अजर अमर करनेकी आवश्यकता	९
संपूर्ण औषधियोंका पारेमें समावेश	१०
पारेसे ब्रह्मकी प्राप्ति	११
ब्रह्मप्राप्तिका आनन्द	१२
रसकी उत्पत्ति	१४
रसके भेद	१६
पाँचों पारदोंकी पृथक् २ निरुक्ति	१७
पारेमें स्थित कंचुकादि दोष	१८
द्वितीय अध्यायः ।	
अष्टौ महारसाः	२०
गन्धक पार्वतीका रज है और अभ्रक पार्वतीदेवीका वीर्य है (क्षेपक) अभ्रकके सामान्य गुण	२१
अभ्रकके भेद	२१
चारों अभ्रकोंका उपयोग	२२
अभ्रकके गुण दोष	२३
अभ्रककी शुद्धि तथा भस्म	२४
धान्याभ्रक विधि	२५
अन्य विधि	२६
अभ्रकका सत्त्वपातन	”
अभ्रककी द्रुति	२८
सत्त्वाभ्ररसायन	२९
अभ्रक भस्मकी अन्यविधि	३०
दिव्याभ्ररसायन	”
वैक्रान्तपरीक्षा	३२
वैक्रान्तके गुण	”
वैक्रान्तकी उत्पत्तिभेद	३३
वैक्रान्तका शोधन	३४
वैक्रान्तकी भस्मविधि	३५
वैक्रान्तका सत्त्वपातन	”
वैक्रान्त रसायन	३६
सुवर्णमाक्षिककी उत्पत्ति, लक्षण और गुण	३७
माक्षिक शोधन	३८
माक्षिक भस्मविधि	”
सुवर्णमाक्षिकका सत्त्वपातन	३९
सत्त्वकी दूसरी विधि	४०
सोनामाखीके सत्त्वकी परीक्षा....	”

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
सुवर्णमाक्षिक रसायन	४०	गंधकभेद	६०
माक्षिक द्रावण	४१	गंधकगुण	६१
विमलाभेद	”	गन्धकका माहात्म्य	६२
विमलाशुद्धि	४२	गंधकशुद्धि	”
विमलामारण और सत्त्वपातन	४३	गंधकद्रुति	६४
विमला रसायन	४४	गंधकप्रयोग	६५
शिलाजीतका वर्णन	४५	गन्धकका कण्डूनाशक प्रयोग	६६
शिलाजीतके गुण	४६	गंधकतैल	६७
शिलाजीतकी शुद्धि	”	गैरिक	६८
शिलाजीतकी मारणविधि	४७	कासीस रसायन	६९
शिलाजीत रसायन	”	फटकरी	७०
शिलाजीतका सत्त्वपातन	४८	हरताल	७२
कर्पूरगन्धि शिलाजीत	”	हरतालशुद्धि	”
सस्यक (नीलाथोथा) की- उत्पत्ति	४९	हरतालभस्मविधि	७३
नीलेथोथेका शोधन	५०	हरितालसत्त्वपातन	७४
नीलेथोथेकी भस्म	”	मनःशिला	७६
तुत्थसत्त्वपातन	”	अञ्जन	७८
तुत्थमुद्रिका (नीले थोथेकी अंगूठी)	५१	कंकुष्ठम्	८०
चपला धातुप्रकार और लक्षण	५२	अष्ट साधारण रस	८३
रसक--खपरिया	५४	कबीला	”
खर्पर शोधन	”	गौरीपाषाण	”
रसकसत्त्वपातन	५५	नवसादर	८४
अन्य प्रकार	५६	वराटिका	८५
खर्पर रसायन	५८	अग्निजार (अम्बर)	८६
तृतीयोऽध्यायः।		सिन्दूर	८७
अष्ट उपरस	”	हिंगुल	”
गंधकोत्पत्ति	५९	मुर्दारशृंग	८९
		राजावर्त	९०

विषय.	पृष्ठ.
चतुर्थोऽध्यायः ।	
रत्न	९१
माणिक्य	९३
विद्रुम	९५
तार्क्ष्य (पन्ना)	”
पुष्पराज	९६
वज्र हीरा	९७
वज्रशोधन	९९
वज्रभस्म	”
वज्ररसायन	१०१
नीलमणि (नीलम)	१०२
गोमेदमणि	१०३
वैडूर्यमणि	१०४
सर्वरत्नशुद्धि	”
सर्वरत्नोंकी भस्म करनेकी विधि	१०५
रत्नद्रुति	”
रत्नधारण करनेके गुण	१०८
पंचमोऽध्यायः ।	
धातु (लोह आदि)	”
सुवर्ण (सोना)	१०९
सुवर्णशोधन	११०
सुवर्ण भस्म	”
सुवर्ण द्रुति	११३
रूपा	११४
रौप्यशोधन	११५
रौप्य भस्म	११६
रौप्य रसायन	११८
रौप्यद्रुति	११८
ताम्र (तांबा)	”
ताम्रकी शुद्धि	१२०
ताम्रभस्म	१२१
सोमनाथी ताम्रभस्म	१२३
लोहम् (लोहा)	१२४
मुण्डलोह	”
तीक्ष्णलोह	१२५
कान्तलोहके भेद	१२७
कान्तलोहके लक्षण	१२९
कान्तलोहके गुण	”
सर्वलोहशुद्धि	१३०
सर्वलोहभस्मविधि	१३१
लोहभस्मके गुण	१३७
लोहद्रावण	१३९
अशुद्ध लोहके दोष	१४०
लोहोंकी परस्परमें गुणाधिकता मण्डूर	१४१
वंगका शोधन, भेद व लक्षण	”
वंगभस्म	१४३
वंग रसायन	१४४
नाग (सीसा)	१४५
सीसेकी शुद्धि	१४६
नागभस्म	”
नागरसायन	१४८
पीतलके भेद लक्षण, गुण	१४९
पीतलकी भस्मविधि	१५०
पित्तलरसायन	१५१

विषय.	पृष्ठ.
पीतलकी द्रुति	.... १५१
कांस्यवर्णन	.... १५२
कांसेका शोधन मारण	.... १५३
वर्त्तलोह (भरत)	.... १५४
रसोपरस और लोहोंके सरका-रकी विशेष आवश्यकता	१५५
भूनागसत्त्वपातनाविधि	.... १५६
भूनागसत्त्व	.... ”
भूनागसत्त्व मुद्रिका	.... १५८
तैलपातनाविधि	.... ”

षष्ठोऽध्यायः ।

विषय.	पृष्ठ.
शिष्यका वर्णन	.... १६१
रसायनाचार्य	.... ”
रसविद्याका अधिकारी शिष्य	१६२
सेवक-(सहायक)	.... ”
अयोग्य शिष्य	.... ”
रससाधनके स्थान, रसशाला और रसमण्डप	.... १६३
रसलिंगकी स्थापना आदि	१६४
शिष्यको दीक्षाविधि	.... १६७
देवतादिकी पूजनविधि	.... १६९
रससिद्धाचार्योंका पूजन, स्मरण आदि....	.... १७२
पारद (रस) की कैसे मनुष्यको सिद्धि होती है	१७४

सप्तमोऽध्यायः ।

विषय.	पृष्ठ.
रसशाला	.... १७५
रसमें साधनेयोग्यपदार्थ	.... १७६
रससाधक वैद्योंके लक्षण	.... १८०
परिचारक कैसे होने चाहिये	”
रसवैद्योंके विशेष गुण	.... ”
रससाधकोंकी विशेष योजना	१८१

अष्टमोऽध्यायः ।

विषय.	पृष्ठ.
परिभाषा	.... १८३
पारद संस्कार ।	.... १९५

नवमोऽध्यायः ।

विषय.	पृष्ठ.
यन्त्र	.... २०४
१ दोलायंत्र	.... ”
२ स्वेदनी यन्त्र	.... २०५
३ पातन यन्त्र	.... ”
४ अधःपातन यन्त्र	.... २०६
५ कच्छप यन्त्र	.... २०७
६ दीपिकायन्त्र	.... २०८
७ डेकीयन्त्र	.... ”
८ जारणायन्त्र	.... २०९
९ विद्याधर यन्त्र	.... २१०
१० सोमानल-यन्त्र	.... २११
११ गर्भयन्त्र	.... ”
१२ हंसपाकयन्त्र	.... २१२
१३ वालुकायन्त्र....	.... २१३
१४ लवणयन्त्र	.... २१४
१५ नालिकायन्त्र	.... ”
१६ भूधर यन्त्र	.... २१५
१७ पुटयन्त्र	.... ”
१८ कोष्ठीयन्त्र	.... ”
१९ वलभीयन्त्र	.... ”

विषय	पृष्ठ
२० तिर्यक्पातन यन्त्र	२१६
२१ पालिकायन्त्र	२१७
२२ घटयन्त्र ;	"
२३ यष्टिकायन्त्र....	"
२४ सिगरफसे पारा निकालनेके लिये विद्याधरयन्त्र....	२१८
२५ डमरुयन्त्र	२१९
२६ नाभियन्त्र	"
२७ ग्रस्तयन्त्र	२२१
२८ स्थालीयन्त्र	"
२९ धूपयन्त्र	२२२
३० कन्दुक यन्त्र	२२३
३१ खल्वयन्त्र	२२४
अर्द्धचन्द्राकार खरल	२२५
वर्तुल खरल	"
तप्तखल्व	२२६
दशमोऽध्यायः ।	
मूषा	२२७
मूषाको तैयार करनेके द्रव्य	"
मूषा बनानेके लिये कैसी मिट्टी लेनी चाहिये ।	२२८
१ वज्रमूषा	२२९
२ योगमूषा	"
३ वज्रद्रावणी मूषा	२३०
४ गारमूषा	"
५ वरमूषा	"
६ वर्णमूषा	२३१
७ रौप्यमूषा	"
८ बिडमूषा	२३२
९ दूसरी वज्रद्रावणी मूषा	२३२
१० वृन्ताकमूषा	२३३
११ गोस्तनी मूषा	"
१२ मल्लमूषा	२३४
१३ पक्वमूषा	"
१४ गोलमूषा	"
१५ महामूषा	२३५
१६ मंडूक मूषा	"
१७ मुसलाख्या मूषा	"
मूषा—आप्यायन....	२३६
कोष्ठी	"
१ अँगारकोष्ठी	"
२ पातालकोष्ठी	२३७
३ गारकोष्ठी	२३८
४ मूषाकोष्ठी	२३९
पुट	२४०
पुटकी आवश्यकता	"
पुटसे होनेवाले लाभ	"
१ महापुट	२४१
२ गजपुट	"
३ वाराह पुट	२४२
४ कुक्कुट पुट	"
५ कपोत पुट	"
६ गोबर पुट	२४३
७ भाण्डपुट	"
८ बालुकापुट	"
९ भूधरपुट	२४४
१० लावकपुट	"

विषय.	पृष्ठ.

विषय.	पृष्ठ.
औषधि ग्रहणकरनेकी परिभाषा	.... २४५
अष्टधातु	.... ”
पट्लवण	.... ”
क्षारत्रय	.... ”
क्षारपञ्चक	.... ”
मधुरत्रय	.... २४६
तैलवर्ग	.... ”
वसावर्ग	.... ”
मूत्रवर्ग	.... २४७
माहिष पञ्चक	.... ”
अम्लवर्ग	.... ”
अम्ल पञ्चक	.... २४८
पञ्चमृत्तिका	.... ”
विषवर्ग	.... ”
उपविषवर्ग	.... २४९
दुग्धवर्ग	.... ”
विड्वर्ग	.... ”
रक्तवर्ग	.... २५०
पीतवर्ग	.... ”
श्वेत वर्ग	.... ”
कृष्णवर्ग	.... ”
शोधनीय गण	.... २५२
मृदुकरवर्ग	.... ”
द्रावणवर्ग	.... २५२
परिमाण	.... ”

एकादशोऽध्यायः।

विषय.	पृष्ठ.
रसके शोधन, मारण आदि १८ संस्कारोंका वर्णन प्रथम मान परिभाषा	.... २५३
पारेके अष्टादश संस्कार	.... २५५
पारेके दोष	.... २५६
१ स्वेदन संस्कार	.... २५८
२ मर्दन संस्कार	.... ”
३ मूर्च्छन संस्कार	.... २५९
४ उत्थापनसंस्कार	.... ”
५ पातन संस्कार	.... २६०
ऊर्ध्वपातन	.... ”
अधःपातन	.... ”
तिर्यक् पातन	.... २६२
६ निरोध संस्कार	.... २६३
नियामन संस्कार	.... ”
दीपन संस्कार	... २६४
रसबंधन	.. २६६
जलूका बंध (स्त्रीद्रावण)	... २७५
पारेके भस्म करनेके विधि	. २८१
पारदका सेवनकरनेपर ... पथ्य	.... २८४
पारद सेवनकरनेपर अपथ्य	”
पारद जन्य विकारोंको शमन-करनेके उपाय .	.... २८६

अथ उत्तर खण्डः ।

द्वादशोऽध्यायः ।

विषय.	पृष्ठ.
ज्वर चिकित्सा, रोग गणना,	२८८
वातज्वरके लक्षण	.. २८९
पित्त ज्वरके लक्षण	.... ”

विपय.	पृष्ठ.
कफज्वरके लक्षण	.... २९०
मिश्रित दोपोंके लक्षण....	,,
त्रैलोक्य सुन्दररस अथवा पर्पटीरस	,,
त्रैलोक्य डम्बर रस	.... २९२
मेघनाद रस	.... ,,
ज्वरगजहरि रस अथवा-ज्वरगजकेसरी	.... ,,
दीपिका रस	.... २९३
शीतभंजी रस	.... २९४
दूसरा शीतभजी रस	.... २९५
मृत जीवन रस	.... २९६
शुद्ध ज्वरांकुश रस अथवा हिंगुलेश्वर	.... २९७
महाज्वरांकुश रस	.... ,,
मृत्युञ्जयरस	.... २९८
सर्वज्वरारि अथवा सर्व ज्वरान्तक रस	.... २९९
चन्द्र सूर्य अथवा चन्द्र सूर्योदय रस	.... ,,
उमाप्रसादन रस	.... ३०१
ज्वरांकुश रस	.... ३०२
सर्वांगसुन्दर चिन्तामणिरस	३०३
लोकनाथ गुटिका	.... ३०५
सूचिकाभरण अथवा मृत-संजीवनाख्य रस	.... ३०६
शार्ङ्गष्टादिक वर्ग	.... ३१०
सूचीमुख रस	.... ३१०

विषय.	पृष्ठ.
सन्निपातगजांकुश रस	.... ३११
चातुर्थिकहर रस	.... ३१२
चातुर्थिक गजांकुश रस	.... ,,
मृत्युञ्जय अथवा महारस	.... ३१३
पञ्चवक्त्र रस	.... ,,
उन्मत्त रस	.... ३१४
सन्निपाताञ्जन रस	.... ,,
प्रताप लकेश्वर रस	.... ३१५
प्राणेश्वर रस	.... ३१७
मृत सजीवन रस	.... ३१८
द्वितीय मृतसंजीवन रस	.... ३१९
सन्निपातकुठार रस	.... ३२०
नवज्वरारि रस वा पर्पटिका रस	.... ,,
जलमंजरी रस	.... ३२१
कान्त रस	.... ३२२
चन्द्रोदय रस	.... ३२३
जीर्णज्वरादि रस अथवा ज्वर विद्रावण रस	.... ३२४
नवज्वर मुरारि रस	.... ,,

त्रयोदशोऽध्यायः ।

विषय.	पृष्ठ.
रक्तपित्त रोग	.... ३२५
रक्तपित्तांकुशरस	.... ३२६
चन्द्रकला रस ...	.... ,,
सामान्य उपचार	.... ३२८
कासरोग (खाँसी)	.... ३३०
कासनाशन रस....	.... ,,

विषय.	पृष्ठ.
काशहर रस	.. ३३१
रत्न करण्ड रस....	.... ,,
भूतांकुश रस	.... ३३३
बोलवद्ध रस	.... ,,
अग्नि रस	... ३३४
स्वयमाग्नि रस	.... ३३५
साधारण उपाय....	.... ,,
श्वासरोग (दमा)	.... ३३६
सूर्यावर्त्त रस	.... ,,
श्वासान्तक रस	.... ३३७
श्वासहर वटक	.... ,,
सप्तामृता वटी	.. ३३८
नीलकण्ठ रस	... ३३९
श्वास कासकरिकेशरि रस ...	,,
सूर्य रस	.... ३४०
सामान्य उपचार	.... ३४१
हिक्कारोग (हिचकी)	.... ,,
हिक्कानाशन रस	.... ३४२
ताम्रभस्मका उपयोग	... ,,
शिलापूत रस	.... ,,
मथान भैरव रस	.... ३४३
श्वास कासघ्नी वटी	.... ३४४
सामान्य उपचार ...	.... ,,
स्वरभग रोग	.... ३४५
पर्पटी रस	.... ३४५
पथ्यापथ्य	.... ३४७

चतुर्दशोऽध्यायः ।

विषय.	पृष्ठ.
राजयक्ष्मा (क्षय) रोग	.... ३४९
कनकसुन्दर रस....	.. ३५०
गजमृकाङ्क रस	... ३५३
शखेश्वर रस ...	... ,,
मृगांक पोटली रस	... ३५४
हेमगर्भ पोटली रस	.... ३५५
पञ्चामृत रस	... ,,
क्षय साम्यक रस	.. ३५६
लोकनाथ रस	.... ३५७
वैद्यनाथ रस ...	. ३६०
द्वितीय लोकनाथ रस	३६१
प्राणनाथ रस	.. ३६२
वज्र रस	.. ३६३
महावीर रस	३६६
अरुचि रोग	.... ३६७
छर्दि (वमन) रोग	.... ,,
साधारण उपाय	... ३६८
हृदयरोग	३६९
तृष्णारोग ...	... ,,
तृष्णाहर रस ..	३७०
मदात्ययरोग	. ,,
राजावर्तरस	.. ३७२
भैरवनाथपिंचामृतपर्पटी	... ३७३

पञ्चदशोऽध्यायः ।

विषय.	पृष्ठ.
अर्शरोग	.... ३७८
अर्शःकुठाररस ...	. ,,
पित्तार्शोहर रस ...	. ३७९
सर्वलोकाश्रय रस	.... ३८०
अर्शोघ्नवटक	.... ३८१

विषय.	पृष्ठ
गुदज हर रस	.... ३८२
मूलकुठार रस	.... ३८३
महोदयप्रत्ययसार रस	.... ३८६
कनकसुन्दररस	.... ३८८
तीक्ष्णमुख रस ..	. . ३९०
द्वितीय तीक्ष्णमुख रस	.... ३९१
अर्शःकुठाररस	. .. ,,
त्रैलोक्यतिलकरस	.... ३९२
सामान्यउपाय	... ३९५
सामान्य प्रलेप	.... ३९६
षोडशोऽध्यायः ।	
उदावर्त्त रोग	.... ३९८
उदावर्त्त हर घृत	.... ,,
अतिसार (दस्तोंका होना) रोग	. .. ३९९
दर्दुर रस	.... ,,
आनन्दभैरव रस	... ४००
सुधासार रस	... ४०१
लोकेश्वर रस	.... ४०४
लोकनाथ रस	.... ४०५
नागसुन्दर रस	.... ,,
पर्णिनष्क तैल	.... ४०६
सग्रहणी रोग	.... ४०७
वज्रकपाट रस	... ,,
अग्नि कुमार रस....	... ४०८
कनक सुन्दर रस	.... ,,
ग्रहणी हर रस....	... ४०९
चण्ड सग्रह गैदृक कपाट रस	.... ,,
लघु सिद्धाभ्रक रस	.... ४१०
सर्वारोग्य रस अथवा सर्वारोग्यवटी	.... ४११
ग्रहणी गज केसरीरस	.... ४१३
शीघ्र प्रभावरस	. . . ४१६
पोटली रस	.... ४१७
वह्निज्वाला वटी रस	.... ,,
वज्रधर रस	.... ४१८
ग्रहणी कपाट रस	.... ४१९
सौवर्चलादि चूर्ण	.. ४२०
ग्रहणीहर-मुरतादि चूर्ण	.... ,,
सामान्य उपाय	.... ४२१
अजीर्ण रोग	.. ४२२
अजीर्ण कटक रस	.... ,,
विध्वस रस	.... ४२३
विषूचिका विजय रस	.... ,,
अग्नि कुमार रस	.... ४२४
वडवाग्नि रस	.... ,,
वैश्वानर पोटली रस	.... ४२५
वडवा मुखी गुटी	.... ४२८
क्रव्याद रस	.... ,,
राज शेखर वटी	.... ४३१
अग्नि कुमार रस....	.... ,,
अमृत वटी	.... ४३२
राक्षस नामा रस	.... ४३३
जीवन नामा रस	.... ४३४
वडवानल रस	.... ४३५
अग्निजननी वटी	.... ,,

विषय.	पृष्ठ.
सर्व रोगान्तक वटी	... ४३५
सामान्य उपाय	.... ४३६
सप्तदशोऽध्यायः ।	
मूत्रकृच्छ्र रोग	... ४३७
लघुलोकेश्वर रस	.... ,,
सामान्य उपचार	.... ४३८
अश्मरी (पथरी)	.... ४४०
पाषाणभेदी रस	.... ,,
द्वितीय पाषाण भेदी रस	.... ४४१
त्रिविक्रमरस	.... ४४२
आनन्द भैरवी वटी	.... ,,
सामान्य उपाय....	.... ४४३
प्रमेह रोग	... ,,
चन्द्रप्रभा वटी	.... ४४४
प्रमेहगजसिंह रस	.... ४४५
महाविद्या गुटी	.... ,,
मेहध्वान्त विवस्वान् रस	... ४४६
उमाशम्भु रस	.... ४४७
रसेन्द्र नाग रस....	.... ४५०
मेह शत्रु रस	.... ४५१
कासीस बद्ध रस	.... ,,
भीम पराक्रम रस	... ४५२
संजीवन रस	.... ४५४
मेह मर्दन रस	. ४५५
राम बाण रस	.... ४५६
राजमृगांक रस	.. ४५७
मेहहर रस	.... ४५९
उदय भास्कर रस	.... ४६१
हिमांशु रस	.... ४६२
वसन्त कुसुमाकर रस	.... ४६४
सर्वमेहान्तक रस	.... ४६५
मेहारि रस	.... ,,
मेह बद्ध रस	.... ४६७
हरि शंकर रस	.... ,,
सामान्य उपचार	.... ४६८
अष्टादशोऽध्यायः ।	
विद्रधिरोग	.... ४७१
सर्वेश्वर पर्पटी रस	.... ,,
शंख मण्डूर रस	.... ४७४
सामान्य उपचार	.... ४७६
वृद्धि अथवा अन्त्रवृद्धिरोग	४७७
वातारि रस	.. ,,
सामान्य उपचार	.... ४७८
गुल्मरोग	.... ,,
गन्धकादिपोटली रस	.. ४८०
बंगेश्वर रस	... ४८२
शिखिवाडव रस	... ४८३
दीप्तामर रस	... ,,
विद्याधर रस	.... ४८४
रक्तोदर कुठार रस	... ४८५
वैश्वानर रस	.... ,,
अग्निकुमार रस	.... ४८६
सर्वांगसुन्दर रस	.... ४८७
गुल्मनाशन रस	... ४९०
सामान्यउपचार	.... ४९१
शूलरोग	.... ४९३
अग्निमुखरस	.... ,,
त्रिनेत्र रस	.... ४९४

विषय.	पृष्ठ.
चिन्तामणी रस	५९५
शूलकेशरी रस	५९६
मृतोत्थापन रस	५९७
क्षार ताम्र रस	५९८
शूलान्तक रस ..	५९९
अग्निमुख रस	६००
त्रिनेत्र रस ...	६०१
उदय भास्कार रस	६०२
शूल गज केसरी रस	६०४
क्षार ताम्र ...	६०५
ताम्राष्टक .	,,
वडवानल गुटिका	,,
अग्निकुमार रस ..	६०७
शूल हर क्षार	६०८
क्षार वटी	६०९
सामान्य उपाय	६१०
कार्श्यरोग (दुर्बलता) ..	,,
अमृतार्णव रस	,,
पूर्णचन्द्र रस	६११
स्थौल्यरोग(मेदकावढना) ..	६१२
वडवाग्निमुख रस....	,,
अग्निकुमार रस	६१३
अम्लपित्तरोग	६१७
लीलाविलासरस....	,,
ताम्रद्युति रस	६१८
कूष्माण्ड खण्ड लेह	६२०
सामान्य उपाय....	,,
पित्तरोग	२२१
पित्तान्तक रस	,,
दश सार चूर्ण	६२१

विषय.	पृष्ठ.
एकोनविंशोऽध्यायः ।	
उदर रोग—उदरघ्न रस .	६२३
विनोद विद्याधर रस	६२४
सुरेचनक रस	,,
मृत्युञ्जय रस	६२५
त्रैलोक्य सुन्दर रस	६२७
महा वह्नि रस	६२८
वैश्वानर रस	६२९
उदय मार्त्तण्ड रस	,,
सूर्यप्रभा गुटिका	६३०
वज्रक्षार	६३१
सामान्य उपाय	६३२
पाण्डु रोग हसमण्डूर	६३३
कालविध्वस रस	६३४
पञ्चानन रस	६३६
आरोग्य सागर रस	६३८
पाण्डुपङ्क शोषण रस	६४०
पित्त पाण्डारि रस	६४१
त्रैलोक्य सुन्दर रस	,,
जयपाल रस ...	६४२
पाण्डुहारी हरीतकी	६४३
विजयावाटिका	६४४
कामला रोग	६४५
कामला प्रणुद्रस । त्रियोान रस	६४६
कामेश्वर रस	६४७
सिन्दूर भूपण रस	६४८
सुधा पञ्चक रस	६४९
मुस्तादि चूर्ण । सामान्य उपाय	६५०

विषय.	पृष्ठ
विंशोऽध्यायः ।	

विषय.	पृष्ठ
विसर्प रोग विसर्पजिद्रस	... ९५०
विसर्पनाशन तैल	.... ९५१
विसर्पहर तैल	.... ,,
कुष्ठरोग (कोढ)	... ९५२
वातकुष्ठहर रस	.... ९५३
पित्तकुष्ठहर रस	.... ,,
कफकुष्ठहर रस	.... ९५४
सन्निपात कुष्ठहर रस	.... ,,
विजय रस (गुटिका)	... ९५५
सर्वेश्वर रस	.... ९५६
सप्तकुष्ठारिरस प्रतापलकेश्वर	९५७
कुष्ठ नाशन रस	.... ९५८
कुष्ठजित् व कृष्णमाणिक्य रस	,,
तालेश्वर रस	.... ९५९
महातालेश्वर रस	.... ९६०
कनक सुन्दर रस	.... ९६१
हरिबोलांकुश रस	.... ९६२
त्रिपुरान्तक रस	.... ९६३
विश्वहित रस	.... ९६४
दश सार सूत रस	.... ९६५
कुष्ठकुठार रस	.... ,,
वज्रशेखर रस	... ९६६
दद्रुकुष्ट विद्रावण रस	... ९६८
माणिक्य तिलक रस	.... ९६९
परहित रस	.... ९७०
तालकेश्वर रस	.... ९७१
खगेश्वर रस	.... ९७४
कुष्ठ नाशन रस	.... ९७५
आरोग्य वर्द्धिनी गुटिका	.... ९७६
नारायण रस	.... ९७७
मेदिनीसार रस	.... ९७८
जन्तुघ्नी गुटिका रस	... ९८०
धन्वन्तरि रस	.... ९८१
वज्रधार रस	.... ९८२
महातालेश्वर रस	.... ,,
कुष्ठ कुठार रस	.... ९८३
स्वर्णक्षीर रस	.... ९८५
त्रैलोक्य विजय रस	.... ,,
द्वितीयत्रैलोक्यविजयरस	.... ९८६
कुष्ठान्त पर्पटी रस	.... ,,
कासीस बद्ध रस	.... ९८७
सर्वेश्वर रस	.... ९८८
श्वित्रारि रस	.... ९८९
चन्द्रप्रभावटिका रस	.... ९९०
किलास नाशन रस	.... ९९१
उदयादित्य रस	.... ,,
श्वित्रान्तक रस	.... ९९३
श्वित्रकुष्ठारि रस	.... ९९६
स्नुह्यादि तैल	.... ,,
आरग्वधादि तैल	.... ९९७
गन्ध पिष्टी तैल	.... ,,
सर्वकुष्ठान्तकृत्तैल	.... ,,
कुष्ठविद्रावण तैल	.... ९९८
वज्र तैल, महाभल्लात तैल	.... ९९९

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
महा मार्त्तण्ड तैल	.... ६००	सामान्य उपाय	.... ६२३
श्वित्रारि तैल	.... ६०१	आमवात रोग	.... ६२४
कुष्ठारि तैल	.... ,,	सामान्य उपाय	.... ,,
कुष्ठामयघ्न गण....	.... ६०२	अपस्माररोग	.... ६२५
महानिम्बादिचूर्ण	... ,,	सामान्य उपाय	.... ,,
सर्व कुष्ठांकुश चूर्ण	.... ६०३	उन्माद रोग, माहेश्वर धूप....	६२७
श्वित्र नाशन चूर्ण	. ,,	सामान्य उपाय	.... ६२८
श्वेत कुष्ठ हर चूर्ण	... ,,	एकाङ्ग वातरोग	.... ,,
कुष्ठमें सामान्य उपाय	.... ६०४	वडवानल रस	.... ६२९
प्रलेपादि	.... ,,	मार्त्तण्डेश्वर रस	.... ६३०
कृमिरोग, अग्नितुण्ड रस	.... ६०८	चतुःसुधारस	.... ६३२
कीटमर्द रस, कृमिघ्न रस	.... ६१०	सर्व वातारि रस	.... ६३५
कृमिहर रस	.... ६११	वात विध्वसनरस	.... ६३६
सामान्य उपचार	.... ,,	वृकोदरी वटी (रस)	.... ६३९
एकविंशोऽध्यायः ।		प्रभावती वटी (रस)	.... ६४०
आठ महारोग, शीतवान	.... ६१२	स्वच्छन्दभैरव रस	.... ,,
वातारि रस	.... ,,	अन्य स्वच्छन्द भैरव रस	.... ६४१
शीतारि रस	.... ६१३	वडवानल रस	.... ६४२
स्पर्श वात, सर्वेश्वर रस	... ६१४	त्र्यम्बकेश्वर रस	.... ६४३
अर्केश्वर रस	.... ६१५	गगन गर्भावटी (रस)	.... ,,
स्पर्श वातघ्न रस	.... ६१६	वात गजांकुश रस	.... ६४४
गन्धाश्म गर्भ रस	.... ६१७	शतावरी गुग्गुलु	.... ,,
द्वितीय गन्धाश्मगर्भ रस	.... ६१८	योगराज गुग्गुलु....	.... ६४५
स्पर्श वातारि रस	.... ६१९	द्वितयि योगराज गुग्गुलु	.... ६४७
स्पर्श वतान्नकुट्टी	.... ,,	षडङ्गो गुग्गुलु	.... ६४८
स्पर्श वातारि तैल	.... ६२०	विजय भैरव तैल....	.... ,,
सामान्य उपाय	.... ६२१	सूततैल	.... ६४९
रक्तवात रोग	.... ६२३	द्वितीय विजय भैरव तैल	.... ६५०
		आनन्दभैरव घृत	.... ,,

विषय.	पृष्ठ.
सामान्य उपाय	.... ६५१
वात रक्त, चन्द्रावलेह	.... ६५३
अमृत प्राश चूर्ण	.... ६५४
ऐलेयक तैल	.... ६५६
ऐलेय सर्पि	.... ६५७
सामान्य उपाय	.... ६५८
विंशोऽध्यायः।	
वन्ध्या चिकित्सा	.... ६५८
जयसुन्दर रस	.... ६६०
रत्न भागोत्तर रस	.... ६६२
चक्रिका बन्ध रस	.... ६६४
वर्द्धमान रस	.... ६६५
द्युतिसार रस	.... ६६९
सामान्य उपाय	.... ६७१
शिवोक्त तान्त्रिक प्रयोग	.... ६७४
गर्भिणीके रोग	.... ६७७
गर्भिणीके रोग दूर करने और गर्भको पोषण करनेके सामान्य उपाय	.... ६७७
मूढ गर्भ रोग	.... ६८३
गर्भको प्रसव करानेके सामान्य उपाय	.... ६८४
सूतिका रोग नाशक पपटा रस	६८५
सूतिकारोग नाशन रस	.... ६८६
सौभाग्य सुण्ठी (सूतिकामृत)	,,
योनि संकोचन और स्तन दृढी करणके सामान्य उपाय	....६८७
वालरोग माहेश्वर धूप	.... ६८९
विजय धूप	.... ६९०
ग्रह नाशिनी गुटिका	.. ६९०
सामान्य उपाय	.... ६९१
त्रयोविंशोऽध्यायः।	
उन्माद रोग	.... ६९९
ग्रहघ्नधूप, सामान्य उपाय	.... ७००
अपस्मार (मृगी)	.... ७०१
अपस्मार नाशन रस	.... ७०२
प्रत्ययमूत रस, सर्वेश्वर रस.	७०३
सामान्य उपाय	.... ७०४
नेत्रामय, ताम्रद्रुति	.... ७०७
पुनःताम्रद्रुति (अंजन)	.... ७०९
गंधक द्रुति	.... ७१०
गरुडाञ्जन	.... ७१२
तिमिर हराञ्जन	.... ,,
पटल हराञ्जन, रक्ताञ्जन	.... ७१३
शुक्रारि वर्त्ति	.... ७१४
नक्तान्ध्य हरी वर्त्ति	.... ,,
नवनेत्रदात्री वर्त्ति	.... ,,
नयनरोग हरी वर्त्ति	.... ७१५
शिग्रु तैल	.... ७१६
नेत्र रोगके सामान्य उपाय	,,
चतुर्विंशोऽध्यायः।	
कर्ण रोग	.... ७२३
कर्ण रोगहर रस	.... ७२४
कर्णामयघ्न तैल	.... ,,
कृमि कर्णारि तैल	.... ७२५
सामान्य उपाय	.... ,,
नासागत रोग	.... ७२७
माणि पर्पटी रस	.... ७२८

विषय	पृष्ठ
सामान्य उपाय	.... ७२९
मुखरोग	.... ७३०
मुखरोगारि रस, रस वटी	,,
महा सरस्वती चूर्ण	.... ७३१
मस्तक रोग	.... ७३८
शिरोरोगारि रस	.... ७३९
शिरो रोगके सामान्य उपाय	,,
व्रण रोग, जात्यादि घृत	.... ७४३
सामान्य उपाय	.... ७४४
भङ्ग रोग	.... ७४५
सामान्य उपाय	.... ,,
भगन्दर रोग, रविताण्डव रस.	७४६
सामान्य उपाय	.... ७४७
ग्रन्थिरोग, सामान्य उपाय.	७४९
अर्बुद (रसौली) के भेद	७५१
अर्बुद हर रस	.... ७५२
गण्ड० सामान्य उपाय	.... ,,
गण्डमाला और अपची रोग.	७५३
सामान्य उपाय	.... ,,
श्लीपदरोग (पीलपाया) का सामान्य लेप	.... ७५४

पंचविंशोऽध्यायः ।

विषय	पृष्ठ
क्षुद्ररोग	.... ७५५
क्षुद्ररोगोंके सामान्य उपाय	,,
उपदंश नाशक धूप	.... ७६१
क्षुद्ररोगोंक सामान्य उपाय....	७६२
श्लीपद हर रस	.... ७६६
श्लीपद हर लेप	.... ,,
वल्मीक रोग प्रति मेप रस	७६७
क्षुद्ररोगोंके सामान्य उपाय....	७६८
मञ्जिष्ठादि घृत	.... ७७३
क्षुद्ररोगोंके सामान्य उपचार.	,,
पुष्यानुग चूर्ण	.... ७७५
स्थावर और जगम विषका उपाय	.... ७७६
तार्क्ष्य सूत रस	.... ७७९

षड्विंशोऽध्यायः ।

विषय	पृष्ठ
रसायन और उसके गुण....	७८०
उदयादित्य रस	.... ७८१
कमला विलास रस	.... ७९४
लक्ष्मी विलास रस	.... ७९५
सोश्रुत्तनारिकेल	.... ७९६

सप्तविंशोऽध्यायः ।

विषय	पृष्ठ
वाजीकरणम्	.... ७९७
वाजीकरणके गुण	.... ,,
वाजीकरण शशांकरस	.... ७९८
कामदेव रस	.... ७९९
मदन सुन्दर रस	.... ८००
पूर्णचन्द्र रस	.... ,,
मदन सुन्मद्रस	.... ८०१
कुसुमायुध रस	.... ८०२
सूतेन्द्र रस	.... ८०३
मदनकामदेव रस	.... ८०५
कामधेनु रस	.... ८०७
उमापति रस	.... ८०९
महाकनकसुन्दर रस	.... ८११
अमृतार्णव रस	.... ८१३
मदनसंजीवन रस	.... ८१५

विषय.	पृष्ठ
पुष्पधन्वा रस	.... ८१७
रसेन्द्रचूडामणि	.. ८१८
पूर्णचन्द्र रस	... ८२०
महाकल्क (दिव्यामृतरस)	. ८२१
मदन मोदक	.... ८२५
कामेश्वर मोदक	.... ८२६
वाजीकरणमें सामान्य उपाय	८२८
लिङ्गलेप–द्रावण	.... ८३१

अष्टाविंशोऽध्यायः।

विषय.	पृष्ठ
लोह कल्प	.... ८३२
सप्तधातु शोधन भस्म	.... ,,
मृत्यु हारीरस	.... ७३७
कान्तलोह रसायन	.... ८३९
लोह रसायन बनानेकी क्रिया	८४३
दन्त्यादिगण। ताम्र द्रुति	.... ८४७
खण्डखाद्य रसायन	.... ८४९
प्रत्येक धातुकी भस्मके पृथक् २ सामान्य प्रयोग	....८५०

एकोनत्रिंशोऽध्यायः।

विषय.	पृष्ठ
विषकल्प	.... ८६०
विषोत्पत्तिस्तद्भेदश्च	.... ,,
विष विद्रावण घृत	.... ८६५
श्वित्रारि तैल	.... ,,
सूर्यप्रभा वर्त्ति	.... ८६६
विषादि गुटिका जया गुटी	.... ८६७
द्वितीया जया गुटी	.... ८६८
तृतीया जया गुटी	.... ,,
विषकल्प	.... ८६८
विषके अन्यसामान्य प्रयोग	.... ८७२
विषमें पथ्यापथ्य आदि विचारोंका वर्णन	.... ८८२
विषपर पथ्य	.... ८९२

त्रिंशोऽध्यायः।

विषय	पृष्ठ.
रस कल्प	.... ८९४
पारद भस्म विधि	.... ,,
पारेका जारण	.... ८९७
पारेको जारण करनेकी दूसरी विधि	.... ९००
वज्र पञ्जर रस	.... ,,
पञ्चामृत रस	.... ९०२
मृतसंजीवनी वटी	.... ,,
महानील तेल	.... ९०४
पारेकी भस्मके सामान्य प्रयोग	.... ,,
पारेकी भस्मके अन्य सामान्य प्रयोग	.... ९१२
पारेकी भस्म सेवन करनेपर पथ्य	.... ९१९
पारा सेवन करनेपर अपथ्य	.... ९२०
पारेके विकारोंकी शान्ति	.... ,,
ग्रन्थका उपसंहार	.... ९२१
विद्वान् वैद्यका कर्त्तव्य	.... ९२६
ग्रन्थकर्त्ताकी विज्ञप्ति	.... ९२८

इति रसरत्नसमुच्चयस्थविषयानुक्रमणिका समाप्ता।

॥ श्रीः ॥

श्रीवाग्भटाचार्यकृत-

रसरत्नसमुच्चयः ।

भाषाटीकोपेतः ।

पूर्वखण्डस्य प्रथमोऽध्यायः ।

ग्रन्थकारकृत मङ्गलाचरण ।

यस्यानन्दभवेन मङ्गलकलासम्भावितेन स्फुर-
द्धाम्ना सिद्धरसामृतेन करुणावीक्षासुधासिन्धुना ।
भक्तानां प्रभवप्रसंहृतिजरारागादिरोगाः क्षणा-
च्छांतिं यांति जगत्प्रधानभिषजे तस्मै परस्मै नमः १॥

भाषाटीकाकारकृत मंगलाचरण ।

ध्यात्वा जिनेश्वरं देवं भवरोगनिषूदनम् ।
भाषाटीकान्वितं कुर्वे रसरत्नसमुच्चयम् ॥ १ ॥
सच्चिन्तोपचयं जितेन्द्रियचयं सँस्तौति लोकश्च यं
यो लोकेऽसहयोगयोगलतयाऽरीणां मनोऽचालयत् ॥
योऽयं विश्वजनीनवृत्तिरनघोऽहिंसाव्रते तत्परः
सोऽयं गान्धिरुदारधीर्विजयतां मान्यो महात्मा कलौ २॥

शिव और पार्वतीके सम्भोगरूपी आनन्दसे उत्पन्न हुआ मङ्गलमय (कल्याणकारिणी) कलाओंसे युक्त, जिसका तेज अत्यन्त देदीप्यमान है, एवं सिद्ध रसेन्द्ररूपी अमृतसे परिपूर्ण, कृपादृष्टिरूप

सुधाके समुद्रके समान, समस्त जगत्को प्रकाशित करनेवाला ऐसा जो शिवका तेज है, उसको यथाविधि सेवन करनेवाले भक्तजनोंके जन्म, मृत्यु, जरा और राग द्वेषादि समस्त भवरोग क्षणभरमें नाशको प्राप्त होते हैं ऐसे जगत्के प्रधान वैद्यस्वरूप पारदको नमस्कार है ॥ १॥

अत्र गृहीतसाहाय्यग्रन्थकृन्नामादि ।

आदिमश्चन्द्रसेनश्च लंकेशश्च विशारदः ।
कपाली मत्तमाण्डव्यौ भास्करः[१] शूरसेनकः ॥ २ ॥
रत्नकोषश्च[२] शंभुश्च सात्त्विको नरवाहनः ।
इन्द्रदो गोमुखश्चैव कम्बलिर्व्याडिरेव[३] च ॥ ३ ॥
नागार्जुनः सुरानन्दो नागबोधी यशोधनः ।
खण्डः कापालिको ब्रह्मा गोविन्दो लम्पको[४] हरिः
सप्तविंशतिसंख्याका रससिद्धिप्रदायकाः ॥ ४ ॥

इस ग्रन्थमें ग्रन्थकारने जिन प्राचीन ग्रन्थकारोंसे सहायता ली है, उनके नामादिका वर्णन इस प्रकार है, आदिम (इस शब्दका कोई शङ्कर, कोई आद्य ग्रन्थकार और कोई इसी नामके आचार्यविशेष ऐसा अर्थ करते हैं), चन्द्रसेन, लङ्केश (रावण), विशारद, कपाली, मत्त, माण्डव्य, भास्कर, शूरसेन, रत्नकोष, शम्भु सात्त्विक, नरवाहन, इन्द्रद, गोमुख, कम्बलि, व्याडि, नागार्जुन, सुरानन्द, नागबोधी, यशोधन, खण्ड, कापालिक, ब्रह्मा, गोविन्द, लम्पक और हरि ये सत्ताईस आचार्य रससिद्धि प्रदान करनेवाले हैं ॥ २-४॥

रसांकुशो भैरवश्च नन्दी स्वच्छन्दभैरवः ॥ ५ ॥
मन्थानभैरवश्चैव काकचण्डीश्वरस्तथा ।
वासुदेव ऋषि:शृङ्गः[५] क्रियातन्त्रसमुच्चयी ॥ ६ ॥

---

१ भासुर इति । २ रत्नघोप इति । ३ काम्बलिः तथा कपिल इति । ४ लम्वकः तथा लाम्पट इति । ५ ऋष्यशृंग इति सर्वत्र पाठभेदः ।

रसेन्द्रतिलको योगी भालुकी मैथिलाह्वयः ।
महादेवो नरेन्द्रश्च वासुदेवो हरीश्वरः ॥ ७ ॥
एतेषां क्रियतेऽन्येषां तन्त्राण्यालोक्य संग्रहः ।
रसानामथ सिद्धानां चिकित्सार्थोपयोगिनाम् ॥ ८ ॥
सूनुना सिंहगुप्तस्य रसरत्नसमुच्चयः ।
रसोपरसलोहानां यन्त्रादिकरणानि च ॥ ९ ॥
शुद्ध्यर्थमपि लोहानां तन्त्रादिकरणानि च ।
शुद्धिः सत्त्वं द्रुतिभस्मकरणं च प्रवक्ष्यते ॥ १० ॥

रसाङ्कुश, भैरव, नन्दी, स्वच्छन्दभैरव, मन्थानभैरव, काकचण्डीश्वर, वासुदेव, रसक्रियाके सिद्धान्तोंका संग्रह करनेवाले ऋषिशृंग, रसेन्द्रतिलक, योगी, भालुकी, मैथिल, महादेव, नरेन्द्र, वासुदेव और हरीश्वर इनके तथा अन्यान्य आचार्योंके शास्त्रोंको अवलोकन करके, सिंहगुप्तका पुत्र मैं (वाग्भट) चिकित्सा करनेके लिये परमोपयोगी सिद्धरसोंका संग्रह है जिसमें ऐसे इस रसरत्नसमुच्चय नामक ग्रंथको निर्माण करता हूँ। इसमें रस, उपरस, स्वर्ण-लोहादि धातुओंकी शुद्धि, सत्त्वपातन, द्रुतिकरण और भस्मकरण आदिकी विधि एवं इन क्रियाओं के साधनभूत दोला मूषादि यंत्र और लोहादि धातुओंकी शुद्धिके लिए भिन्न भिन्न प्रकारकी क्रियायें और प्रयोग कहे जाते हैं ॥ ७-१० ॥

हिमालयका वर्णन ।

अस्ति नीहारनिलयो महानुत्तरादिङ्मुखे ।
उत्तुङ्गशृङ्गसंघातलङ्घिताभ्रो महीधरः ॥ ११ ॥
विश्रामाय वियन्मार्गविलङ्घनघनश्रमः ।
अवतीर्ण इव क्षोणीं शरदम्बुमुचां गणः ॥ १२ ॥

१ रत्नाकरहरीश्वरावीति पाठभेदः ।

राशिराशीविषाधीशफणाफलकरोचिषाम् ।
भित्त्वा भुवमिवोत्तीर्णो यो विभाति भृशोन्नतः ॥ १३ ॥
ज्वलदौषधयो यस्य नितम्बमणिभूमयः ।
नक्तमुद्दामतडितामनुकुर्वन्ति वार्मुचाम् ॥ १४ ॥
कटके सञ्चरन्तीनां यस्य किन्नरयोषिताम् ।
पादेषु धातुरागेण लाक्षाकृत्यमनुष्ठितम् ॥ १५ ॥
अवतंसितशीतांशुराच्छादितदिगम्बरः ।
यो गुहाधिगतो लोकैर्गिरीश इति गीयते ॥ १६ ॥

उत्तर दिशामें बडे बडे ऊँचे शिखरोंके समूहसे मेघोंको उल्लंघन करनेवाला और हिम (बरफ) का स्थान होनेसे हिमालय नामवाला बहुत बडा पर्वत है वह ऐसा मालूम होता है मानो–आकाशमार्गमें निरन्तर भ्रमण करनेसे कठिन श्रम (थकावट) को प्राप्त हुआ शरद् ऋतुके मेघोंका समूह विश्राम करनेके लिये पृथ्वी पर उतर आया है और मानो नागराज शेषजीके फणोंकी मणियोंकी कान्तिका बडा ऊँचा ढेर पृथ्वीको विदीर्ण (फोड) कर बाहर निकल आया है और जो अत्यन्त उन्नत होनेसे विशेष शोभायमान हो रहा है। जिसके नितम्बरूप अनेक स्थानोंमें मणिविभूषित भूमियाँ और अपने तेजसे दीपकके समान प्रज्वलित होती हुई औषधियाँ रात्रिके समय मेघमण्डलमें चमकती हुई बिजलीका अनुकरण (नकल) करती हुईसी मालूम होती हैं। जिस हिमालके शिखरोंपर भ्रमण करती हुई किन्नरियोंके चरणोंमें लगी हुई गेरू आदि धातुओंकी लालीसे उनके महावरकीसी शोभा होती है। एवं जिसने आभूषणरूपसे चन्द्रमाको धारण कर रक्खा है तथा जो दिशारूप वस्त्रोंसे आच्छादित अर्थात् नग्न है और जो अनेक गुफाओंसे युक्त है, ऐसा जो महादेवके समान हिमालय पर्वत है, उसको मनुष्य गिरिराज कहते हैं ॥ ११–१६ ॥

महादेवकी स्तुति ।

निमीलितदृशो नित्यं मुनयो यस्य सानुषु ।
प्रत्यक्षयन्ति गिरिशमवाङ्मनसगोचरम् ॥ १७ ॥
शिलातलप्रतिहतैर्यस्य निर्झरसीकरैः ।
अह्न्यपि निरीक्षन्ते यक्षास्ताराङ्कितं नभः ॥ १८ ॥
नीहारपवनोद्रेकानिस्सहा यत्र पूरुषाः ।
निजस्त्रीणां निषेवन्ते कुचोष्माणं निरन्तरम् ॥ १९ ॥
संचरन्कटके यस्य निदाघेऽपि दिवाकरः ।
उद्दामहिमरुद्धोष्मा न शीतांशोर्विभिद्यते ॥ २० ॥
गुहागतेषु कस्तूरीमृगनाभिसुगन्धिषु ।
गायन्ति यत्र किन्नर्यो गौरीपरिणयोत्सवम् ॥ २१ ॥
चकास्ति तत्र जगतामादिदेवो महेश्वरः ।
रसात्मना जगत्रातु जातो यस्मान्महारसः ॥ २२ ॥

जिस (हिमालय) के शिखरोंपर नेत्र मींचकर ध्यानास्थित हो करके बैठे हुए मुनिलोग, वाणी और मनसे भी ध्यानमें न आनेवाले शङ्कर भगवान्का अन्तर्दृष्टिसे नित्य प्रत्यक्ष दर्शन करते हैं । जिसके शिखरोंपर निवास करनेवाले यक्षलोग बडी २ शिलाओंसे टकराते हुए झरनोंके कणोंके द्वारा दिनमें भी आकाशको तारोंसे व्याप्तसा देखते हैं । जिस हिमालय पर रहनेवाले पुरुष, बरफसे मिली हुई वायुके वेगको न सह सकनेसे निरन्तर अपनी स्त्रियोंके कुचोंकी उष्णताको प्राप्त करते हैं (अर्थात् उनको आलिङ्गन करते रहते हैं), जिसके शिखरोंपर भ्रमण करते हुए सूर्यकी ग्रीष्मऋतुमें भी अत्यन्त बरफके कारण उष्णता अवरुद्ध (कम) हो जाती है इसलिये सूर्य और

चन्द्रमामें कोई भेद नहीं मालूम होता। और जिस पर कस्तूरीवाले मृगोंकी नाभिगत कस्तूरीसे सुगन्धित गुफाओंमें बैठी हुई किन्नरियाँ श्रीपार्वतीके विवाहोत्सवके गीत गाया करती हैं ऐसे दिव्य शोभा-सम्पन्न उस हिमालय पर्वत पर जगत्के आदिदेव शङ्कर भगवान् रस-रूपसे विराजमान हैं। उन्हींकी रसरूप आत्मासे जगतकी रक्षा कर-नेके लिये महारस (अर्थात् सम्पूर्ण रसोंमें प्रधान रस पारा) उत्पन्न हुआ है ॥ १७–२२ ॥

पारदकी महिमा ।

शताश्वमेधेन कृतेन पुण्यं गोकोटिभिः स्वर्णसहस्रदानात् ।
नृणां भवेत्सूतकदर्शनेन यत्सर्वतीर्थेषु कृताभिषेकात् ॥ २३ ॥
विधाय रसलिङ्गं यो भक्तियुक्तः समर्चयेत् ।
जगत्रितयलिङ्गानां पूजाफलमवाप्नुयात् ॥ २४ ॥
भक्षणं स्पर्शनं दानं ध्यानं च परिपूजनम् ।
पञ्चधा रसपूजोक्ता महापातकनाशिनी ॥ २५ ॥
हन्ति भक्षणमात्रेण पूर्वजन्माघसम्भवम् ।
रोगसंघमशेषाणां नराणां नात्र संशयः ॥ २६ ॥
पूर्वजन्मकृतं पापं सद्यो नश्यति देहिनाम् ।
सुगन्धपिष्टसूतेन यदि शंभुर्विलेपितः ॥ २७ ॥
अभ्रकं त्रुटिमात्रं यो रसेन परिजारयेत् ।
शतक्रतुफलं तस्य भवेदित्यब्रवीच्छिवः ॥ २८ ॥
यश्च निन्दति सूतेन्द्रं शम्भोस्तेजः परात्परम् ।
स पतेन्नरके घोरे यावत्कल्पविकल्पना ॥ २९ ॥

सैकडों अश्वमेध यज्ञ करनेसे अथवा करोडों गौओंका दान करनेसे या हजारों मन सुवर्णका दान करनेसे अथवा सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नान

नेसे जो पुण्य होताहै वह पुण्य मनुष्योंको केवल पारेका दर्शन
नेसे प्राप्त होताहै । जो मनुष्य पारेका शिवलिंग बनाकर भक्ति-
हित उसका पूजन करता है तो उसको त्रिलोकी-(भूलोक, भुवर्लोक
र स्वर्लोक इन तीनों लोकों) में स्थित शिवलिङ्गोंके पूजन करनेका
ः प्राप्त होताहै । भक्षण (खाना), स्पर्शन (छूना), दान
देना), ध्यान और पूजन करना यह पाँच प्रकारकी रस (पारे)
ी पूजा कही गयी है । यह बडे २ भयङ्कर पापोंको नाश करनेवाली
। पारेको यथाविधि भक्षण करनेसे सम्पूर्ण मनुष्योंके पूर्वजन्ममें
ये पापोंसे उत्पन्न हुए रोगोंके समूह निस्सन्देह नष्ट हो जाते हैं ।
न्धकके साथ पारेको पीस कर कज्जली करके उसके द्वारा शिवलिंग
र लेपन करनेसे मनुष्योंके पूर्वजन्मकृत पाप शीघ्र नष्ट होते हैं । जो
नुष्य पारेके साथ एक चुटकी भर अभ्रकको जारण करता है, उस-
ो १०० अश्वमेध यज्ञ करनेका फल प्राप्त होताहै । ऐसा शिवजी
हाराजने कहा है । जो मनुष्य शिवजीके परम श्रेष्ठ तेजः स्वरूप है
वीर्यरूप) पारेकी निन्दा करता है, वह कल्पान्तपर्यन्त घोर
रकमें पडता है ॥ २३–२९ ॥

रोगिभ्यो यो रसं दत्ते शुद्धिपाकसमन्वितम् ।
तुलादानाश्वमेधानां फलं प्राप्नोति शाश्वतम् ॥ ३० ॥
सिद्धे रसे करिष्यामि निर्दारिद्र्यमयं जगत् ।
रसध्यानमिति प्रोक्तं ब्रह्महत्यादिपापनुत् ॥ ३१ ॥
अभ्रग्रासो हि सूतस्य नैवेद्यं परिकीर्तितम् ।
रसस्येत्यर्चनं कृत्वा प्राप्नुयात्क्रतुजं फलम् ॥ ३२ ॥
उदरे संस्थिते सूते यस्योत्क्रामति जीवितम् ।
स मुक्तो दुष्कृताद्घोरात् प्रयाति परमं पदम् ॥ ३३ ॥

जो वैद्य उत्तम प्रकारसे शुद्ध करके भस्म किये हुए अथवा जारण किये हुए पारेको योग्य रीतिसे रोगियोंको देता है, उसको निरन्तर तुलादान अथवा अश्वमेध यज्ञ करनेका फल प्राप्त होता है । रस (पारे) के सिद्ध हो जाने पर मैं जगत्को दरिद्रतासे मुक्त कर दूँगा इस प्रकार किया हुआ ध्यान रसका ध्यान कहा जाता है । यह ध्यान ब्रह्महत्याको आदि लेकर समस्त पापोंको नष्ट करता पारेकी पूजाविधिमें अभ्रकका ग्रास देना पारेका नैवेद्य कहा जाता है । इस प्रकार पारेका पूजन करके मनुष्य अश्वमेध यज्ञ करनेके फलको प्राप्त होता है । पारेके उदरमें स्थित रह जाने पर जिस मनुष्यकी मृत्यु होजाय तो वह भयंकर दुष्कर्मोंसे मुक्त होकर परम पद (मोक्ष) को प्राप्त होजाता है ॥ ३०-३३ ॥

मूर्च्छितादि पारदके गुण ।

मूर्च्छित्वा हरति रुजं बन्धनमनुभूय मुक्तिदो भवति ।
अमरीकरोति हि मृतः कोऽन्यः करुणाकरः सूतात् ॥ ३४ ॥
सुरगुरुगोद्विजहिंसापापकलापोद्भवं किलासाध्यम् ।
श्वित्रं तदपि च शमयति यस्तस्मात्कः पवित्रतरः सूतात् ॥
रसबन्ध एव धन्यः प्रारम्भे यस्य सततमिति करुणा ।
सेत्स्यति रसे करिष्ये महीमहं निर्जरामरणाम् ॥ ३६ ॥

मूर्च्छित किया हुआ पारा रोगको नष्ट करता है, बद्ध पारा मुक्ति देता है, और मृत (अर्थात् भस्म किया हुआ) पारा मनुष्यको अमर कर देता है; इस लिये पारेसे बढकर दूसरा करुणाकर कौन है ? देव, गुरु, गौ और ब्राह्मणादिकी हिंसाकरणरूप पापसमूहसे उत्पन्न हुए असाध्य श्वेतकुष्ठको भी जो अवश्य नष्ट कर देता है, उस पारेसे अधिक पवित्र दूसरा पदार्थ कौन है ? जो मनुष्य प्रारम्भमें ही रस (पारे) के बन्धनके लिये उद्योग करता है, वह धन्य है और उसके

सिद्ध हो जानेपर सम्पूर्ण पृथ्वीको अजर, अमर करनेकी जिसकी इच्छा होती है, वही मनुष्य अपने रसबन्ध रूप कार्यमें सफलता प्राप्त करता है ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

देहको अजर, अमर करनेकी और उसमें पारद सेवनकी आवश्यकता ।

सुकृतफलं तावदिदं सुकुले यज्जन्म धीश्च तत्रापि ।
सापि च सकलमहीतलतुलनफला भूतलं च सुविधेयम् ३७
भूतलविधेयतायाः फलमर्थास्ते च विविधभोगफलाः ।
भोगाः सन्ति शरीरे तदनित्यमतो वृथा सकलम् ॥३८॥
इति धनशरीरभोगान्मत्वाऽनित्यान्सदैव यतनीयम् ।
मुक्तौ सा च ज्ञानात्तच्चाभ्यासात्स च स्थिरे देहे ॥ ३९ ॥
तत्स्थैर्यं न समर्थं रसायनं किमपि मूललोहादि ।
स्वयमस्थिरस्वभावं दाह्यं क्लेद्यं च शोष्यं च ॥ ४० ॥

पूर्वोपार्जित पुण्यकर्मोंका फल यह है कि उत्तम कुलमें जन्म हो उसमें भी उत्तम बुद्धि हो और वह बुद्धि भी सम्पूर्ण पृथ्वीके भारको तोलनेमें समर्थ हो । फिर ऐसी बुद्धिके द्वारा समस्त भूमण्डलको समृद्धिशाली बनानेका उपाय करना पृथ्वीके उत्तम होनेसे धनधान्यादिकी वृद्धि होती है और धनकी वृद्धि होनेसे नानाप्रकारके भोग विलास प्राप्त होते हैं । किन्तु वे भोग शरीरसे भोगे जाते हैं और वह शरीर अनित्य (नाशवान्) है, इसलिये पृथ्वीके ऐश्वर्यादि सम्पूर्ण पदार्थ व्यर्थ हैं । (अर्थात् जब यह शरीर जरा मरणसे कदापि मुक्त नहीं हो सकता तो इसके लिये जो कार्य्य किये जाते हैं, वे सब निष्फल माने जा सकते हैं ।) अत एव धन, शरीर और भोग विलासादिको अनित्य मान कर मनुष्यको सदैव मुक्तिको प्राप्त करनेका यत्न करना चाहिये । किन्तु वह मुक्ति यथार्थ ज्ञान होनेसे

मिलतीहै । वह ज्ञान योगाभ्याससे और योगाभ्यास आरोग्ययुक्त शरीरके स्थिर रहने पर होता है । परन्तु इस शरीरको स्थिर रख सकनेमें काष्ठ, धातु और रसायनादि कोई भी औषध समर्थ नहीं है । क्योंकि वे काष्ठादि तथा धात्वादि औषधियाँ स्वयं अस्थिर स्वभाववाली होती हैं । वे अग्निसे जल जाती हैं, जलसे भीग जाती हैं और सूर्य्यके तेजसे सूख जाती हैं । किन्तु पारा इन सब दोषोंसे रहित है, इसलिये शरीरको स्थिर रखनेकी शक्ति पारेके सिवा और किसी भी पदार्थमें नहीं है, अतः देहकी स्थिरताके लिये पारद सेवन करना आवश्यक है ॥ ३७-४० ॥

सम्पूर्ण औषधियोंका पारेमें समावेश ।

काष्ठौषध्यो नागे नागो वंगेथ वंगमपि शुल्वे ।
शुल्वं तारे तारं कनके कनकं च लीयते सूते ॥४१॥
अमृतत्वं हि भजन्ते हरमूर्तौ योगिनो यथा लीनाः ।
तद्वत्कवलितगगने रसराजे हेमलोहाद्याः ॥ ४२ ॥
परमात्मनीव सततं भजति लयो यत्र सर्वसत्त्वानाम् ।
एकोऽसौ रसराजः शरीरमजरामरं कुरुते ॥ ४३ ॥
स्थिरदेहेऽभ्यासवशात्प्राप्य ज्ञानं गुणाष्टकोपेतम् ।
प्राप्नोति ब्रह्मपदं न पुनर्भववासजन्मदुःखानि ॥ ४४ ॥

काष्ठादिक औषधियाँ नाग (सीसे) में, नाग वंगमें, वंग ताम्रमें ताँवा चाँदीमें, चाँदी सोनेमें और सोना पारेमें लीन हो जाता है । जिस प्रकार योगीजन शिवकी मूर्त्तिमें लीन होकर मोक्ष पदको प्राप्त होते हैं, उसीप्रकार अभ्रकका ग्रास किये हुए पारेमें स्वर्णादि समस्त धातुयें लय हो जाती हैं । जिस प्रकार परमात्मामें ही निरन्तर लीन रहनेसे सम्पूर्ण प्राणियोंकी संसारसागरसे मुक्ति हो जाती है, उसी-

प्रकार एकमात्र पारेको सेवन करनेसे मनुष्यका शरीर अजर और अमर हो जाता है । पारेके सेवन करनेसे शरीरके स्थिर होजाने पर मनुष्य योगाभ्यासके द्वारा अष्टगुणसम्पन्न आत्मज्ञानको प्राप्त करके ब्रह्मपदको प्राप्त होता है । और फिर वह उत्पन्न होकर गर्भवास, जन्म मरण आदि सांसारिक दुःखोंको नहीं भोगता है ॥४१-४४॥

पारेसे ब्रह्मकी प्राप्ति ।

एकांशेन जगद्युगपदवष्टभ्यावास्थितं पदं ज्योतिः ।
पादैस्त्रिभिस्तदमृतं सुलभं न विरक्तिमात्रेण ॥ ४५ ॥
नहि देहेन कथंचिद् व्याधिजरामरणदुःखविधुरेण ।
क्षणभङ्गुरेण सूक्ष्मं तद्ब्रह्मोपासितुं शक्यम् ॥ ४६ ॥
नामापि देहसिद्धेः को गृह्णीयाद्विना शरीरेण ।
तद्योगगम्यममलं मनसोऽपि न गोचरं तत्त्वम् ॥ ४७ ॥
यज्ञाज्ज्ञानात्तपसो वेदाध्ययनाद्दमात्सदाचारात् ।
अत्यन्तभूयसी किल योगवशादात्मसंवित्तिः ॥ ४८ ॥

जो एक अंशसे व्याप्त हुए सत्त्व, रज और तम इन तीन गुणोंसे सर्वजगत्‌में भरी हुई है, ऐसी अमृतरूपी परम ज्योति (परब्रह्म) केवलविरक्तिमात्रसे प्राप्त नहीं होती । परब्रह्मकी प्राप्तिके लिये तपश्चर्याकी आवश्यकता है । रोग और जरा, मरण आदि अनेक दुःखोंसे व्याकुल रहनेवाले और क्षणभंगुर शरीरसे उस सूक्ष्म ब्रह्मकी उपासना कदापि नहीं हो सकती । और स्थूल शरीरके विना शरीरकी सिद्धिका तत्त्व प्राप्त नहीं हो सकता; क्योंकि वह निर्मल तत्त्वज्ञान मनसे नहीं जाना जाता, केवल योगसेही जाना जा सकता है । योगाभ्यासके द्वारा प्राप्त किया हुआ आत्मज्ञान यज्ञ, ज्ञान, तप,

वेदाध्ययन, इन्द्रियदमन और सदाचार इन सबसे अत्यन्त श्रेष्ठ है ॥ ४५-४६ ॥

ब्रह्मप्राप्तिका आनन्द ।

भ्रूमध्यगतं यच्छिखिविद्युत्सूर्येन्दुवज्जगद्भाति ।
केषांचित्पुण्यदृशामुन्मीलति चिन्मयं परं ज्योतिः४९॥
परमानन्दैकरसं परमं ज्योतिः स्वभावमविकल्पम् ।
विगलितसकलक्लेशं ज्ञेयं शान्तं स्वसंवेद्यम् ॥ ५० ॥
तस्मिन्नाधाय मनः स्फुरदखिलं चिन्मयं जगत्पश्यन् ।
उत्सन्नकर्मबन्धो ब्रह्मत्वमिहैव चाप्नोति ॥ ५१ ॥
रागद्वेषविमुक्ताः सत्याचारा मृषारहिताः ।
सर्वत्र निर्विशेषा भवन्ति चिद्ब्रह्मसंस्पर्शात् ॥ ५२ ॥
तिष्ठन्त्यणिमादियुता विलसद्देहाः सदोदितानन्दाः ।
ब्रह्मस्वभावममृतं संप्राप्ताश्चैव कृतकृत्याः ॥ ५३ ॥

दोनों भृकुटिओंके मध्यमें रहनेवाली जो परं ज्योति (ब्रह्मतेज) अग्नि, बिजली, सूर्य और चन्द्रमाकी समान जगत्को प्रकाशित कर रही है, वह सच्चिदानन्दरूप ब्रह्मकी ज्योति किसी पुण्यात्माको ही प्रत्यक्ष होतीहै केवल परमानन्दनस्वरूप, एक रस, जिसमें विकल्प अथवा द्वैत नहीं है ऐसी अर्थात् अद्वैतरूप, सब प्रकारके दुःखोंसे रहित, शान्त और परमात्मशक्तिसे जानने योग्य ऐसी ब्रह्मकी ज्योति जानने योग्य है उस परम ज्योतिमें चञ्चल मनको अच्छे प्रकारसे लगा कर जो मनुष्य इस प्रकाशमान जगत्को चैतन्यरूप देखता है, वह सम्पूर्ण कर्मबन्धनोंसे मुक्त होकर इस लोकमें रहता हुआ ही ब्रह्मत्वको प्राप्त होता है । उस चैतन्यरूप ब्रह्मका आविर्भाव होनेसे मनुष्य राग, द्वेष

और असत्य आदि दोषोंसे निर्मुक्त हो जाते हैं और सदाचारी तथा असत्यवादी होकर भेदभावसे रहित हो जाते हैं। अर्थात् सर्वत्र समान रूपसे व्यवहार करते हैं। एवं तेजस्वि शरीरसे सदैव आनन्दमें मग्न रहते हैं तथा अणिमादि अष्ट सिद्धियोंको प्राप्त करते हैं और परब्रह्म रूप अमृतको प्राप्त करके कृत कृत्य होते हैं ॥ ४९-५३ ॥

आयतनं विद्यानां मूलं धर्मार्थकाममोक्षाणाम् ।
श्रेयः परं किमन्यच्छरीरमजरामरं विहायैकम् ॥५४॥
प्रत्यक्षेण प्रमाणेन यो न जानाति सूतकम् ।
अदृष्टविग्रहं देवं कथं ज्ञास्यति चिन्मयम् ॥ ५५ ॥
यज्जरया जर्जरितं कासश्वासादिदुःखविवशं च ।
योग्यं तन्न समाधौ प्रतिहतबुद्धीन्द्रियप्रसरम् ॥ ५६ ॥

सम्पूर्ण विद्याओंके भण्डार और धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इस चतुर्वर्गके मूलको प्राप्त करानेके लिये केवल एक अजर, अमर शरीरको छोड कर और कोई दूसरा उत्तम साधन नहीं है। जो मनुष्य प्रत्यक्ष प्रमाणके द्वारा (अर्थात् नेत्रोंके द्वारा दीखनेवाले) देहको अजर अमर करनेवाले पारेको नहीं जानता, वह निराकार, अदृश्य और चिदानन्द रूप परब्रह्मको किस प्रकार जान सकता है जो शरीर जरा (वृद्धावस्था)से जर्जर हो गया हो तथा कास, श्वासादि अनेक रोगोंसे पराधीन बन गया हो और जिसकी बुद्ध्यादि इन्द्रियोंकी शक्ति क्षीण हो गई हो ऐसा शरीर समाधिके योग्य नहीं होता ॥ ५४-५६ ॥

बालः षोडशवर्षो विषयरसास्वादलम्पटः परतः ।
यातविवेको वृद्धो मर्त्यः कथमाप्नुयान्मुक्तिम् ॥ ५७ ॥
अस्मिन्नेव शरीरे येषां परमात्मनो न संवेदः ।
देहत्यागादूर्ध्वं तेषां तद्ब्रह्म दूरतरम् ॥ ५८ ॥

ब्रह्मादयो यतन्ते तस्मिन्दिव्यां तनुं समाश्रित्य ।
जीवन्मुक्ताश्चान्ये कल्पान्तस्थायिनो मुनयः ॥ ५९ ॥
तस्माज्जीवन्मुक्तिं समीहमानेन योगिना प्रथमम् ।
दिव्या तनुर्विधेया हरगौरीसृष्टिसंयोगात् ॥ ६० ॥

सोलह वर्षकी अवस्थातक तो मनुष्य बालक रहता है, इसलिये वह इस अवस्थामें ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता इसके पश्चात् युवावस्था आने पर मनुष्य विषय वासनाके रसका आस्वादन करनेमें लंपट वन जाता है और वृद्धावस्थामें विचार शक्ति कम हो जाती है इस प्रकार सम्पूर्ण आयुष्य व्यतीत हो जाने पर मनुष्य मुक्तिको किस प्रकार प्राप्त कर सकता है इस मनुष्य शरीरमें जिनको परमात्माका ज्ञान नहीं होता, उनको देह त्यागके पश्चात् उस ब्रह्मका प्राप्त होना अत्यन्त दुर्लभ है। ब्रह्म प्राप्तिके लिये ब्रह्मादिक देवता दिव्य शरीरको धारण करके और उसी प्रकार कल्पान्त पर्यन्त जीवित रहनेवाले अनेक जीवन्मुक्त मुनि निरन्तर यत्न करते रहते हैं। इसलिये जीवन्मुक्तिकी इच्छा करनेवाले योगियोंको प्रथम पारा और गन्धकके द्वारा अपने शरीरको दिव्य अर्थात् अजर अमर बना लेना चाहिये ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥

रसकी उत्पत्ति ।

शैलेऽस्मिञ्छिवयोः प्रीत्या परस्परजिगीषया ।
संप्रवृत्ते च सम्भोगे त्रिलोकीक्षोभकारिणि ॥ ६१ ॥
विनिवारयितुं वह्निः सम्भोगं प्रेषितः सुरैः ।
कांक्षमाणैस्तयोः पुत्रं तारकासुरमारकम् ॥ ६२ ॥
कपोतरूपिणं प्राप्तं हिमवत्कन्दरेऽनलम् ।
अपाक्षिभावसंक्षुब्धं स्मरलीलाविलोकिनम् ॥ ६३ ॥

तं दृष्ट्वा लज्जितः शम्भुर्विरतः सुरतात्तदा ।
प्रच्युतश्चरमो धातुर्गृहीतः शूलपाणिना ॥ ६४ ॥
प्रक्षिप्तो वदने वह्नेर्गंगायामपि सोऽपतत् ।
वह्निः क्षिप्तस्तया सोऽपि परिदंदह्यमानया ॥ ६५ ॥
संजातास्तन्मलाध्मानाद्धातवः सिद्धिदायकाः ।
यावदग्निमुखाद्रेतो न्यपतद्भुवि सर्वतः ॥ ६६ ॥
शतयोजननिम्नास्ते जाता कूपास्तु पंच च ।
तदाप्रभृति कूपस्थ तद्रेतः पंचधाऽभवत् ॥ ६७ ॥

एक समय इस हिमालय पर्वतपर अत्यन्त प्रीतिके बोध परस्पर विजय प्राप्त करनेकी इच्छासे शिव और पार्वतीमें (अर्थात् प्रकृति-पुरुष-अथवा जडचेतनमें) त्रिलोकिको क्षोभ उत्पन्न करनेवाला सम्भोग होने लगा उस समय उनके रज और वीर्यसे, तारकासुरको मारनेवाले पुत्र अर्थात् तारकरूप अंधकारको विनाश करनेवाले प्रकाशके उत्पन्न होनेकी इच्छासे देवताओंने उस सम्भोगको निवारण करनेके लिये वहाँ अग्निको भेजा अग्नि. कबूतर (अर्थात् अत्यन्त श्वेतवर्ण) का रूप धारण करके हिमालयकी गुफामें बैठ कर प्रकृति पुरुषकी कामक्रीडाके विसालको देख कर अपने प्रकृत स्वभावके कारण अत्यन्त क्षुब्ध होनेलगा इस प्रकारसे बैठे हुए पक्षिरूप अग्निको देख कर शिवजीने अत्यंत लज्जित होकर सम्भोगको त्याग दिया और उस समय पतित हुए वीर्यको अपने हाथमें लेकर उन्होंने अग्निके मुखमें डाल दिया । उस वीर्यरूप तीव्र तेजको न सह सकनेके कारण अग्निदेव गंगामें कूद पडा गंगाभी उस तेजसे जलने लगी इसलिये उसने उस तेजके सहित अग्निदेवको अपनी तरंगोंसे बाहर निकाल कर फेंक दिया उस मलके पडे रह जानेसे वहाँ रससिद्धिके लिये उपयोगी अनेक धातुयें उत्पन्न हो गयीं । और अग्निके मुखसे जहाँ कभी

भी पृथ्वीके ऊपर वह वीर्य गिरा, वहाँ पर सैकडा योजन गहरे पाँच कुएं बन गये तबसे उन कुओंमें रहनेवाला वह वीर्य पाँच प्रकारका हो गया है ॥ ६१–६७ ॥

रसके भेद ।

रसो रसेन्द्रः सूतश्च पारदो मिश्रकस्तथा ।
इति पंचविधो जातः क्षेत्रभेदेन शम्भुजः ॥ ६८ ॥
रसो रक्तो विनिर्मुक्तः सर्वदोषैरसायनः ।
संजातास्त्रिदशास्तेन नीरुजा निर्जरामराः ॥ ६९ ॥
रसेन्द्रो दोषनिर्मुक्तः श्यावो रूक्षोऽतिचंचलः ।
रसायिनोऽभवंस्तेन नागा मृत्युजरोज्झिताः ॥ ७० ॥
देवनागैश्च तौ कूपौ पूरितौ मृद्भिरश्मभिः ।
तदाप्रभृति लोकानां तौ जातावतिदुर्लभौ ॥ ७१ ॥
ईषत्पीतश्च रूक्षांगो दोषमुक्तश्च सूतकः ।
दशाष्टसंस्कृतैः सिद्धो देहं लोहं करोति सः ॥ ७२ ॥
अथान्यकूपजः कोऽपि स चलः श्वेतवर्णवान् ।
पारदो विविधैर्योगैः सर्वरोगहरो हि सः ॥ ७३ ॥
मयूरचन्द्रिकाच्छायः सः रसो मिश्रको मतः ।
सोऽप्यष्टादशसंस्कारयुक्तश्चातीव सिद्धिदः ॥ ७४ ॥
त्रयः सूतादयः सूताः सर्वसिद्धिकरा अपि ।
निजकर्मविनिर्माणैः शक्तिमन्तोऽतिमात्रया ॥ ७५ ॥

भिन्न भिन्न स्थानोंमें उत्पन्न होनेके कारण पारा, रस, रसेन्द्र, सूत पारद और मिश्रक इन भेदोंसे पाँच प्रकारका है । रस नामक पारा लाल रंगका होताहै । वह सब प्रकारके दोषोंसे रहित और रसायन है

है। इसके सेवनसे ही देवता आरोग्य और अजर अमर रहते हैं। रसेन्द्र नामवाला पारा निर्दोष होता है। एवं श्याव (कुछ नीलासा) वर्णवाला, रूक्ष और अत्यन्त चञ्चल होता है। इस रसायनके प्राप्त होनेसे नागदेवता जरा मरणसे मुक्त रहते हैं। परन्तु उन रस और रसेन्द्रके दोनों कुओंको देवता और नागोंने मिट्टी, पत्थरादिसे पाट दिया है, इस कारण उक्त दोनों प्रकारके पारे मनुष्योंको मिलने अत्यन्त कठिन होगये हैं। सूत नामक पारा कुछ पीला, रूक्ष और दोषरहित है। यह पारा अष्टादश संस्कारोंके द्वारा सिद्ध करके सेवन किया जानेपर देहको लोहेके समान दृढ कर देताहै। अन्य कुएंसे निकलनेवाले पारेको पारद कहते हैं, वह चञ्चल और श्वेत वर्णका होता है। यह पारा विविध प्रकारके योगोंके साथ सेवन किया जाने-पर सब प्रकारके रोगोंको दूर करता है। मोरपंखकी चन्द्रिकाके समान वर्णवाले पारेको मिश्रक कहते हैं। वह भी अष्टादश संस्कारोंके द्वारा सिद्ध होनेपर देह और लोहादि धातुओंको सिद्धि प्रदान करता है। यद्यपि सूत, पारद और मिश्रक ये तीनों प्रकारके पारे सकल सिद्धि प्रदान करनेवाले हैं, तथापि प्रत्येक पारा अनेक संस्कारोंके द्वारा सिद्ध किया जानेसे अधिकतर शक्तिशाली हो जाता है॥ ६८–७५॥

पाँचों पारदोंकी पृथक् २ निरुक्ति।

एतां रससमुत्पत्तिं यो जानाति स धार्मिकः।
आयुरारोग्यसन्तानं रससिद्धिं च विन्दति॥ ७६॥
रसना सर्वधातूनां रस इत्यभिधीयते।
जरारुङ्मृत्युनाशाय रस्यते वा रसोऽमृतः॥ ७७॥
रसोपरसराजत्वाद्रसेन्द्र इति कीर्त्तितः।
देहलोहमयीं सिद्धिं सूते सूतस्ततः स्मृतः॥ ७८॥
रोगपंकाब्धिमग्नानां पारदानाच्च पारदः।

सर्वधातुगतं तेजो मिश्रितं यत्र तिष्ठति ।
तस्मात्स मिश्रकः प्रोक्तो नानारूपफलप्रदः ॥ ७९ ॥

जो धार्मिक मनुष्य इस प्रकार कही हुई पारेकी उत्पत्तिको जानता है, वह आयु, आरोग्य, सन्तान और रससिद्धिको प्राप्त होता है। समग्र धातुओंको खाजानेसे (अर्थात् इसमें सब धातुओंके मिल जानेसे) पारेको रस कहते हैं। अथवा जरा, व्याधि और मृत्युका नाश करनेके लिये इसको सेवन किया जाता है, इसलिये भी इसको रस अथवा अमृत कहते हैं। रस और उपरसोंका राजा होनेसे पारेको रसेन्द्र कहते हैं! एवं शरीर और लोहादि धातुओंकी सिद्धि करनेसे पारेको सूत कहते हैं। पारा रोगरूपी कीचडके समुद्रमें डूबे हुए मनुष्योंको उससे पार कर देता है, इसलिये इसको पारद कहते हैं। जिसमें सम्पूर्ण धातुओंका तेज मिला हुआ रहता है, उसको मिश्रक कहते हैं। वह विविध प्रकारके फल प्रदान करता है ॥७६-७९॥

पारेमें स्थित कंचुकादि दोष ।

एवंभूतस्य सूतस्य मर्त्यमृत्युगदच्छिदः ॥ ८० ॥
प्रभावान्मानुषा जाता देवतुल्यबलायुषः ॥
तान्दृष्ट्वाऽभ्यर्थितो रुद्रः शक्रेण तदनन्तरम् ॥ ८१ ॥
दोषैश्च कंचुकाभिश्च रसराजो नियोजितः ॥
तदाप्रभृति सूतोऽसौ नैव सिद्ध्यत्यसंस्कृतः ॥ ८२ ॥
जलगो जलरूपेण त्वरितो हंसगो भवेत् ।
मलगो मलरूपेण सधूमो धूमगो भवेत् ॥ ८३ ॥
अन्या जीवगतिर्दैवी जीवोऽण्डादिव निष्क्रमेत् ।
स तांश्च जीवयेज्जीवांस्तेन जीवो रसः स्मृतः ॥ ८४ ॥
चतस्रो गतयो दृश्या अदृश्या पंचमी गतिः ।

मंत्रध्यानादिना तस्य रुध्यते पंचमी गतिः ॥ ८५ ॥
इति भिन्नगतित्वाच्च सूतराजस्य दुर्लभः ।
संस्कारस्तस्य भिषजा निपुणेन तु रक्षयेत् ॥ ८६ ॥

इस प्रकार पारेके प्रभावसे मनुष्य जरा, मरण और व्याधिजालसे मुक्त होकर देवताओंकी समान बलवान् और आयुवाले होने लगे । उस समय इंद्रने उनको इस प्रकार बलवान् देखकर ईर्षाके कारण शिवजी महाराजसे प्रार्थना की तबसे उन्होंने पारेको कंचुकी आदि दोषोंसे युक्त कर दिया है । इस कारण उस समयसे विना संस्कार किया हुआ पारा सिद्धिदायक नहीं होता पारा जलके संयोगसे जल-रूपसे, सूर्यकी किरणोंके संयोगसे किरणरूपसे धातुओंके संयोगसे धातुरूपसे और धूमके संयोगसे धूमरूपसे उडकर उस उसमें जाता है इस प्रकार सृष्टिके अटल नियमके अनुसार एक जीवमेंसे दूसरा जीव अण्डेके प्रमाण संक्रमण करता है । पारा सब जीवोंको जीवित करता है, इस लिये इसको जीव कहते हैं । उपर्युक्त पारेकी चार गतियां तो दृश्य हैं और पाँचवीं गति अदृश्य है । परन्तु उसकी पाँचवीं गति जीव मन्त्र ध्यानादि क्रियाओंके द्वारा रोकी जा सकती है । इस प्रकार भिन्न २ गतियोंके द्वारा उड जानेसे पारेका संस्कार होना अत्यन्त कठिन है अत एव विद्वान् और चतुर वैद्यको बडी होशियारीसे पारा सुरक्षित रखकर उसके संस्कार करने चाहिये ॥ ८०-८६ ॥

प्रथमे रजसि स्नातां हयारूढां स्वलंकृताम् ।
वीक्षमाणां वधूं दृष्ट्वा जिघृक्षुः कूपगो रसः ॥ ८७ ॥
उद्गच्छति जवात्सापि तं दृष्ट्वा याति वेगतः ।
अनुगच्छति तां सूतः सीमानं योजनोन्मिताम् ॥ ८८ ॥
प्रत्यायाति ततः कूपं वेगतः शिवसम्भवः ।
मार्गनिर्मितगर्तेषु स्थितं गृह्णंति पारदम् ॥ ८९ ॥

पतितो दरदे देशे गौरवाद्वह्निवक्त्रतः ।
स रसो भूतले लीनस्तत्तद्देशनिवासिनः ॥
तां मृदं पातनायन्त्रे क्षिप्त्वा सूतं हरन्ति च ॥ ९० ॥

प्रथम बार ऋतुस्नान की हुई और उत्तम प्रकारके आभूषणोंसे अलंकृत तरुणी स्त्री घोडेपर चढकर पारेके कुएमें झांके तो रूप यौवनसमान स्त्रीको देखकर उसको प्राप्त करनेकी इच्छासे कुएमें स्थित पारा बडे वेगसे ऊपरको उछलता है। वह स्त्री उनको देखकर जब शीघ्रतासे चली जाती है तब पारा योजन पर्यन्त उसके पीछे २ भागता है जब वह स्त्री योजनकी सीमासे बहुत दूर निकल जाती है तब पारा लौटकर फिर उसी कुएँमें आकर गिर जाता है। उस समय मार्गमें बने हुए अथवा मनुष्योंके द्वारा बनाये हुए गड्डोंमें गिरे हुए पारेको मनुष्य निकाल लेते हैं। जो पारा अत्यन्त भारी होनेके कारण अग्निके मुखमेंसे दरद देशमें गिर पडा था, वह मिट्टी और पत्थरोंके साथ मिलकर पृथ्वीमें लीन हो गया उस देशके रहनेवाले मनुष्य उस मिट्टीको ऊर्ध्वपातन यन्त्रमें डालकर पारेको निकाल लेते हैं॥८७-९०॥

इति श्रीवाग्भटाचार्यविरचिते रसरत्नसमुच्चये वैद्यशङ्करलालकृतायां भाषाटीकायां प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

द्वितीय अध्यायः ।

अष्टौ महारसाः ।

अभ्रवैक्रान्तमाक्षीकविमलाद्रिजसस्यकम् ।
चपलो रसकश्चेति ज्ञात्वाऽष्टौ संग्रहेद्रसान् ॥

अभ्रक, वैक्रान्तमणि, सोनामाखी, विमला (रूपामाखी), शिलाजीत, नीलाथोथा, चपल (१२० तोले नागको गजपुटमें फूंकनेसे जब वह १ तोला बाकी रह जाता है, तब उस सत्त्वको चपल कहते

है । किन्तु कोई २ कहते हैं कि नाग और वंगसे चपल धातु बनती है) । और खपरिया ये आठ महारस हैं इन रसोंको उत्तम प्रकारसे परीक्षा कर संग्रह करना चाहिये ॥ १ ॥

गन्धक पार्वतीका रज है और अभ्रक पार्वतीदेवीका वीर्य है (क्षेपक)

अभ्रकके सामान्य गुण ।

गौरीतेजः परममसृतं वातपित्तक्षयघ्नम् ।
प्रज्ञाबोधिः प्रशमितरुजं वृष्यमायुष्यमव्ययम् ॥
बल्यं स्निग्धं रुचिदमकफं दीपनं शीतवीर्यम् ।
तत्तद्योगैः सकलगदहृद्व्योम सूतेन्द्रबन्धि ॥ २ ॥
राजहस्तादधस्ताद्यत्समानीतं घनं खनेः ।
भवेत्तदुक्तफलदं निःसत्त्वं निष्फलं परम् ॥ ३ ॥

पार्वतीका तेज (अर्थात् वीर्यरूप) अभ्रक परम श्रेष्ठ अमृत है । यह वात, पित्त और क्षयको नष्ट करता है, बुद्धिको तीव्र करता है, सम्पूर्ण व्याधियोंको शमन करता है, विशेष कर वीर्यवर्द्धक, आयुकारक, बलकारक, स्निग्ध (अर्थात् शरीरके सब अवयवोंको कोमल बनानेवाला), रुचिकारक, कफको उत्पन्न न करनेवाला, अग्निसंदीपक और शीत वीर्य है । यह कफकारक न होनेसे भिन्न भिन्न प्रयोगोंके द्वारा सेवन करनेसे समस्त व्याधियोंको नष्ट करता है और पारेको बाँधता है । आठ हाथ गहरी खानको खोदकर जो अभ्रक निकाला जाता है, वह भारी और उपर्युक्त फलदायक होता है । इसके सिवा जिसके पत्र पतले होते हैं ऐसा सत्त्वहीन अभ्रक निष्फल होता है ॥ २ ॥ ३ ॥

अभ्रकके भेद ।

पीनाकनागमण्डूकवज्रमित्यभ्रकं मतम् ।
श्वेतादिवर्णभेदेन प्रत्येकं तच्चतुर्विधम् ॥ ४ ॥

पीनाकं पावकोत्तप्तं विमुञ्चति दलोच्चयम् ।
तत्सेवितं मलं बद्ध्वा मारयत्येव मानवम् ॥ ५ ॥
नागाभ्रं नागवत्कुर्याद्ध्वानं पावकसंस्थितम् ।
तद्भुक्तं कुरुते कुष्ठं मंडलाख्यं न संशयः ॥ ६ ॥
उत्प्लुत्योत्प्लुत्य मंडूकं ध्मातं पतति चाभ्रकम् ।
तत्कुर्यादश्मरीरोगमसाध्यं शस्त्रतोऽन्यथा ॥ ७ ॥
वज्राभ्रं वह्निसंतप्तं विमुक्ताऽशेषवैकृतम् ।
देहलोहकरं तच्च सर्वरोगहरं परम् ॥ ८ ॥

पीनाक, नाग, मण्डूक और वज्र इस प्रकारसे अभ्रक चार प्रकारका है । इसके सिवा सफेद, लाल, पीला, और काला इन भेदोंसे उपर्युक्त प्रत्येक अभ्रक चार प्रकारका होता है । पीनाक अभ्रक अग्निमें तपानेसे पत्रोंको अलग २ छोड देता है । यह अभ्रक सेवन करते ही मलको बाँधकर मनुष्यको मार देता है । नाग अभ्रक अग्निमें तपानेसे सर्पके समान फुंकारसी मारता है । उसको सेवन करनेसे मण्डल नामक कुष्ठ रोग उत्पन्न होता है । मण्डूक नामक अभ्रक अग्निमें तपानेसे मंडूकके समान उछल उछलकर गिरता है और सेवन करनेपर असाध्य पथरी रोगको उत्पन्न करता है, जो कि शस्त्रक्रियाके विना दूर नहीं किया जा सकता । किन्तु वज्रनामक अभ्रकको अग्निमें तपानेसे उसमें कोई भी विकार उत्पन्न नहीं होता और यह सेवन करनेसे देह एवं लोहकी सिद्धि करता है तथा सब प्रकारके रोगोंको हरता है ॥ ४-८ ॥

चारों अभ्रकोंका उपयोग ।

श्वेतं रक्तं च पीतं च कृष्णमेवं चतुर्विधम् ।
श्वेतं श्वेतक्रियासूक्तं रक्ताभं रक्तकर्मणि ॥ ९ ॥
पीताभमभ्रकं यत्तु श्रेष्ठं तत्पीतकर्मणि ।

चतुर्विधं परं व्योम यद्यप्युक्तं रसायने ॥ १० ॥
तथापि कृष्णवर्णाभं कोटिकोटिगुणाधिकम् ।
स्निग्धं पृथुदलं वर्णसंयुक्तं भारतोऽधिकम् ॥ ११ ॥
सुखान्निर्मोच्य पत्रं च तदभ्रं शस्तमीरितम् ॥ १२ ॥

सफेद, लाल, पीला और काला इन वर्णभेदोंसे जो अभ्रक चार प्रकारका कहा गया है, इनमें सफेद अभ्रक श्वेतक्रिया (चाँदी आदिके बनाने) में लाल अभ्रक रक्तकर्म (अर्थात् रंगनेके काम) में और पीला अभ्रक पीतकर्म (सुवर्ण आदि बनानेके काम) में श्रेष्ठ कहा गया है । उपर्युक्त तीनों ही अभ्रक द्रव्य साधनके काममें आते हैं और चौथा कृष्णवर्णका अभ्रक रसायनोपयोगी है । श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण ये चारों प्रकारके अभ्रक रसायनकर्ममें श्रेष्ठ हैं तथापि इनमें काले रंगका अभ्रक सबकी अपेक्षा करोड गुना अधिक गुण करता है । स्निग्ध, मोटे पत्रवाला, उत्तम वर्णवाला, वजनदार और जिसके पत्र सहजमें न छूटें ऐसा अभ्रक अत्यन्त श्रेष्ठ कहा है ॥ ९-१२ ॥

अभ्रकके गुण दोष ।

सचन्द्रिकं च किट्टाभं व्योम न ग्रासयेद्रसम् ।
ग्रासितश्च नियोज्योऽसौ लोहे चैव रसायने ॥ १३ ॥
निश्चन्द्रिकं मृतं व्योम सेव्यं सर्वगदेषु च ।
सेवितं चन्द्रसंयुक्तं मेहं मन्दानलं चरेत् ॥ १४ ॥
यैरुक्तं युक्तिनिर्मुक्तैः पत्राभ्रकरसायनम् ।
तैर्दिष्टं कालकूटाख्यं विषं जीवनहेतवे ॥ १५ ॥
सत्त्वार्थं सेवनार्थं च योजयेच्छोधिताभ्रकम् ।
अन्यथा त्वगुणं कृत्वा विकरोत्येव निश्चितम् ॥ १६ ॥

चन्द्रिकायुक्त (चमकदार) और कीट (धातुमल) के समान अभ्रक (भस्म) पारेको नहीं ग्रसता धातुकी सिद्धि करने और रसायन-कर्ममें जो पारा उपयोगमें लिया जाता है उसको अभ्रक ग्रास किया हुआ लेना चाहिये । निश्चन्द्र (चमकरहित) अभ्रककी भस्म सम्पूर्ण रोगोंमें सेवन करनी चाहिये चन्द्रिकायुक्त अभ्रकको सेवन करनेसे प्रमेह और मन्दाग्नि रोग उत्पन्न होता है । जिन विचारश-क्तिहीन मनुष्योंने पत्राभ्रक (जिसके पत्र सहजमें छूट जाते हैं) को रसायन कहा है, उन्होंने जीवनकी रक्षाके लिये मानो कालकूट विष सेवन करनेकी आज्ञा दी है । सत्त्व निकालनेके लिये या भस्म रूपसे सेवन करनेके लिये उत्तम प्रकारसे शुद्ध किया हुआ अभ्रक लेना चाहिये । अन्यथा अशुद्ध अभ्रक अनेक अवगुणोंको उत्पन्न करता है, जिनसे लोभके बदले हानि होती है ॥ १३–१६ ॥

अभ्रककी शुद्धि तथा भस्म ।

प्रतप्तं सप्तवाराणि निक्षिप्तं कांजिकेऽभ्रकम् ।
निर्दोषं जायते नूनं प्रक्षिप्तं वापि गोजले ॥ १७ ॥
त्रिफलाक्वथिते वापि गवां दुग्धे विशेषतः ।
ततो धान्याभ्रकं कृत्वा पिष्ट्वा मत्स्याक्षिकारसैः ॥ १८ ॥
चक्रीं कृत्वा विशोष्याथ पुटेद्धमके पुटे ।
पुटेदेवं हि षड्वारं पौनर्नवरसैः सह ॥ १९ ॥
कलांशटंकणेनाथ संमर्द्य कृतचक्रिकम् ।
अर्धभारव्यपुटैस्तद्वत्सप्तवारं पुटेत्खलु ॥ २० ॥
एवं वासारसेनापि तण्डुलीयरसेन च ।
प्रपुटेत्सप्तवाराणि पूर्वप्रोक्तविधानतः ॥ २१ ॥
एवं सिद्धं हतं सर्वरोगेषु विनियोजयेत् ॥ २२ ॥

अभ्रकको अग्निमें तपा तपाकर कांजी, गोमूत्र, त्रिफलेका क्वाथ और विशेषकर गायका दूध इनमें सात २ बार बुझानेसे अभ्रक शुद्ध होता है। किन्तु प्रत्येक बुझावमें कॉजी आदि पदार्थ नये नये डालने चाहिये । अभ्रकमारण विधि। फिर उसको धान्याभ्रक बनाकर मत्स्याक्षी (मछेछी) के रसमें अच्छे प्रकारसे खरल करके गोल २ टिकियां बना लेवे। फिर उसको सुखाकर अर्द्ध गजपुटमें पुट देवे। इस प्रकार ६ बार पुट देवे फिर सोलहवाँ भाग सुहागा उक्त अभ्रकके साथ पुनर्नवेके रसमें खरल करके टिकियां बनाकर अर्द्ध गजपुटमें सात बार पुट देवे। इसी प्रकार उक्त अभ्रकमें सोलहवाँ भाग सुहागा मिलाकर अडूसेके रसमें या चौलाईके रसमें खरल करके पूर्वोक्त विधिसे सात २ बार पुट देवे। इस प्रकार अभ्रककी भस्म होती है। इसको सब प्रकारके योगोंमें प्रयोग करना चाहिये ॥ १७–२२ ॥

धान्याभ्रक विधि।

चूर्णाभ्रं शालिसंयुक्तं वस्त्रबद्धं हि कांजिके ।
निर्यातं मर्दनाद्वस्त्राद्धान्याभ्रमिति कथ्यते ॥ २३ ॥
धान्याभ्रं कासमर्दस्य रसेन परिमर्दितम् ।
पुटितं दशवारेण म्रियते नात्र संशयः ॥ २४ ॥

शुद्ध अभ्रकके चूर्णको शालि धानोंके साथ मजबूत वस्त्रमें ढीला बाँधकर कॉजीमें भिजोकर दोनों हाथोंसे खूब मर्दन करे। जिससे कि उसका बारीक चूर्ण वस्त्रके छिद्रोंमेंसे निकलकर काँजीमें गिरता जाय। पश्चात् उस काँजीसे भरे हुए बर्त्तनको विना हिलाये सहजमें एक जगह कुछ देरतक रख देवे। जब वह स्थिर हो जाय तब उस-मेंसे काँजीको हलकेसे उतार दे और तलीमें बैठे हुए अभ्रकको स्वच्छ पानी डालकर धो डाले। इसको धान्याभ्रक कहते हैं। मारणविधि। धान्याभ्रकको कसौंदीके रसमें खरल करके टिकियां बनाकर सुखा

लेवे और अर्द्ध गजपुटमें फूँक देवे । इस प्रकार दश पुट देनेसे अभ्रककी निःसन्देह भस्म हो जाती है ॥ २३ ॥ २४ ॥

तद्वन्मुस्तारसेनापि तण्डुलीयरसेन च ।
पीतामलकसौभाग्यपिष्टं चक्रीकृताभ्रकम् ॥ २५ ॥
पुटितं षष्टिवाराणि सिन्दूराभ्रं प्रजायते ।
क्षयाद्यखिलरोगघ्नं भवेद्रोगानुपानतः ॥ २६ ॥

उसी प्रकार धान्याभ्रकको नागरमोथेके रसमें और चौलाईके रसमें खरल करके दश पुट देनेसे अभ्रककी भस्म हो जाती है । अभ्रकके साथ १६ वां भाग सुहागा मिलाकर उसको दारुहलदीके क्वाथ और आमलेके रसमें क्रमसे खरल करके टिकियासी बनाकर अर्द्ध गजपुटमें रखकर ६० पुट देवे तो सिन्दूरके समान लाल वर्णवाली अभ्रककी भस्म होती है । यह भस्म रोगानुसार भिन्न २ अनुपानोंके साथ सेवन करनेसे क्षयादि सम्पूर्ण दारुण रोगोंको नाश करती है ॥२५–२६॥

अन्य विधि ।

वटमूलत्वचाक्काथैस्ताम्बूलीपत्रसारतः ।
वासामत्स्याक्षिकाभ्यां वा मीनाक्ष्या सकटिल्लया॥२७॥
पयसा वटवृक्षस्य मर्दितं पुटितं घनम् ।
भवेद्विंशतिवारेण सिंदूरसदृशप्रभम् ॥ २८ ॥

धान्याभ्रकको बडकी जडकी छाल अथवा बडकी डाढीके क्वाथमें खरल करके टिकियां बनाकर गजपुटमें फूँके । इस प्रकार २० पुट देवे । अथवा नागरबेलके पानोंके रसमें किंवा अडूसेके और मछेछीके रसमें अथवा मत्स्याक्षी और करेलेके रसमें खरल करके २० पुट देवे । अथवा केवल बडके दूधमें खरल करके २० पुट देनेसे अभ्रककी सिन्दूरके समान लाल भस्म हो जाती है ॥ २७ ॥ २८ ॥

अभ्रकका सत्त्वपातन ।

पादांशटंकणोपेतं मुसलीपरिमर्दितम् ।
रुन्ध्यात्कोष्ठ्यां दृढं ध्मातं सत्त्वरूपं भवेद्घनम् ॥२९॥

कासमर्दघनाधान्यवालानां च पुनर्भुवः ।
मत्स्याक्ष्याः काकवल्याश्च हंसपाद्या रसैः पृथक् ३०॥
पिष्ट्वा पिष्ट्वा प्रयत्नेन शोषयेद्धर्मयोगतः ।
पलं गोधूमचूर्णस्य क्षुद्रमत्स्याश्च टंकणम् ॥ ३१ ॥
प्रत्येकमष्टमांशेन दत्त्वा रुद्ध्वा विमर्दयेत् ।
मर्दने मर्दने सम्यक् शोषयेद्रविरश्मिभिः ॥ ३२ ॥
पञ्चाजं पञ्चगव्यं च पञ्चमाहिषमेव च ।
क्षिप्त्वा गोलान्प्रकुर्वीत किंचित्तिन्दुकतोऽधिकात् ३३
अधःपातनकोष्ठ्यां हि ध्मात्वा सत्त्वं निपातयेत् ।
कोष्ठ्यां किट्टं समाहृत्य विचूर्ण्य रवकान्हरेत् ॥ ३४॥
तत्किट्टं स्वल्पटंकेन गोमयेन विमर्द्य च ।
गोलान्विधाय संशोष्य धमेद्भूयोऽपि पूर्ववत् ॥ ३५ ॥
भूयः किट्टं समाहृत्य मृदित्वा सत्त्वमाहरेत् ।
अथ सत्त्वकणाँस्ताँस्तु क्वाथयित्वाम्लकांजिकैः ॥ ३६
शोधनीयगणोपेतं मूषामध्ये निरुध्य च ।
सम्यग्द्रुतं समाहृत्य द्विवारं प्रधमेद्धनम् ॥ ३७ ॥
इति शुद्धं भवेत्सत्त्वं योज्यं रसरसायने ॥ ३८ ॥

धान्याभ्रकमें चौथाई भाग सुहागा मिलाकर उसको मुसलीके रसमें खरल करके घडियामें बंधकर अग्निमें फूँके तो अभ्रकमेंसे लोहेकी समान घन सत्त्व निकलताहै । अथवा कँसौंदी, नागरमोथा, धनियाँ, अडूसा, पुनर्नवा, मत्स्याक्षी (मछेछी), घुंघुची और लज्जालु इन औषधियोंके रस या काढेमें क्रमसे पृथक् २ खरल करे और प्रत्येक बार धूपमें सुखावे । फिर गेहूँका चूर्ण ४ तोले, छोटी मछली और सुहागा ये प्रत्येक अभ्रकसे अष्टमांश लेकर सबको अभ्र-

कमें अच्छे प्रकारसे मिलाकर खरल करे और प्रत्येक वार खरल करनेके पश्चात् धूपमें सुखावे । फिर अभ्रकमें पंचाज (बकरीका दूध दही, घी, मल और मूत्र इन पाँचोंको पञ्चाज कहते हैं), पञ्चगव्य और पञ्चमाहिष (गायके दूध, दही, घी आदि पाँचों पदार्थोंको पञ्चगव्य और भैंसके उक्त पाँचों पदार्थोंको पंचमाहिष कहते हैं ।) को समान भागसे मिलाकर खूब खरल करके १ तोलेसे कुछ बड़े गोले बनाकर धूपमें सुखा लेवे । फिर उनको अधःपातन मूषायंत्रमें रखकर फूँके तो अभ्रकमेंसे सत्त्व निकलता है। पश्चात् मूषामेंसे कीटको निकालकर उसको पीसकर उसमें आठवाँ भाग सुहागा और समान भाग गायका गोबर मिलाकर खरल करके गोले बनाकर सुखावे । फिर उनको मूषामें रखकर उपर्युक्त विधिसे फूँके तो सत्त्व निकलता है । इस प्रकारसे जबतक उसमेंसे सम्पूर्ण सत्त्व न निकले तबतक कीटको उपर्युक्त विधिसे किंचित् सुहागे और गोबरके साथ खरल करके गोले बनाकर मूषामें रखकर अग्नि देवे । इस प्रकार अभ्रकका समस्त सत्त्व निकल आता है । फिर उन सब सत्त्वकणोंको एकत्रित करके खट्टी कांजीमें पका लेवे । पश्चात् उसमें शोधनीय गणकी सब औषधियोंका क्वाथ डालकर तीन घंटे तक खरल करके गोले बनाकर धूपमें सुखा लेवे । फिर उनको मूषामें बन्द करके ऊपरसे कपरौटी कर तीक्ष्ण अग्नि देवे । जब वह रसके समान पतला हो जाय तब शीतल करके फिर शोधनीय गणकी औषधियोंके क्वाथमें घोटकर पूर्ववत् फूँके । इस प्रकार तैयार किया हुआ शुद्ध सत्त्व रस, रसायनादि कार्योंमें प्रयोग करना चाहिये ॥ २९-३८ ॥

अभ्रककी द्रुति ।

मधुतैलवसाज्येषु द्रावितं परिवापितम् ।
मृदु स्याद्दशवारेण सत्त्वं लोहादिकं खरम् ॥ ३९ ॥

अभ्रक सत्त्वको अग्निपर गलाकर उसमें शहद, तेल, घी और चर्बी डालकर पकावे । इस प्रकार दस वार पकानेसे अभ्रक सत्त्व

मृदु हो जाता है । (इसी विधिसे अन्य कठिन धातुयें भी मृदु की जाती हैं) ॥ ३९ ॥

सत्त्वाभ्ररसायन ।

पट्टचूर्णं विधायाथ गोघृतेन परिप्लुतम् ।
भर्जयेत्सप्तवाराणि चुल्लीसंस्थितखर्परे ॥ ४० ॥
अग्निवर्णं भवेद्यावद्वारं वारं विचूर्णयेत् ।
तृणं क्षिप्त्वा दहेद्यावत्तावद्वा भर्जनं चरेत् ॥ ४१ ॥
ततः सगन्धकं पिष्ट्वा वटमूलकषायतः ।
पुटेद्विंशतिवाराणि वाराहेण पुटेन हि ॥ ४२ ॥
पुनर्विंशतिवाराणि त्रिफलोत्थकषायतः ।
त्रिफलामुंडिकाभृंगपत्रपथ्याक्षमूलकैः ॥ ४३ ॥
भावयित्वा प्रयोक्तव्यं सर्वरोगेषु मात्रया ।
एवं चेच्छतवाराणि पुटपाकेन साधितम् ॥ ४४ ॥
सत्त्वाभ्रान्नापरं किञ्चिन्निर्विकारं गुणोत्तरम् ।
गुणवज्जायतेऽत्यर्थं परं पाचनदीपनम् ॥ ४५ ॥

उपर्युक्त विधिसे तैयार किये हुए अभ्रकके सत्त्वको बारीक पीस-कर कपडछान करके गायके घीमें मिलाकर खीपडे या कढाईमें डाल-कर और चूल्हेपर चढाकर उत्तम प्रकारसे भूने । कढाई जबतक अग्निके समान लाल न हो जाय और उसके ऊपर तिनकेको डाल-नेसे वह जलने न लगे तबतक बराबर भूने । फिर कढाईको नीचे उतारकर उसका चूर्ण करके समान भाग घृतमें मिलाकर पूर्ववत् भूने । इस प्रकार सात बार भूने और प्रत्येक बारमें चूर्ण करता जाय । फिर उसमें समान भाग गन्धक डालकर बडकी डाढीके काथमें घोट-कर २० बार वाराह पुट देवे । परन्तु प्रत्येक पुटके अन्तमें बराबर

भाग गन्धक मिलाता जाय । फिर त्रिफलेके क्वाथमें घोटकर २० बार वाराह पुट देवे । पश्चात् त्रिफला, मुंडी, भाँगरेके पत्ते, हरड, बहेडा और मूलीके पत्ते इन प्रत्येकके रस या क्वाथमें क्रमसे भावना देवे तो सत्त्वाभ्ररसायन सिद्ध होती है । इसको समस्त रोगोंमें योग्य मात्रासे प्रयोग करना चाहिये । इस सत्त्वाभ्ररसायनको यदि बड और त्रिफलेके क्वाथमें खरल करके बीस २ पुट देनेके बदले पचास २ वाराह पुट दिये जायँ तो शतपुटित अभ्रक भस्म होजाती है । सम्पूर्ण विकारोंसे रहित और उत्तरोत्तर गुण करनेवाली इस सत्त्वाभ्रकसे बढकर अन्य उत्कृष्ट औषध नहीं है । यह अत्यन्त गुणवाली, पाचक और अग्निप्रदीपक है ॥ ४०-४५ ॥

अभ्रक भस्मकी अन्यविधि ।

गन्धर्वपत्रतोयेन गुडेन सह भावितम् ।
अधोर्ध्वं वटपत्राणि निश्चन्द्रं त्रिपुटैः खगम् ॥ ४६ ॥
क्षुधं करोति चात्यर्थं गुञ्जार्द्धमिति सेवया ।
तत्तद्रोगहरैर्योगैः सर्वरोगहरं परम् ॥ ४७ ॥

धान्याभ्रकमें समान भाग गुड मिलाकर उसको अण्डके पत्तोंके रसमें घोटकर टिकियां बना लेवे फिर उस टिकियाके नीचे, ऊपर बडके पत्ते रखकर उसको शराव सम्पुटमें बन्द करके गजपुटमें फूँके । इस प्रकार तीन पुट देनेसे अभ्रककी निश्चन्द्र भस्म होती है । यह भस्म आधी २ रत्ती परिमाण सेवन करनेसे क्षुधाकी अतिशय वृद्धि होती है । और रोगानुसार प्रयोगोंके साथ सेवन करनेसे सम्पूर्ण रोगोंको नाश करती है ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

दिव्याभ्ररसायन ।

सत्त्वस्य गोलकं ध्मातं सस्यसंयुक्तकांजिके ।
निर्वाप्य तत्क्षणेनैव कुट्टयेल्लोहपारया ॥ ४८ ॥
संप्रताप्य घनस्थूलकणान्क्षिप्त्वाथ कांजिके ।

तत्क्षणेन समाहृत्य कुट्टयित्वा रजश्चरेत् ॥ ४९ ॥
गोघृतेन च तच्चूर्णं भर्जयेत्पूर्ववत्त्रिधा ।
धात्रीफलरसैस्तद्वद्धात्रीपत्ररसेन वा ॥ ५० ॥
भर्जने भर्जने कार्यं शिलापट्टेन पेषणम् ।
ततः पुनर्नवावासारसैः कांजिकमिश्रितैः ॥ ५१ ॥
गपुटेद्दशवाराणि दशवाराणि गन्धकैः ।
एवं संशोधितं व्योमसत्त्वं सर्वगुणोत्तरम् ।
यथेष्टं विनियोक्तव्यं जारणे च रसायने ॥ ५२ ॥
वेल्लव्योषसमन्वितं घृतयुतं वल्लोन्मितं सेवितम् ।
दिव्याभ्रं क्षयपाण्डुरुग्ग्रहणिकाशूलामकुष्ठामयम् ॥
ऊर्ध्वश्वासगतं प्रमेहमरुचिं कासामयं दुर्धरम् ।
मन्दाग्निं जठरव्यथां विजयते योगैरशेषामयान् ॥५३॥

अभ्रकके सत्त्वका गोला बनाकर उसको मूषामें रखकर कोयलों-की अग्निमें तपावे जब वह खूब लाल हो जाय तब उसको चीमटेसे निकालकर धानोंकी कॉजीमें बुझावे फिर लोहेके खरलमें डालकर लोहेकी मुसलीसे खूब पीसे पश्चात् उसमें जो मोटे मोटे अभ्रकके कण रह जायँ उनको फिर उर्युक्त विधिसे तपाकर और काँजीमें बुझा-कर कूट पीस करके बारीक चूर्ण कर लेवे। फिर उस चूर्णको गौके घीमें मिलाकर पूर्वोक्त विधिसे तीन बार भूने और प्रत्येक बार, पीस-कर चूर्ण करता जाय । इसके पश्चात् आमलोंके रस अथवा आमलोंके पत्तोंके रसमें तीन २ बार भूने और प्रत्येक बारमें पीसता जाय । फिर पुनर्नवेका रस, अडूसेका रस और कॉजी इन तीनोंको एकत्र मिला-कर इनसे खरल करके दस बार गजपुट देवे । फिर गन्धकके साथ खरल करके दश पुट देवे । इस प्रकार सिद्ध की हुई दिव्याभ्ररसायन सम्पूर्ण गुणोंको करती है । इसको पारदके जारण करने और रसाय-

नकर्ममें यथेष्ट रूपसे व्यवहार करना चाहिये पश्चात् वायविडङ्ग और त्रिकुटा इनको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करके उसमेंसे दो आने भर लेवे। उस चूर्णमें डेढ रत्ती इस रसायनको और घृतको मिलाकर प्रतिदिन सेवन करे। यह दिव्याभ्ररसायन क्षय, पाण्डुरोग, संग्रहणी, शूल, आमवात, कोढ, ऊर्ध्वश्वास, प्रमेह, अरुचि, दारुण खाँसी, मन्दाग्नि, उदररोग और अन्यान्य अनेक प्रकारके असाध्य रोगोंको भिन्न भिन्न अनुपानोंके साथ सेवन करनेसे शीघ्र नष्ट करती है ॥४९–५३॥

द्रुतयो नैव निर्दिष्टाः शास्त्रे दृष्टा अपि दृढम् ।
विना शम्भोः प्रसादेन न सिध्यन्ति कदाचन ॥ ५४ ॥

अभ्रकका द्रावण यद्यपि अनेक ग्रन्थोंमें कहा गया है, किन्तु यहाँ नहीं कहा । कारण, श्रीशंकर भगवान्‌की कृपाके विना यह क्रिया कदापि सिद्ध नहीं होती ॥ ५४ ॥

अथ वैक्रान्तपरीक्षा ।

अष्टास्रश्चाष्टफलकः षट्कोणो मसृणो गुरुः ।
शुद्धमिश्रितवर्णैश्च युक्तो वैक्रान्त उच्यते ॥ ५५ ॥
श्वेतो रक्तश्च पीतश्च नीलः पारावतच्छविः ।
श्यामलः कृष्णवर्णश्च कर्बुरश्चाष्टधा हि सः ॥ ५६ ॥

आठ कोने व आठ फलकवाला अथवा ६ कोनेवाला एवं चिकना भारी, शुद्ध और मिश्रित वर्णवाला ऐसा वैक्रान्त उत्तम होता है। सफेद, लाल, पीला, नीला, कबूतरकी समान वर्णवाला, श्यामवर्णवाला, काला और चितकबरा इन रंगोंके भेदसे वैक्रान्त आठ प्रकारका होता है ॥ ५५ ॥ ५६ ॥

वैक्रान्तके गुण ।

आयुःप्रदश्च बलवर्णकरोऽतिवृष्यः प्रज्ञाप्रदः सकलदोषगदापहारी ॥ दीप्ताग्निकृत्पविसमानगुणस्त-

रस्वी वैक्रांतकः खलु वपुर्बललोहकारी ॥ ५७ ॥
रसायनेषु सर्वेषु पूर्वगण्यः प्रतापवान् ।
वज्रस्थाने नियोक्तव्यो वैक्रांतः सर्वदोषहा ॥ ५८ ॥

वैक्रान्त आयु, बल और वर्णकी वृद्धि करनेवाला, अत्यन्त वृष्य, बुद्धिवर्द्धक एवं वात, पित्तादि सम्पूर्ण दोषोंको हरनेवाला, जठराग्निको दीपन करनेवाला और हीरेके समान गुणकारी है । एवं इन्द्रियोंमें स्फूर्त्ति उत्पन्न करनेवाला और शरीरको बलवान् तथा लोहेकी समान दृढ करनेवाला है । यह सम्पूर्ण रसायनोंमें अग्रगण्य, प्रतापवान्, समस्त दोषनाशक और हीरेके अभावमें प्रयोग करने योग्य है ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

वैक्रान्तकी उत्पत्तिभेद ।

दैत्येंद्रो माहिषः सिद्धः सहदेवसमुद्भवः ।
दुर्गा भगवती देवी तं शूलेन व्यमर्दयत् ॥५९॥
तस्य रक्तं तु पतितं यत्र यत्र स्थितं भुवि ।
तत्र तत्र तु वैक्रांतं वज्राकारं महारसम् ॥ ६० ॥
विंध्यस्य दक्षिणे भागे ह्युत्तरे वास्ति सर्वतः ।
विकृंतयाति लोहानि तेन वैक्रांतकः स्मृतः ॥ ६१ ॥
श्वेतः पीतस्तथा रक्तो नीलः पारावतच्छविः ।
मयूरकंठसदृशश्चान्यो मरकतप्रभः ॥ ६२ ॥
देहसिद्धिकरं कृष्णं पीते पीतं सिते सितम् ।
सर्वार्थसिद्धिदं रक्तं तथा मरकतप्रभम् ॥ ६३ ॥
शेषे द्वे निष्फले वर्ज्ये वैक्रांतमिति सप्तधा॥ ६४ ॥

सहदेवसे उत्पन्न हुए प्रसिद्ध दैत्य महिषासुरको जब भगवतीने स्वअपने त्रिशूलसे मारा था, उस समय उसका रुधिर जहाँ २ पृथ्व-

पर गिरा, वहीं २ हीरेके समान आकारवाला वैक्रान्त नामक महारस उत्पन्न हो गया । विन्ध्याचलके दक्षिण और उत्तर भागमें इसकी खानें हैं । यह लोहादि सम्पूर्ण धातुओंको काट डालता है, इसलिये इसको वैक्रान्त कहते हैं । यह सफेद, पीला, नीला, लाल, कबूतरके समान कांतिवाला, मोरके कण्ठके समान वर्णवाला और मरकतमणिके समान वर्णवाला इस प्रकार सात प्रकारका होता है । काला वैक्रान्त शरीरको सिद्धि (अर्थात् अजर, अमर) प्रदान करता है, पीला वैक्रान्त सोना आदि बनानेमें और सफेद वक्रान्त चाँदी बनानेके काममें आता है । लाल और मरकतमणिके समान वर्णवाला वैक्रान्त शरीरमें धारण करनेसे सम्पूर्ण अर्थ सिद्धियोंको देता है । शेषक (अर्थात् नीला और कबूतरके समान वर्णवाला) दोनों वैक्रान्त निष्फल होते हैं, इसलिये उनको ग्रहण नहीं करना चाहिये ॥ ५९–६४ ॥

यत्र क्षेत्रे स्थितं चैव वैक्रांतं तत्र भैरवम् ।
विनायकं च सम्पूज्य गृह्णीयाच्छुद्धमानसः ॥ ६५ ॥
वैक्रान्तो वज्रसदृशो देहलोहकरो मतः ।
विषघ्नो रसराजश्च ज्वरकुष्ठक्षयप्रणुत् ॥ ६६ ॥

जिस स्थानमें वैक्रान्त स्थित हो, वहाँ शुद्ध चित्तसे भैरव और गणेशका पूजन करके उसको ग्रहण करै वैक्रान्त हीरेके समान गुण करनेवाला एवं शरीर और लोहादि धातुओंकी सिद्धि करनेवाला है । तथा विषनाशक, ज्वर, कुष्ठ और क्षयरोगको नष्ट करनेवाला और सब रसोंका राजा है ॥ ६५ ॥ ६६ ॥

वैक्रान्तका शोधन ।

वैक्रांतकाः स्युस्त्रिदिनं विशुद्धाः संस्वेदिताः क्षारपटूनि दत्त्वा । अम्लेषु मूत्रेषु कुलत्थरम्भानीरेऽथवा कोद्रववारिपक्काः ॥ ६७ ॥
कुलत्थक्काथसंस्विन्नो वैक्रान्तः परिशुद्ध्यति ॥ ६८ ॥

वैक्रान्तको काँजी आदि अम्लवर्ग, मूत्रवर्ग, कुलथीका काढा, केलेका स्वरस अथवा कोदोंका काढा इनमें जवाखार, सज्जी और पाँचों नमक मिलाकर उसको दोलायन्त्रके द्वारा तीन दिन तक स्वेद देनेसे अथवा केवल कुलथीके क्वाथमें तीन दिन स्वेद देनेसे भी वैक्रान्त शुद्ध हो जाता है ॥ ६७ ॥ ६८ ॥

वैक्रान्तकी भस्मविधि ।

म्रियतेऽष्टपुटैर्गन्धनिम्बुकद्रवसंयुतः ।
वैक्रांतेषु च तप्तेषु हयमूत्रं विनिक्षिपेत् ॥ ६९ ॥
पौनःपुन्येन वा कुर्याद्द्रवं दत्त्वा पुटेत्त्वनु ।
भस्मीभूतं च वैक्रांतं वज्रस्थाने नियोजयेत् ॥ ७० ॥

गन्धकको नीबूके रसमें खरल करके उसकी लुगदी बनाकर उसमें वैक्रान्तको रखकर गजपुट देवे । इस प्रकार आठ बार पुट देनेसे अथवा वैक्रान्तको कोयलोंकी अग्निपर तपा तपाकर बार बार घोडेके मूत्रमें बुझानेसे वैक्रान्तकी भस्म होजाती है । इस प्रकार की हुई वैक्रान्त भस्म हीरेकी जगह प्रयोग करनी चाहिये ॥ ६९ ॥ ७० ॥

वैक्रान्तका सत्त्वपातन ।

मोक्षमोरटपालाशक्षारगोमूत्रभावितम् ।
वज्रकंदनिशाकल्कफलचूर्णसमन्वितम् ।
तत्कल्कं टंकणं लाक्षाचूर्णं वैक्रांतसंभवम् ॥ ७१॥
नवसारसमायुक्तं मेषशृंगीद्रवान्वितम् ।
पिण्डितं मूकमूषस्थं ध्मापितं च हठाग्निना ॥ ७२ ॥
तत्रैव पतते सत्त्वं वैक्रांतस्य न संशयः ।
सत्त्वपातनयोगेन मर्दितश्च वटीकृतः ।
मूषास्थो घटिकाध्मातो वैक्रांतः सत्त्वमुत्सृजेत् ॥७३॥

मोखा, मोरटलता और ढाक इनके खारोंको गोमूत्रमें पीसकर उसमें वैक्रान्तको भावना देवे । फिर वज्रकन्द और हल्दीका कल्क समान भाग एवं त्रिफलेका चूर्ण सुहागा, लाखका चूर्ण और नौसादर इनमें वैक्रान्तकी भस्मको मिलाकर मेढासिंगीके रसमें या काथमें खरल करके गोलासा बना लेवे । उसको अन्धमूषामें रखकर कोयलोंकी तीक्ष्ण अग्नि देवे तो वैक्रान्तका अवश्य सत्त्व निकल आता है । अथवा आगे कहे हुए सत्त्वपातनके योगोंके साथ वैक्रान्तको घोट-कर गोला बनावे और उसको मूषामें रखकर एक घडी तक तीक्ष्ण अग्नि देवे तो भी वैक्रान्तका सत्त्व निकल आता है ॥ ७१-७३ ॥

वैक्रान्त रसायन ।

भस्मत्वं समुपागतो विकृतको हेम्ना मृतेनान्वितः,
पादांशेन कणाज्यवेल्लसहितो गुंजामितः सेवितः ।
यक्ष्माणं जरणं च पाण्डुगुदजं श्वासं च कासामयं,
दुष्टां च ग्रहणीमुरःक्षतमुखान् रोगाञ्जयेदाहकृत् ७४॥

वैक्रान्तकी भस्म ४ भाग और सुवर्णभस्म १ भाग लेकर दोनोंको एकत्र खरल करके रखलेवे । फिर छोटी पीपल और वायविडंगका चूर्ण एक २ मासा लेकर उसमें घृत और उक्त भस्म १ रत्ती परिमाण मिलाकर सेवन करनेसे राजयक्ष्मा, जरा, पाण्डु, अर्श, श्वास, कास, कठिन संग्रहणी, उरःक्षत और मुखके रोग दूर होते हैं और शरीरकी उत्तम सिद्धि होती है ॥ ७४ ॥

सूतभस्मार्धसंयुक्तं नीलवैक्रांतभस्मकम् ।
मृताभ्रसत्त्वमुभयोस्तुलितं परिमर्दितम् ॥ ७५ ॥
क्षौद्राज्यसंयुतं प्रातर्गुंजामात्रं निषेवितम् ।
निहंति सकलान्रोगान्दुर्जयानन्यभेषजैः ।
त्रिसप्तदिवसैर्नॄणां गंगांभ इव पातकम् ॥ ७६ ॥

नीले वैक्रान्तकी भस्म १ भाग, पारेकी भस्म आधा भाग और अभ्रकभस्म दोनोंके बराबर भाग लेकर सबको एकत्र खरल कर लेवे । इसमेंसे एक रत्ती परिमाण लेकर शहद और घृतमें मिलाकर प्रतिदिन प्रातःकाल सेवन करे । यह भस्म अन्यान्य औषधियोंके साथ मिलाकर २१ दिन तक सेवन करनेसे मनुष्योंके सम्पूर्ण दारुण रोगोंको इस प्रकार नष्ट करती है, जैसे गंगाजल पापोंको शीघ्र दूर कर देता है ॥ ७५॥७६ ॥

सुवर्णमाक्षिककी उत्पत्ति, लक्षण और गुण ।

सुवर्णशैलप्रभवो विष्णुना कांचनो रसः ।
तापीकिरातचीनेषु यवनेषु च निर्मितः ॥ ७७ ॥
ताप्यः सूर्यांशुसंतप्तो माधवे मासि दृश्यते ।
मधुरः कांचनाभासः साम्लो रजतसन्निभः ॥७८॥
किंचित्कषायमधुरः शीतः पाके कटुर्लघुः ।
तत्सेवनाज्जराव्याधिविषैर्न परिभूयते ॥ ७९ ॥
माक्षिको द्विविधो हेममाक्षिकस्तारमाक्षिकः ।
तत्राद्यं माक्षिकं कान्यकुब्जोत्थं स्वर्णसन्निभम् ॥८०॥
तापतीतीरसंभूतं पंचवर्णसुवर्णवत् ।
पाषाणबहलः प्रोक्तस्ताराख्योल्पगुणात्मकः ॥ ८१ ॥
माक्षीकधातुः सकलामयघ्नः प्राणो रसेंद्रस्य
परं हि वृष्यः ॥ दुर्मेललोहद्वयमेलनश्च गुणोत्तरः
सर्वरसायनाग्र्यः ॥ ८२ ॥

सुमेरु पर्वतसे उत्पन्न हुए सुवर्ण रसको श्रीविष्णु भगवान्‌ने तापी नदी और उसके तीरवर्त्ती स्थानोंमें एवं किरात चीन और आबू आदि यवन देशोंमें निर्माण किया है । इसको स्वर्णमाखी कहते हैं । वैशा-

खके महीनेमें सूर्यकी तीक्ष्ण किरणोंके तपनेसे सोनामाखी दिखाई देती है । सुवर्णके समान कान्तिवाली माक्षिक धातु स्वादमें मधुर होती है और चाँदीके समान कान्तिवाली माक्षिक धातु अम्ल, मधुर, कुछ कषैली, शीतल, पाकमें कटु (चरपरी) और हल्की होती है । दोनों प्रकारकी माक्षिक धातुओंको सेवन करनेसे मनुष्यको वृद्धावस्था, रोग और विषकी बाधा नहीं होती । सोनामाखी और रूपामाखी इन भेदोंसे माक्षिक दो प्रकारका होता है । इनमें जो सोनामाखी कन्नौजमें उत्पन्न होती है, वह सोनेके समान कान्तिवाली होती है । किन्तु तापी नदीके किनारे पर उत्पन्न होनेवाली सोनामाखी पंचरंगी और अधिक सुवर्ण वर्णवाली होती है । रूपामाखीमें पत्थरका अंश अधिक होता है और वह अल्प गुणोंवाली होती है । दोनों प्रकारकी माक्षिक धातुयें सम्पूर्ण रोगोंका नाश करनेवाली पारेको प्राणस्वरूप और अत्यन्त वृष्य हैं । अब दो धातुओंको आपसमें मिलाने पर बडी कठिनता पडती है तब ये उनको सहजमें मिला देती हैं । एवं सर्व गुणयुक्त और सब रसायनोंमें श्रेष्ठ है ॥७७-८२॥

माक्षिक शोधन ।

एरंडतैललुंगांबुसिद्धं सिद्धचति माक्षिकम् ।
सिद्धं वा कदलीकंदतोयेन घटिकाद्वयम् ।
तप्तं क्षिप्तं वराकाथे शुद्धिमायातिमाक्षिकम् ॥ ८३ ॥

सोनामाखी वा रूपामाखीका चूर्ण करके खीपडेमें या कढाईमें डालकर अण्डीके तेलमें भून ले अथवा बिजौरे नींबूके रसमें या केलेकी जडके रसमें दो घडी पर्यन्त पकावे तो सोनामाखी वा रूपामाखी शुद्ध होती है । अथवा सोनामाखी वा रूपामाखीको अग्निमें खूब तपावे, जब लाल हो जाय तब त्रिफलेके काढेमें बुझानेसे शुद्ध होती है ॥८३॥

माक्षिक भस्मविधि ।

मातुलुंगांबुगंधाभ्यां पिष्टं मूषोदरे स्थितम् ।
पंचक्रोडपुटे दग्धं म्रियते माक्षिकं खलु ॥ ८४ ॥

एरंडस्नेहगव्याज्यैर्मातुलुंगरसेन वा ।
खर्परस्थं दृढं पक्वं जायते धातुसन्निभम् ॥ ८५ ॥
एवं मृतं रसे योज्यं रसायनविधावपि ॥ ८६ ॥

सोनामाखीके चूर्णमें समान भाग गन्धक मिलाकर बिजौरे नीबूके रसमें खरल करके गोला बनाकर और मूषामें रखकर वाराहपुट देवे । इस प्रकार पाँच पुट देनेसे निश्चय भस्म हो जाती है अथवा सोना-माखीके चूर्णको एक खीपडेमें डालकर अण्डीके तेल या गायके घीके साथ तबतक भूने जबतक कि वह अच्छे प्रकारसे लाल न हो जाय और लोहेकी करछीसे चलाता जाय । उसी प्रकार बिजौरे नीबूके रसमें पकावे । इस प्रकार करनेसे सोनामाखीकी लाल रंगकी उत्तम भस्म हो जाती है । इस भस्मको रस और रसायनकर्ममें प्रयोग करना चाहिये ॥ ८४-८६ ॥

सुवर्णमाक्षिकका सत्त्वपातन ।

त्रिंशांशनागसंयुक्तं क्षारैरम्लैश्च मर्दितम् ।
ध्मातं प्रकटमूषायां सत्त्वं मुञ्चति माक्षिकम् ॥ ८७ ॥
सत्वारं परिद्राव्य क्षिप्तं निर्गुण्डिकाद्रवे ।
माक्षीकसत्त्वसम्मिश्रं नागं नश्यति निश्चितम् ॥ ८८ ॥

सोनामाखीके चूर्णमें तीसवाँ भाग शीशा (अग्निपर गलाकर) मिलाकर क्षारवर्ग (जवाखार, सज्जी आदि) और अम्लवर्ग (काँजी नीबू आदि) के साथ खरल करे । अर्थात् उक्त दोनों पदार्थोंके समान यवक्षारादि खार मिलाकर काँजी आदि अम्ल पदार्थोंमें खरल करे । फिर उसका गोला बनाकर सत्त्वपातनकी मूषामें रखकर कोयलोंकी अग्निमें फूँके तो माक्षिक धातुका सत्त्व निकल आता है । किन्तु इस सत्त्वमें शीशा मिला होता है, इसलिये इस सत्त्वको गोस्तनी नामक मूषामें रखकर पतला होने पर निर्गुण्डीके रसमें बुझावे ।

इस प्रकार सात बार करनेसे माक्षिक सत्त्वमें मिला हुआ शीशा अवश्य निकल जाता है ॥ ८७ ॥८८ ॥

सत्त्वकी दूसरी विधि ।

क्षौद्रगन्धर्वतैलाभ्यां गोमूत्रेण घृतेन च ।
कदलीकन्दसारेण भावितं माक्षिकं मुहुः ॥ ८९ ॥
मूषायां मुञ्चति ध्मातं सत्त्वं शुल्वनिभं मृदु ॥ ९० ॥

समान भाग मिले हुए शहद और अण्डीके तेलमें एवं गोमूत्र, गायका घी और केलेके कन्दका रस इन प्रत्येकमें अलग २ सोना-माखीके चूर्णको भावना देकर गोला बनाकर मूषामें रखकर बार बार अग्नि देवे तो, उसमेंसे ताँबेके समान लाल और मृदू सत्त्व निकलता है ॥ ८९ ॥ ९० ॥

सोनामाखीके सत्त्वकी परीक्षा ।

गुञ्जाबीजसमच्छायं द्रुतद्रावं च शीतलम् ।
ताप्यसत्त्वं विशुद्धं तद्देहलोहकरं परम् ॥ ९१ ॥

चोंटलीके समान लाल, अग्निमें रखनेपर तत्काल पिघलनेवाला और शीतल ऐसा सोनामाखीका सत्त्व श्रेष्ठ होता है । यह देह और लोहकी सिद्धि करनेवाला है ॥ ९१ ॥

सुवर्णमाक्षिक रसायन ।

माक्षीकसत्त्वं च रसेन पिष्टं कृत्वा विलीने च बलिं निधाय। सम्मिश्र्य सम्मर्द्य च खल्वमध्ये निःक्षिप्य सत्त्वं द्रुतिमभ्रकस्य ॥ ९२ ॥ विधाय गोलं लव-णाख्ययंत्रे पचेद्दिनार्द्धं मृदुवह्निना च । स्वतः सुशीतं परिचूर्ण्य सम्यग्वल्लोन्मितं व्योषविडंगयु-क्तम् ॥ ९३ ॥ संसेवितं क्षौद्रयुतं निहन्ति जरां

सरोगामपमृत्युमेव । दुस्साध्यरोगानपि सत्तवा-
सरैनैतेन तुल्योऽस्ति सुधारसोऽपि ॥ ९४ ॥

सोनामाखीका सत्त्व और पारा दोनोंको समान भाग लेकर कज्जली बनावे इस प्रकार कज्जली करे कि जिससे दोनों अच्छे प्रकारसे मिल जायँ अलग २ कण दिखाई न दे । इस प्रकार दोनों पदार्थोंके मिल जानेपर उसमें सत्त्वके बराबर गन्धक मिलाकर खरल करे । जब गन्धक मिल जाय तब उसमें उक्त सत्त्वके बराबर अभ्रक सत्त्वकी द्रुति मिलाकर अच्छे प्रकारसे खरल करके गोलासा बना लेवे । इस गोलेको शराव सम्पुटमें रखकर ऊपरसे कपरौटी करके लवणयन्त्रमें रखकर दो प्रहर तक मन्द मन्द अग्नि देवे । स्वाङ्ग शीतल होनेपर उसको निकालकर खरल कर लेवे । इसमेंसे एक वल्ल प्रमाण लेकर सोंठ, मिरच, पीपल और वायविडंग इनके समान भाग मिश्रित चूर्णमें मिलाकर शहदके साथ सेवन करे । इससे सब प्रकारके रोग, जरा और अत्यन्त कष्टसाध्य रोग केवल सात दिनमें आराम हो जाते हैं । इसके प्रभावसे अकालमृत्यु दूर होती है । विशेष क्या कहा जाय इसकी बराबरी अमृत भी नहीं कर सकता ॥ ९२-९४ ॥

माक्षिक द्रावण ।

एरण्डोत्थेन तैलेन गुञ्जा क्षौद्रं च टंकणम् ।
मर्दितं तस्य वापेन सत्त्वं माक्षिकजं द्रवेत् ॥ ९५ ॥

अण्डीका तेल, घुंघुचीका चूर्ण, शहद और सुहागा इन सबको एकत्र खरल करके सोनामाखीके सत्वको (अग्निपर) गलाकर उसमें डालनेसे सोनामाखीका द्रावण होता है ॥ ९५ ॥

विमलाभेद ।

विमलस्त्रिविधः प्रोक्तो हेमाद्यस्तारपूर्वकः ।
तृतीयः कांस्यविमलस्तत्तत्कान्त्या च लक्ष्यते ॥९६॥

वर्तुलः कोणसंयुक्तः स्निग्धश्च फलकान्वितः ।
मरुत्पित्तहरो वृष्यो विमलोऽतिरसायनः ॥ ९७ ॥
पूर्वो हेमक्रियासूक्तो द्वितीयो रौप्यकृन्मतः ।
तृतीयो भेषजे तेषु पूर्वपूर्वगुणोत्तरः ॥ ९८ ॥

विमला माक्षिक धातुकाही भेद है । वहुत लोग विमलाको रूपामाखी कहते हैं । पर इस ग्रन्थमें जो विमलाके तीन भेद लिखे हैं, उनसे विमलाका रूपामाखी होना किसी प्रकार भी सिद्ध नहीं होता । विमला धातु तीन प्रकारकी होती है; जैसे स्वर्ण विमला (सुवर्णकी-सी कान्तिवाली), ताराविमला (रूपाकीसी कान्तिवाली) और कॉंस्यविमला (कॉंसीके समान कान्तिवाली) इस प्रकारकी कान्तिसे ही विमलाके भेद लक्षित होते हैं । विमलामाखी गोलाकार, जिसमें चारों ओर कोण हों, स्निग्ध और फलकयुक्त ऐसी विमलामाखी श्रेष्ठ होती है । यह वात, पित्तनाशक, वीर्यवर्द्धक और अत्यन्त रसायन है । विशेषकर स्वर्ण विमला स्वर्णके काममें, ताराविमला चाँदीके काममें और कॉंस्यविमला औषधिकार्यमें श्रेष्ठ है । इनमें एकसे दूसरी और दूसरीसे तीसरी इस क्रमसे हीन गुणोंवाली होती है । अर्थात् स्वर्णविमलासे तारावमला और ताराविमलासे कॉंस्यविमला गुणहीन होती है ॥ ९६-९८ ॥

विमलाशुद्धि ।

आटरूषजले स्विन्नो विमलो विमलो भवेत् ।
जम्बीरस्वरसे स्विन्नो मेषशृङ्गीरसेऽथवा ॥
आयाति शुद्धिं विमलो धातवश्च यथा परे ॥ ९९ ॥

अडूसेके रसमें, जम्बीरी नींबूके रसमें अथवा मेढासिंगीके रसमें विमलाको दो घडीतक पकानेसे विमला शुद्ध होती है । इसी विधिसे अन्यान्य धातुयें भी शुद्ध होती हैं ॥ ९९ ॥

विमलामारण और सत्त्वपातन ।

गंधाश्मलकुचाम्लैश्च म्रियते दशभिः पुटैः ॥१००॥
सटंकलकुचद्रावैर्मेषशृंग्याश्च भस्मना ।
पिष्टो मूषोदरे लिप्तः संशोष्य च निरुध्य च ॥१०१॥
षट्प्रस्थकोकिलैर्ध्मातो विमलः शशिसंनिभम् ।
सत्त्वं मुञ्चति तद्युक्तो रसः स्यात्स रसायनः ॥१०२॥
विमलं शिग्रुतोयेन कांक्षी कासीसटंकणम् ।
वज्रकंदसमायुक्तं भावितं कदलीरसैः ॥ १०३ ॥
मोक्षकक्षारसंयुक्तं ध्मापितं मूकमूषगम् ।
सत्त्वं चंद्रार्कसंकाशं पतते नात्र संशयः ॥ १०४ ॥

विमलाके चूर्णमें समान भाग गन्धक मिलाकर बडहलके फलोंके रसमें अथवा नींबूके रसमें खरल करके गोला बनाकर गजपुटमें रखकर अग्नि देवे । इस प्रकार १० पुट देनेसे विमला धातुकी भस्म हो जाती है । विमलाकी भस्म, भस्मके बराबर भाग सुहागा और मेढाशिंगीकी भस्म लेकर सबको मेढासिंगीके रसमें एकत्र खरल करके उसका सत्त्वपातनकी मूषाके भीतर लेप कर देवे । जब लेप सूख जाय तब मूषाको बन्द करके ६ प्रस्थ कोयलोंमें रखकर धौंकनीसे फूंके । इस प्रकारसे चन्द्रमाके समान उज्ज्वल सत्त्व निकलता है । इस सत्त्वको पारदके साथ मिला देनेसे वह उत्तम रसायनरूप हो जाता है । अथवा विमलामाखीकी भस्म, फटकरी, हीराकसीस, सुहागा, वज्रकन्द (जंगलीसूरण वजरकन्दा) इन सबको समान भाग लेकर सहिंजनेकी छालके क्काथमें और केलेके रसमें खरल करके गोला बनाकर उसको मूकमूषामें बन्द करके और उसमें मोखेका खार डालकरके अग्नि देवे तो चन्द्रमाकी किरणोंके समान उज्ज्वल विमलामाखीका सत्त्व निकलता है ॥ १००–१०४ ॥

विमला रसायन ।

तत्सत्त्वं सूतसंयुक्तं पिष्टं कृत्वा सुमर्दितम् ।
विलीनं गंधके क्षिप्त्वा जायते त्रिगुणात्मकम् ॥ १०५
शिलां पंचगुणां चापि वालुकायंत्रगे खलु ।
तारभस्म दशांशेन तावद्वैक्रांतकं मृतम् ॥ १०६ ॥
सर्वमेकत्र संचूर्ण्य पटेन परिगाल्य च ।
निक्षिप्य कूपिकामध्ये परिपूर्य प्रयत्नतः ॥ १०७ ॥
लीढो व्योषवरान्वितो विमलको युक्तो घृतैः सेवितो,
हन्याद्दुर्भगकृज्ज्वरान्श्वयथुकं पाण्डुप्रमेहाऽरुचीः ।
मूलार्त्तिं ग्रहणीं च शूलमतुलं यक्ष्मामयं कामलाम्,
सर्वान्पित्तमरुद्भवान्किमपरैर्योगैरशेषामयान् ॥१०८॥

उपर्युक्त विधिसे तैयार किया हुआ विमला माखीका सत्त्व और पारा दोनोंको समान भाग लेकर एकत्र खरल कर लेवे । जब पारा अदृश्य हो जाय तब तीन भाग गन्धकको अग्निपर पिघलाकर उसके साथ उक्त चूर्णको जारण करे । फिर उसके साथ पाँच भाग मैनसिलको खरल करके सबको एक आतसी शीशीमें भरकर वालुकायंत्रमें ४ महर तक अग्नि देवे । जब स्वांग शीतल हो जाय तब उसमेंसे निकालकर चूर्ण कर लेवे । फिर उसमें सब चूर्णसे दशवाँ भाग चाँदीकी भस्म और उसकी बराबर वैक्रान्त भस्म मिलाकर बारीक खरल करे और कपडछान करके शीशीमें भरकर रख देवे । उपर्युक्त विमला रसायनको एक या दो रत्तीकी मात्रासे त्रिकुटे और त्रिफलेक चूर्णके साथ एवं घृतमें मिलाकर सेवन करनेसे भयंकर ज्वर, सूजन, पाण्डुरोग, प्रमेह, अरुचि, बवासीर, संग्रहणी, शूल, राजयक्ष्मा, कामला, एवं सब प्रकारके वातजन्य और पित्तजन्य विकार नष्ट होते

है। यह रसायन इतनी श्रेष्ठ है कि इस अकेलीको ही भिन्न २ अनुपानोंके साथ सेवन करनेसे सब रोगोंका नाश होता है ॥ १०५–१०८॥

शिलाजीतका वर्णन ।

शिलाजतुर्द्विधा प्रोक्तो गोमूत्राद्यो रसायनः ।
कर्पूरपूर्वकश्चान्यस्तत्राद्यो द्विविधः पुनः ॥ १०९ ॥
ससत्त्वश्चैव निःसत्त्वस्तयोः पूर्वो गुणाधिकः ।
ग्रीष्मे तीव्रार्कतप्तेभ्यः पादेभ्यो हिमभूभृतः॥ ११०॥
स्वर्णरूप्यार्कगर्भेभ्यः शिलाधातुर्विनिःसरेत् ।
स्वर्णगर्भगिरेर्जातो जपापुष्पनिभो गुरुः ॥ १११ ॥
स स्वल्पतिक्तः सुस्वादुः परमं तद्रसायनम् ।
रौप्यगर्भगिरेर्जातं मधुरं पाण्डुरं गुरु ॥ ११२ ॥
शिलाजं पित्तरोगघ्नं विशेषात्पाण्डुरोगहृत् ॥
ताम्रगर्भगिरेर्जातं नीलवर्णं घनं गुरु ॥ ११३ ॥
वह्नौ क्षिप्तं भवेद्यत्तल्लिंगाकारमधूमकम् ।
सलिलेऽथ विलीनं च तच्छुद्धं हि शिलाजतु ॥ ११४

शिलाजीत दो प्रकारका होता है । एक गोमूत्रके समान गन्धवाला और दूसरा कपूरके समान गन्धवाला, अर्थात् जिसमें कपूरकीसी गन्ध आती है । इनमें पहला (गोमूत्रकी गन्धवाला) शिलाजीत उत्तम रसायन है । यह दो प्रकारका होता है एक सत्त्वयुक्त और दूसरा निःसत्त्व । इनमें सत्त्वयुक्त शिलाजीत अधिक गुणवाला होता है । ग्रीष्म ऋतुमें सूर्यके प्रचण्ड तापसे जब हिमालय पर्वत अत्यन्त सन्तप्त हो जाता है तब उसमेंसे पिघलकर यह रसरूपसे बाहर निकलता है । हिमालयके कितने ही शिखर सोनेकी खानवाले, कितने ही चाँदीकी खानवाले और कितने ही ताँबेकी खानवाले हैं ।

सोनेकी खानसे उत्पन्न होनेवाला शिलाजीत जवाके फूलके समान लाल और वजनमें भारी होता है । स्वादमें उत्तम, किंचित् कडवा और उत्कृष्ट रसायन है । रूपेकी खानसे निकलनेवाला शिलाजीत स्वादमें मधुर, रंगमें कुछ पीला, वजनमें भारी, पित्तविकारनाशक और विशेष कर पाण्डुरोगको नष्ट करनेवाला है । ताँबेकी खानका शिलाजीत नीले रंगका, घन (गाढा) और भारी होता है । शिलाजीतकी परीक्षा । जो अग्निपर डालनेसे फूलकर लिंगाकार या बतासासा हो जाता है और पानीमें डालनेसे तत्काल घुल जाता है, वह शिलाजीत उत्तम होता है ॥ १०९–११४ ॥

शिलाजीतके गुण ।

नूनं सज्वरपाण्डुशोफशमनं मेहाग्निमांद्यापहं,
मेदश्छेदकरं च यक्ष्मशमनं शूलामयोन्मूलनम् ।
गुल्मप्लीहविनाशनं जठरहृच्छूलामयध्वसनं,
सर्वत्वग्गदनाशनं किमपरं देहे च लोहे स्थितम् ११५
रसोपरससूतेंद्ररत्नलोहेषु ये गुणाः ।
वसंति ते शिलाधातौ जरामृत्युजिगीपया ॥ ११६ ॥

शिलाजीत ज्वर, पाण्डुरोग, सूजन, प्रमेह, मन्दाग्नि, मेदरोग (स्थूलता), राजयक्ष्मा, शूल, गुल्म, प्लीहा, उदररोग, हृदयशूल, और सब प्रकारके त्वचाके विकारोंको नष्ट करता है । शरीर और लोहकी सिद्धि करनेवाला है । अभ्रकादि रस, गन्धकादि उपरस, पारा, रत्न और सर्व प्रकारकी धातुओंमें जो गुण कहे गये हैं, वे सब जरा, मरणको दूर करनेकी इच्छासे मानो शिलाजीतमें एकत्र स्थित होकर रहते हैं ॥ ११५ ॥ ११६ ॥

शिलाजीतकी शुद्धि ।

क्षाराम्लगोजलैर्धौतं शुद्धयत्येव शिलाजतु ।
शिलाधातुं च दुग्धेन त्रिफलामार्कवद्रवैः ।

लोहपात्रे विनिक्षिप्य शोधयेदतियत्नतः ॥ ११७ ॥
क्षाराम्लगुग्गुलूपेतैः स्वेदनीयंत्रमध्यगैः ।
स्वेदितं घटिकामानाच्छिलाधातुर्विशुद्ध्यति ॥ ११८ ॥

जवाखार, काँजी और गोमूत्र इन तीनोंको एकत्र करके इनके द्वारा शिलाजीतको धोनेसे शिलाजीत शुद्ध होता है । अथवा दूध त्रिफलेका काढा और भाँगरेका रस इनमेंसे किसी एक द्रवको लोहेके पात्रमें भरकर उसमें शिलाजीत डालकर तेज धूपमें रख देवे । इस प्रकार करनेसे शिलाजीतका श्रेष्ठ भाग ऊपर जम जाता है और मैल नीचे बैठ जाता है । अतः शिलाजीत शुद्ध हो जाता है । अथवा कांजी, जवाखार और गूगल सबको स्वेदन यन्त्रमें भरकर यथाविधिसे एक घडीतक स्वेद देनेसे शिलाजीत शुद्ध होता है ॥ ११७॥११८ ॥

शिलाजीतकी मारणविधि ।

शिलया गन्धतालाभ्यां मातुलुंगरसेन च ॥ ११९ ॥
पुटितं हि शिलाधातुर्म्रियतेऽष्टगिरीण्डकैः ॥ १२० ॥

मैनसिल, गन्धक और हरतालके साथ शिलाजीतको बिजौरे नीबूके रसमें घोटकर गोला बनाकर आठ अरने उपलोंकी पुट देनेसे शिलाजीतकी उत्तम भस्म हो जाती है ॥ ११९ ॥ १२० ॥

शिलाजीत रसायन ।

भस्मीभूतशिलोद्भवं समतुलं कान्तं च वैक्रान्तकम्,
युक्तं च त्रिफलाकटुत्रिकघृतैर्वल्लेन तुल्यं भजेत् ।
पाण्डौ यक्ष्मगदे तथाग्निसदने मेहेषु मूलामये,
गुल्मप्लीहमहोदरे बहुविधे शूले च योन्यामये ॥ १२१ ॥
सेवेत यदि षण्मासं रसायनविधानतः ।
वलीपलितनिर्मुक्तो जीवेद्वर्षशतं सुखी ॥ १२२ ॥

शिलाजीतकी भस्म कान्तलोहभस्म और वैक्रान्तभस्म सबके समान भाग लेकर एकत्र खरल करके उसमेंसे एक वल्लप्रमाण लेकर त्रिफला और त्रिकुटेके चूर्णके साथ घृतमें मिलाकर सेवन करनेसे पाण्डुरोग, राजयक्ष्मा, मन्दाग्नि, प्रमेह, बवासीर, गुल्म, प्लीहा, उदररोग, अनेक प्रकारके शूल और स्त्रियोंके योनिरोग दूर होते हैं। इस रसायनको रसायनाविधिके अनुसार ६ महीने तक सेवन करनेवाला मनुष्य वली (विना वृद्धावस्थाके शरीरमें बलोंका पडना) और पलितरोग (विनाही समय वालोंका श्वेत होने) से मुक्त होकर सुखपूर्वक १०० वर्ष तक जीता रहता है ॥ १२१ ॥ १२२ ॥

शिलाजीतका सत्त्वपातन ।

पिष्ट्वा द्रावणवर्गेण साम्लेन गिरिसंभवम् ।
क्षिप्त्वा मूषोदरे रुद्ध्वा गाढैर्ध्मातं हि कोकिलैः ॥
सत्त्वं मुञ्चेच्छिलाधातुस्तत्क्षणाल्लोहसन्निभम् ॥१२३॥

शिलाजीतको द्रावणवर्ग और अम्लवर्गकी औषधियोंके साथ उत्तम प्रकारसे खरल करके मूषामें रखकर कोयलोंकी तीक्ष्ण अग्नि देनेसे शिलाजीतमेंसे लोहेके समान सत्त्व निकलता है ॥ १२३ ॥

कर्पूरगन्धि शिलाजीत ।

पाण्डुरं सिकताकारं कर्पूराद्यं शिलाजतु ।
मूत्रकृच्छ्राश्मरीमेहकामलापाण्डुनाशनम् ॥ १२४ ॥
एलातोयेन संभिन्नं सिद्धं शुद्धिमुपैति तत् ।
नैतस्य मारणं सत्त्वपातनं विहितं बुधैः ॥ १२५ ॥

कपूरकी गन्धवाला शिलाजीत किंचित् पीला और रेतके समान होता है। यह मूत्रकृच्छ्र, पथरी, प्रमेह, कामला और पाण्डुरोगको दूर करता है। यह शिलाजीत इलायचीके क्वाथमें खरल करनेसे शुद्ध होता है। इसकी भस्म व सत्त्वपातन आदि विधि आचार्योंने नहीं कही है ॥ १२४ ॥ १२५ ॥

सस्यक (नीलाथोथा) की उत्पत्ति ।

पीत्वा हालाहलं वान्तं पीतामृतगरुत्मता ॥
विषेणामृतयुक्तेन गिरौ मरकताह्वये ॥ १२६ ॥
तद्वान्तं हि घनीभूतं संजातं सस्यकं खलु ।
मयूरकण्ठसच्छायं भाराढ्यमतिशस्यते ॥ १२७ ॥
द्रव्यं विषयुतं यत्तद्द्रव्याधिकगुणं भवेत् ।
हालाहलं सुधायुक्तं सुधाधिकगुणं तथा ॥ १२८ ॥
निःशेषदोषविषहृद्गुदशूलमूलकुष्ठाम्लपित्तकावि-
बंधहरं परं च ॥ रासायनं वमनरेककरं गरघ्नं
श्वित्रापहं गदितमत्र मयूरतुत्थम् ॥ १२९ ॥

प्राचीन कालमें जब गरुडजीने अमृत पान किया था, तब उन्होंने उसके ऊपर हालाहल विषभी पान कर लिया । इस लिये अमृत और विषके एकत्रित होनेसे मरकत (नीलगिरि) पर्वतपर उनको वमन हो गई । वह वमन कुछ कालमें गाढी होकर नीलेथोथेके स्वरूपमें परिणत हो गई । नीलेथोथेकी श्रेष्ठता । मोरके कण्ठके समान कान्तिवाला और वजनदार ऐसा नीलाथोथा उत्तम होता है । नीलेथोथेके गुण और उसकी श्रेष्ठताका कारण । कोई भी पदार्थ विषयुक्त होनेपर अधिक गुणवान् हो जाता है । कारण, विष स्वभावसे ही शीघ्र गुणकारी होनेसे उसके योगके द्वारा दूसरे पदार्थोंके भी गुण और प्रभाव अधिक बढ जाते हैं । उसी प्रकार हालाहल अमृतके साथ मिलकर अमृतसेभी अधिक गुणवाला हो जाता है । नीलाथोथा—वातादि सम्पूर्ण दोष, विषबाधा, हृदयरोग शूल, बवासीर, कुष्ठ, अम्लपित्त और मलावरोधको दूर करता है । उत्तम रसायन है । वमन और विरेचनको करता है । गर अर्थात् कृत्रिम विषको नष्ट करता है और श्वेत कुष्ठको निर्मूल करता है ॥ १२६-१२९ ॥

कामलामें चंचल तीक्ष्ण रहती है। शूल रोगोंमें:—वातज शूलमें टेढ़ी, पित्तज शूलमें अत्युष्ण वेगवती, कफज शूलमें मंद और भारी, आमज शूल या कृमि जन्य शूलमें भारी, तेज झटका देती हुई चलती है। श्वास रोगमें वेगके समय नाडी तेज, दौरा शान्त होनेपर मंद एवं हिक्का रोगमें नाड़ी अस्थिर वेग पूर्वक चलती है। मदात्ययमें सूक्ष्म वेगवती, उष्ण कठिन जड़ युक्त होती है। इसी तरह त्रिदोषज असाध्य व्याधिमें कभी मन्द कभी तेज, कभी शिथिल, कभी रुककर और कभी बिल्कुल गायब हो जाती है। जिस रोगमें नाडी अपने स्थानसे कुछ स्खलित हो जाय वह रोगी ३ दिनमें मर जाता है। जिसका स्पन्दन अनामिकाके नीचे ही प्रतीत हो तो ४ प्रहरमें वह रोगी मर जाता है। जिसका स्पन्दन २ अंगुल दूर प्रतीत हो वह १॥ प्रहरमें मर जाता है। जिसका स्पन्दन २॥ अंगुल दूर प्रतीत होता है वह १ प्रहरमें ही मर जाता है। जिसका स्पन्दन तीनों अंगुलियोंके स्पर्शमें प्रतीत न होता हो वह आधे प्रहरमें ही मर जाता है।

यदि रोगीका शरीर विशेष उष्ण हो और नाडी अति कमजोर प्रतीत होती हो तो वह रोगी ३ दिनमें ही मर जाता है। अथवा जिसकी नाड़ी टूट-टूटकर चलती हो या बीच-बीचमें बन्द हो जाती है वह उसी दिन चला जाता है। इस नाड़ी परीक्षाके समय अन्य परीक्षाओं की सहायता जैसे—ज्ञानेन्द्रियाँ, हृदय, फुफ्फुस, उदर आदि अवयवों की भी परीक्षा करनी चाहिये। इस नाड़ी परीक्षाका प्रधान यन्त्र हाथ ही है। रोग परीक्षामें हाथ बहुत सहायता करता है। शारीरिक गर्म्मी, शीतलता, स्निग्धता एवं रुक्षताका ज्ञान भी इसीके द्वारा होता है। इसी तरह शरीरके भीतर अमुक अवयव नर्म है, अमुक अवयव कठिन है, या भीतर गाठ है, अथवा शोथ है, आदि सभी बीमारियों की परीक्षा भी हाथ ही के द्वारा होती है। अनुभवी वैद्य भी इसी हाथकी सहायतासे नाड़ी परीक्षा करके गरमीका ठीक नाप बता देते

है। जितना काम थर्म्मामिटर करता है उतना ही काम अनुभवी हाथ की ये अँगुलियाँ कर देती है। अनुभव बिना यह नाड़ी ज्ञान होना बहुत कठिन है अतः योग्य शिक्षककी देख-रेखमें इस कामको सीखना नवीन वैद्यके लिये अत्यन्त आवश्यक है। इस कामके विना वैद्य अधूरा ही रह जाता है।

डाक्टरी मतसे नाड़ी परीक्षा

आयुर्वेदकी तरह पाश्चात्य विज्ञान वेत्ताओंने नाड़ी परीक्षामें दोषादिकों को नहीं माना है परन्तु उन्होंने भी दूसरा ढंग निकाल रक्खा है। वे लोग भी इसकी कितनी ही तरहसे परीक्षा करते हैं। स्पन्दन संख्या, सम-विषमगति, उतावली नाडी, धीमी नाड़ी, भरी हुई नाड़ी, छोटी नाडी, सख्त या कोमल नाड़ी, अनियमित नाडी, आन्तरीया नाडी आदि भेद माने है। स्पन्दन संख्या प्रकृति भेद, बल भेदसे न्यूनाधिक होती रहती है। स्वस्थावस्थामे नाड़ीके स्पन्दन १ मिनटमे निम्नलिखित कोष्ठके अनुसार होते है।

आयु	प्रति मिनट	स्पन्दन	आयु	प्रति मिनट	स्पन्दन
गर्भमे	,,	१४०	२०	,,	८५
सद्योजात	,,	१३०	४०	,,	७५
प्रथम वर्ष	,,	१२०	६०	,,	७०
द्वितीय वर्ष	,,	११०	वृद्धावस्थामें		७५ से ८०
तृतीय वर्ष	,,	१००			

सप्तम वर्षसे १४ वर्षकी आयु तक ८६ से ९० ।

पुरुषोकी अपेक्षा स्त्रियोंकी नाड़ीकी गति ज्यादा होती है। याने १०-१५ तक। वृद्धावस्थामे निर्बलता बढ जानेसे नाडीकी गति अनियमित हो जाती है, तथा युवा पुरुषोंमें भी रोग विशेषके कारण दुर्बलता होनेपर नाडीकी गति बढ जाती है। किसी-किसी मनुष्यकी स्वस्था-

वस्थामें भी नाडी की गति बढी हुई रहती है। याने १०० से १२० तक, प्रति मिनट हुआ करती है। समान्य रीतिसे हृदय जितना बलवान होता है, उतनी ही नाडीकी गति कम होती है। और जितना हृदय कमजोर होता है, उतनी ही नाडीकी गति बढ जाती है। इस अभिप्रायसे किसी भी रोगके कारण कमजोरी आनेपर गति तीव्रतर हो जाती है। सोनेकी बजाय जागने पर, सायंकी अपेक्षा प्रातः, चलनेकी अपेक्षा बैठे रहने पर गति बढ़ जाती है। काम, क्रोध, भयसे गति बढती है। चिन्तासे कम हो जाती है। इसी तरह श्वासोच्छ्वास क्रियासे भी ऐसा ही नियम मानते है।

आयु	प्रतिमिनट श्वासगति
२ माससे २ वर्ष तकके	”३५
२ वर्पसे ६ वर्ष तककी	”३०
६ वपसे १२ वर्ष	”२०
१५ सालमे	”१८
युवावस्थामे	१६-१८

इस हिसावसे श्वासोच्छ्वासमे नाड़ी की गति चौगुनी होती है। किन्तु न्युमोनिया, इतर फुफ्फुस जन्य बीमारियों मे १॥ या २ दुगुनी भी हो जाती है।

स्त्रियों मे श्वास अधिक रहता है।

इसी तरह नाडीकी गतिका सम्बन्ध शारीरिक उष्णताके साथ भी रहता है। सामान्यावस्थासे ८-१० बार स्पन्दन अधिक होने पर १० डिग्री गरमी बढ जाती है। इस नियमसे ज्वर जन्य उष्मामे ज्वरकी उष्णता ज्यो-ज्यों बढती जाती है, त्यों-त्यों नाडीकी गति भी बढ जाती है।

ज्वरके बिना ही यदि नाडी की गति बढ़ जावेतो वहाँ हृदयकी दुर्बलता समझना चाहिये। प्रायः अपतन्त्रक, गलगण्ड, रक्ताल्पता, हृद्रोग आदि बीमारियोंमें ज्वरके बिना भी नाडीकी गति बढ़ जाती है। इसी तरह गर्दन तोड, मोतीझरा, इनफ्लूएन्जा, प्लूरिसी, विषम

ज्वरादि रोगोंमें नाड़ीकी गति ज्वरोत्तापकी अपेक्षा कम हो जाती है। तथा निम्नरोगोंमें गति क्षीण हो जाती है। जैसे अपस्मार, कामला, उन्माद मधुमेह, वृक्करोग, हैजा, धमनी काठिन्य, रोग जन्य दुर्बलता आदि। विषादिके अति सेवनसे हृदयका अवरोध होनेपर नाड़ीकी गति अति शिथिल हो जाती है याने ३० तक घट जाती है। ऐसे ही उपदंशजन्य रोगोंमें, विद्रधिमें, विषजनित रक्तविकार सन्यास, मूर्च्छा, सन्निपातादि रोगों में नाड़ीका स्पन्दन कम हो जाता है। पश्चात्य चिकित्सक इस परीक्षामें तीन बातोंका ध्यान विशेष रखते है :—

(१) नाड़ीकी गति द्रुत है या मन्द (शार्प-पल्स) (२) नाड़ीका आकार छोटा है या बड़ा, (३) नाड़ी कठोर है, या कोमल। कठोरता और संहति इसके दो पर्य्यायवाचक शब्द है। दो स्पन्दनोंके बीच विराम कालमे नाड़ीपर एक ओर से दूसरी ओर तक दबाव दिया जाय तब संहतिका ज्ञान होता है। बाल्यावस्थामें धमनीकी दीवार कोमल होती है फिर आयु वृद्धिके साथ २ कठोर होती जाती है। तब दृढ-रज्जुवत प्रतीत होती है, इसको अंगुलीसे दबाने पर भी गतिका अवरोध नहीं होता। इस तरह कोमलावस्थामे अगुलीसे दबाने पर दीवारका बोध नहीं होता, और गति रुक जाती है।

रक्तकी अधिकता वाले ताकतवर मनुष्यके ज्वर होनेपर, तथा मस्तिष्क शोथमे, यकृतके रोगम, सन्धिवातादि रोगोंमे नाड़ी तेजीसे अधिक कठोर चलती है, यह चाल भयप्रद मानी है। ज्वरावस्था में यदि उपरोक्त चालसे नाडी बहुत दिन चले तो रोगीकी आशा बचने की कमही रहती है। नाड़ीका उतावलापन घटनेपर अच्छे होनेकी आशा रहती है। इसको कम करनेके लिये सबसे अच्छा उपाय यही है कि सिरावेधके द्वारा अथवा जलौका पातन, या सींगी लगाकर रक्तके दबाव को कम कर देना चाहिये।

विरेचन देनेसे भी रक्तभार कम हो जाता है जिससे संहति

न्यून हो जाती है। दुर्बल मनुष्यको ज्वर होनेपर अथवा किसी भागमे शोथ होनेसे तीक्ष्ण और छोटी नाडी चलती है। आतोंमें या उदर कलामे शोथ होनेपर भी उतावली कठोर और छोटी नाडी चलती है। यह छोटी होते हुये भी इतनी कठिन होती है कि स्पर्शमे बारीक लोहेके तारके समान कठिन लगती है। यह नाडी भी रक्तके दबावको बताती है। धमनी जितनी कोमल रहती है उतनी ही उसमे व्याधि नाशक शक्ति अधिक रहती हे। कठोर नाडी होनेपर रोगसे लडनेके लिये उसको अधिक परिश्रम करना पडता है। कठोर नाडी वालोंकी आयु भी कम ही होती है।

ज्वरकी साधारण अवस्थामें नाडी की गति अवश्य बढ़ती है। परन्तु उसके साथ श्वासगति भी बढ जाती है। जबतक दोनों का अनुपात एकसा रहे, तबतक रोगीके बिगडने का भय नही होता। नाड़ीकी पुष्टता-कृशता का कारण हृदयका स्पन्दन है। यदि हृदयके वाम निलयसे महाधमनीमें जाने वाले रक्त तथा रक्ताणुओंके परिमाणमें अधिकता होगी तो स्पन्दनमे पुष्टता रहेगी। यदि शरीरमें तरल द्रव उत्तपादिका परिमाण अधिक होगा तो कृशता रहेगी।

स्वस्थ और बलवान पुरुषकी नाडो सदा पूर्ण रहती है। किसी कारण विशेपसे रक्ताभिसरण वेगकी वृद्धि हो जाय तो नाड़ी स्थूल हो जातो है। इसके विपरीत रक्तश्राव, अतिसार, वमन, विषूचिका, प्रभृति रोगोंके कारण द्रवके अधिक निकल जानेपर अथवा हृदय को दुर्बल करनेवाले रोगो के कारण हृदयगति और रक्ताभिसरण क्रिया मन्द हो आती है। ऐसे समयमे नाड़ी कृश हो जातो है। हृदयकी कमजोरी की अधिकताके कारण नाडी बहुत कमजोर बारीक तन्तुके समान दिखलाई देती है। नाडीके बलाबल या रक्तभारके अनुसार ही नाडो बलवान क्षीण, लुप्त होती है। रक्तभारके बढनेसे बलवती, रक्त भारको कमीसे क्षीण नाडी, रक्तक्षय, हृद्दौर्बल्यादि कारणोंसे लुप्त

नाड़ी होती है। इस उपरोक्त बातोंका बोध अंगुलियोंसे नाड़ी देखने से भी हो सकता है। विशेष निर्णय रक्तभार मापक यन्त्रसे ही होता है। स्वस्थ मनुष्यके शरीरमें प्रति स्पन्दनके साथ वाम निलय खण्डसे १॥ छटांक रक्त महाधमनीमें प्रवेश करता है। इस हिसाबसे ८० बार स्पन्दन होनेसे छः पौण्ड रक्त महा धमनीमें फेंका जाता है। यदि उतने ही समयमे २० स्पन्दन बढ़ जावे तो १॥ पौण्ड रक्त १ मिनटमे महा धमनीमे ज्यादा चला जाता है जिससे नाडी पुष्ट हो जाती है, और रक्तभार बढ़ जाता है। रक्तभारमें अति बृद्धि अथवा अति न्यूनता का होना घातक चिन्ह समझा जाता है।

रक्तभार बृद्धिमें कारण :—

तीव्रसंक्रामक रोग, अति चिन्ता, अति क्रोध, कसरतकी कमी, जीर्ण रक्त विकार, पुराना वृक्करोग, मधुमेह, धनुर्वात, अति मद्यपान, विष्टब्धाजीर्ण, धमनीकोप-काठिन्य, अध्ययन, गरिष्ठ भोजन, रजोवरोधादि कारणोंसे रक्तका चाप बढ जाता है यह चाप १५० से २५० तक या इससे भी ज्यादा भी मिलीमिटर तक बढ़ जाना है।

रक्तभार क्षयमें कारण :—

हृदय जनित व्याधियोंके कारण, मानसिक चिन्ताके कारण, अतिसार, मन्थर ज्वर, राजयक्ष्मा, रक्तपित्त, रक्तश्राव, अत्युग्र विष सेवन, अति लंघन, अति शारीरिक कृशताके कारण रक्तका दबाव घट जाता है। १०० से ८० मिलीमीटर या इससे भी कम हो जाता है।

स्वस्थ मनुष्यके विश्रामके समय रक्तका चाप ११७ से १३५ मिली मीटर तक रहता है। इस चापको जाननेके लिये आयुकी संख्यामे १०० और मिला पर जो संख्या होती है उतना ही स्वस्थ पुरुषके रक्तका दबाव रहना चाहिये। मासाहारी और मद्यसेवीका चाप अधिक रहता है। इस यन्त्रका माप (स्फिग्मो मेनोमीटर) Sphygmeno-

meter मापक यन्त्र द्वारा किया जाता है। इस यन्त्रका निम्माण थर्म्मामीटरकी तरह पारदके द्वारा ही होता है। इसमें ५ इंच मोटे कपड़े की १ पट्टी होती है जो हाथपर बाँधनेके काम आती है। इसमे एक रबडकी नली लगी रहती है जिसका सम्बन्ध पारे वाली नलीके साथ एवं पट्टीके साथ रहता है। इसी नलीके अन्तमें एक रबड़का पम्प लगा रहता है, जिसके द्वारा हवा देनेसे हवा नलीके रास्ते होकर पट्टीके भीतरसे बाहकी धमनीपर दबाव डालती है, जिससे पारा नलीमें चढकर रक्तभार को बतलाता है। रक्तमापक यन्त्र द्वारा परीक्षाके समय रोगीको निश्चिन्तता पूर्वक बैठाकर या सुलाकर हाथपर पट्टी बाँधनी चाहिये। अगर बैठाकर परीक्षा करनी हो, तब तो हाथको मेजपर सीधा करके रक्खे और अगर सुलाकर परीक्षा करनी हो तो हाथको बिछौनेपर समस्थलपर रखकर यन्त्रको सीधाकर खड़ा कर दे। फिर बायां हाथ नाडी पर रक्खे और दाहिने हाथसे रबर निर्मित बल्बको बार-बार दबाकर हाथपर बधी हुई पट्टीमे हवा भरता रहे। जब तक नाडीका स्पन्दन बन्द न हो। जब स्पन्दन बन्द हो जाय, तब हवा भरना बन्द कर दे। और मीटरमें लगे हुए निशानोंकी तरफ ध्यान पूर्वक देखता रहे। फिर हवा भरनेवाले बल्बके ढक्कनको आहिस्ते-आहिस्ते खोलता जावे। जिससे वायुका दबाव कम होने लगे। वायुके निकलते समय जब नाड़ीका चलना प्रारम्भ हो, उस समय जहाँतक पारा चढ़ा हो, उस समय हृदयके आकुचन कालमे रक्तका चाप (Blood pressure) माना जाता है। किन्तु इस परीक्षाके समय मीटरमें लिखे हुए अंक पढ़नेमे सावधानी रखनी चाहिये। अन्यथा थोडा-सा भी फर्क हो जानेसे ही परीक्षामे गडबड़ी हो जाती है। याने १०-२० अङ्कोंकी कम-बेशी हो जाती है।

दूसरी परीक्षा स्टेथिस्कोपकी सहायतासे की जाती है। इस परीक्षाकी विधि यह है कि परीक्षाके समय हाथमे बंधी हुई पट्टीके नीचे

सन्धिस्थानस्थित धमनी पर स्थेटिसकोप रखकर बल्व द्वारा हवा भरे और कानोंमे आंकुचन एवं प्रसारण क्रियाको सुनता रहे। जब आवाज सुनना बन्द हो जाय, तब हवा भरना बन्द कर दे। और धीरे-धीरे बल्वके ढक्कन खोलता जाय और आवाजको सुननेकी चेष्टा करता जावे। जब धमनीकी आवाज सूक्ष्म रूपसे सुननेमें आने लगे, तब पारेके चढ़ावको देख ले। यह आंकुचन कालका माप है।

फिर और वायु निकलते समय अनेक तरहकी आवाज होती रहती है। उनमेंसे मृदु आवाज जहाँ सुननेमें आवे, वहाँ ही प्रसारण कालका रक्तभार जान ले। दोनों परीक्षाके समय ही आंकुचन प्रसारण काल का दबाव बराबर ही रहता है। लेकिन श्रवण परीक्षाम कुछ फरक अवश्य पड़ जाता है।

युवावस्थाकी स्वस्थावस्थामे आकुचन कालका दबाव १०० से १४० तथा प्रसारण काल ६० से ६० मीलीमीटर तक रहता है। शिशुअवस्था म दबाव कम रहता ह। २० वर्षकी आयुवाले पुरुषका रक्तका दबाव १२० तक गिनना चाहिये। फिर इसमें आयुका पंचमांश याने २० का पाँचवाँ हिस्सा ४ मिलाने पर जितना हो उतना ही प्राकृतिक दबाव याने सिस्टोलिक प्रेशर माना जाता है। इस हिसाबसे २० बर्षकी आयु में १२४। ३० वर्षकी आयुमे १२६। ५० वर्षकी आयुवालेका १३० स्वाभाविक होता है। इसी तरह हृदयके प्रसारण कालमें साधारणतया २० वर्षकी आयुमे प्रसारण कालका दबाव ८० मानना चाहिये। फिर ५-५ वर्षके हिसाबसे २ २ बढ़ाते जाय। जैसे—३० वर्षकी उम्रमें ८०-२-८२। ४० वषकी उम्रमें ८०-४-८४। लेकिन ६० वर्षकी उम्रके बाद ४-४ बढ़ाना चाहिये। इस हिसाबसे ७० वर्षकी आयुवालेको ८०-८-८८ प्रसारण काल माना गया है। डाक्टरो ने रोगके कारणसे रक्तका चाप बढ़नेपर अलग-अलग उनके विभाग किये है। जसे—सीमासे बाहर जानेवाला; सीमाके नजदीक पहुंचनेवाला अत्यधिक (Very high) स्वाभाविकसे अति (High)।

रक्तभाराधिक्य होनेपर मस्तिष्कमें या अन्यस्थानस्थित धमनीयोंके फटनेका भय रहता है। धमनीयोंके फटनेसे पक्षाघात हो जाता है एवं किसी समय मृत्यु भी हो जाती है।

सामान्यतः स्वस्थावस्थाम धमनीका प्रेसर निम्नानुसार रहता है।

आयु	आंकुचन चाप	प्रसारण चाप	मध्यान्तर
२	८१	४५	३६
५	९०	५३	३७
१०	१००	६२	३८
३०	१२४	८२	४२
४०	१२८	८४	४४
५०	१३२	८६	४६
६०	१३६	८८	४८
७०	१४५	९२	५३

अत्यन्त वृद्ध होनेपर दुर्बलताके कारण रक्त चाप, (प्रेसर) कम पड़ जाता है। प्रति रोधक शक्तिकी अधिकताके कारण ही नाड़ी बलवती मानी जाती है। इसका अभाव होनेसे नाड़ी क्षीण हो जाती है। कालेरामे द्रवके निकल जानेसे नाड़ीका स्पन्दन धीमा पड़ जाता है या लुप्त हो जाता है। सामान्यतया रक्त भार प्रेसरके आकुंचन प्रसारणके समय ३० से ६० तकका अन्तर रहता है। इसमे न्यूनाधिक हो जाय, तो भयकी आशंका समझनी चाहिये।

यह उपरोक्त सम्पूर्ण क्रियाये धमनी और हृदयका आश्रय लेकर ही होती है। इन दोनोमे भी प्रधान आश्रय हृदय ही है। इसीके आकुंचन प्रसारणके द्वारा ही नाड़ीकी गति होती रहती है। हृदय जितना पुष्ट होगा, उतनी ही क्रिया शान्त चलती है। जिससे नाड़ीका स्पन्दन भी कम चलेगा। लेकिन जैसे-जैसे दुर्बलता आती जाती है, वैसे-

वैसे ही हृदयकी क्रिया शीघ्रता पूर्वक होने लगती है और इसीसे नाड़ीकी गति बढ़ जाती है। आजकल आधुनिक विज्ञानवेत्ताओंने इन दोनोंकी परीक्षाके लिये भी तरह-तरहके यन्त्र निकाले है, जिनके नाम यह है—

स्फिग्मोग्राफ पालिग्राफ कर्डियोग्राफ

इनकी विधि बहुत क्लिष्ट है और अनुभवी ही इसके द्वारा ज्ञान प्राप्त कर सकते है।

Urine Examination

मूत्र परीक्षा

पाश्चात्य मतानुसार मूत्र परीक्षा तीन प्रकारसे की जाती है— दर्शन परीक्षा, रसायनिक परीक्षा (Chemical test) केमिकल टेस्ट) और (Microscopic Examination) माईक्रोस्कोपिक एक्जामिनेशन याने अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षा।

दर्शन परीक्षा :—

इस परीक्षामें निम्नांकित वात देखी जाती है—मूत्रका रंग, मूत्रकी मात्रा, Litmus Paper लिट्मस पेपर (मूत्र परीक्षाका एक कागज विशेप) पर रासायनिक क्रियामें कागजका किस तरहका रंग हो जाता है। (Specific gravity) स्पेसिफिक ग्रेवेटी (आपेक्षिक घनत्व) क्या है ? इन सव बातोंका पता लगाना पड़ता है। जिनका वर्णन पृथक् प्रकरणमे आयेगा।

मूत्रका रंग :—

साधारणतया जो मनुष्य स्वस्थ रहते है उनके मूत्रका रग प्रायः Amber yellow (अम्बर यलो) अल्प पीत वर्ण युक्त होता है। फिर ज्यो-ज्यों मनुष्यके शरीरमे विकृत अवस्था मिलेगी, वैसे ही मूत्रका रंग

भिन्न-भिन्न रूपसें पाया जायगा। कभी पीत वर्णवाला, कभी गहरे पीत वर्णवाला या काले रंगका।

कुछ रंगो के अनुसार रोग निदान करनेकी सूची (Chart) हम नीचे लिखते है। जो वैद्य बन्धुओं के लिए रोग निदान करनेमें सहायक सिद्ध होगी।

Colour कलर या रंग	Cause of Colouration काज आफ कलरेशन (रंग का कारण
1. Amber Colour अम्बर कलर (अल्प पीत वर्ण)	1. Normal (नौरमल) स्वस्थ अवस्था
2 गहरे पीत वर्णवाला या भूरो	2. मूत्रमें Pigments पिगमेंट्स रंगवाले पदार्थ विशेष रूपसे जाते हों तब।
3 Milky (मिल्की) दुग्ध वर्ण-वाला	3 बसा युक्त मूत्र
4 नारंगी रंगका	4. औषधका रंग
5 लाल	5 रक्तांशवाला
पीत वर्ण वाला कुछ हरित झलक सहित।	कामला या Jaundice
अल्प अस्वच्छ हरित वर्ण वाला, नीली झलक वाला।	विसूचिका या Cholera कोलेरामें या Typhus याने सन्निपात ज्वरमें।

यह उपरोक्त विवरण हमने वैद्य वन्धुओंकी जानकारीके लिए कुछ सूक्ष्म रूपमें किया है। जहाँ पर अल्प पीत वर्णाकृति वाला मूत्र होगा हम पहले ही लिख चुके है कि ऐसा मूत्र स्वस्थ मनुष्यके होगा। अधिक पीला या भूरे रंगका मूत्र पित्त जनित व्याधिमें होगा जैसा ऊपरवाली

सूचीमें लिखा हुआ है। दुग्ध रंगका मूत्र उस बीमारीमे होगा जिसमें औपसर्गिकमेह हो, जिसके मूत्रमें पूय जाती हो या जो मनुष्य विशेष मोटे होते है, जिनके शरीरमे वसाका विशेप हिस्सा रहता है, उनके भी मूत्रमे वसाजब जातो है मूत्र दुग्ध वर्णका हो जाता है। नारंगी रंगका मूत्र औपधि विशेपसे जो मनुष्य खाता है और वो विशेप नारंगी रंगवाली होती हो उससे भी मूत्र नारंगो रंगका हो जाता है। क्योंकि वे औषधियां मूत्रमे होकर निकलती है। अधिक पीला कुछ हरित आभा वाला कामलाके रोगीको होता है। (जिसे पीलिया भी कहते है)

गंदे रंगका हरापन लिए हुए जब मूत्र आता है तो इसका अर्थ यह कि कोई त्रिदोपजन्य व्याधि है जैसे सन्निपातिक ज्वर या मोतीझरा।

मूत्र गंध या Odour (ओडर)---मूत्र गध, रोग परीक्षाका मुख्य अंग है। स्वस्थ मनुष्यके मूत्रकी गन्ध कोई मुख्य गन्ध नही होती न तीव्र होती है परन्तु दुर्गन्ध द्योतक नही होती। पाश्चात्य विद्वान इसे Faint aromatic odour (फेन्ट अरोमेटिक ओडर) कहते हैं। जो अस्वस्थताका सूचक मूत्र होगा उसमे शोरेकी-सी गन्ध आयेगी। इसका तात्पर्य्य यह कि पाचन क्रिया ठीक नहीं है। दिमागको तीव्र दुर्गन्ध से चलायमान कर देने वाली गन्ध मेह वाले रोगीके मूत्रमे मिलेगी। कतिपय औपधियोकी गन्ध भी मनुष्यके मूत्रमे पायी जाती है जैसे गंदे बेरजेकी गन्ध यह तब ही मूत्रमें मिलती है जब कोई रुग्ण मनुष्य उपमेह इत्यादि रोगो से पीडित होकर उपरोक्त औपधियोंका सेवन करता है।

Specific gravity :—(आपेक्षिक घनत्व) यह एक यन्त्र द्वारा जिसे यूरोनोमीटर (Uronommiter) कहते है मापी जाती है। स्वस्थ मनुष्यके मूत्रकी स्पेशिफिक ग्रेविटी Specificgravity 1015—1025 तक होती है और जो शराबी याने मद्यपान करनेवाले मनुष्यों में 1003 तक हो जाती है या अत्यधिक पसीना आनेसे 1040 तक पहुंच सकती है। इस परिमाणसे न्यून या अधिक रुग्ण पुरुपों में ही पाई जायेगी।

Reaction to Litmus Paper (री एकसन टू लिट्मस पेपर) लिटमस कागज द्वारा मूत्रकी रासायनिक क्रिया मालूम होती है। यह कागज दो प्रकारके होते है एक नील वर्ण वाला दूसरा रक्तवर्ण वाला। यदि रक्तवर्ण वाले कागजको मूत्रमें भिगोयेंगे और वह रक्तवर्णको त्याग कर नीले रंगका हो जाय तो इससे यह स्पष्ट होता है कि मूत्रमें क्षार युक्त (Alkaline) तत्व उपस्थित है। यदि नीले कागज को मूत्रमें डालकर देखा जाय और वह नीलेसे रक्त आभा वाला हो जाय इससे यह सिद्ध होता है कि मूत्रमे क्षारोंकी अपेक्षा अम्ल रस विशेपतया उपस्थित है। स्वस्थ मनुष्यका २४ घंटेका मूत्र यदि परीक्षा किया जाय तो Acidic एसिडिक (अम्लीय) वाला होगा। मनुष्यके खाद्य पदार्थोंका मूत्र पर अत्यधिक प्रभाव होता है।

रासायनिक मूत्र परीक्षाके लिए मूत्र लेनेकी विधि :—

वैद्यको चाहिए कि विमारसे सुवह सोकर उठनेके बादका मूत्र परीक्षा के लिए लानेको कहे। सुवह उठते ही पहिले पहलका जो मूत्र आता है वह कुछ नीचे छोड दिया जाता है इसके बाद का मूत्र कांच की शीशीमें जो अच्छी तरह स्वच्छ की हुई होनी चाहिए इकट्ठा करना परम आवश्यक है। भोजन करनेके २-२॥—घंटाके पश्चात का मूत्र भी परीक्षा के लिए लिया जा सकता है।

मूत्र परीक्षाके उपकरण :—

Glass test Tube ग्लास टेस्ट ट्यूब (परीक्षा करने की कांचकी शीशी या नली) स्प्रीटकी चिमनी, यूरोनोमीटर (Uronometer) Litumus paper लिट्मस पेपर, Pippet पीपेट Chemical reagents केमिकलरी एजेन्ट्स (रसायनिक पदार्थ) इत्यादि मुख्य मुख्य यन्त्र मूत्र परीक्षाके लिए परमावश्यक है।

Chlorides :—क्लोराइड्स (क्षार) :—अल्प मात्रामें मूत्र परीक्षा

करनेकी कांचकी नली या Test Tubc टेस्ट ट्यूवमें लीजिए उसमें २-४ बूँद Silver-nitratc सिलवर नाइट्रेट (चादी+शोरे की तिजाव मिश्रित पदार्थ) डालिए इससे मूत्र फट जायेगा इसका तात्पर्य्य यह कि मूत्रमें Phosphate फोस्फेट्स जारहे हैं। फिर इसी फटे हुए द्रवमे यदि Nitric acid नाइट्रिक एसिड (सोरेका तेजाव) डालिए फटापन बिलीन हो जायगा, जो अधिक रूपमें था और जो अल्परूपमे रहेगा वो Chlorides क्लोराइड्स हैं। एक स्वस्थ मनुष्य एक दिनमें 12·15 gms ग्राम्स क्षार मूत्र द्वारा वाहर निकलता है।

Phosphates फोस्फेट्स

(a) Alkaline एलकेलाइन Potassium पोटासियम और Sodium phosphat सोडियम फोस्फेट।

(b) Earthy अरदी (खनिज या जमीनमें पैदा होने वाले) Calcium केलसियम और Magnesium phosphatcs मेगनेसियम फोष्फेट यह दो प्रकारके होते है एक भूमिमे उत्पन्न होने वाले दोयं Alkaline एलके लाइन (क्षारीय) होते है।

परीक्षा :—एक परीक्षा करनेकी कांचकी नलीमे अल्प मात्रामे मूत्र लीजिए, उसमे Caustic soda solution कोस्टिक सोडा सोल्यूशन के बूंद डालिए और स्प्रीटकी चिमनीपर गरम कीजिए। मूत्रमें फटा हुआ एक पदार्थ नजर आयेगा। यह ही Calcium केलशियम और Magnesium phosphate मेगनेसियम फोस्फेट है।

Urea यूरिया :—एक मनुष्यके नित्य प्रति वत्तीस ग्राम्स यूरिया मूत्र द्वारा वाहर निकला करता है। यूरिया भोजनमे जो Protein प्रोटेन नामक पदार्थ रहते है, उनसे बनता है। दोयं Uric Acid यूरिकएसिड्से बनता है।

Urea यूरिया परीक्षा :—एक भाग Baryta Mixture बरयाटा मिक्सचर लीजिए और उसमें तीन भाग मूत्र मिलाइए। इस मिश्रण

को अच्छी प्रकारसे हिलानेसे एक फटा हुआ पदार्थ दृष्टिगोचर होगा, उसे छान लीजिए, Filter paper फिल्टर पेपर (छाननेका कागज) से। छने हुए पदार्थको वाष्प क्रियाके लिये हवामें छोड़ दीजिए। जब तक कि पदार्थ घनत्वको प्राप्त नही हो जाय। तत्पश्चात इसी पदार्थमे ६५ प्रतिशत शक्तिवाली संजीवनी सुरा मिश्रित कीजिए, जो उष्ण होनी चाहिये और इसके पश्चात इसे छान लीजिये और छने हुए पदार्थको ठंडे स्थानपर छोड़ देना चाहिए। कुछ समयके पश्चात इस तरलमे क्षारके-से कण नजर आयेगे जो सुईकी तरह नौकीले होंगे इन्हें अणुविक्षण यंत्र द्वारा परीक्षा करने पर स्पष्ट हो जायगा कि यह ही Urea यूरिया नामक पदार्थ है।

या थोड़ेसे मूत्रम Conc. Nitric Acid कोनसेन्ट्रेड नाइट्रिक एसिड मिश्रित कीजिए। कुछ क्षण पश्चात Uria Nitrate यूरिया नाइट्रेट नामक पदार्थ दिखाई दे देगा।

इन कणोंसे पहले कणोंकी समानता करनेसे आपको विश्वास हो जायगा कि यह वही Urea पदार्थ है।

Uric Acid :—यूरिक एसिड—लगभग 100 C. C. (एक तरह का माप) क्यूबिक सेन्टी मीटर मूत्र लीजिए उसम Conc. Hydrochloric Acid कोनसेन्ट्रेड हाईड्रोक्लोरिक एसिड (नमकका तेजाव) कुछ मिश्रित कीजिए और इस मिश्रणको चौबीस घंटा एक शीशेके वर्तनमें रख दीजिए। कुछ समय व्यतीत होनेके पश्चात पैदेमे कुछ रंगीले कण दृष्टिगोचर होंगे यह ही Uric Acid यूरिक एसिड है।

Ammonia Salts एमोनिया साल्ट्स :—नित्यप्रति लगभग ·७५ ग्राम्स मात्रामे मूत्र द्वारा बाहर जाता है।

अल्प मात्रामे मूत्र लीजिए। परीक्षा करनेकी काँचकी नलीमें डालिए, इसमे Caustic Soda Solution कोस्टिक सोडा सोल्यूशन

मिश्रित कीजिए। नोसादार या नरसारकी गन्ध आने लगेगी। इसे ही अमोनिया साल्ट कहते हैं।

Carbonates (कारबोनेट्स) यह निम्न प्रकारके होते है। Sodium (सोडियम) Magnesium (मेगनेशियम) और Ammonium (एमोनियम) और Calcium केलसियम इत्यादि प्रकारके होते हैं।

भोजनमें जो ताजा हरी शब्जी या शाक व्यवहारमें लाये जाते हैं, इनसे उपरोक्त पदार्थ पैदा होते हैं। कुछ समय तक यदि मूत्र रखा जाय तो उसम धुआं दिखाई देगा। यह उपरोक्त पदार्थोंकी सूचना है।

Glucose—ग्लूकोज या शर्कराकी परीक्षा—इस परीक्षामें मूत्रमें शर्करा जाती है या नहीं, इसकी परीक्षाके विषयमे वर्णन किया जायगा।

मधुमेह व्याधिमें इसी प्रक्रिया द्वारा मालूम किया जाता है, कि मूत्रमें किस मात्रा मे शर्करा जाती है।

यहा पर हम कुछ मुख्य-मुख्य एवं सरल परीक्षावोके विषयमें दिग्दर्शन करायेंगे।

Fehling's Test —इस परीक्षामें दो लवणोका प्रयोग किया जाता है जिसको परीक्षा करते समय मिला लिया जाता है।

Fehlings solution No 1 :—(प्रथम लवण)

३४, ६४ ग्राम नीला थोथा (Copper sulphate) के अत्यन्त वारीक चूर्णको ३०० सी० सी० अर्ध ऊष्ण परिश्रुत जल (Distilled water) मे घोलना चाहिये। ठन्डा होनेपर इतना परिश्रुत जल मिलाना चाहिये कि घोलकी पूर्ण मात्रा ५०० सी० सी हो जाये।

Fehlings solution No 2 (द्वतीय लवण)

१८० ग्राम एसिड पोटासियम टारटरेटको ३०० सी० सी० परिश्रुत जलमें घोलकर छान लेना चाहिये। छानकर ७० ग्राम स्वच्छ कास्टिक

सोडा डाल दे। शीतल होनेपर इतना परिश्रुत जल मिलाना चाहिये कि घोलकी पूर्ण मात्रा ५०० सी० सी० हो जाय।

परीक्षा —प्रथम एवं द्वितीय लवणको समान मात्रामे एक कांचकी नलीमें लेकर उसमें चौगुना जल मिलाना चाहिये। तत्पश्चात् इसको गरम करना चाहिये। गरम करनेसे इसके वर्णमे किसी प्रकार का कोई परिवर्तन दृष्टिगोचर नहीं होगा। तदोपरान्त इस उष्ण तरलमें किंचित शर्करा मिश्रित जलका घोल डालकर पुनः इसको गरम करना चाहिये। गरम करनेसे काचकी नलिकाके ऊपरी सतह पर पीतवर्ण या भूरे रंगका एक फटा पदार्थ दिखाई देगा। यह परिवर्तन शर्करा की उपस्थितिके कारण हुआ। अतः जिस रोगीके मूत्रमे शर्कराकी परीक्षा करनी हो तो शर्करा युक्त घोलके स्थान पर उष्ण दोनों लवणोंके घोलमें किंचित मूत्र मिश्रण करना चाहिये और पुनः गरमकर उपरोक्त परिवर्तन देखना चाहिये। यदि मूत्रमें शर्करा होगी तो Test Tube के ऊपरी सतह पर पीले रंगका या भूरे रंगका फटा हुआ पदार्थ दृष्टि-गोचर होगा अन्यथा नहीं ।

Mooi's Test (मूर्स टेस्ट):—अल्प मात्रामें शर्करा घुले हुए जलको लीजिए आर उसमे Stiorg Caustic soda solution (कोष्टिक सोडा सोल्यूशन स्ट्रोंग) मिश्रित कर दीजिए यदि तरलको गरम करनेसे वह काले रंगमें परिणित हो जाय अथवा निरन्तर और गहरे काले या भूरे रंगमे बदलता जाय और जैसे शर्करामे जलनेसे गन्ध आती है ऐसी ऐसी गन्ध आने लगे तो शर्कराकी उपस्थिति समझना चाहिये। इसी तरह शर्कराके जलके बदलेमे यदि मूत्र मिश्रित किया जायगा और यदि शर्करा मूत्रमे जाती होगी तो, उपरोक्त लक्षण स्पष्ट प्रगट होंगे अन्यथा नही।

Benedict's Test (वेनेडिक्टस टेस्ट) 5 C C. या ५ सी० सी वेनेडिक्टस तरल लीजिए आर इसे परीक्षा करने की काचकी नलीमे

डालिये इस द्रवमें ७-८ बूद शर्कराका जल मिश्रण कीजिए फिर इस तरल को २ मिनट तक गरम कीजिए तदनन्तर इस तरल को ठंडा होने दीजिए, इस क्रियासे हवामे तमाम पदार्थ पृथक पृथक हो जायेंगे तथा इसमें लाल, पीला, या हरे वर्णका फटापन दिखाई देगा। जितनी अधिक शर्करा मूत्रसे जाती होगी उतना ही गहरा रंग रहेगा। इसी तरह मूत्रको परीक्षा की जा सकती है।

अन्य विधि :—एक परीक्षा करने की कांचको नलीमें एक इन्च मूत्र लेकर उसमें ½ इन्च Picric acid (पिकरिक एसिड) का सघन तरल मिश्रित कर Caustic Potash Solution (काष्टिक पोटास सोल्यूशन) मिश्रित कीजिये तत्पश्चात् इस तरल को चिमनी पर गरम कीजिये, यदि लाल या गहरालाल रंग दिखाई दे तब निश्चय हो मूत्रमें शर्करा वर्तमान है।

यदि अत्यन्त कम मात्रामे मूत्रमे शर्करा जाती होगी, तव इस परीक्षासे पता लगाना कठिन है।

Estimation of Sugar (शर्कराकी मात्राकी परीक्षा)

मूत्रमें शर्कराकी उपस्थितिकी परीक्षा तो उपरोक्त प्रकारसे ज्ञात हो सकती है परन्तु कितने प्रतिशत मात्रामें शर्करा मूत्रसें आ रही इसकी परीक्षा भो अत्यावश्यक है। परीक्षा :—सह परीक्षा भी Fehling's Solution No. 1 & 2 की सहायतासे की जाती है। इस परीक्षा का मन्तव्य यह है कि जब नीला थोथा (Copper Sulbhate) का घोल Caustic Alkalines के साथ मिश्रित किया जाता है तो उससे एक पदार्थ तैयार होता है जिसको Cuprous Hydrate कहते है। यह पदार्थ भो परिवर्तनोपरान्त Copper Oxide में परिवर्तित हो जाता है। इस कापर Oxide को यदि शर्कराके साथ गरम किया जायगा तो Red Precipitate (रक्तावशिष्ट) में परिणित हो जायगा यही शर्करा की उपस्थिति का सूचक है।

उपयोग :—एक चिनी मिट्टीके पात्रमे ५ सी० सी० प्रत्येक द्रावण (Fehling's Solution No 1 & 2) लेना चाहिये। इसमे ५० सी० सी० जल मिला देना चाहिये। तदोपरान्त Burette (द्रव मापक नलिका) मे जो अच्छी प्रकार साफ कर लिया गया हो मूत्रसे युक्तकर Burette Stand पर लगा देना चाहिये। यदि मूत्रमे शर्करा का अधिक अनुमान हो तो मूत्रमें थोडा जल देकर हलका कर लेना चाहिये। इस Burette Stand (द्रव मापक नलिका सम्भारक) के नीचे तिपाई पर रखकर गरम करना चाहिये। जब द्रावण उबलने लगे तो Burette (द्रव मापक नलिका) से बूँद बूँद कर मूत्र डाले। द्रावण को काँचकी एक शलाकासे सावधानीसे हिलाते रहना चाहिये जिससे मूत्र इस घोलमे अच्छी तरह से मिल जाये। इस प्रकार मूत्र को बूँद २ कर उस समय तक मिलाते रहना चाहिये जबतक कि नीले द्रावण का वर्ण श्वेत न हो जाये। जब घोलका वर्ण बिल्कुल श्वेत हो जाय, बीच बीचमे तरल की बूँद Acetic acid & potassium Ferrocyanide मे भिगोये हुए Litmus paper पर डालकर देखते रहना चाहिये यदि भूरा रंग हो तो समझना चाहिये कि अभी Copper परिष्कृत नहीं हुआ है और विशेष मूत्र डालकर पुनः क्रिया प्रारम्भ कर देनी चाहिये। जब घोलका वर्ण श्वेत हो जाय तो Burette Reading पढ़ लेना चाहिये इस द्रवमापक नलिका (Burette) में अंक सहित चिन्ह बने रहते है जिससे यह ज्ञात हो जाता है कि इस परीक्षामे कितना मूत्र प्रयोगमे आया जिसके आधार पर ही प्रतिशत की गणनाकी जाती है।

Calculation of percentage प्रतिशत गणना—

CALCULATION कलकुलेशन (गणना)

मान लीजिये मूत्रमे १० गुना जल मिलाया हुआ है, उसमेसे ५ सी०सी० मूत्र, १० सी० सी० Fehling's solution (फेहलिंगसोल्यूशन) को हल करनेमे प्रयोगमे आया।

लेकिन १० सी० सी० Fehling's solution (फेहलिंग्स सोल्यूशन) .०५ शर्करा द्वारा reduce (रिड्यूश) कर दिया जाता है। परन्तु मूत्र १० गुणा जल मिश्रित किया हुआ है, इसलिये ५ सी० सी० मूल मूत्रमें ०५ शर्करा हुई ५ सी० सी० : १०० सी० सी० :: .०५ : इसलिये १०० सी० सी० मे शर्कराकी मात्रा निम्न हुई।

$$\frac{१००\times ०५}{५}$$ = १० ग्राम या १० प्रतिशत शर्करा इस मात्राको ४.३.७५ से गुणा करनेसे हमे ग्राम्स प्रति औंसका पता लग जायेगा। यदि मूत्रमें Albumin भी विद्यमान रहे तब इसमे शर्कराकी मात्रा गणना करनेके पहले यदि Acetic acid (एसेटिक एसिड) डालकर गरम करना चाहिये, तब मात्राका उचित ज्ञान होगा, इसी तरहसे urea और uric acid (यूरिक एसिड) की मात्राका ज्ञान हो सकता है।

Albumin (एलब्यूमन)—

Buiret test (ब्यूरेट टेस्ट —२-३ सी० सी० अंडेके अलब्यूमन सोल्यूशन (Egg Albumin Solution) बराबरकी मात्रामे Conc. Caustic Soda (कोनसेन्ट्रेटेड कास्टिक सोडा सोल्यूशन) मिश्रित कर परीक्षा करनेकी काचको नलीको हिलाते रहिये और तत्पश्चात् उसमे किंचित शक्ति वाला Dilute Copper Sulphate Solution (डाइ-ल्यूट कोपर सलफेट सोल्यूशन नीले थोथेका जल) १-२ बूंद मात्रामे मिश्रित कीजिए। Purple violet (परपल वायोलेट) अर्थात् बेंगनी शब्ज रंगकी या Pinkish violet (पिन्किश वायोलेट) मोतिया शब्ज रगकी झलक देता हुआ पदार्थ यदि दिखाई देवे तो समझना चाहिये कि एल्ब्यूमन वर्तमान है अन्यथा नही। यहा पर (Albumin Solution (एल्ब्यूमन सोल्यूशन) अंडेकी सफेदीमे जल मिलाया हुआ मिश्रण था।

Lieberman's Reaction (लीबरमैनस रिएक्शन)—यह अडेके

Albumin (एलल्व्यूमन) में जल बिना मिलाये ही किया जाता है। १० बूंद अंडेकी सफेदी एक परीक्षा करनेकी काचकी नलीमे लीजिए, उसमें ५ सी० सी० Hydrochloric Acid Conc, (हाईड्रोक्लोरिक एसिड कोनसेन्ट्रेटेड) मिश्रित कीजिये, कुछ समयके लिये स्प्रीट लेम्प पर गरम कीजिए Violet (वायोलेट) या बेंगनी रंग यदि दृष्टिगोचर पड़े तब यह जानना चाहिए कि यह ही एल्व्यूमन है।

एल्व्यूमन परीक्षाके लिए मूत्र लेनेके पहले इसे छान लेना चाहिए, यदि मूत्रमे Acid (एसिड) कम हो, तो थोड़ा मिश्रण कर देना चाहिए।

अन्य परीक्षा :—

एक परीक्षा करनेकी काचकी नलीमे ५ सी० सी० मूत्र लेकर उसमे ५-१० बूंद Acetic Acid (एसेटिक एसिड) मिश्रित कीजिए और इसके पश्चात् Pot Ferrocyanide (पोटासियम फेरोसिमनाइड) बूंद बूंद करके मिश्रित कीजिए, मूत्र फट जायगा—यह अत्यन्त सूक्ष्म परीक्षा है।

Boiling test :—(बोयलिङ्ग टेस्ट) एक परीक्षा करनेकी काचकी नलीको ⅔ तक मूत्रसे पूरित कीजिए, ऊपरसे द्रव हिस्सेको बहुत सूक्ष्म रूपसे गरम कीजिए नलीको पेंदेमें से पकड़ियेगा। एक Turbidity (टरबिडिटी) धुंधलापन दिखाई देगा, इसका तात्पर्य यह कि एल्व्यूमन है या फोस्फेट्स है, इस तरलमे ५-७ बूंद Acid Acetic (एसिड एसेटिक) मिश्रित कीजिए, यदि Phosphates (फोस्फेट्स) हुए तो यह Turbidity (धुंधलापन) नष्ट हो जायेगा और गहरा पड जायगा। यदि (एल्ब्यूमन) होगा तो नष्ट नही होगा और गहरा पड़ जायेगा। यदि मूत्रमें Albumin (एल्व्यूमन) हुआ तब मूत्र गरम करने पर ७५° पर फट जायेगा, यदि Phosphates (फोस्फेट्स) हुए तब

Boling Point (बोयलिङ्ग पोइन्ट) पर फटेगा। यदि फोस्फेट्स अधिक मात्रामे जाते हुए मालूम दे तब इसका यह तात्पर्य है कि कोई हड्डियोकी बीमारी है—या शोष रोग है या ज्ञानेन्द्रिया नष्ट हो रही है या वृक्की बीमारीका सूचनार्थक हेतु है।

Bile test (बायल टेस्ट)—अल्प मात्रामे एक परीक्षा करनेकी काच की नलीमे मूत्र लीजिए इसमें Tr. Iodine(टि० आयोडीन) एक बगल से डालिए यदि Emerald greenish Ring (इमेल्ड ग्रीनिश रिङ्ग) हरे पन्नेके रंगकी चक्राकार चक्री दिखाई पड़े तो मूत्रमे बाइल (Bile) है। यह समझना चाहिये, बायल जाता है।

Blood test (रक्त परीक्षा)

ब्लड - एक परीक्षा करनेकी कांचकी नलीमें अल्प मात्रामें मूत्र लीजिए उसमें Strong Caustic soda solution (स्ट्रोङ्ग काष्टिक सोडा सोल्यूशन) या Potash (पोटाश) मिश्रित कीजिए यदि हरा बोतली रंग दिखाई दे इसका तात्पर्य्य यह कि मूत्रमें रक्त जा रहा है।

Pus (पूय) ।— अल्प मात्रामे परीक्षा करनेकी काचकी नलीमे मूत्र लीजिए इसमे Caustic Potash (काष्टिक पोटाश) की अल्प मात्रामे बूंदे मिश्रित कीजिए यदि आपको Ropy gelatanous precipitate रोपी जिलेटेन्सप्रीसिपिटेट (रस्सेके रंगका फटापन) दिखाई देगा इसमें Acetic Acid (एसेटिक एसिड) मिश्रित कीजिए यदि यह फटापन विलीन नहीं हो तब समझना चाहिए मूत्रमें Pus (पस) या मवाद या पूय जाता है।

Fat (वसा) । - यदि मूत्रमें वसाके जानेकी शंका हो तब मूत्रमे Ether (ईथर) मिश्रण कीजिए वसा विलीन हो जायेगी मूत्र थोडा गदा सा मालूम देगा। ईथरको वाष्प क्रिया द्वारा उडजाने दीजिए फिर मूत्रमे छिछडेसे दिखाई देंगे इसका तात्पर्य यह की वसा मूत्रमे जाती है।

Microscopic Examination (माइक्रोस्कोपिक एक्जामिनेशन) (अणु-

वीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षा) अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षा जाननेसे पहले हमें यह परम आवश्यक है कि प्रथम इस यन्त्रका ज्ञान कर लिया जाय। इस यन्त्रकी यह विशेषता है कि जो भी पदार्थ इसके द्वारा देखा जायगा सूक्ष्मसे सूक्ष्म मात्रा वाली वृहत् आकारमें दिखाई देगा— यह यन्त्र लोहेका एवं कहीं-कही पर पीतल भी लगा हुआ होता है। ऊपरके हिस्सेमें एक दुरबीन लगी रहती है जिसमेंसे होकर परीक्षणीय द्रव्य देखा जाता है। एक तरफ एक Screw (एक तरहका पेच) लगा रहता है जिससे दुर्बीन ऊपर या नीचे घूमता है इसके नीचेके हिस्सेमे एक कुछ हल्की ताकतवाला, एक वृहत् ताकत वाला Lense लेन्स लगा रहता है। नीचेके हिस्सेमें एक ऐसी जगह वनी रहती है जिसमें एक आर-पार छेद होता है। इसके ऊपर परीक्षणीय पदार्थ एक कांचकी टुकढ़ी (Giass slide) ग्लास स्लाइड पर रखा जाता है।

इस छेदमेंसे रोशनी आर-पार होती रहती है जिससे देखनेमें वहुत सरलता रहती है।

काचकी टुकड़ी पर पदार्थ रखकर Screw (स्क्रू) यानी पेचको नीचे ऊपर घुमाया जाता है तव तक कि पदार्थ साफ साफ दिखाई न देने लगे। साक्षात्मे जब आप लोग इस यन्त्रको देखंगे सरलतासे ध्यानमें आ जायगा और आप इससे परिचित हो जायेंगे।

इस यन्त्र द्वारा परीक्षा करनेके पहले मूत्र Centrifugalsing Machine (सेन्ट्रीफ्यूजेलाइजिग मशीन) मे केन्द्रित कर लिया जाता है जिसे Centrifugalised (सेन्ट्रीफ्यूजेलाइजड) कहते है। इसके पश्चात् ऊपरकी सतहका मूत्र फेक दिया जाता है और तलीमे जो अवशेष रहतो है उसमे से Pippet (पीपेट) द्वारा १-२ बूंद लेकर और इसकी परीक्षा की जाती है। उसको काचकी टुकड़ी पर रख कर जिस पर एक Cover glass कवर ग्लास (काचका ढकना) से ढाक दिया जाता है। अनुवीक्षण यन्त्र द्वारा निम्नाकित परीक्षाये की जाती है।

Casts (कास्टस):—अणुवीक्षण यंत्र द्वारा देखनेसे इसकी परीक्षा की जाती है। यह आकारमे लम्बे २ दिखाई देते है। यह जब वृक्कमें मूत्रका वेग अत्याधिक होता है, तब बाहर आते हैं। इनका मूत्रमें आना वृक्ककी कोई बीमारीकी सूचना देना है। यदि इनके साथमें एल्यूमन भी रहे तो बिमारीका प्रबल वेग है। ऐसा समझना चाहिये।

Hyaline casts (हेलाइन कास्टस):—जितनी भी प्रकारके बृकों के रोग होते है उन सबमे यह पाये जाते हैं।

Intestinal Nephrites (इनटेस टाइनल नेफ्राइटिस) मे रोगके प्रारम्भ और अन्तमें भी पाये जायंगे। इनकी रचना बहुत सुन्दर एवं समान होती है। इनका रङ्ग बहुत हल्का होता है। इनपर बहुतसे और पदार्थ एकत्र रहते है जैसे Fat Globules (फैट ग्लोब्यूल्स) (वसाके कण) या Epithelial cells (एपीथेलियल सेल्स) याने त्वचामे छोटे २ टुकडे।

R.B C (आर० बी० सी०):— रक्त जीवाणु :—इन्हे अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा देखा जा सकता है, एवं इनकी बनावट देखकर सरलता से पहचाना जा सकता है।

विभिन्न कास्ट्स:—कई प्रकार के (Casts) कास्ट्स होते है जिनमें (Granular Casts) ग्रेन्यूलर कास्टस (Blood Casts) ब्लड कास्ट्स, (Fatty Casts) फैटी कास्ट्स, (Epethelial Casts) एपि थेलियल कास्ट्स, (Waxy Casts) वेक्षी कास्ट्स मुख्य-मुख्य हैं। इन कास्ट्स के द्वारा वृक्कों की बिमारी का पतालग सकता है।

कास्ट्स का पता लगाना मुख्यं अभ्यास पर निर्भर करता है।

Epethelia:(एपीथेलिया) यह प्रायः स्वस्थ मनुष्य के मूत्रमें भी पाये जाते है। साधारण तया यदि मूत्रमे साधारण मात्रा मे यह

जाते है तव कोई सोचनीय विपय नहीं है। यदि अधिक मात्रा मे जाते हुए प्रतीत हों तव इसका यह तात्पर्य है कि मूत्र मार्ग की कोई झिल्ली छिली हुई है। अधिकतर (Small Round) स्माल राउन्ड (Spindle form) स्पेन्डल फोर्म, आकृतिके एपीथेलिया मूत्र मे पाये जाते है।

Puscells (पूय कण) अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा पूय या मवाद का मालूम करना मूत्र की रसायनिक क्रियाके ऊपर निर्भर रहता है। अम्ल मूत्र में यह गोलाकार बिना रङ्ग वाले दिखाई देते है। इनपर (Granular Protoplasm) ग्रेन्यूलर प्रोटोप्लाज्म एकत्रित रहता है। इन जीवाणुवोंमें एक या दो केन्द्र रहते है। यह स्पष्ट तथा तव ही दिखाई देते है जब कि (Acetic Acid) एसेटिक एसिड या साधारण जल द्वारा इनपर रसायनिक क्रिया की जाती है।

Alkaline (एल कलाइन) मूत्र मे Puscells (पूय कण) फूले हुए साफ साफ दिखाई देते है। यदि इनका नष्ट होना प्रारम्भ हो जाता है तब इनकी बाह्य परिक्रया नष्ट होकर इनके थप्पे के थप्पे दिखाई देंगे।

यह (Puscells) पूय कण प्रायः मूत्र की व्याधियोमे पाये जाते है जैसे :—

औपसर्गिक मेह (Gonorrhoea) गोनोरिया, श्वेत प्रदर (Leucorrhea) ल्यूकोरिया, या गुर्दके घावों (Kidney Abscess) मे पाये जाते है।

Blood Corpuscles (ब्लड कारप सल्स) यह मूत्रकी अनेकानेक वीमारियों मे पाये जाते है। यह (Biconcave) बाई कोन केव (अर्धनतोदर) अवस्था मे मिलेंगे। यह रङ्ग रहित होते है। यह Heamorrhage of the kidney, (वृक्कोंके रक्त श्रावमें) पाये जाते है।

(Spermatozoa) स्परमटोजुवा (शुक्राणु) यह गोलाकार अंडे की

शक्ल के होते हैं। इनके एक लम्बी पूंछ रहती है जो बहुत बारीक या पतली होती है। यह मूत्र या जनेन्द्रियों (Genital organs) की बीमारियों में पाये जाते हैं और मुख्यतया (Typhoid Fever) टाइ फाइड फीवर या सन्निपातिक ज्वरमे उपलब्ध होते है।

Micro-organisms (माइक्रो आरगनिज्म)— यह कुछ तो चलने वाले और कुछ नही चलने वालेहोते हैं। जिसे Motile और non-motile भी कहते हैं। यदि मधुमेह वाले रोगी का मूत्र हुआ तब इस मे Yeasts (इस्ट्स) और Moulds (मोल्डस) भी मिलेगे।

यह अधिकतया B Coli (बी० कोलाई), Tubercule Baccili (ट्यूबरक्ल वेसीलाई), Gonococci (गोनो कोकाई), Typhoid (टाइ फोइड) इत्यादि बीमारियोंमे मिलेंगे।

Filaria (फाइ लेरिया) इत्यादि विमारियों के कीटाणुवों के अंडे भी मूत्र मे पाये जाते है।

Other Products (अन्य पदार्थ) दूसरे अन्यान्य पदार्थ जैसे रेशम के धागे के टुकडे या बाल के टुकडे या अन्न के (Particle) पारटिकल (छोटे कण) भो मूत्र में उपलब्ध हो सकते है, इसलिए अणुवीक्षण यन्त्र के द्वारा परीक्षा करने के पहले उपरोक्त चीजे तो नही है इसका मालुम करना परमा वश्यक है।

Calcium Oxalate (केलसियम ओक्जलेट) यह दो प्रकार के होते है। एक घंटी की शक्ल का दूसरा अठकोणें आकार के।

Octahedral Type वाले कण मूत्र में पाये जाते है। स्वस्थ मनुष्य के मूत्र मे भी Calcium Oxalate पाया जाता है, परन्तु यदि अत्यधिक मात्रा मे यदि इनकी सख्या मिले तब इसका तात्पर्य यह कि अजीर्ण का विशेष दोष है या फुफ्फुस (Lungs), मधुमेह का दोष है। यदि अत्याधिक मात्रा मे Oxalates मूत्र में पाये जाय तब यह स्पष्ट समझना चाहिये कि पथरी का रोग है।

Urates (यूरेट्स) यदि पीतवर्ण वाले या रक्त वर्ण वाले कण या भूरे वर्ण वाले काटे दार कणों से ढके हुए दिखाई देगे तव यह समझना चाहिये कि Urates मूत्रमें जा रहे है।

Cystine or Cholesterol Hyppuric Acid (सिसटाइन या कोलेसट्रल हाइप्यूरिक एसिड) यदि यह मूत्रमे वहुत अल्प मात्रामें पाये जाते है तो समझना चाहिये कि Typhoid (सन्निपातिक ज्वर) Small Pox (मसूरिका) है और यकृत व्याधियोंमे पाले जाय तो समझना चाहिये कि रोगका अत्यन्त उग्र रूप है ।

मल परीक्षा

मल परीक्षा द्वारा कई रोगोकी जैसे प्रवाहिका, अतिसार, संग्रहणी आदि रोगोकी पहिचान बहुत आसानीसे की जाती है। इतना ही नहीं, अनेक रोगोके साध्य, कष्ट साध्य, अथवा असाध्यताका ज्ञान भी इस परिक्षासे हो जाता है। मल परीक्षामे प्रथम वातादि दोषोंका आश्रय लेकर परीक्षा करनी चाहिये। वात प्रकोपके कारण मल सूखा, झागदार, कालेरंगका होता है। पित्त दोषसे हरा, पीला, दुर्गन्ध युक्त, पतला गरम होता है। कफ दोपसे सफेद रंगका चिकना, गोला, वधा हुआ होता है। वात पित्त दोषसे पोला, काला, तथा गांठ मिला हुआ होता है। वात कफके दोषसे मल भीना काला, तथा छिछड़ो युक्त होता है। पित्त कफ दोपसे मल पीला, सफेद होता है। त्रि-दोषसे मल सफेद या काला, पीला, पतला गांठदार होता है। सन्निपात रोगीका मल अति दुर्गन्ध युक्त, मयूर चंद्रिका के समान रंग वाला हो;

तो रोगको आसध्य समझना चाहिये। वातज्वर रोगीका मल शुष्क काला रहता है। जलोदर के रोगीका मल अत्यन्त दुर्गन्ध युक्त, श्वेत होता है। असाध्य रोगीका मल भयंकर दुर्गन्ध युक्त, लाल, कुछ श्वेत, मांस जैसा माम धोवनके समान हो जाता है। इस प्रकार भिन्न भिन्न रोगोंमें मल पतला, कठिन अनेक तरहके रंग वाला होता है।

पतला मल—अतिसार, सग्रहणी, आदि रोगोंमे मल पतला हो जाता है। इसमें खाद्य द्रव्योंके टुकड़े के टुकड यदि दिखलाई द, तो समझना चाहिये कि पाचन क्रियाका दोष है। आंतोंमे पित्त विकृतिसे मल नरम आता है। हैजेमे मल चावल धोया जलके समान सफेद रंग का जल जैसा पतला होता है तथा तीव्र प्रावाहिका और तीव्र आन्त्रिक दाहमे भी मल सफेद पतला हो जाता है।

आमातिसारमें आम सहित नाना रग वाला, पीड़ा युक्त, बार-बार में थोडा करके मल उतरता है। सग्रणीमें मल कच्चा दुर्गन्ध युक्त जाता है, तथा फूला हुआ आहारकी अपेक्षा अधिक परिमाणमे होता है। पित्तावरोध जनित कामलामे, श्वेतदर्गन्ध युक्त, तिलपिष्टीके समान होता है।

गाढ़ा मल—स्वस्थ मनुष्यका मल बंधा हुआ, नर्म पीला होता है, तथा पाचन यन्त्रके ठीक रहनेपर गुद द्वार पर चिपका हुआ नहीं रहता। कोष्ठबद्धतामे मल बहुत प्रवाहण करनेसे उतरता है। बवासीरके रोगीका मल गाढा होता है, इसलिये प्रवाहण क्रिया करनेसे रक्तश्राव प्रारम्भ होजाता है। वातोदरीका मल कठिन सख्त होता है।

मल परीक्षा विधि—शास्त्रमे ३ प्रकारकी बतलाई है। दर्शन परीक्षा, रसायनिक परीक्षा, यन्त्र परीक्षा। दर्शन परीक्षासे रङ्ग, घन, द्रव, मात्रा, गन्धका ज्ञान होता है। रसायनिक परीक्षा द्वारा पक्वापक्व

आहार, आम, कफ, पित्ताश्मरी, कृमी, रक्त, पूय, मांस, आंतो के टुकड़ों का ज्ञान होता है। अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा शूक्ष्म कृमियों का निर्णय किया जाता है।

मल परीक्षाके लिये स्वच्छ वर्तन मे किसी भी समयका मल मूत्रोत्सर्गके बादका लेना चाहिये और वह पतला होना चाहिये। यदि मल पतला नही होता हो तो रातको सोते समय रोगीको हल्का सा विरेचन दे देना चाहिये तथा परीक्षाके समय मलका सचिक्कण आमयुक्त चमकने वाला भागही काममे आता है। इसमे से १ शी० शी० भाग ही परीक्षाके समय पर्याप्त है। साधारणतया परीक्षाके मल लेनेकी विधि यह है कि स्टरलाइजडथ्रोट स्वेव (Sterliged Throat-Swab) विशुद्ध रूईके फोहे को मल मे भिगोकर या मल में लपेटकर एक टेस्टट्यूब (Test Tube) में भर लीजिये या काचके वर्तन मे स्वच्छ चम्मच द्वारा रखदिया जाता है। (Bacillaiy dysentry) वे सलरी डिसेन्टरीके कीटाणुओंकी परीक्षाके लिये भी मल रेक्टल-स्वेव (Rectal Swab) द्वारा लिया जाता है। सीधा गुद द्वारसे लिया हुवा मल परीक्षामें उपयोगी होता है।

Culture (कलचर) सेवर्धन क्रियाके लिये पर्य्युषित यान मलोत्सर्ग के १ घन्टेके बादका मल काममें आता है। अत: संग्रहण्यादि बीमारियों कीटाणुओंके ज्ञानके लिये यही उपरोक्त विधिसे लिया हुवा मल उपयोगमे आता है। मल परीक्षा विधि :—उपरोक्त विधिसे लिये हुये मल में २ हिस्सा ३० / मल neutral Glycerol (न्यूट्रल ग्लिसरोल)

(Sodium chloride) सोडियम क्लोराइड या साधारण नमकका जल इससे अच्छी तरहसे मिश्रित कर देना चाहिये। ग्लिसरीन मिलानेसे अन्य किटाणुओंसे ब्रेक्टीरिया कोलाई (Be colli) का बचाव हो जाता है। प्रयोगशालामे मलके फिल्मस (Films) iZiehl Neelsens (झील नेलशन) के कथनानुसार रङ्गे जा सकते है। इनमे जब यक्ष्माके कीटाणुओंका संदेह होता है तभी रंगा जाता

है। यदि इस परीक्षामें एसिड फास्ट बेसिलाई (Acid fastbaccili) के कीटाणु पाये जांय तो उन्हें सावधानी से देखना चाहिये क्योंकि बिना यक्ष्माके भी ये कीटाणु मल म पाये जाते है। यक्ष्माके कीटाणुओं का पता लगानेका सुगमसे सुगम उपाय यही है कि अन्यान्य कीटाणुओंको प्रथम रसायनिक प्रयोग के द्वारा नष्ट कर देना चाहिये, परन्तु इस क्रियासे यक्ष्माके कीटाणु नष्ट न हो जाय, इसका पूरा बचाव करना चाहिये।

यह उपरोक्त विधि वैद्य वन्धुओं की जानकारीके लिये जो प्रयोग शालामें की जाती हैं उसका सूक्ष्म रूपसे वर्णन लिख दिया है। इससे आगे कुछ और विधि भीं लिखी जायगी।

मुख्यतया पेटकी बीमारीयोंमें मलकी परीक्षा परमावश्यक है। परीक्षा द्वारा ही उदरस्थ बीमारीयोंका निदान अच्छी तरहसे होता है। कतिपय चिकित्सकोका मत हैं कि परीक्षाके समय प्रथम मलके प्राकृतिक रूप, रंग, गन्ध, पतला है या गाढा, परिमाणमें कितना है, और इसकी रसायनिक क्रिया क्या है, इन सब बातोंका निर्णय करना चाहिए। मलमें अपक्व पदार्थ क्या क्या है, जैसे आंव (Gallstones) गाल स्टोन्स, किस प्रकारके कीटाणु हैं, और रक्त भी जाता है या नहीं? इसके बाद अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षा करनी चाहिए। वैद्यको मलके रंग, रूपके विषयमे रोगीके कथनका विश्वास नहीं करना चाहिए। रोगीका मल मंगवाकर स्वयं अपने द्वारा ही परीक्षा करनी चाहिए। वर्तमान समयमे मल परीक्षा पर परियाप्त अन्वेपण किया गया हे। जिनमें मुख्य वैज्ञानिक Haratar (हरटर) Schmidt (स्केमडिट) आदि प्रसिद्ध हैं।

प्रायः स्वस्थ मनुष्यके मलका रंग Dark Brown (डार्क ब्राउन,) या गहरा भूरा रंगका होता है। मलके रंगको देखकर ही पता लगता है कि पाचन क्रियाके लिये आंतोको पित्त उचित मात्रामे

मिलता है या नहीं। अतिसारकी प्रारम्भवस्थामें प्रायः मलका रंग काला होता है क्योकि उस समय इसमे अधिक मात्रामें पित उपस्थित रहता है, तत्पश्चात् पतले टट्टी ज्यों ज्यों होते जाते है, तब रंग भी हल्का होता जाता है। काला रंग :—जब रोगी लौह निर्मित, या Bismuth (बिससित युक्त) औषधिका सेवन करता है तब मलका रंग काला हो जाता है।

विसूचिका हैजा, Cholera (कोलेरा) वाले बीमारको Rice-water चावलोंके जलके रङ्गके समान टट्टी आती है। इस बीमारीमे Milky Stool (मिल्की स्टूल) दूधिया रंगकी टट्टी भी लग सकती है। ऐसे रंगका मल ग्रहणीमें भी पाया जाता है।

(आमाशयान्त्र शोथ) Entero-colitis (एनटेरो कोलायटिस) मे भी ऐसे ही टट्टी लगते है, परन्तु रोगीकी अवस्था देखकर रोग भिन्नताका पता लग जाता है।

बच्चोंके दांत आनेकी अवस्थामे पीतवर्णकी पतली टट्टी हुआ करती है। मोतो झरा (Typhoid) टाइफोडमें मलका रंग (Pea Soup) पी सूप (मटरके झोलके सदृश) के सदृश होता है। सर्दी या जुकाम लगनेसे बच्चोंके हरे २ फटे-फटे रंगकी टट्टी लगा करती है।

साधारण तया स्वस्थ मनुष्य के बँधा हुआ मल आया करता है। यह गोल आँटे दार हुआ करता है। बँधा हुआ परिपक्व मल होनेके कारण इसके चारों तरफ परिपक्व आमके तन्तु दिखाई दिया करते है।

Odour (ओडर) मल गन्ध :—अजीर्ण वाले रोगीके मलमे खट्टी गंध आया करती है। जिस रोगीको कब्ज कोष्ठ होता है उसके मलमें दुर्गन्ध आया करती है। परिपक्व मलमें कोई दुर्गन्ध नही होती। श्योरेकी गंध मलमें बहुत अल्प मात्रामें पाई जाती है।

यदि पाई भी जावे तब इसका यह ही तात्पर्य है, कि मूत्रका उचित ढङ्गसे परिपाक नही होता।

आव की सर्वोत्तम एवं अति सरल प्रक्रिया मल में जानने के लिए यह है कि मल मे जल मिश्रित करना जरूरी है। जल मिश्रित करने से आँव की झिलियां जल की सतह के ऊपर के भाग में तैरती हुइ मिलेगी। यह झिलिया प्रथक करके अणु वीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षा कर लेनी चाहिए। साधारण मात्रा मे आव कोई मुख्य बीमारी की सूचना नही देती। यह प्राय कब्ज वाले मनुष्य के पेट मे पैदा हो जाया करती है। यदि अत्यधिक मात्रा मे पाई जाये तब इसका यही तात्पर्य है कि पेट काम नही करता और साथ ही साथ यकृत भी काम ठीक नहीं करता और दुर्बल हो गया है।

जब मल मे रक्त पाया जाय तब इन कारणों का पता लगाना परम आवश्यक है कि कहीं रक्तार्श तो नही है। यदि अर्श में रक्त नही आता हो तो रक्त परीक्षा होनी चाहिए।

साधारणतया मल मे जल डालने से यदि जल लाल वर्ण का होजाय तब विश्वास कीजिए मल में रक्त जाता है। मल में रक्त जाने का तात्पर्य्य यह ही है कि अन्त्रों मे कहीं (बहिर्गुद द्वार) पर व्रण हो गए है। यह बाहिर गुदा द्वार मे हो सकते है अथवा Colon कोलन (वृहत् आन्त्रीय भाग) में भी हो सकते है।

पूय (PUS) पस:—मलमे यदि पूय या मवाद जाती हो तब यह इस बातको सूचना देनी है कि बहिर्गुद द्वारमे या Colon (कोलन) (वृहत आन्त्रीय भाग मे व्रण है या (औप दंशिक दाप (Syphlitic शिफलिटिक के दोपसे पेटमे घाव है या यक्ष्माके दोष से भी पेटमे व्रण होने सम्भव है इस कारण मे भी मवाद पैदा हो सकती है।

मलमें प्रायः Worms (वोर्मस) या चुर्व जिसे क्रिमी कहते है पड

जाया करते है। इसकी परीक्षा करने की सरल विधि यह है कि मल मे पुनः-पुनः जल डाले और इस जलको प्रथक करते रहना चाहिए जब तक कि मलका समस्त रंग नष्ट हो जाय। वर्तनके पेँदमे यह कृमि मिलेंगी।

आणु वीक्षण यन्त्र द्वारा मुख्यतया परीक्षा इन्ही कीटाणुवोंके लिए की जाती है। जब ग्रहणीके रोगीके मलकी परीक्षा की जाती है तब मुख्यतया Ova of the Parasites ओवा ओफ दी पैरा साइ-टस (कीटाणुओ के अण्डे) परीक्षा की जाती है। इसके लिए मल पतला होना परम आवश्यक है यदि पतला नही होवे तब इसमें Sa-line Solution normal सैलाइन सोल्यूशन नारमल (सधारण नमक का तरल) मिश्रित करके इसे द्रवित करलेना चाहिए। ग्रहणीमें गरम मलकी परीक्षा करने का आदेश है। अणुवीक्षण यन्त्रमें ग्रह-णीके मल मे अपक्व अन्न या अन्यान्य खाये हुए पदार्थोंके कण दिखाई देंगे।

मुख्यतया Starch granules (स्टार्च ग्रेन्यूल्स, आटेके कण) दिखाई देंगे। वसाके (वसातन्तु) जीवाणुवोके हिस्से Fat cells (फेट सेल्स) Oxalate of lime ओकज लेट ओफ लाइम (चूनेके क्षार) के कण अणुवीक्षण यन्त्रमे दिखाई देंगे। कीटाणुवोंमे Bacillus coli communis (वेसिलस कोलाइ कोम्युनिश) और अन्यान्य प्रकारके कीटाणु Blood Corpuscles ब्लड कारपसल्स (रक्त कण) भी इस परीक्षामे दिखाई देंगे। Epethelial cells (एपि-थेलियल सेल्स) अल्प-अल्प मात्रामे पाये जायेंगे।

Ameaba अमीबा :—यह एक प्रकार का विशेष कीटाणु होता है जो—

Ameabic Dysentry (अमीबिक अतिसार) मे मलमें पाया जाता है। अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा देखनेसे इसका पता लगता है।

यह प्रायः आंत्रके छिछडोकी परीक्षा करने पर दिखाई दिया करते हैं। इनकी शक्ल अंडाकार Cells (सेल्स) जोवाणुवोकी होती है। यह समान रूपमें अंडाकार नही होते यह Warm Slide (वार्म स्लाइड (गर्म कांचकी टुकड़ी पर) Amcaboid movcments (एमीबोइड मुमसेन्ट्स) दिखाता रहता है। मुख्य तया जल परोक्षा जो पहले हम लिख चुके है इनके Ova (ओवा) (अंडो) की एवं Entozoa (एनटोजुआ) जो भिन्न-भिन्न प्रकारके होते है इनकी जानकारी की जातो है।

जव अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षाकी जाती है अपचे हुए पदार्थोंके कण यदि अधिक मात्राभे मिल तव इसका यह भी तात्पर्य्य है कि क्षुद्र आंतकी वीमारो है या (पक्वाशय) Pancreas (पेन्क्रीयाज) की वीमारो है।

यदि अधिक मात्रामें चर्वी मलमें जाती हुई मालूम दे तव इसका यह ही तात्पर्य्य है कि पाचन क्रियाके लिए अंत्रोको पित्त उचित मात्रामें नहीं उपलब्ध होता और अन्यान्य कीटाणुओके वतमान रहनेके कारण Typhoid (टाइफोइड) तथा (विसूचिका) (Cholera कोलेरा) इत्यादिके कीटाणुओका मल परीक्षा द्वारा मालूम करना सरल नहीं है। B.Coli बी० कोलाई नामक कीटाणु अपने निवास स्थान Colon कोलन (बृहत आन्त्रीयभाग) मे रहते है। वैद्य बन्धुओंको परिचित करनेके लिये उपरोक्त रीति लिखी गई है। जैसे जैसे अनुभव बढेगा इससे विशेष परिचय उपलब्ध होता रहेगा।

Examination of Sputum

(थूक परीक्षा)

थूक परीक्षा करते समय सर्व प्रथम थूकके निम्नांकित प्राकृतिक स्वरुप देखना परमावश्यक है।

(१) थूक की मात्रा (२) पतला है या सपिच्छल है (३) एक समान है या इसकी सतह हैं (४) फूला हुआ है या गहरा अथवा सघन है (५) रङ्ग किस तरह का है (६) चमकीला है या नही (७) इसमे से प्रकाश आर पार होता कि नही (८) गन्ध किस तरहका है।

यह उपरोक्त सब लक्षण प्रथम जिस थूक की परीक्षा करनी होती है देखना परमावश्यक है ।

थूक निम्नांकित प्रकारके होते हैं ।

(१) वह थूक जिसमे मवाद जाती है उसे Mucous Sputum (पूय युक्त कफ कहते है)।

(२) वह थूक जिसमे लार युक्त पदार्थ जाते हों उस थूकको Serous Sputum कहते है,

(३) वह थूक जिससे तन्तु जाते हों उस थूकको Fibrinous Sputum कहते है ।

(४) वह थूक जिसम रक्त श्राव होता है उसे Blood Sputum कहते है ।

(५) एक अन्य प्रकारका थूक जिसमे दुर्गन्ध होती है उसको Purulent Sputum कहते है ।

Mucous Sputum: - प्रारम्भिक कासमें जो कफ आता है तब पूय युक्त आता है। इस कफमे पूयकी मात्रा अधिक नही होती।

यह कफ साफ और स्वच्छ होता है परन्तु सघन होता है, सच्ची-कण होते हुए इसकी मात्रा अधिक नहीं होती। यदि कुछ समयके लिए कास रोग निरन्तर चलता रहेगा तव इसमे (Puscells) पूय कण या मवाद के जीवाणु मिलेगे इस अवस्था मे कफ सघन होगा एव कम होगा और हरे और पीत वर्णका हो जायगा।

Serous Sputum :—यह कफ लार युक्त होता है और इसमे द्रव भाग विशेप रूपसे होता है। यह प्रायः रक्त रञ्जित रहता है और कोई कोई समय यह साबुन की तरह सच्ची कण भी होता है।

Muco Purolent Sputum:—यह प्राय जव फुप्फुसमे कोई मुख्य या घातक विमारी होगी तव थूका जाता है। यक्ष्मामे जब खात (Cavity) बनजाती है तव यह फुप्फुसोंम पाया जाता है। यह वहुत सघन होता है क्योंकि यह हवा रहित रहता है। यह नीचे के सतह मे जम जाता है इसकी बटनकी तरह शक्ल होती है। यह ही यक्ष्माका कफ है। यदि इसमे द्रवका हिस्सा अधिक हो तव इसमे तीन सतह बन जाती है। इसम नीचे ही नीचे का Purulent Sputum बीच का हिस्सा Serous याने लार युक्त ऊपरका हिस्सा झागों वाले कफ का होता है उसम Mucous (पूय) रहती है। पूय युक्त कफ भीतरम खात बनजाने से जो व्रण होजाते है उनमे से आता है। या Inter lobar empyema (पूयोरस) होनेसे भी आता है। इसका आनेका यही तात्पर्य्य है कि अन्दर फुप्फुसोंम प्राण वायुके प्रवेश करनेसे कही-कही पर (repture) फटापन हो जाता है।

कतिपय बीमारियोंम कफका रङ्ग विशेष रङ्ग वाला होता है। इसका तात्पर्य यह है कि भिन्न-भिन्न रोगोंमें कफ के भिन्न -भिन्न स्वरूप होते है। निमोनियांमें कफ का रंग जैसे कोई पदार्थमे जंग (rusty रस्टी) लगजाता है इस तरह का होता है। जब कफका रंग चमकीले,

पीले या हरे रंग का होता है तब यह इस बातका द्योतक है कि यकृत मे (Sivei Abscess) यकृत विद्रधिमें होकर फुफ्फुसो से फट गया है और यह ही रंग कभी २ निमोनियाँ की अन्तिम परिपाकावस्था भी पाया जाता है।

कोयलेकी खानोंमे काम करने वाले मजदूरोंके काला कफ पाया जाता है यह स्वभाविक ही है परन्तु रक्त रञ्जित कफ यक्ष्माका द्योतक है।

रोगीका निदान करते समय यह बात जानना परम आवश्यक है कि कितनी मात्रामे कफ २४ घंटामें जाता है और ठहर-ठहरके आता है या निरन्तर आता रहता है। जब आता है तो अधिक मात्रामे आता या सूक्ष्म मात्रामे आता है।

मुख्यतया आधुनिक युगमे कफकी परीक्षा अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा की जाती है।

उपरोक्त लक्षण जो हमने बतलाये है वो भी बहुत सहायक सिद्ध होंगे।

Odour cf sputum:—(कफकी गन्ध)

कफकी -गन्ध प्राय. भिन्न-भिन्न हुआ करती है। साधारण तया इसमे Stale (स्टेल) की गन्ध रहती है। और अन्यथा दुर्गन्धयुक्त गन्ध भी आती है जो असह्य होती है। यक्ष्माके रोगीके कफमें मवाद की गन्ध आया करती है यह गन्ध जब रोगी कफ बाहर मुखसे थूकता है तब अनुभव करता है। अब अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा परीक्षा किस प्रकार की जाती है इसका विवरण किया जायगा।

प्रथम प्राय: बिना किसी रसायनके मिश्रण किये हीं कफ परीक्षा इसकी प्राकृतिक अवस्था एवं स्वरूपकी जानकारीके लिये की जाती है। इसके पश्चात कतिपय मुख्य मुख्य Bacteria (बेक्टी-

रिया (किटाणु) का पता लगानेके लिए और अन्यान्य प्रक्रियाकी जाती है।

सर्वप्रथम कफको एक काचके चौड़े मुख वाले वर्तनमें डाल दिया जाता है तत्पश्चात् इसमेंसे एक टुकडा परीक्षाके लिये लिया जाता है। यह टुकडा जैसे उचित समझा जाय सफेद या काले रंगकी सतह पर डाल दिया जाता है। इस तरह करनेसे कफमें कई एक प्रकारका वनावटें दिखाई दिया करती है जिनका आगे वर्णन करेंगे।

Cellular structure:—(सेलिय आकृति या वनावटे)

यह तीन प्रकारकी होती हैं (१) प्रथम आकृति पूय युक्त होती है और इन्हें Pus—cells (मवादके जीवाणु) कहते हैं। (२) दूसरी आकृति Epethelium (एपीथेलियम) युक्त होती है जोमुख द्वारसे भी आती है और फुस्फुसमें जो प्राणवायु जानेका रास्ता है उसमेंसे भी आती है। (३) तीसरी Alveoli (एलवियोली) मे से भी आती है यह कुछ विशेष रङ्गकी होती है। प्राण वायूसे मिश्रित होनेपर यह प्राय: लोहेके से रङ्गकी हो जाती है। यह वनावट कभी २ Heart disease (हृदय रोग) में भी पायी जाती हैं जबकी Pulomonary Congestion (फुस्फुसीय रक्ताधिक्य) होता है।

Red Blood cells (रक्त कण)

यह जब सूक्ष्म रूपमे पाये जाते है तब कोई चिन्ताका विषय नहीं परन्तु अत्याधिक मात्रामे Hemoptysis (रक्तष्ठीवन) नामक व्याधिमे पाये जाते हैं।

Eosinophil cells यह भयंकर वातज कासमें एवं श्वास Asthama (ऐजमा) आदि रोगोंमे पाये जाते है। यह कम मात्रामे स्वस्थ मनुष्यके कफमे भी रहते हैं परन्तु जब इनकी संख्या बढ़ जाती है तो यह व्याधिके कारण बन जाते है।

Elastic Fibres कफमे इन तन्तुओकी (घट बढ़ने वाले तन्तु) उपस्थिति इस बात की द्योतक है कि फुफ्फुसके तन्तु नष्ट होकर बाहर निकल रहे है। यह तन्तु यक्ष्मा होनेके कारण जब खात बन जाता है उस अवस्थामे भी नष्ट होकर कफसे संयुक्त हो बाहर निकलने लगते है।

फुफ्फुसमें Gangrene (कोथ) होनेसे या फुफ्फुसमे कोई Abscess (विद्रधि) होनेके कारण भी यह तन्तु बाहर निकल जाते है। यह कफके छोटे २ सघन टुकडोंमे पाये जाते है। इनका ठीक-ठीक ज्ञान बराबरकी मात्रामे १० ०/० प्रतिशत Caustic Soda Solution (कास्टिक सोडा सोल्यूशन, कास्टिक सोडेका तरल) मिश्रित करनेसे शीघ्रतया गरम करनेसे होता है। गरम करनेके पश्चात इसे ठण्डा होने दिया जाता है, तब एक चमकीला पदार्थ जम जाता है, तब इसमे जल मिला दिया जाता है और एक काचकी प्यालीमे उस समय तक छोड दिया जाता है, जब तक कि यह तन्तु पृथक २ दिखाई देने लग जाते है। यह तन्तु पेंदेमे जम जाते हैं।

Fibrin casts:—यह पर्याप्त बडे होते है। यह बिना किसी यन्त्रकी सहायताके देखे जा सकते हैं। अणुवीक्षण यन्त्रसे देखनेसे और भी साफ दिखाई देते है।

Asbestosis Bodies :—यह उन बिमारोंके फेफड़ोंमे पाये जाते है जो एस बेसटोजके कार खानेमे काम करते है। इस कफमे पर्याप्त पीत वर्ण होता है। इस परीक्षासे जो पदार्थ दिखाई देते है वे स्वर्ण सदृश पीत वर्णके होते है। यह कभी छोटे और कभी बडे होते है।

———

Examination of Blood

(रक्त परीक्षा)

रक्त निम्न चार प्रकारके पदार्थोंके मिश्रणसे बनता है। (1) W. B. C (श्वेत कण) (2) R B C (रक्त कण) (3) Blood Plates (रक्त प्लेटस) (4) Blood Dust or Hemoconein यह सब एक द्रव विशेषमें जिसे Plasma (प्लाजमा) कहते है, तैरते रहते है। साधारण या स्वस्थ रक्त (लिटमस पेपर) Litmus Paper के द्वारा परीक्षा करने पर क्षारीय (Alkaline) होता है। इसमे एक क्षार रहता है जिसे Sodium Carbonate (सोडियम कारबोनेट) कहते है।

पुरुप तथा स्त्रियोंके रक्तकी Specific gravity (आपेक्षिक घनत्व) भिन्न-भिन्न होता है। पुरुपमें, स्त्रीकी अपेक्षा अधिक होता है। यह १०४५–१०७५ के बीचमें पाया जाता है।

चार मुख्य Protein Bodies (प्रोटेन वोडीज) Plasma (प्लाजमा) द्रवमे रहते हैं। जो निम्न है (१) Fibrinoyen (केन्द्रद्रव्यके समान द्रव्य) (२) Nucleo-Protein (न्यूक्लियो प्रोटेन) (३) Serum Globu'in (सीरम ग्लोब्यूलीन) (४) Serum Albumin है।

प्रोटिन्सके अतिरिक्त निम्नाकित पदार्थ भी रक्तमें पाये जाते है। (१) Glucose शर्करा o 1 ./ (२) Urates यूरेट्स (३) Urea यूरिया (४) Fat बसा (५) Amino-acids अमीनो एसिड्स (६) Enzymes एन्जाइम्स (७) Lacithen लेसिथिन (८) Cretanine क्रटेनाइन (६) Carbamic Acid कारवेमिक अम्ल (१०) Cholesterols कोलेस्टरोल्स (११) Nucleo Protein न्यूक्लियोप्रोटेन (१२) Acetone Bodies एसेटोन बोडीज (१३) Colo-

uring matter [कलरिङ्ग मेटर] रञ्जक पदार्थ (१४) Gases गेसेस (वायु) (१५) Inorganic Substances इनओरगनिक सबस्टानसेस (१६) Hormone होरमोन (१७) Phosphates (फोस्फेट्स) या Chlorides क्लोराइड्स (१८) Carbonates कर्बोनेट्स हैं ।

रक्त विदीर्ण होनेसे तीन मिनट लेता है। विदीर्ण होने पर पीत बर्णका एक द्रव इसमसे पृथक हो जाता है जिसे Serum सीरम (लसिकाद्रव्य) कहते है।

मनुष्य के Serum (लसिका द्रव्य) का आपेक्षिक घनत्व १०२६-१०३२ तक होता है। रक्त में जो जो पदार्थ बिलीन रहते हैं उनके विषयमे ऊपर लिखा जा चुका है अब आगे रक्त परीक्षा के विषय में लिखा जायगा।

रक्त परीक्षा अणुबीक्षण यंत्र द्वारा की जातो है। इस परीक्षाकी सहायता से रोग निदान करने में आधुनिक युग में अत्यन्त सहायता मिलती है। रक्त में दो प्रकारके जिवाणु होते हैं जिन्हें R. B. C, (रक्त-कण) और W. B. C (श्वेत कण) कहते है।

स्वस्थ रक्त में पुरुषों के रक्त जीवाणु (Red Cels) ५,०००,००० और स्त्रियोंके ४५००००० संख्या पाये जाते हैं। स्वस्थ अवस्था मे श्वेताणु ७,००० Per cmm . पर सी० एम० एम० (क्यूबिक सेन्टीमीटर) होते हैं। इनका घटना या बढ़ना अस्वस्थता की सूचना देता है। यह Cells [सेल्स] अणुवीक्षण यंत्र द्वारा अनेक प्रकार से देखे जाते हैं एवं इनकी गणना की जाती है। नव जात शिशुओं मे रक्ताणुओं की संख्या निरन्तर ७,०००,००० से ८,०००,०००, तक पायी जाती है। मासिक धर्म होने से, प्रसव होने से, अधिक शराब का सेवन करने से इनकी मात्रा घट जाती है।

जब फुफ्फुसोंमे प्राण वायूका सुगम तया प्रवेश नहीं होता है तब इनकी मात्रा बढ़ जाती हैं।

अतिसार होने से, तथा खून गहरा पडजाने से भी इनकी मात्रा अधिक बढ़ जाती है। वमन होने से तथा फुफ्फुसावरण की बीमारियोंमे (Pleural-Diseases) मे इनकी संख्या अधिक बढ़जाती है। Congenital Heart diseses आदिवल प्रवृत हृद रोग में R B C आर० बी० सी० (रक्तकण) को मात्रा 10,000,000 Per cmm (पर सी० एम०एम०) हो जाती है। यदि शरीर बहुत बुरी तरह से जल जाय तब भी इनको संख्या अधिक बढ जाती है। कामलामे अधिक श्रावसे इनको संख्या घट जाती है।

White Blood corpuscles:-स्वस्थ आदमी मे इनकी संख्या 7000 होती है Per cmm परन्तु नवजात शिशुमे इनकी संख्या 17,000 Per cmm होती है आर ७ वर्षके बच्चे तक 10,000 से 14,000 तक रहते है। व्यायाम करनेके बाद, गर्भावस्थामे इनकी संख्या बढ जाती है। कोई कोई बुखारमे Leucocytes की संख्या घट जाती है कोईम बढ़ जाती है। जिस बुखारमे मवाद पैदा होगी उसमे यह बढ जायंगे। यदि मवाद बाहर निकाल दी जाय तो इनकी संख्या घट जायेगी, ३६ घंटा में काफी घट जाते है।

निम्नाकित रोगोंमें निदान के समय Leucocytes की गणना बहुत जरूरी है। Abscess में फोड़ोमें, Septicaemia (सेपटीसीमिया,) न्यूमोनिया, Scarlet fever, Tuberculous Meningitis Cancer इत्यादि।

इन सब परीक्षावों के लिये क्या किया जाता है कि एक पनी नोकीली सुई जिसको पहले Alcohol मे भिगो लिया जाता है। हाथ की किसी भी अंगुलके अग्र भागमें जोरसे चुभायी जाती है और कांचकी तख्ती Glass Slide पर ३-४ दाग इसके लेकर दूसरी

साफ Slide से कुछ घिस के ढक दिया जाता है एक तरकीब खून परीक्षा अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा करनेकी यह है।

दूसरी परिक्षा करने के लिये निम्नांकित चीजें परम जरूरी है। Tall-quist Heamoglobin Scale, a sharp needle, a bottle ofHayem's Solution, a bottle ofToison's solution, Leishman's Stain, a muslin for cleaning lense white filter Paper, a case for Holding Slides, Slides and cover Slips, a pair of rubber belows for drying Pippets, a bulb and Stem for cleaning Pippetes.

Red cells की गणनाके लिये normal Salaine Solution की दरकार पडती है sod. Chloride 1 grm, Sod Sulphate 5 grms, Hydrarg Perchlor, O. 5 gms. Aqua Dist 200 C. C., white cells गणना के लिये O. 3% So ution of Acetic Acid coloured by methy lene Blue या Toison's fluid methyl Violet O O. 25 grms neutral glycerine 30 0 C. C. distilled water 80 O. C. C इसमें. O grms Sodium chloride Solution मिलाया जाता है Sodium Sulphate 8.0 grms distilled water 80 C C. सब मिलाया जाता है और छान लिया जाता है। औजार पहले पानी से साफ कर लेने चाहिये फिर Alcohol से साफ कर लेना चाहिये।

खून शरीरसे लेनेकी विधि— कई एक बाते खून लेते समय ध्यानमें रखनी चाहिए। कई एक मरतबा उसी अवस्थामे उसी बीमार की खूनकी परीक्षा होनी चाहिए और मुकाबला कर लेना चाहिए क्योंकि ठंडी से, खाना खानेकी वजह से, व्यायाम करने की वजहसे खूनमें हेर फेर होते रहते है।

पहले पहल अंगुलीके अग्र भागको तेज सूई से भेदन किया जाता है। भेदन करनेके टाइममे अंगुलीमे Alcohol नहीं लगाना

चाहिए क्योकि इससे खूनकी रसायन क्रिया बदलनेका डर रहता है। सूई को अच्छी तरह Alcohol से साफ रखना चाहिए अंगुलीमें गहरा सूई चुभोना चाहिए और फिर उसको दबाकर खून Slide पर या पिपेटमें नहीं लेना चाहिए क्योकि दबा देने से Lymph आनेका डर रहता है। यदि Serum reaction के लिए परीक्षा करनी हो तो अंगुली को दबाकर खून ले सकते है।

Estimation of Haemoglobin खूनमें हीमोग्लोबिनकी तादाद का जानना परम जरूरी है। हीमोग्लोबिनका अंदाजा Tallquist-Scale से लगाया जा सकता है। इस मापमें कई तरहके रंग रहते हैं उनसे मिलान किया जाता है।

खूनकी एक बूंद blotting paper के टुकड़ेसे शोपली जाती है और इसका मिलान उपरोक्त Scale से किया जाता है। यह Scale रंगोंके अलावा यह भी बतलाता है कि कितना प्रतिशत हीमोग्लोबिन खूनमें है। यह सब खूब धूप निकली हुई हो तब किया जाता है।

हीमोग्लोबिन खूनमें घटना या बढ़ना बहुत महत्व रखता है। जैसे 87 यदि Scale पर मालूम देवे इसका मतलब साधारण अवस्थामें 100 के मुकाबलेमें यह 87 है। कामला या खूनकी कमीमें इनकी कमी होती है। इस तरीकेसे यह पता बहुत सुगमतार से लग जाता है कि कामलाका रोगी कितना ठीक हो रहा है या नही। Pernicious Anæmia मे लालजीवाणु Red Cells की कमी होनेसे घट जाते है। शहरमें रहने वालोंकी अपेक्षा गांवमें याने देहातोंमें रहने वालोंमे हीमोग्लोबिनकी संख्या अच्छी होती है। इसमें शहरवालोंमे 80 to 90%, गाव वालोमे 100%।

इससे ज्ञात होता है कि रुग्णावस्थामे रक्ताणुओ की संख्या घटती एवं बढ़ती रहती है। इसी प्रकार रोग होने पर श्वेताणुओंकी संख्या भी घटती बढती रहती है।

१०० Leucocytes [श्वेत कण] में निम्नांकित रूपमे निम्न-निम्न पदार्थ पाये जाते है ।

(१) Polynuclear (पोलीन्यूक्लियर) ६० से ७० (२) Small-mononuclear (स्माल मोनोन्युक्लिपर) (Lymphocytes) २० से ३० लाइम्पो साइट्स

(३) Large mononuclear Leucocytes (लार्ज मोनो न्यूक्लियर ल्यूको साइट्स) २ से ५

(४) Transitional forms (ट्रान्जिशनल फार्म) २ से ५

(५) Eosinophil cells (इसानो फील सेल्स) १—३

(६) Mast cells (मास्ट्स सेल्स) ० ५ से १

(७) Polyneuclear Neutrophil Leucocytes (पोलीन्यु क्लियर न्यूट्रोफील ल्यूकोसाइट्स) जो ६० या ७५ प्रतिशत Leucocytes (ल्यूकोसाइट्स) मे रहते है बाकी के जिस मात्रा मे हमने लिखे है इस अनुमान से Leucocytes (ल्यूकोसाइट्स) में पाये जाते है। जब रक्त मे यह मालूम हो जाय कि leucocytes की क्या संख्या है तब (Differential Count) डिफरेन्शियल काउण्ट (सापेक्ष संख्या) करना परमावश्यक है। इसी सापेक्ष संख्या से रोग निदान किया जाता है। इस तरहसे कम से कम ५०० ल्यूकोसाइटस (श्वेत कण) की गणना की जाती है। गणना करते समय एक एक प्रकार कागज पर लिख लिए जाते है और प्रत्येक का (Percentage) परसेन्टेज (प्रतिशत्) निकाला जाता है।

Leuceamia (ल्यूकोमिया) के अतिरिक्त Leucocytes (ल्यूकोसाइटस) १००००० संख्यासे अधिक नहीं पायेजाते स्वस्थ अवस्थामे ७००० प्रति क्यूबिक सेन्टी मीटर रहते है।

Polyneuclear Nutrophilcells (पोलीन्टन्यूक्लियर न्यूट्रोफिल सेल्स) श्वेताणुवोंमें अधिक संख्यामे पाये जाते है। इनकी संख्या

निमोनियामें, (Pneumonia) सेप्टी शीमियामें (Septicaemia) गरदन तोड बुखारमें, Cerebrospi-na!-meningitis पर्य्याप्त रूपसे अधिक पाई जाती है। Typhoid (सन्निपातिक ज्वर) में और Tubercular-meningitis (ट्यूबर क्यूलर मेनिन जाइटिश, गरदन तोड बुखार) में इनकी सापेक्ष संख्याकी गणनासे भेद मालूम किया जाता है।

Meningitis (गरदन ताड बुखारमें) Leucocytosis(ल्यूको-साइटोशिश, श्वेत कणोत्कर्ष) हो जाता है परन्तु मोती झरेमें यदि कोई व्रण नहीं हो तो नहीं होता। यदि Leucocytosis ल्यूको साईटोसिस (श्वेत्त कणोत्कर्ष) पायाभी जाय और प्रत्यक्षमें कोई सूजन इत्यादि दिखाई नहीं दे तो भी सूजन जानना चाहिए। इस तरह से आन्तरिक बीमारोके ज्ञानके लिए रक्त परीक्षा मुख्य स्थान रखती है। (Eosinophil) बहुतमी त्वचा की बीमारियोमे यह बढ़ जाते है मुख्य तया (Psoriasis) पैरोसिस मे। श्वास (Asthama) मे या वातज कासमें यह २५ प्रतिशत या इससे अधिक मात्रामें बढ़ जाया करते हैं।

यह स्वस्थ अवस्थामे १—३ प्रतिशत रक्तमे मिलने स्वभाविक है इस मात्रासे जब अधिक बढना प्रारम्भ होता है तो वह बीमारी की सूचना देता है। इनकी वृद्धि हृद रोगमे हो जाती है यह Tu-ber cu'in injection (ट्यूबर कुलीन इन्जेक्शन) के देनेके पश्चात् भी बढ़े पाये जाते हैं।

Lymphocytosis (लाइम्फो साइटो शिश) (लसिका कणोत्कर्ष) या लाइम्फो साइटि शकी वृद्धि: यह Whooping cough हूपीग कफ या कूकर खासीमे यक्ष्मामे तथा उपदंश जनित व्याधिमे अधिकता को प्राप्त हो जाते हैं।

Large mononeuclear cells (लार्ज मोनोन्यू क्लियर सेल्स) यह विसूचिका और अतिसारमें भेद मालूम करनेमे मुख्य सिद्ध हुए हे। बिसूचिका या हैजेमें इनकी संख्या बढ़ जाती है।

Parasites found in the blood (रक्तमे पाये जाने वाले कीटाणू :—रक्तमे भिन्न भिन्न प्रकारके कीटाणु पाये जाते है जो रोगका निदान करनेमें मुख्य सहायता पहुंचाते है। इनमे मुख्य मुख्य के विषयमें हम कुछ लिखेंगे।

Septicmicrobes सेप्टिक माइक्रोब्सः—(छूतकी बीमारी फैलाने वाले कीड़े) यह उस बीमारीमें पाये जाते है जिससे छूत फैलती है।

Spilirillum of relapsing fever (पुनरावर्तक ज्वरके कीटाणु) यह छोड छोड़ कर जो बार २ मलेरिया ज्वर आता है उस अवस्थामे पाये जाने वाले कीटाणु है। इसी तरहसे सन्निपातिक ज्वरके तृणाणु एवं वातश्लेष्मिक ज्वरके तृणाणु रक्तमे पाये जाते है जिनका आगे वर्णन करेंगे। साथ साथ पूर्वोक्तके विपय मे भी लिखा जायगा।

Parasites of Malarial Fever (मलेरिया बुखारके कीटाणु) इस कीटाणुको Protozoon प्रोटोजून कहते है इसका निवास स्थान रक्ताणु है। यह इसे नष्ट कर देता है परन्तु मास पेशियों को नष्ट नहीं कर सकता। यह कीटाणु तीन प्रकार के होते हैं।

(१) Plasmodium Vivax यह तृतीयक ज्वर के कीटाणु है।

(२) Plasmodium Malaria चातुर्थिक ज्वर के कीटाणु है।

(३) Plasmodium Falciparum यह घातक विपम ज्वर के कीटाणु है।

यह मलेरियाके कीटाणु दो तरहसे अपना जीवन चक्र प्रारम्भ करते हैं।

(१) अमैथुनिक चक्र Asexual Cycle or Intracorpusclar Cycle मनुष्य के शरीरमें इस चक्र द्वारा प्रसारित होते है।

(२) मैथुनिक चक्र (Sexual Cycle) यह, येनाफिलीज जातिके Mosquito में प्रारम्भ होता है।

इस तरहसे यह मलेरियाके कीटाणु अपनी वृद्धि एवं मलेरियाका प्रसार प्रारम्भ करते है। जिस किसी मनुष्यको यह काटते हैं उसमें इसके कीटाणु प्रवेश करके मलेरिया प्रारम्भ करते है। यह जीवन इतिहास सुक्ष्म रूपसे है।

सूक्ष्म दर्शक यंत्र द्वारा इनकी परीक्षाके लिये एक काचकी टुकडी (Galss slide ग्लास स्लाइड) लीजिए और उस पर पूर्वोक्त विधि अनुसार १-२ बूंद बीमारके रक्त को लेकर Cover glass (कवर ग्लास, काच का ढकण) लगा दीजिये इसके चारो तरफ मोम लगा दीजिए जिससे वास्प क्रिया द्वारा हवामें रक्तके पदार्थ उड नहीं सकें। विना किसी रसायनिक पदार्थकी सहायताके यह सूक्ष्म दर्शक यंत्र द्वारा देखे जा सकते है। यह Leishmans method (लेसीमैन्स मेथड) (लेस्मोमन की प्रक्रिया) से रंगे भी जा सकते हें। यह कीटाणु भिन्न भिन्न रूपमें पाये जाते हें।

कुछ तो Crescent bodies (अर्ध चन्द्राकारी) के रूपमें कुछ Oval-bodies (ओवल बोडीज) के रूपमें (अंडाकार) और कुछ flagellated body (तन्तुपिच्छी) के रूपमे पाये जाते है और इसी रूपमें इन्हे आप सूक्ष्म दर्शक यंत्रमें देख सकते हे।

Influenza Bacillus (इन्फ्लूएन्जा वेसिलश :—(वात कफ ज्वरका तृणाणु) यह प्राय: कफ परीक्षा द्वारा मालम किये जाते है परन्तु रक्त परीक्षासे भी इनका पता लग जाता है।

Typhoid Bacillus (टाईफोइड वेसिलस, मोतीझरा या सन्निपातिक ज्वरके त्रिणाणु) यह सूक्ष्म दर्शक यंत्र द्वारा देखनेसे छोटे

गहरे और Mobile (मोबाइल गति शील) होते है। इनके चारों तरफ गोल गोल जीवाणु होते है यह ३-से ४ क्यूबिक लम्बे और ! क्यूबिक चौड़ और चारों तरफ फैले हुए होते है।

यह Bacillus coli communis (बेसिलस कोलाई कॉम्यूनिश) के सदृश होते है परन्तु Culture (कलचर, समर्धन) करनेसे इनकी भिन्नता मालूम हो जाती हे। सन्निपातिक ज्वरका तृणाणु आन्त्रिक ज्वरका कारण होता है। इसका निवास स्थान Spleen स्प्लीन, (प्लीहा रक्त, मूत्र और मल होता है। सूक्ष्म दर्शक यंत्र से ही इनका पता नहीं चलता परन्तु Culture कलचर (संवधन) करनेसे मालूम हो जाता है।

Spirillum of Relapsing fever (स्पीरीलम ओफ रिलेपसिंग फीवर)ज्वरावस्था (Febrile stage) के समयमे वर्तमान रहते है। इसकी परीक्षाके लिए पर्याप्त रक्तकी आवश्यकता होती है।

Kala-Azar (काला आजार , इसके लिए रक्त Spleen स्प्लीन मे से लिया जाता है। इस तरहसे रक्त परीक्षा सूक्ष्म रूपसे वैद्य बन्धुओकी जानकारीके लिये हमने लिखी हे हमे आशा हे निदान करनेमे यह सहायक सिद्ध होगी।

Examination of Pathological fluids (द्रव्योका प्रायोगिक परीक्षण) इस अध्यायमें हम सूक्ष्म रूप में Pathological fluids (पैथोलोजिकल फ्लूइड्स, प्रायोगिक परीक्षणार्थ द्रव्यो , के विषयमे बतलायेगे कि रोग निदान करनेके लिए वह शरीरसे किस तरहसे और कौन कौन स्थानसे लिए जाते है और उनका क्या फल होता है ?

Fluids (फ्लूइड्स) द्रव को शरीरमें से निकालनेकी प्रक्रिया:— द्रवको बाहर निकालने लिए एक Hypodermic Needle हाइपोडरमिक निड्ल अधस्त्वचीय सूचीका) की आवश्यकता होतीहे जो चौडे मुखवाली होनी चाहिए जिससे द्रव सरलता पूर्वक बाहर आ सके। इसी सुईसे वेधन या (Puncture) करके द्रव निकाला जाता है। सर्व प्रथम सूई जलमे गरम करके स्वच्छ करली जाती है।

जहा पर वेधन करना होता है उस जगहकी वाह्य त्वचा भी साबुन और जलसे साफ कर लेनी चाहिए या Ether (ईथर) से भी साफकी जा सकती है। Carbolic Lotion (कारवोलिक लोशन भी त्वचा को साफ करनेके काममें लाया जा सकता है। तत्पश्चात वेधन करनेके स्थानको शून्य करना परमावश्यक है जिससे रोगीको कोई तरहका कष्ट नही हो। शून्य या तो कोकीनका इन्जेक्शन लगा कर किया जाता है या Eucaine (यूकेन) से या Ethyl Chloride इथायल क्लोराइडसे किया जाता है।

फुफ्फुसावरणीय खातसे द्रव निकलनेकी प्रक्रिया

The nextraction of fluid from Pleural Cavity

इस स्थान से द्रव लेनेके लिये कक्षीय रेखाके पश्चिमी भागसे ठीक नवीं वक्षकास्थिमे (Ninth Space just behind the post auxilliary line) जहाँ पर दवी हुई जगह हों भेदन करना चाहिये।

यकृत वेधन कर द्रव निकालनेकी प्रक्रिया

(Extraction of fluid by liver Puncture)

यह वेधन (Pus) पस या पूय का माल्म करनेके लिए या KaLa-Azar (काला आजार) के Leishman Donovan Body (लेशिमन डोनोवन वोडी) का मालूम करनेके लिए किया जाता है। जब Hydated cyst होता है तब इसका Infection [इन्फेक्शन] सब जगह फैलने के भय से उस समय वेधन नही किया जाता है। इस

वेधन मे ३½ इञ्च की सूई ली जाती है। क्योंकि इतनी लम्बाई के विना PortalVein (प्रतिहारणी शिरा) का वेधन नहीं हो सकता। वेधन करते समय सुई विल्कुल सूखी होनी चाहिए। वेधन करते समय बीमार को श्वास रोकनेका आदेश दिया जाता है तत्पश्चात शीघ्रता पूर्वक पट्टी बाध दी जाती है।

प्लीहा वेधनकर द्रव निकालना (Spleen Puncture)

पहलेकी तरह यह वेधन भी घातक होताहै इसलिए आजकल प्राय: नही किया जाता या कम रूप में किया जाता है।

ग्रन्थीवेधन कर द्रव निकालना (Gland Puncture)

इस भेदनसे Plague Bacilli (प्लेग बेसीलाई, प्लेग का तृणाणु) का मालूम किया जाता है।

फुफ्फुस भेदन द्वारा द्रव निकालना (Lung Puncture)

आवश्यकतानुसार यह वेधन भी किया जाताहै परन्तु इसका अधिक प्रयोग नहीं होता कारण इसके द्वारा भी प्रसरण (infection) का भय रहता है।

कटिवेधन द्वारा द्रव निकालना (Lumber Puncture)

मस्तिष्कावरण शोथमे अधिक जल राशि वर्धन के कारण वर्धित राशिका ह्रास करने तथा रोगका निश्चयात्मक ज्ञान प्राप्त करनेके हेतु यह वेधन किया जाता है।

(जल राशि वर्धन)

द्रव निकालनेके लिये बच्चोंको बेहोश कर दिया जाता है। पुरुषों मे उस जगह को शून्य करने से भी काम चल जाता है। इस मे Antitoxin Needle (एन्टी टोक्शीन निडिल) ली जाती है। यह सूई Platinum या Iridium धातुकी बनी हुई होती है। पुरुषों मे वेधनके लिये ३ इञ्च लम्बी सूई और बच्चोंके लिए २ इञ्च की

सूई ली जाती है । पुरुषोंमें (Adults) में वेधन करना हो तो उसे बैठाकर आगे सिर नीचा करके झुका दिया जाता है।

अब नितम्बास्थिके Iliac crests (ऊर्ध्व प्रकोष्ठ) के ऊँचेसे ऊँचे margin (मारजिन, भाग) की तरफ बीमार को पींठ में एक रेखा खींच ली जाती है। यह रेखा Vertebral column (पृष्ट बंश) को 4 Lumber Vertebra (४ लम्बर वरटी ब्री, चतुर्थ कटि कसेरूक) की Spine (स्पाइन, सुषुम्ना) के पास मिलेगी। इसी जगह पर त्वचा को स्वच्छ एवं अदुष्ट करके उपरोक्त रसायनों से शून्य कर देना चाहिए।

Operator (ओपरेटर, द्रव निकालने वाला वैद्य) चतुर्थ कटि कशेरूक Fourth lumber spine (फोर्थ लम्बर स्पाइन) के पास जानकारीके लिये अपनी अंगुली रखलेता है। तत्पाश्चात् दाहिने हाथसे ½ इञ्च नीचे की ओर और ½ इञ्च दाहिने ओर सूई घुसाई जाती है। यह सूई थोडी ऊपर ओर थोडी नीचें की तरफ रहती है। यदि सूई हड्डियों को छूवे तब वापिस निकाल कर फिर प्रविष्ट करनी चाहिए। Syringe (सिरींज, पिचकारी , को जब तक कि Spinal cord (स्पाइनल कोर्ड) (सुष्षुम्ना) तक नहीं पहुंचे हटाना नही चाहिए।

इसके पश्चात् पिचकारी वहां से हटाकर द्रव जो निकले उसे परीक्षा करने को कांच की नली में भर देना चाहिए। यहीं निदान के लिए द्रव है। इसी को परीक्षा की जाती है। जहां तक हो सके प्रथम कम द्रव निकालना चाहिए। यदि पहले पहल रक्त भी द्रवके साथ आवे तब दो Test tube (टेष्ट ट्यूब) रखनी चाहिए एक में रक्त और दूसरे मे द्रव अलग अलग कर देना चाहिए।

द्रव कभी कभो बून्द बून्द करके बाहर आता है परन्तु कभी कभी जब बिमारी शक्तिशाली होती है एक साथ बाहर आजाता है जैसे Meningitis (मेनिन जाइटिश, गरदन तोड बुखार) इत्यादि प्रबल बीमारियों मे होता है।

यह द्रव जब तक आने दिया जाता है तब कि एक एक बून्द आने लगती है।

Tuberculous Meningitis (ट्यूबर क्युलश मेनिन जाइटिश यक्ष्मा जनित गर्दन तोड बुखार) में पुनः पुनः द्रव निकाल लेने से बिमारी निरन्तर ठीक होती चली जाती है।

Epedemic cerebro-Spinal meningitis (एपेडेमिक सेरेब्रो स्पाइनल मेनिन जाइटिश, संक्रामक गर्दन तोड बुखार) मे १० शी० शी० द्रव निकाल दिया जाता है। इसकी जगह ३० शी० शी० Flexner's Serum (फ्लेक्सनर्स सीरम) भर दिया जाता है।

Skull (कपाल) के Base (बेस, अधः भाग) के Fracture (फ्रेक्चर (भग्न) में यह विधि बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है।

Tetanus:—(टीटेनस, धनुर्वात) में इसी विधिसे anti-toxin-सरलता से पहुंचाया जा सकता है।

अधिक मात्रामे कुचलेके प्रयोगसे जो विष संचार Strychinine Poisoning हो जाता है, तब इसी विधिसे eucaine (यूकाइन) शरीरमें पहुंचाया जाता है।

नितम्बके अधो भागमे शून्यता Cocaine (कोकीन) या Stovaine (स्टोवीन) देकर इसी विधिसे की जाती है। इस विधिसे द्रव जो अन्दर पहुंचाया जाता है उससे अधिक बाहर निकाल लिया जाता है।

Examination of Fluid (द्रवकी परीक्षा) इस तरहसे निकाला हुआ द्रव एक एक कांचके Conical Flask (कोनीकल फ्लास्क) मे कुछ समयके लिये रख दिया जाता है, तब इसके स्वरूप तथा गन्धकी परीक्षा की जाती है। यह प्रायः alkaline (क्षारीय) होता है। इसमे कोई मुख्य गन्ध नहीं होती। इस द्रवमें प्राय हिस्सा जलका होता है। थोडा-थोडा यदि इसमे फटापन आरम्भ

हो जाय, तब यह जानना चाहिये कि इसमें Fibiin फाइब्रीन है। परीक्षा करनेसे यदि इसमे Hooklcts (हुकलेट्स) मिले या membranc lining (मेम्ब्रेन लाइनिङ्ग) के टुकडे मिले या ameaba (अमिबा) मिले, तब दूसरी परीक्षाकी जाती है और उनका निदान कठिन हो जाता है।

इसकी रासायनिक परीक्षा भी की जाती है A'bumin एलब्यू-मिनकी परीक्षा भी की जाती है Sugar सूगर (शर्करा) की परीक्षा भी की जाती है—यही इस द्रवकी परीक्षा है

विटामिन्स या पौष्टिक तत्व

भोजनमें शरीरको शक्ति देनेके अतिरिक्त कुछ आवश्यक ऐसे पदार्थ होते है जैसे Vitamins (विटा- मिन्स,) जो कि शरीरको स्वस्थ बनानेमे मुख्य पदार्थ है। यह भिन्न भिन्न प्रकार के होते है, जिनमे मुख्य मुख्य Vitamins (विटामिन्स) के विवरण वैद्य बन्धुओं की जानकारीके लिए लिखगे। यदि भोजनमे से एक Vitamin (विटामिन , की न्यूनता हो जाती है तब मनुष्यके स्वास्थ्य का कुछ ह्रास होना प्रारम्भ हो जाता है। जैसे Vitamin D (विटामिन डी) भोजन मे यदि नहीं रहेगा तो मनुष्य के शरीरकी हड्डिया दुर्बल हो जायगी या अन्यान्य हड्डियोकी बीमारिया प्रारम्भ हो जावगी। दांत गलने लगजायगे या उनमे पीड़ा प्रारम्भ हो जायेगी।

मनुष्यके स्वास्थ्य रक्षार्थ नित्य प्रति Vitamins विटामिन्स बहुत कम मात्रामे व्यय होते है। इसलिए मनुष्यके नित्य प्रतिके भोजनसे जो शक्ति प्राप्त होती है वह बहुत अल्प मात्रामें या नहींके बराबर होती है।

Origin of Vitamins (विटामिन्सकी उत्पत्ति (विटामिन डी) Vitamin D के अतिरिक्त कोई भी अन्य विटामिन Vitamin मनुष्यके शरीरमे पैदा नही होते। विटामिन डी (Vitamins D) भी विशेष-

तथा बनस्पतियोंमे पाया जाता है। जितने भी भिन्न भिन्न प्रकारके विटामिन्स (Vitamins) है वे प्रायः दाल, शाक रूपमे मनुष्यके शरीरमें पहुंचते है और पाचन क्रिया द्वारा रक्तमे विलीन होते है और कुछ विटामिन्स जीवाणुओं द्वारा भी पैदा किये जाते है।

Fat Soluble Vitamins (वसामें घुलने वाले विटामिन्स) वसा या चर्बीमे विटामिन्स ए, (A,) डी, (D,) ई, (E,) के (K) यह चार प्रकारके (विटामिन्स) Vitamins घुल जाते है। परन्तु यह सिद्धान्त मिथ्या सिद्ध होता है क्योंकि जैसे Halibut Liver Oil (हलीवट मछली के यकृतका तैल) मे (विटामिन्स) Vitamin ए (A) और डी (D) पर्याप्त मात्रामे उपलब्ध होते है परन्तु विटामिन ई Vitamin E इसमे अत्यन्त अल्प मात्रामे पाया जाता है। तिल, सरसों, मूंगफली इत्यादि वानस्पतिक तैलोंमे विटामिन ए (Vitamin A) और डी (D) की न्यूनता रहती है और इनमें Vitamin (E) (विटामिन इ) अत्यधिक मात्रामें पाया जाता है। मक्खनमे जो वसा रहती है उसमे विटामिन ए (Vitamin A) पर्याप्त मात्रामे उपलब्ध होता है परन्तु विटामिन डी (Vitamin D) और (ई) E की न्यूनता रहती है। परन्तु गायको यदि भोजनमें Cotton seed (बिनौला) खिलाया जाय तो गायके मक्खनमे विटामिन ई (Vitamin E) अत्यधिक मात्रामे उपलब्ध होगा।

Vitamin A (विटामिन ए) यह बनस्पतियों में तथा शाक सब्जियोंमे सूर्य्यकी कृपासे धूप द्वारा पैदा होता है। इसमें Orange pigment (ओरेन्ज पिगमेन्ट) (नारंगीके रंगका पदार्थ) जिसे Carotene (केरोटोन) कहते है उपलब्ध होता है। जब वह शाक सब्जी या पौदे या बनस्पति जिनमें यह रंग रहता है मनुष्यको भोजनके रूपमे खिलाये जाते है तब यह पाचन क्रिया द्वारा यकृतमें होकर रक्तमे विलीन होजाता है। यह दूधमें भी Lactation (लेक्टेशन) जिस समय स्तनोमें

दूध आता हो) के समयमें पाया जाता है। Jersey cow (जरसी काउ) (जरसी ज्ञातिकी गाय) का दूध नारंगी रंगका पीत वर्ण वाला होता है। तात्पर्य्य यह कि इसमें विटामिन ए (Vitamin A) वर्तमान है। बकरीका दूध अल्प पीतवर्ण वाला होता है जो यह स्पष्टीकरण करता है कि इसमें विटामिन ए (Vitamin A) की मात्रा बहुत अल्प रूपसें है क्योंकि इसमें Carotene (केरोटीन) की मात्रा बहुत अल्प रूपमे है।

कतिपय पशुओंमे या जीवोंमें विटामिन ए (Vitamin A) का नारंगी रंग Carotene (केरोटीन) नष्ट करनेकी शक्ति रहती है। जिससे उनका स्वास्थ्य दिन प्रति दिन नष्ट होने लग जाता है।

इसके प्रतिकारके लिये इन रोग ग्रसितोंको वे पदार्थ खिलाये जाते हैं जिनमे विटामिन ए (Vitamin A) पर्याप्त मात्रामें पाया जाता है। बहुतसे पशुओंमे एवं मछलियोंकी वसामे विटामिन ए (Vitamin A) पर्याप्त मात्रामे पाया जाता है। उपरोक्त पदार्थ या Butter (बटर, मखन) जिसमें विटामिन ए (Vitamin A) विद्यमान रहते है सेवन करनेसे विटामिन ए (Vitamin A) की न्यूनता नही होती।

जिन मनुष्योंमे इस पदार्थकी न्यूनता रहती है उनको Night Blindness (नाइट ब्लाइन्डनेस) या रतोंधी नामक रोग हो सकता है। आँखोंकी ज्योति मन्दी पड जाती है। नेत्रोंमे खुजली होने लगती है और व्रण हो जाते है। त्वचामे, जिह्वामें, मुखमे, श्वांस नलिकामें व्रण हो जाते है।

यह विटामिन ए (Vitamin A) ज्ञान शक्तिके लिये परमावश्यक है। पुरातन कालमे मिश्र देश वासी (Night Blindness) रतोंधी मे यकृत खिलाकर चिकित्सा किया करते थे। यह शैली प्रसिद्ध है।

यकृतमें विटामिन ए (Vitamin A) वर्तमान रहता है। Vitamin D (विटामिन डी) यह Fungi (फनजाई, एक वनस्पति विशेष) श्रेणीकी वनस्पितियोंमें अत्यधिक मात्रामें पाये जाते है। भिन्न-भिन्न जाति विशेषकी मछलियोंके यकृतके तैलोंमें यह पर्याप्त रूपमे पाया जाता है। चौपायो एवं मनुष्योंके यकृतमें इनकी मात्रा अल्प संख्यामें पाई जाती है क्योंकि फुस्फुसमे जाकर यह नष्ट होता रहता है। मछलीके फुस्फुस नही होते इसलिये यह नष्ट नहीं हो सकता इसलिए मछलियोंमें अत्यधिक मात्रामें पाया जाता है।

बहुत से अन्याय पौधे और वनस्पतियों में सूर्य्य की रोशनी की सहायतासे अल्प अल्प मात्रा में उपलब्ध्य होता है परन्तु कुछ समय बाद नष्ट हो जाता है। Fungi (फनजाई) जाति पोदो में यह नष्ट नही होते। साधारण भोजनमें गरम करने से बिटामीन डी (Vitamin D) अपने गुण नही छोड़ता। Halibut Liver oil (हलीबट लीबर ओयल) हलीबट मछलीका लीवरका तैल मे यह पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता है।

शोप रोग Rickets (रिकेट्स) मे दात और अन्यान्य हड्डियों को वृद्धिका सुलभ अवसर नही प्राप्त होता।

अस्थियाँ इस वीमारी में इतनी दुर्बल और मुलायम हो जाती है कि मांस पेशी को किंचित आकर्षित करनेसे अस्थि मुड़ने लगजाती है। दाँतो मे इतनी दुर्बलता आजाती है कि वे नष्ट होने लगते है जिससे साधारण मनुष्य यह कहने लगते है कि दांतों मे कीटाणु लग गया है।

वीस वर्ष पहले जितने भी बच्चे शहरो मे रहते थे प्राय: सबके Rickets (रिक्टेस) शोष रोग हो जाया करता था। उस समय रोग का कारण शहरों की अस्वच्छता हो समझा जाता था। खाद्य पदार्थों का कुछ भी दोष नहीं माना जाता था।

परन्तु शीघ्र ही इस कारण का अन्वेषण किया गया तो हेतु मिला और चिकित्सा में भी साथ ही साथ सफलता मिली।

सूर्य्य की धूप सेवन कराने से बच्चे स्वस्थ होने लगे और बच्चों के लिए सूर्य्य की धूप परम उपयोगी सिद्ध हुई और साथ ही साथ इस बात का भी पता चला कि Cod Liver oil (कोड लीवर ओयल) काड मछलीका तैल यदि बच्चो को सेवन करवाया जाय तो बच्चोंको पर्याप्त लाभ होगा। इस तैल में Vitamin D (विटा-मिन डी) अत्यधिक मात्रा में उपलब्ध होता है। सन १९२४ में इस अन्वेषण का दिग्दर्शन किया गया कि वह भोजन जो बच्चोंको खानेको दिया जाता है यदि सूर्य्य की धूप में कुछ समयके लिये रख कर उसके पश्चात् बच्चों को खाने के लिए दिया जाय तो बच्चे इस रोग से मुक्त रह सकते है।

गर्भवती स्त्रियों में भी शोष तो नही परन्तु इसके समान ही एक रोग होता है जिसे अस्थिशोष Osteomalacia (ओस्टे मलेशिया) कहते हैं। इस रोगमें मुख्य लक्षण क्या होते हैं कि स्त्रियोंकी हड्डियां निर्बल हो जाती है वस्ति गह्वर मुख्यतया Pelvic girdle (पेलविक गर्डल) या नितम्बास्थि (Hip Bone) गर्भावस्था के पश्चात् इस रोग से स्त्रियां मुक्त हो जाती है। गर्भावस्थाके कुछ समय पश्चात् जबतक कि स्त्रीके स्तनोंमें दुग्ध आता रहता है और स्त्री बच्चे को दुग्ध पिलाती है यह रोग रह सकता है परन्तु बच्चेको दुग्ध पिलाना बन्द करनेके बाद वह प्रायः इस रोग से मुक्त हो जाती है। तत पश्चात् अस्थिया पवल एव शक्तिशाली होने लगती है।

यह बीमारी Calcium (केलसियम) चूना और Phosphates फ्रोस्फेट्स क्षार विशेषकी न्यूनतासे प्रायः होती है। क्योंकि यह दोनों पदार्थ स्त्रीके बच्चेकी वृद्धिके लिए परम आवश्यक पदार्थ है। इस लिये उसमें इनका व्यय होनेसे इनकी न्यूनता हो जाती है।

परन्तु Vitamin D (विटामिन डी) Calcium (केलसियम) और Phosphates (फोस्फेट्स) के साथ Injuction इन्जेक्शन द्वारा शरोरमें पहुचानेसे स्त्रियों की यह बीमारी नष्ट हो जाती है। गरिष्ट भोजन भी बच्चों में शोष रोग पैदा करता है क्योंकि बच्चों द्वारा उपरोक्त भोजन पचाये नही जासकते।

Vitamin E (विटामिन ई) यदि कुछ वनस्पतियों का तेल Sterile adult animals (स्टेराईल एडल्ट अनीमल्स) वध्यत्वसे ग्रसित जीवों को खिलाया जाय तो प्राय: कुछ समयके लिए वे इस रोगसे मुक्त हो सकते है। इस तैलमे पौष्टिक पदार्थ विटामिन ई (Vitamin E) वर्त्त-मान रहता है।

इस पौष्टिक पदार्थ विटामिन ई (Vitamin E) की कमीके कारण पुरुष और स्त्रियोंमे Sterility (स्टेरलिटी) बन्ध्यत्व हो जाता है। पुरुषों एवं स्त्रियोंमे यदि यौवनावस्था प्रारम्भ होने पर यदि वीर्य पैदा नहीं हो या उसका परिपाक नही हो या दूषित वीर्य्य पैदा हो तो इसका यह हो कारण कि शरीरमें Vitamin E (विटामिन ई) की न्यूनता है। जब युवक या युवतियोंमे दोनोंमे ही इस पौष्टिक तत्व की कमी रहती है तो सन्तान उत्पत्तिमे मुख्य बाधा उपस्थित हो जाती है। या तो गर्भ स्थापन ही नहीं होता है यदि होता है तो शीघ्र ही गर्भपात हो जाता है। यदि गर्भपात नही हो तो जो शिशु उत्पन्न होता है वो चिर काल तक जीवित नहीं रह सकता।

यदि Olive oil (ओलिव आयल) या जैतूनका तैल या और अन्यान्य तैल मनुष्य भोजनके प्रयोगमे लाता रहे तो यह ऊपरोक्त कष्ट दूर हो जाते है।

Vitamin k (विटामिन के) बच्चों एवं वयोवृद्ध मनुष्यों मे इस पौष्टिक तत्वकी कमीके कारण अनेक प्रकारके रोग पैदा हो जाते है जैसे कामला, जलोदर, रक्तश्राव इत्यादि। यह पौष्टिक तत्व Vitamin K विटा-

मिन के वसा मे अतिशीघ्र विलीन हो जाता है या घुल जाता है। मुख द्वारा भोजन में खिलाने से अतिशीघ्र उपरोक्त बीमारीयों से मनुष्य मुक्त हो जाता है।

उपरोक्त जितने पाष्टिक तत्वों Vitamin (विटामिन) के विषय मे जो लिखा गया है यह सब पौष्टिक तत्त.Fat Soluble (फट सोल्युवल) या वसा मे विलीन होने वाले होते है। अब Water Solub'e (वाटर सोल्युवल) याने जल मे मिश्रित होने वाले पौष्टिक तत्वों के विपय मे बर्णन किया जायगा। इन तत्वो के विपय मे जानकारी करना अत्यन्त कठिन काम है क्यों कि इसको जलसे प्रथक करना आसान नहीं है।

Vitmin B_1 विटामिन बी १ :—जब धानमेंसे चावल निकाला जाता है और उसका परिमार्जन चावलोको सुन्दर बनानेके लिए किया जाता है उस समय एक पदार्थ अवशेप रह जाता है उस पदार्थमे Vitmin B_1 (विटामिन बी वन) अत्याधिक मात्रामें पाया जाता है। इसके अतिरिक्त Dried yeast (ड्राइड ईष्ट) में भी अत्याधिक मात्रामें उपलब्ध होता है। इस पौष्टिक तत्वकी न्यूनतासे ज्ञान तन्तुओमे एवं समस्त स्नायु प्रणालीमे प्रर्याप्त दुर्बलता आ जाती है। इस पौष्टिक तत्व की अत्यधिक न्यूनता से Beri-Beri (बेरी-बेरी) नामक रोग पैदा हो जाता है। स्नायुविक दुर्बलतासे मनुष्यकी पाचन क्रिया भी नष्ट हो जाती। इस पौष्टिक तत्वकी न्यूनताके कारण हृदय भी दुर्वल हो जाता है—हृदयकी गति धीमी पड जाती है। इस पौष्टिक तत्वकी कमी यदि शिशु कालमे प्रारम्भ हो जाय तब बच्चोका शरीर निरन्तर वृद्धिको 'प्राप्त नही होता। इसकी कमोसे मनुष्यको पतली टट्टी लगनी प्रारम्भ हो जाती है।

Vitamin B_2 Complex (विटामिन बी टू कम्पलेक्ष) इस पौष्टिक तत्वके द्वारा घातक पाण्डुरोग Pernicious anaemia (परनीसस अनेमिया) Gaundis (त्वक शोथ कामला) एवं Derma-

tatis (डरमे टाइटिस) आदि रोग ठीक होते है। इस पौष्टिक पदार्थका B_2 Complex (बी टू कमप्लेक्स) भी कहते है और जी G 1 भी कहते है। इस पौष्टिक पदार्थमें मुख्य दो पदार्थ रहते है, जिसमे एकको Riboflavin (रीबोफ्लेविन) और दूसरा पदार्थ Nicotinamide (नीकोटीने माइड) नाम वाला होता है। मनुष्यमें जब उपरोक्त बीमारिया हो जाती है तब Nicotinamide (नीकोटीने माइड) या Nicotinic Acid (नीकोटीनिक एसिड) खाकर मनुष्य स्वस्थता प्राप्त कर लेता है।

Vitamin B_3 विटामिन बी थ्री—यह पौष्टिक पदार्थ पक्षियोंमें एवं मुख्यतया कबूतरोकी स्वास्थ्य रक्षा तथा शरीर वृद्धिमें परम उपयोगी सिद्ध हुआ है। जो पौष्टिक तत्व Vitamin B_1, B_2, B_4, (विटामिन बी वन, बी टू, बी फोर) के अतिरिक्त होता है उसे विटामिन बी थ्री कहते है।

Vitaamin B_4 (विटामिन बी फोर)—यह पौष्टिक तत्व चूहोंकी शारीरिक वृद्धिमें मुख्यतया लाभ पहुंचाता है।

Vitamin C:-(विटामिन सी)--फलोके ताजा स्वरससे एक पदार्थ प्राप्त होता है जो वात रक्त एवं त्वचाकी समस्त बीमारियोंमें तथा रक्त विकारोमे लाभ पहुचानेमे परमसिद्ध हुआ है।

सन्धिवात इत्यादि बीमारियोंमें भी इस पौष्टिक तत्वकी न्यूनता हो जाती है। शरीरको स्वस्थ रखनेके लिए एवं पौष्टिक तत्व शरीरमे उपलब्ध करनेकी मुख्य एवं सरल उपाय यह है कि फल खानेसे विटामिन सी (Vitamin C) और ई कोड लीवर ओयल (Cod liver Oil) मछलीका तैल खानेसे Vitamin A, D (विटामिस ए और डी) Yeast (ईष्ट) सेवन करनेसे Vitamin B_1 (विटामिन बी वन) और बी B_2 और सेव या एक दर्जन नित्यप्रति अंगूर खानेसे Vitamin C (विटामिन सी) और ई (E) शरीरमें स्वस्थ्य रक्षाके लिये पहुंच जाते

हैं। पाश्चात्य विद्वानोंके मतानुसार Cod liver Oil (कोड लीवर आयल) या मछलीका तैल एक चम्मच मात्रामें यदि नित्यप्रति सेवन किया जाय तो मुख्य मुख्य पौष्टिक तत्व शरीरम पहुच जाते है।

———

त्रिदोष ज्वर

त्रिदोष ज्वर—(Severtoxamia or Septicemia)

यह ज्वर उपद्रव भेदसे अनेक प्रकारका होता है। सन्निपातकी उत्पत्ति वात, पित्त, कफ तीनों दोषोंके दूषित होने पर होती है। जिस दोप के लक्षण बिशेषतया प्रवल होते है उसीकी प्रधानता मानकर चिकित्सा की जाती है।

माधबा चार्य्यके मतसे सन्निपातके लक्षणः—

जिस ज्वरमे क्षणमें दाह और क्षण मे शीत हो, अस्थि सन्धि तथा शिरमें दर्द हो, श्राव युक्त मैले लाल फटे हुए नेत्र हों, तन्द्रा, मोह, उन्माद प्रलाप, खांसी, श्वास, आदि लक्षण हों, कानोंमे शब्द श्रवण तीव्र पीडा, कंठमें कांटे उत्पन्न हों, शिरमे चक्कर, तथा जिह्वा काली-खरदरी हो, सम्पूर्ण अङ्गमें शिथिलता हो, थूकमे कफ पित्त या रक्त आता हो, सिर इधर उधर पटकता हो, तृषा अधिक हो, निद्रा नाश हो, हृदयमें पीड़ा, पसीना, मल और मूत्र इनका बिलम्बसे तथा कमउत्सर्ग हो, किसी समय पसीना अधिक आता हो, व्याधि प्रभावसे शरीरमे कृशता विशेपतया नहीं व्यक्त हो, निरन्तर गलेमे घर-घर आवाज होती हो, शरीरमें लाल काले चकत्ते हो गये हों, चुपचाप पड़ा रहता हो, मुंह

कान, नाक आदि पक गये हों, पेटमे आध्मान हो, दोषका परिपाक दीर्घ कालमे हो, उसको सान्निपातिक ज्वर या त्रिदोपज ज्वर कहते है। इस ज्वरके चरक संहितामें दोपोंके विकल्प भेदसे निम्नानुसार बहुतसे भेद किये है परन्तु यहा विशिष्ट १३ सन्निपातो का विवरण ही लिखा जा रहा है।

सुश्रुत मतसे सन्निपातके लक्षण :—

निद्रा नाशो भ्रमः श्वास स्तंद्रा सुप्ताङ्गता रुचिः।
तृषा मोह मदस्तम्भो दाहः शीतं हृदिव्यथा॥ १॥
पक्तिश्चिरेण दोषाणामुन्मादः श्यावदन्तता।
रसनापरूपा कृष्णा सन्धि मूर्द्धास्थि जारूजः॥ २॥
निर्भुग्न कलुषे नेत्रे कर्णौ शब्दरुजा न्वितो।
प्रलापः स्रोत सत्पाकः कूजनं चेतना च्युतिः॥ ३॥
स्वेद मूत्र पूरीषाणा मल्पशः सुचिरात्स्रुतिः।
सर्वजे सर्वलिङ्गानि विशेषश्चात्र मे श्रृणुः॥ ४॥

भावार्थः—निद्राका नष्ट हो जाना, भ्रम, श्वांस, तन्द्रा, अङ्गमे शून्यता होना अर्था, स्पर्श ज्ञान न रहना, प्यास, मोह, मद, स्तम्भ (दाह) शील लगना, हृदयमे पीडा होना, दोपोंका परिपाक देरीसे होना, उन्माद होना, दांतकालेपड जाना, जिह्वामे कालापन तथा खरदरापन होना. सन्धि स्थानोंमें, मस्तक, हड्डियोंमें वेदना होना, आखका बैठ जाना और गदलापन होना, प्रलाप याने निरर्थक बोलना, मुख, कान, नाक आदि का पक जाना, कण्ठसे कफ युक्त अवाज निकलना, बुद्धिका नाश होना, पेशाब, टट्टी एवं पसीनेका अल्प मात्रामे बिलम्बसे होना इत्यादि लक्षण तथा सम्पूर्ण बातके लक्षण जिस रोगमें एक साथ दिखाई दे उसको सन्नि

पात कहते है। यह उपरोक्त लक्षण सुश्रुता चार्यने बतलाये है। सुश्रुत संहितामें इस रोगके विषयमें पृथक २ दोषानुसार भेद नही किये है। केवल सन्निपातकी अभिन्यास और हतौजस यह दोही संज्ञा मानी हैं। कफ प्रधान दोषवालेको अभिन्यास तथा वात एवं पित्त प्रधानको हतौजस माना है। इसी तरह सिद्धान्त निदानमें भी भेद नही किये है। चरकाचार्यने इसके अनेक भेद किये है। जिसके अन्तर्गत आज कलकी प्रचलित बीमारिया जिनको देखकर हम लोग नई बीमारी समझ कर छोड़ देते है उन सबको खोजनेसे पूरा विवरण मिलता है। निदानमे चाहे एक मत न हो, लेकिन चिकित्सा करते समय जिस दोषके उपद्रव अधिक चढ़े हुये होते है, उनको ही शमन किया जाता है।

चरकाचार्यने तथा अन्य आचार्यों ने सन्निपातके विकृति भेदसे उपद्रवा नुसार १३ (तेरह) भेद किये है। जिनके नाम ये हैं।

सन्निपातके भेद

सन्धिकश्चान्तकश्चैव रुग्दाहश्चित्त विभ्रमः।
शीता ङ्गस्तन्द्रिकश्चैव कण्ठ कुब्जश्च कर्णकः॥
विख्याता भुग्न नेत्रश्च रक्तष्ठीवि प्रलापकः।
जिह्वकश्चेत्यभिन्यासः सन्निपातास्त्रयोदशः॥

आयुवद शास्त्रमें इस प्रकार इनके नाम है, संधिक, अन्तक, रुग्दाह चित्त विभ्रम, शीताङ्ग, तन्द्रिक, कंठकुब्ज, कर्णिक, भुग्ननेत्र रक्तष्ठीवी, प्रलापक, जिह्वक, और अभिन्यास।

साध्या साध्यता—

सन्धिकस्तन्द्रिकश्चैव कर्णकः कण्ठ कुब्जकः।
जिह्वकश्चित्त विभ्रंशः षट् साध्याः सप्तमारकाः॥ ५॥

सन्धिक, साध्य है तन्द्रिक, कर्णक, कण्ठ कुब्जक, जिह्वक, और चित्त

विभ्रम, इसको कष्ट साध्य मानाहै। रुग्दाह अत्यन्त कष्ट साध्य तथा अन्य ६ जैसे अन्तक, शीताङ्क, भुग्ननेत्र, रक्तष्ठीवी, प्रलापक, अभिन्यास ये आसाध्य माने है।

सन्निपात मर्यादा विवरण

सन्धिके वासरा सप्त चान्तके दश वासराः।
रुग्दाहे विंशतिर्ज्ञेया वह्वष्टौ चित्त विभ्रमे ॥ ६ ॥
पक्ष मेकन्तु शीताङ्गे तन्द्रिके पञ्चविंशतिः।
विज्ञेया वासराश्चैव कंठ कुब्जे त्रयोदशः ॥ ७ ॥
कर्णके च त्रयो मासा भुग्ननेत्रे दिनाष्टकम्।
रक्तष्ठी विनिदग्धस्नाः प्रलापेस्युश्चतुर्दशः ॥ ८ ॥
जिह्वके षोडशाहानि पक्षोऽभिन्यास लक्षणे।
परमायुरिदं प्रोक्तं म्रियते तत्क्षणादपि ॥ ९ ॥

दोष, साध्या साध्यता एवं परिपाक काल सूचक तालिका

	सन्निपातप्रकार	साध्यासाध्यता	दोषप्राधान्य	परिपाकसमय
१	सन्धिक	साध्य	वात	७
२	अन्तक	असाध्य	पित्त	१०
३	रूग्दाह	अत्यन्त असाध्य	पित्त	२०
४	चित्तविभ्रम	कष्ट साध्य	वात	२४
५	शीताङ्ग	असाध्य	कफ	१५
६	तन्द्रिक	कष्ट साध्य	वात	२५
७	कण्ठ कुब्ज	कष्ट साध्य	पित्त	१३
८	कर्णिक	कष्ट साध्य	पित्त	३ मास
९	भुग्ननेत्र	असाध्य	पित्त	८
१०	रक्तष्टीवी	कष्ट साध्य	पित्त	१०
११	प्रलापक	असाध्य	वात पित्त	१४
१२	जिह्वक	कष्ट साध्य	पित्त	१६
१३	अभिन्यास	असाध्य	वात	१५

इस प्रकार इन सन्निपातों की अवधि तथा साध्यासाध्य अवस्था शास्त्रकारोंने बतलाई है। साथमे ऐसा भी कहा है कि "म्रियन्ते तत्क्षणादपि।" अर्थात् किसी भी समय ये मर्यादा का उल्लंघन करके क्षणमें ही मारक बन जाते हैं। इस विषयमें भी शास्त्रकारोंके बहुतसे मतभेद हैं।

"सप्तमे दिवसे प्राप्ते दशमे द्वादशेऽपिवा।
पुनर्घोर तरो भूत्वा प्रशमंयाति हन्तिवा॥"

वात प्रधान ७ वे दिन, पित्त प्रधान, १० वे दिन और कफ प्रधान सन्निपात १२ वे दिन मलपाक होनेसे शान्त हो जाते है। अथवा घोरतर होकर धातुपाक होनेसे रोगीको मार देते है। सुश्रुतका मत है कि अभिन्यास ७ वें दिन, हतौजस १० वें दिन और सन्यास १२ वें दिन मल पाक होने पर शान्त हो जाते हैं।

भालुकि ने भी ज्वरकी मर्य्यादा इस प्रकार लिखी है।

सप्तमी द्विगुणा यावन्नवम्ये कादशी तथा।
एषात्रिदोषमर्य्यादा मोक्षायच वधायच॥

भालुकिने द्विगुण तक भी मानी है जैसे (७-१४) (९-१८) (११-२२) इस अवधिमें सन्निपात या तो रोगीको छोड देता है या मार देता है। इसलिये दूसरे हफ्तेमें रोगीको बीमारी अति कष्टदायक हो जाती है। इसका प्रधान उद्देश्य यही है कि मल पाक होनेसे रोगी धीरे २ दोष पाचन होने पर बच जाता है, और धातुपाक होने पर रोग घोरतर होकर रोगीको मार देता है। इसलिये सन्निपात ज्वर की साध्यासाध्यता का अनुमान रोगके उपद्रवोका बलाबल देख कर ही किया जाता है।

धातुपाक का लक्षण

सम्बाध्यमानो हृदिनाभिदेशे गात्रेषु वापाकरूजोज्झितेषु ।
प्रक्लिष्ट वाक्चेति रुजा ज्वरार्त्तः सधातुपाकी कथितो भिषग्भिः ॥
अन्यदपि निद्रावलौजो रुचि वीर्यनाशो हृद्वेदनागौरवतात्ल्प चेष्टा ।
विष्टम्भ तापस्य किलारतिः स्यात् सधातुपाकी मुनिभिः प्रदिष्टः ॥

भावर्थः—जिसके हृदय और नाभि प्रदेशमें दबाने पर पीड़ा हो. गात्रमे पाक और पीड़ा हो, वोली कठिनतासे निकले, सम्पूर्ण शरीरमें वेदना और ज्वर हो उसको धातुपाक कहते है। इसके दूसरे लक्षण निम्न है निद्राका ह्रास, हृदयमें भारीपन, मलमूत्रका अवरोध. जड़ता, अन्नमें अरुचि, बलका नाश, पेटको दबाने अथवा वेदना स्थानको दबाने पर दिन पर दिन वेदना बढ़ती हुई मालूम देती हो तो धातु-पाक समझना चाहिये।

मलपाक लक्षण

दोषः प्रकृति वैकृत्यं लघुता ज्वर देहयोः ।
इन्द्रियाणाञ्च वैमल्यं मलानां पाकलक्षणम् ॥

भावार्थः—दोष प्रकृतिका उल्टा होना अर्थात् बढ़ते हुए दोषोंका घटना, ज्वर और देहमे हल्कापन, इन्द्रियोंमें विमलता याने हल्कापन हो तथा वेदना शान्त हो जावे ये मलपाकके लक्षण है। अतः सन्नि-पातकी चिकित्साके समय धातुपाक एवं मलपाककी तरफ ध्यान देना बहुत जरूरी है। क्योंकि सन्निपातके चिकित्सकको मृत्युके साथ संग्राम करना पड़ता है। यदि वह इस संग्राममे विजय पा जाता है वह सम्पूर्ण रोगोंको जीत लेता है। जो वैद्य समुद्र (गहन) रूपी सन्निपातके फन्देसे मरते हुये रोगीको बचा लेता है वह सम्पूर्ण

सुकृत कर्म्मोंको करने वाला और सर्व तरहसे आदर के योग्य होता है।

असाध्य लक्षणम्

दोषे विवृद्धे नष्टेऽग्नौ सर्व सम्पूर्ण लक्षणः।
सन्निपातज्वरोऽसाध्यः कृच्छ्र साध्यस्ततोऽन्यथा ॥

जिस सन्निपातमें तीनो दोष बढ जावं, और अग्नि नष्ट हो जाय और सन्निपातमे लिखे हुए सम्पूर्ण लक्षण हो जाय तो इस रोगको असाध्य समझना चाहिए। अन्यथा न्यून हो तो कष्ट साध्य या साध्य जानें।

ज्वर प्रशमन—सन्निपात ज्वरमें ज्वरका प्रशमन दो प्रकारसे हाता है। एक तो धीरे २ जैसे आज १०३ डिग्री ज्वर है तो कल १०२॥ परसों १०२ इस रीतिसे घटते घटते बिलकुल उतर जाता है। दूसरा प्रशमन एक साथ १०२ से ९७-९८ डीग्री तक पसीना आकर हो जाता है। यह खतरनाक होता है इसको कोलैप्सस्टेज (Collapse Stape) कहते है।

सुश्रुतमतसे सान्निपातिकज्वरमें अभिन्यासके लक्षण

नात्युष्ण शीतोऽल्प संज्ञो भ्रान्तपेक्षी हतः स्वरः ।
खरजिह्वः शुष्क कण्ठः स्वेद विण्मूत्र् वर्जितः ॥
सास्रो निर्भुग्नहृदयो भक्तद्वेषी हतः प्रभः ।
श्वसन् निपतितः शेते प्रलापोपद्र वान्वितः ॥
तमभिन्यास मित्याहु हतौजस मथापरे ।
सन्निपातज्वरं कृच्छ्रमसाध्यमपरे जगुः ॥

भावार्थः—जिसका शरीर न ज्यादा ठण्ढा हो और न ज्यादा गर्म हो, संज्ञा कम हो गई हो, घबराया हुआ देखे, स्वर भंग हो गया हो, जिह्वापर खरदरा पन हो, कंठ सूखता हो, नेत्र जलसे भरे हुए दिखाई देते हों, हृदय भारी हो, भोजनसे अनिच्छा हो, चेहरे की कांति नष्ट हो गई हो, तथा स्वांस खींच-खीचकर लेता हो, गिरे हुएकी तरह सोता हो, प्रलापादि उपद्रवोंसे युक्त हो ऐसे लक्षणों वाले ज्वरको अभिन्यास ज्वर कहते हैं। कोई इसको हतौजस भी कहते है। यह कष्टसाध्य होता है एवं किसी-किसी ने इसको असाध्य भी माना है।

अभिन्यासके भेद

निद्रोपेत मभिन्यासं क्षीणंविद्या द्धतौ जसम् ।
सन्न्यासगात्रं संन्यासं विद्यात्सर्वात्मके ज्वरे ॥

कफकी उल्वणतासे अभिन्यास होता है। बात पित्तकी अधिकतासे हतौजस होता है आगे इसका पूरा विवरण लिखा जायगा

तव ही निश्चय हो सकेगा, और इसमे ओजक्षय हो जाता है, तव तीनों दोपोंसे सन्यास होता है।

सुश्रुतमे विशेप भेद नहीं माने, लेकिन चरकाचार्यने काल भेदसे १३ सन्निपात माने है। फिर भी कौन समय कहा और किस प्रकार का सन्निपात हो जाय, इसका कोई भी नियम नही है। शास्त्र-कारोने सन्निपातोंकी संज्ञा प्रधान उपद्रवोंके अनुसार ही दी है, जिसका ज्ञान नामोच्चारणसे भी हो जाता है। इन सन्निपातोंकी साम्यता अधिकाश नीचे लिखे हुए नामोसे मिलती है। जैसे·—

आयुर्वेद रोगका नाम	दोप	पाश्चात्य रोग
तन्द्रिक	वातश्लेष्म प्रधान	इन्फ्ल्युएञ्जासे Influenza
प्रलापक	वातपित्त प्रधान	टाइफस से Typhus
रक्तष्ठीवी	कफपित्त प्रधान	न्युमोनिया मे Neamonia
भुग्ननेत्र	वातपित्त प्रधान	सैरोब्रोस्पाइनल फिभर Cero-bro-spinal fever
सन्धिक	आमवात प्रधान	र्‍यूमेटिक Rheunatic faic
दण्डक ज्वर	,,	,, Rheumatic ,,
कण्ठदाह	पित्तप्रधान	टाइफाइड Typhoid

सन्निपात ज्वरके अन्तमें होनेवाले उपद्रव

बाधिर्य्यमङ्ग वैकल्य मुन्मादो मूकताऽन्धता।
कचित्स्युः सन्निपातान्ते एकशोवा द्विशोपिवा॥
सन्निपात ज्वरस्याऽन्ते कर्णमूले सुदारुणः।
शोथः सञ्जायते तेन कश्चिदेव प्रमुच्यते॥

कभी-कभी किसी रोगीको सन्निपात ज्वरके अन्तमें बहिरापन, अङ्गोमें शिथिलता अर्थात हाथ पैरोमें शून्यता उन्माद, वाक्शक्तिका लोप या गुन-गुनापन आदि उपद्रव हो जाते है। इसी तरह

कभी कर्णमूलमे कठिन शोथ हो जाता है। जिसको कर्णमूल शोथ कहते है। इसके होने से कोई ही रोगी ठीक होता है।

सन्निपातिक ज्वरमें चिकित्सा या क्रिया क्रम—

यद्यपि सन्निपात ज्वरमे वात पित्त कफ तीनों दोष प्रारम्भसे ही रहते है, तथापि कफका निवास स्थान भी आमाशय और इनका उत्पत्ति स्थान भी आमाशय ही होनेके कारण सन्निपात ज्वरकी चिकित्साके समय सर्व प्रथम शास्त्र कारोंने लिखा है कि:—

"सन्निपात ज्वरे पूर्वं कुर्या दाम कफापहम्।
पश्चात् श्लेष्मणि संक्षीणे शमयेत्पित्त मारुतो॥

अर्थात्:—समस्त सन्निपातिक ज्वरोंमें सर्व प्रथम आम और कफको जीतना चाहिये। जब कफका शमन हो जाय तो उसके बाद पित्त और वायुका शमन करना चाहिये। इसलिए सर्व प्रथम लंघनका विधान है और शास्त्रमे भी लिखा है:--

लङ्घनं वालुका स्वेदो नस्यं निष्ठी वनन्तथा।
अवलेहोऽञ्जनश्चैव प्राक्प्रयोज्यं त्रिदोषजे॥

सन्निपात ज्वरमे प्रथम लंघन, वालुका स्वेद, नस्य, निष्ठीवन उद्धूलन, अवलेह तथा अंजन कर्म करना चाहिए। अब यह प्रश्न उठता है कि लंघन कितने दिन कराना चाहिये और किस रोगमे कराना चाहिये, कम लंघितके क्या लक्षण है तथा अतिलङ्घितका पहिचान क्या है, तथा उसमे नुकसान और फायदा क्या होता है? बहुत दिवस तक लङ्घन करने पर भी रोगीकी शक्ति कैसे बनी रहती है? इनका उत्तर इस प्रकार है।

लङ्घनकी अवधि

त्रिरात्रं पंचरात्रं वा दश रात्र मथा पिवा,
लंघनं सन्निपातेषु कुर्यादारोग्य दर्शनात्।

सन्निपातके रोगीको ३ तीन ५ पांच दस १० दिवस तक लङ्घन करानेका विधान है। यदि इतने दिनमें भी दोष पाचनके लक्षण दिखलाई नहीं दे, तो ज्यादा भी जरूरतके अनुसार करा सकते हैं। जब तक सामदोष रहते हैं तब तक रोगीमे लङ्घन सहन करनेकी शक्ति रहती है। दोषोंके क्षीण होनेपर रोगी १ मिनट भी लङ्घनको सहन नही कर सकता है

लङ्घन लक्षण

शरीर लाघव करं यत् द्रव्यं कर्म वापुनः तल्लंघनमिति।

अर्थात् जो कर्म अथवा द्रव्य शरीरमे हल्कापन करे उसीको लङ्घन कहते हैं।

लङ्घनमें कारण

अमाशयस्थः सामदोपोअग्निं हत्वा मार्गान् पिधापयन् ज्वरं विद्धाति तस्मा लघन माचरेत। नद्देतत् अनवस्थित दोपाणा स्वस्था-नादितस्तत प्रचलितानां दोणां पाचनं करोति तेन ज्वर निवृत्तिर्भवति शरीरे लाघवश्च। यद्यपि सन्निपात ज्वरमें रोगीको लङ्घन अत्यन्त हितकर है, (तथापि वातवाले वृद्ध सगर्भा स्त्री और अति दुर्बलको लङ्घन नही कराना चाहिए। इसके अलावा काम जनित ज्वर, वात ज्वर, एवं आगन्तुक ज्वरमें भी लङ्घन नही कराना चाहिए। लङ्घन कराते समय चेतना शक्तिका भी ध्यान रखना चाहिये क्योंकि इसी पर समस्त कार्य कारिणी शक्तियोंका भार है, और बलकी रक्षा करनेसे ही आरोग्यता प्राप्त होती है।

सम्यक् लङ्घितके लक्षण

लङ्घन करते समय जिस रोगीका टट्टी पेशाव अपान वायुका सुख पूर्वक निसर्ग हो जावे शरीर हल्का मालूम दे, हृदय हल्का हो जावे, डकार साफ आने लगे, गला और मुखका स्वाद ठीक हो जाय, आलस्य न आता हो, मनमें किसी प्रकारकी ग्लानि न हो, पसीना आवे, खानेकी रुचि हो जावे प्यास ठीक लगे, अन्तरात्मा प्रसन्न हो, तो समझना चाहिए कि अव इसको लङ्घन ठीक हो गया है, अब और करानेकी जरूरत नहीं है। अति लङ्घन करनेसे अङ्गुलियोकी सन्धियां टूटने लग जाती है, अङ्ग भङ्ग हो जाता है, खांसी-मुखशोष होने लगता है। भूख बन्द हो जाती है, अरुचि तथा तृषा ज्यादा लगने लगती है, कानोंसे कम सुनने लगता है। नेत्रोंसे कम दिखाई देने लगता है, मनमें तथा हृदयमें कमजोरी प्रतीत होती है, अन्धेरी आती है, देह और अग्नि कमजोर हो जाती है। इसलिए सन्निपातमें जव तक प्रलाप और कम्पन नहीं बन्द हो तब तक बृंहण नही देना चाहिये। डाक्टरोंका सिद्धान्त है कि रोगीको हर हालतमें खानेको जरूर देना चाहिये, अगर मुंहसे नहीं खा सके तो ऐसे रोगीको गुदाके द्वारा अथवा इन्जेक्शनके द्वारा ही खाद्य जरूर पहुंचाना चाहिए। हमारे आयुर्वेदका ऐसा सिद्धान्त नही है इसीसे सन्निपातकी चिकित्सामें पाश्चात्य चिकित्सक सफल नहीं होते। इसलिये सन्निपातकी चिकित्साके समय आयुर्वेदीय उपक्रम को नहीं भूलना चाहिये। जव तक सामदोष हो, तव तक लङ्घन कराना हित कर है। वात कफाधिक हो तो वालुका स्वेद अथवा अन्य सूखे पदार्थोंका सेक, केवल वात दोषमें स्निग्ध सेक, कफदूरीकरणार्थ नस्य, बेहोशीको दूर करनेके लिये अञ्जन, कफनिकालनेके लिये निष्ठीवन कराना चाहिये। लीन कफको निकालनेके

लिये अवलेह इत्यादि उपचारोंका विधान है। सन्निपातमे जो प्रधान उपद्रव हो उसको सर्व प्रथम जीतना चाहिये। कफको पतला करके निकालना चाहिये। जहां तक हो सके कफको सूखने नहीं देना चाहिए। रेचन कारक औषधिका प्रयोग कभी नहीं करना चाहिये। आवश्यकता हो तो हलकी वस्तिका प्रयोग या ग्लेसरीनकी वर्तीका प्रयोग करना चाहिये।

अव १३ प्रकार के सन्निपातोंका पृथक २ विशिष्ट वर्णन किया जायगा।

सन्धिक सन्निपात (Rehumatic Fever)

पर्य्याय सन्धिक ज्वर आमवातिक ज्वर निरूक्ति —

पूर्वरूप कृत शूल संभवं शोषवात बहुवेदना न्वितम् ।
श्लेष्म ताप वल हानि जागरं सन्निपात मिति सन्धिकं वदेत्

इस ज्वरमें सन्धिस्थानोंमें शोथ सहित भयंकर दुःख देने वाली पीड़ा होती है। वात का प्रकोप होकर शूल होता है। मुखसे कफ गिरता रहता है, शरीरमें कमजोरी मालुम होती है। वेदनाके कारण नीन्द नहीं आती है तथाकफ युक्त खासी भी चलती है। शास्त्रमें इनकी अवधि ७ दिवसकी मानी है। लेकिन साधारण रूपसे जब यह बीमारी होती है, तब तो ७ रोजमे हो आराम हो जाता है। परन्तु जहा पर विशेष रुपसे आक्रमण होता है वहा पर इसकी मर्यादाका कोई ठिकाना नही रहता; कारण जवतक भीतरी आमदोष बाहर नही निकलता तवतक इस विमारी से छुटकारा नही होता। सिद्धान्त निदानमेभी आमवात जनित ज्वरको ही सन्धिक सन्निपात माना है। और मेरी समझमे भी इनमे कोइ भेद नही है। क्योंकि माधवाचार्यने जो आमावात के लक्षण लिखे है, वे सब हो लक्षण इस सन्धिकमे भी पाये जाते है।

मधवाचार्योक्त आमवात निदान एवं सम्प्राप्ति Actrology & Pactrology

दूध मछली आदि विरुद्ध भोजनसे, अजीर्ण होनेसे; अति व्यायाम अति मैथुन, जल क्रीड़ा आदि विरुद्ध चेष्टाओंके करनेसे, मन्दाग्नि वाले अपरिश्रमी, निपिद्ध भोजनोपरान्त व्यायाम न करनेवाले को दूषित आम वायु द्वारा प्रेरित हो कर श्लेष्मस्थान आमाशय, उरः स्थान त्रिकस्थान शिरकण्ठ सन्धि स्थान, मे प्राप्त होता है। फिर वहा विदग्ध होकर वायु द्वारा अति दूषित होकर धमनियोंमें गमन करता है। फिर तीनों दोषों द्वारा कुपित होकर रसवाहिनियोंके मार्गको अवरोध करदेता है। तब नाना वर्ण वाला पिच्छिल आम अग्निमान्ध हृददौर्बल्यादि कफ केल क्षण उत्पन्न करता है। फिर व्याधियोंका आश्रय रुप यह अजीर्णसे उत्पन्न होने वाला मनुष्यके शरीरमें क्रमशःसंचि तहोकर आम संज्ञाको प्राप्त हो जाता है। जिससे यह आम और वायु दोनों त्रिकस्थान एवं सन्धिकस्थानमें जाकर शरीरको जकड देते है। इसलिये इस रोगका नाम आमबात है।

माधवोक्त आमवातके लक्षण (Signs & Symptions)

अङ्गमर्दो रूचिस्तृष्णा ह्यालस्यं गौरवं ज्वरम् ।
अपाकः शूनताङ्गानामामवातस्य लक्षणम् ।।
सकष्टः सव रोगाणां यदा प्रकुपितो भवेत् ।
हस्त पाद शिरो गुल्फ त्रिक जानूरू सन्धिषु ।।
करोति सरुजं शोथं यत्र दोषः प्रपद्यते ।
सदेशो रुजतेऽत्यर्थं व्याविद्ध इव वृश्चिकैः ।।
जनयेत् सोग्निदौर्बल्यं प्रसेकाऽरुचि गौरवम् ।
उत्साह हानि वैरस्यं दाहञ्च बहु मूत्रताम् ।।

भावार्थ—अङ्गमर्द, अरुचि, तृपा, आलस्य, शरीरमे भारीपन होना ज्वर, अजीर्ण अङ्गोमे शून्यता आदि लक्षण होते हैं। तव इसको आम वात कहते है। जब यह आमयुक्त वात कुपित होता है। तब हाथ पैर शिर गुल्फ त्रिकस्था नादिकोंमें जाकर शोथ उत्पन्न करता है। फिर इसके द्वारा सन्धि स्थानोंमें विच्छु काटनेके समान भयंकर पीड़ा होती है। तथा इस रोगसे अग्निमान्ध, मुंहसे लालाश्राव, वैचेनी शरीरमें भारी पन, उत्साहका नाश, स्वरभेद, दाह, पेशाबका अधिक होना, तृपा; वमन, भ्रम, मूर्च्छा, हृदयका भारी पन, मलावरोध, जड़ता, आंतोमें कूजन, तथा आध्मानादि दोप पैदा हो जाते है। सिद्धान्त निदानमें भी इसका पूरा विवरण मिलता है, उसने भी सन्धिक को आमवातके अन्तर्गत ही माना है उसमें भी सन्धिवातका निम्नलिखित लक्षण लिखा है।

व्रणशोथ रुजा तोदैः सन्धीनापीड़यन् भृशम्।
ज्वरो घोरः सहृद्रोगः सन्धिको नाम कथ्यते॥

जिस रोगमे हड्डिओंके सन्धि स्थानोमें शोथ सहित सुई चुभानेके समान पीडा होती हो और तीव्र ज्वर हो, तथा हृदयमें दुर्वलता प्रतीत होती हो, उसीको संधिक सन्निपात कहते हैं।

पाश्चात्य मतानुसार निदान सम्प्राप्तिलक्षणादिका विशिष्ट विवरण

इस रोगका कारण शरीरमें यूरिक एसिड की अधिकता है। जब यह एसिड तन्तुओंमें प्रवेश करता है, तब इस रोगकी उत्पत्ति होती है। यूरीकएसिड कई कारणसे वनता है। प्रधान कारण यकृत ही है। जब यकृत्में गड़बड़ी हो जाती है तव ही यह अधिक मात्रामें बनता है। यकृतमें वीमारी होनेका कारण जैसे आयुर्वेदमें बताया गया है, प्रकृति विरुद्ध आहार शयनादि आचरणोंके करनेसे वैसे ही मद्यादिक सेवनसे यह रोग हो जाता है। किसी किसीको यह रोग वंश परम्परा

से भी हो जाता है, अथवा बृक्क ओर यकृत् विकृत होनेसेभी यूरिक एसिड शरीरमे बढ जाता है। सर्व प्रथम इस रोगमें छोटी सन्धियाँ आक्रान्त होती है। और यदि सन्धिवातमें पहिले बडी सन्धियोंमें पीड़ा हो तो यह रोग उन्ही लोगोको प्रायः होता है जिनकी जिन्दगी आराममें बीतती है।

शरीर ढकनेके लिये पूरे बस्त्र नही मिलते, अथवा जिनको पेट भर भोजन नही मिलता है।

गठिया प्रायः ऐस आराम से रहनेवालों को ही होता है। इस रोग का आक्रमण दो तरह से होता है, एक तीव्र, दूसरा साधारण यह रोग वृद्धों की अपेक्षा युवकों में अधिक पाया जाता है। इस रोग का समय शीतकाल माना गया है। इस रोग में तीव्र ज्वर, नाड़ी तेज भारी, त्वचा उष्ण, जिह्वा मैली मूत्र गदला हो जाता प्रारम्भ में साधारण ज्वर १०२—से १०४ डिग्री तक सन्धियों में शोथ प्रतीत होता है, पसीना अधिक आने लगता है। शोथ युक्त स्थान में तीव्र पीडा होने लगती है, पेशाब बहुत कम उतरता है। प्रायः रोगारम्भ में हृदयमे पीडा सन्निपातिक लक्षण, जैसे श्वास, कास, प्रलाप, अनिद्रा, तीव्र ज्वर १०५—१०६ तक भी किसी-किसी को हो जाता है। उस समय शीत क्रिया करनी चाहिये। नही तो मृत्यु होने का भय हो जाता है। युवावस्था मे १६ वर्ष की उम्र से लेकर ३, वर्ष की आयु वालों मे इसका आक्रमण विशेषतया होता है। और उनके सन्धिस्थानों मे वेदना भी अधिक होती है। बाल्यावस्था में २ साल से १६ साल की उम्र के भीतर यह रोग हो जाता है तो हृदय यन्त्र में विकृति पैदा हो जाती है। यह रोग स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों को अधिक होता है। स्त्रियों मे भी २० साल की उम्र से कम उम्र वालियों मेंही ज्यादा कर के होता है। किसी समय वृद्धावस्था मे भी किसी-किसी को हो जाता है। वृद्धो को होने पर चिरकाल तक रहता है। एक समय

होने पर कुछ भी गड बडी करने से इस रोगका बार २ आक्रमण होने लगता है। सम्यक् तया चिकित्सा करने से २-३ सप्ताह निकल जाने पर आराम हो जाता है लेकिन अधिकांश रोगी हृद्रोग से पीडीत रह जाते है। ठीक होने के बाद भी हृदय की दुर्बलता के कारण थोड़ा सा परिश्रम करन से ही श्वास शोथादि लक्षण हो जाते है। अथवा किसो समय हृदयावरोध हो कर मृत्यु भी हो जाती है। पाश्चात्य चिकित्सकों ने इस रोग को संक्रामक एवं कीटाणु जन्य भी माना है। इसकी परीक्षा मूत्र चिकित्सा विधि जो इसके प्रारम्भ में लिख गयी है उसके द्वारा कर के देखे। इस रोग का निर्णय पाश्चात्यो ने पशुओं मे कृत्रिम रीति से इस रोग को उत्पन्न कर के किया है। इस रोग की साम्यता प्राय: पायो मियां (पूम मय रक्त रोग तथा बात रक्त) से भी होती है। परन्तु इस रोग में वेदना स्थान में पीप नही होता इसलिये इसकी समानता करना ठीक नही। और बात रक्त में ज्वर नहीं रहता इसलिये उससे भी समानता नहीं जॅचती। डाक्टरों का कथन है कि इस रोग को पैंदा करने वाले कीटाणु जब रक्त मे बहुत बढ़ जाते हैं तब अपाचित आम रस में मिलकर धमनियों द्वारा सन्धि स्थान में पहुंचते है तब दुग्धाम लेक्टिक् एसिड (Lactic Acid) बढ़ जाता है। इसी से आम बात की उत्पत्ति होती है। इससे सन्धि स्थानास्थित श्लेष्म धरा कला में कीटाणुओं का प्रवेश होने से दाह युक्त शोथ हो जाता है। तथा रक्ताणुओं की संख्या घट जाने से और श्वेताणुओं की संख्या बढ़ जाने से शरीर की कान्ति नष्ट हो जाती है। रोग होने के पहिले जब इस रोग की सम्भावना होती है तब हाथ पैर टूटने लग जाते हैं। तथा ग्रन्थियों में सूजन आ जाती है फिर थोड़े दिन बाद पैरों के घुटनो मे वेदना आरम्भ होती है। फिर इसके बाद अन्य सन्धिस्थान इस रोग से आक्रान्त हो जाते है, तथा शीत पूर्वक ज्वर भी हो जाता है। किसी समय एक सन्धि की पीड़ा कम हो जाती है और दूसरी में चालू हो

जाती है। उस समय वायु का दोप अधिक रहने से तीव्र शूल होता है, पित्ताधिक्य होने से दाह और रक्त वर्णता, कफाधिक्य होने से जड़ता और भारी पन हो जाता है।

इस उपरोक्त सन्धिक सन्निकपात से पीड़ित बहुत से रोगी बाहर तथा अस्पताल मे मेरी चिकित्सा में आये जिनमें से २ रोगियों का विवरण लिख रहा हूं। चिकित्सा का अनुभव, विज्ञ वैद्य करने की कृपा करेगे। जहा तक मेरा अनुभव है कि निम्नोक्त चिकित्सा शैली से अधिकांश रोगी अवश्य निरोग होते है।

स्वानुभूत चिकित्सा:

रोगीनाम—जगदीश प्रसाद जाति—खन्डेलवाल उम्र—२२, ग्राम —नांवां (कुचामन जिला) किसन लालजी वांगड़ का मुनीम चितरंजन एवन्यु यह रोगी अस्पताल मे सं० १६४३ में भर्ती हुआ। उस समय इस को ज्वर १०४ डिग्री का। हाथ पैरों के सन्धि प्रट स्थानो में शोथ युक्त, अत्यन्त भयं कर वेदना थी। ज्वर निरन्तर से बना रहता था, पसीना बार २ होता था, प्यास अधिक थी, जि रोगी मैली, टट्टी पेशाव की कब्जियत थी, श्वास खासी, शिर मे दर्द था, पीड़ा के कारण निद्रा भी नहीं आती थी। पेट में भारी पन था। इत्यादि लक्षण थे। इसके पहिले रोज मेरे को घर पर देखने को बुलायाथा। मेरे से पहिले और भी कितने ही डाक्टर तथा वैद्य इसको देख चुके थे। मेरे पूछने पर मालुम हुआ कि डाक्टरों ने इनफ्लुएञ्जा कायम किया है तथा वैद्यो ने मन्थर ज्वर बतलाया है। मैने जब इस रोगी की परीक्षा की तो सन्धिक ज्वर का सन्देह हुआ। मैने घर वालो से भी कह दिया कि इसको आम वात की बीमारी है, कमसे कम २ सप्ताह आराम होने में लगेगे। अगर मेरे कथनानु सार आप परिचर्य्या का इन्तजाम कर सके तो, यहां रखों नहीं तो अस्पताल में भर्ती करा दो। उन्हो ने कहा कि अस्पताल ही में ले चलिये, यहा

हमारे पास उपचार का कोई प्रवन्ध नहीं है। दूसरे रोज ता० ७-४-४३ को १० बजे प्रातः अस्पताल में लाकर भर्ती करा दियो गया, तब ऊपरे लिखे अनुसार लक्षण थे। रोगी वेदना के कारण बहुत छट पटा रहा था, दोनों हाथों में तथा दोनों पैरों के सन्धि स्थान मे शोथ युक्त भयंकर पीड़ा हो रही थी जिससे हाथ पैर हिला भी नही सकता था तब मैंने भर्ती करके निम्न लिखित औषधियो की व्यवस्था प्रारम्भ की।

ता० ७-४-४३

प्रातः ७ बजे	सायं ४ बजे	मध्याह्न १२	रात्रिको ८
ज्वरसंहार ३ रत्ती		चन्द्रप्रभा	
रामबाण १ गो		बज्रक्षार	
शृंग २ रत्ती		अर्कमकोयसे	

रास्नादिपचानमधुसे १ खुराक अष्टाङ्गावलेह मधूसे बार २ चाटनेको वेदना स्थान पर वृसैन्धवादि तैलका मालिस कराकर बालुकी गरम पोटलीका सेक कराके फलालेनकी पट्टी बंधवा दी। पथ्यमे जल-बार्ली तथा पीनेको गरम करके ठंढा किया हुआ जल।

ता० ८-४-४३ पूर्ववत

ता० ९-४-४३ वेदनामे कुछ कमी हुई ज्वर भी ऊपरमे १०३ नीचेमें १०२ रहा, टट्टी बिल्कुल नहीं हुई तब मधु गरम जलमें मिलाकर वस्ति प्रयोग किया जिससे गाठदार १ टट्टी हुई जिससे रातको ३ घंटा नींद भी आई।

ता० १०-४-४३ को ज्वर सुबह १०१ सायं फिर १०३ डीग्री तक हुआ पेशाव लाल रंगका कम हुआ। खांसी रातको अधिक आई, कफ भी निकला, छातीमे कुछ दर्दका अनुभव करने लगा, तब धत्तूरादि घृत की मालिश कराई गई। जिससे कुछ शान्ति पड़ी, नींद रातको कम आई।

११-४-४३ टट्टी नहीं हुई इस वजहसे सूजन भी बढ़ी तथा वेदना भी अधिक रही जिसके कारण नींद भी नहीं आई। तब सुबहके क्वाथमें ऐरंड तैल १ औंस मिलवाया गया, जिससे दिनमें ३ वार टट्टी हुई सायंकाल ४वजे मैंने देखा तो रोगीकी तवियत टट्टी लगनेसे प्रसन्न थी। रातको निद्राके लिये निद्रायुक्त कुमुदेश्वर १ खुराक देने के लिये व्यवस्था की गयी।

१२-४-४३ सुबह १० बजे मैंने देखा और रातके हालात पूछे तो रोगीने कहा कि रातको निद्रा ४ घन्टे आई, पीड़ा भी कमती रही और खासी भी कम है, कफ भी अच्छी तरहसे निकलता है। कुछ भूखकी इच्छा है। तब उसका पथ्यमें जलवार्ली 5॥ दी गई। दिन में हालत कल जसी ही रही। टट्टी लगनेसे इसको आराम मिला। जिससे प्रातःकालके क्वाथमे रोज एरण्ड स्नेह १ औंस देना शुरू कर दिया गया।

१३-४-४३ सुबह रात के हाल चाल पूछने पर पता लगा कि रात को वेदना कम रही नींद अच्छी आई ज्वर भी ९९ डीग्री था सायकाल भी ज्वर १०१ तक बढ़ा, दवा पूर्ववत् चालू रक्खी गयी।

१४-४-४३ हालत ठीक ज्वर प्रातः ९९ सायं १०० तक हुआ।

१५-४-४३ सुबह हालत ठीक थी लेकिन सायकाल फिर ज्वर १०३ हो गया तथा हाथ पैरोंमें वेदना भी फिर बढ़ गई। तब विचार करके देखा गया कि किस कारणसे दुबारा आक्रमण हुआ तब निर्णय हुआ कि आज एकादशी हे इसीसे ऐसा हुआ औषधि परिवर्तन किया गया।

१६-४-४३	प्रातः	सायं
	आमवातारिगुटिका	बृ० वातगजांकु १ गो
	लशुन सोंठ निर्गुन्डी क्वाथसे	शृंगभस्म २ रत्ती
म० रा०	चन्द्रप्रभा वज्रक्षार गोक्षुर अर्कसे	महारास्नादि क्वाथ मधुसे

वेदना शान्त्यर्थ अदरख ऽ— चावल ऽ— ओकड़ा २ तो० हींग ।) भर जलमें पीस कर गरम करके लेप किया तथा रातको बृ० सैंधवादि तैल गरम करके मालिश भी कराई गई।

१७-४-४३ इस उपचारसे ज्वर भी प्रातः १०० हुआ दिनमें औषधादि की व्यवस्था कल जैसी ही रखी गई।

१८-४-४३ को सुवह देखा और रातके हाल पूछे तो पता लगा कि ज्वर तो रातको १०१ ही रहा परन्तु शोच और वेदनामे कोई फर्क नहीं पडा तव लेप वदलना पड़ा सुलफाबीज, वच, सोंठ, गोखरू, वरनाछाल, पुनर्नवामूल, देवदारु, कचूर, गोरखमुन्डी, प्रसारिणी, अरनीछाल, मैनफल, इन सवको कूट कर सिरकामे पीसकर गरम करके वेदना स्थानमें लेप किया और ऊपर रूई चिपका कर पट्टी वांध दी, जिससे १ घन्टे बाद ही दर्दमे शान्ति पड़ गई, नींद आ गई सायंकाल लेप गरम जलसे हटाकर बृ० विषगर्भ तैलकी मालिश कराकर शंकरश्वेद दिया गया।

१९-४-४३ हालत ठीक आमवातारि देनेके वाद टट्टी आपसे आप होने लग गई एरंडस्नेहकी आवस्यकता नही पडी।

२०-४-४३ हालत बहुत ठीक ज्वर भी प्रातः ९८ सायंकाल ९९ तक ही हुआ वेदना बिल्कुल शान्त दवामें कोई भी तरहका हेर फेर नही किया दिन पर दिन तबियत सुधरने लग गई पथ्यमें दूध वार्ली मोसमीका रस दिया गया, इस तरहसे रोगी ३ सप्ताहमें बिल्कुल ठीक हो गया। धीरे २ दवाईयां कम कर दी गई, पथ्य भी दिया गया, ता० १-५-४३ को अपने घर चला गया। वहां पर इसको कुछ दिन तक रसोनपिंडका साधन कराया जिससे बिल्कुल स्वस्थ हो गया। इस उपरोक्त प्रक्रियासे मैंने कितने ही इलाज करके देखें। अवश्य फायदा होता है।

शास्त्रोक्त चिकित्सा

इस रोगमे लंघन स्वेदन, स्नेहन, विरेचन, बस्ति, तथा कल्वी दीपन चरपरी औषधिया हित कर है। तथा बालु मट्टी की नमकको गरम पोटलोका सेक भी हितकर है। अथवा स्नेह रहित वात नाशक औषधियोंका परिसेक या वाष्प स्वेद देवें पीनेके लिये येचकोल शृत जल देवें। रोगीको पूर्ण विश्रान्ति दे, और नरम बिछौनो पर सुलावें। इस रोगमे हृदय पुष्टिकर वातघ्न, बद्धकोष्ठता नाशक. मूत्रल औषधियां. ही अधिकतर हितकर है। मालिश तथा वस्ति कर्म के लिये बृ० सेंन्धवादि तेलसे बहुत अच्छा फायदा होता है।

तीव्रावस्थामे आम निष्कासनार्थ एरंड स्नेह सोठ क्वाथसे देने से अच्छा फायदा होता है. इस रोगमें निम्न लिखित औषधियोंमे से किसी भी औषधिका प्रयोग किया जा सकता है। शठ्यादि क्वाथ, रास्ना-सप्तक, रास्नादिक्वाथ. महारास्नादि क्वाथ. रसोनादि क्वाथ, दशमूल क्वाथ, सिहनाद गूगल, आमवातारि गूगल, बृ० वातगजांकुश रस. रामबाण बृ० योगराज गूगल, वात गजेन्द्र सिह रस, समीरगज केशरी. कुचलादि वटी, रसोनपिंड, स्वच्छन्द्र भैरव अजमोदादि चूर्ण. अलम्बु-पादि चूर्ण । इनमे से प्रकृत्ति अनुकुल औषधिका प्रयोग करने से शीघ्राति शीघ्र सन्धिक सन्निपात का शमन हो जाता है।

अगर हृद्दौर्बल्य हो तो एतदर्थ समीरपन्नग रस, नारदीप, लक्ष्मी बिलास, मकरध्वज, अर्जुनाभ्रक मुक्ता, आदि औषधियोंका भी संयोग कर सकते है।

इस रोगमे प्रयोग की गई औषधियों के नुसखे।

आम वातारि वटिका।

रस गन्धक लौहार्क तुत्थं टंकण सैन्धवान्।

समभागान् विचूर्ण्याथ चूर्णाद्द्विगुणगुग्गुलू।

गुग्गुलो पादिकंदेयं त्रिफला चूर्ण मुत्तमम् ।
तत्समं चित्र कस्याथ घृतेन वटिकां कुरु ।
खादेन्साप द्वयं चेदं त्रिफला जल यो गतः ।
आमवातारि वटिका पाचिका भेदिका ततः ॥
आमवातंनिहन्त्याशु गुल्म शूलो दराणि च ।
यकृत्प्लीहान मष्ठीलां कामलां पाण्डु मुग्रकम् ॥
हलीमकाम्ल पित्तं चश्वयथु श्लीपदार्बुदौ ।
ग्रन्थि शूलंशिरः शूलं गृध्रसींवात रोगहा ॥
गलगण्डं गण्डमालां क्रमिकुष्ठ विनाशिनी ।
आध्मान विद्रधि हरी चोदर व्याधिनाशिनी ॥
आम वाते ह्यतीवोग्रे दुग्धं मुग्दाश्च वर्जयेत् ॥

रसयोग सागर

भावार्थ—पारा, गन्धक, लोहभस्म, ताम्रभस्म, शु० नीलाथोथा, शु० वृ० सुहागा, और सैन्धव नमक, इन सबको समान भाग लेकर खरलमे डाल कर पीसले वे। फिर चूर्ण से दूना शु० गुग्गुल इस से ½ त्रिफला चूर्ण और इसके बरावर चित्रक मूल चूर्ण मिलाकर घोटकर घृत मिला कर २ मासे की गोलीया बनालेवे। यह बटिका पाचन और भेदन करने वाली है। यह गोली त्रिफला जल मधू के साथ खानेसे आम-वात गुल्मशूल, उदर रोग, यकृत, प्लीहा, अष्ठीला, कामला, और पाण्डु रोग, हलीमक, अल्मपित्त, सूजन, अबुद, ग्रान्थीशूल, शिरः शूल गृध्रसी, सभीवात रोग, गलगन्डु, गण्डमाला, कृमि, कोठ, आफारा, विद्रधि, और पेट सम्बन्धी तमाम बीमारीयो को नष्ट करती है। तीक्ष्ण आम वातमें दूध और मूंगको छोड़ देना चाहिए।

रामबाण रस

पारदामृत लवङ्ग गन्धकं भागयुग्म मरिचेन मिश्रितम् ।
जातिका फलमथाऽर्धभागिकं तिन्तिड़ी फल रसेन मर्दितम् ॥
मर्दयेत्सकल मातपेखरे बीजपूर भव नागरङ्ग जैः ॥

भावार्थ,

शु० पारा १ तो० विष १ तो० लवङ्ग १ तो० शु० गन्धक १ तो० कालीमिर्च २ तो० जायफल आधा तोला इन सबका चूर्ण तैयार करके खरलमे डाल डासरिया स्वरस की और इमली स्वरसे की भावना देकर १-२ रत्तीकी वटी वना लेवे। इसक प्रयोगसे संग्रहणी, आमवात, अग्निमान्द्यादि रोग शीघ्र नष्ट हो जाते है।

मृगश्रृंग भस्म

शराव सम्पुटे दग्धं श्रृंग हरिणजं पिवेत् ।
गव्येन सर्पिषा युक्तं हृच्छूलं नाशयेत् ध्रुवम् ॥

भावार्थ हरिणके सीगका टुकडा करके शराव सम्पुट में रखकर गजपुटमें जलाने से भस्म हो जाती ह। अथवा इसको अर्क क्षीर थूहरके दुधमे मर्दन कर चक्राकार टिकिया वनाकर धूपमे सुखाकर शराव सम्पुटमें वन्दकर गजपुटमे ७-८ वार जलानेसे वहुत अच्छी गुण कारी भस्म तैयार होती है। इसका प्रयोग हरेक प्रकार के शूल मे करने से अच्छा फायदा होता है। गो घृतमे मिलाकर देनेसे हृदय गत शूलको तत्काल दूर कर देती है।

रास्नादि क्वाथ

रास्ना श्यामाकपथ्या मरिचमिसिशिवा विल्वमञ्जाऽश्वगन्धा।
यासछिन्नाऽजमोदा सुमुखमतिविषा वृद्ध दारो बृहत्यौ ॥

शुन्ठीतिक्तायमानी सहचर चविकैरण्ड दार्वीभ कृष्णा।
उरुस्तम्भाम वात कफ पवन रुजं दण्डकांश्चाशु हन्यात् ॥

रास्ना, श्यामा (कालीसर) हरड, काली मिरच, सोफ' आमला वेलगिरि' असगन्ध, दुशालभा, गिलोप, अजवाईन, तुलसी, अतीस, विधायरा मूल; छोटीकन्टकारी वड़ीकटेरी' सोंठ, कुटकी, अजवाईन, झिन्टा मूल· दारूहलदी, गजपीपल, इन सवको समान भाग लेकर जो कूट कर १ तोला काथको १६ तोला जलमें पकाकर ४ तोला जल अवशेप रखे। इस क्काथ के पीनेसे उरुस्तम्भ आमवात, कफरोग वातरोग तथा दण्डकरोग नष्ट हो जात है।

रास्ना सप्तक

राश्नामृतारग्वध देवदारु त्रिकएटकैरएड पुनर्नवाणाम्।
क्वाथंपिवेन्नागर चूर्णिमिश्रं जंघोरु पार्श्वत्रिक पृष्ठ शूली ॥

भावार्थ राश्ना, गिलोय, अमलतास, गुदा, देवदारु, गोखरु, एरण्ड मूल, पुनर्नवा' सर्व समान भाग लेकर क्काथ विधि से क्काथ तैयार कर सोंठके चूर्णका प्रक्षेप देकर पिलानेसे जंघा, ऊरू पार्श्व, पीठका दर्द शान्त हो जाता है।

रुक्ष स्वेदो विधातव्यो वालुका पुटकैस्तथा

इस रोग में गरम वालू की पोट्टली का सेक करने से भी अच्छा फायदा होता है।

शट्यादि क्काथः

शटी शूण्ठ्य भया चोग्रा देवाह्वाति विपामृता।
कपायमामवातस्य पाचनम् रुक्ष भोजनम्।

कचूर, सोठ, हरड़छाल, वच, देवदारू अतीश, गिलोय'। क्काथ वनाकर सेवन करने से आमवात का पाचन हो जाता है।

दूसरा उदाहरण

रोगीनाम, उम्र, जाति, देश, यहांका पता,
दुर्गादेवी २२ गोड भिवानी, गणेशगढ़ रामेश्वर शर्म्मा
इसको इसके घरपर ही यह बीमारी हुई थी इलाज डाक्टरका हो रहा था मुझको भी देखने को बुलाया गया। तब निम्न लिखित लक्षण थे ज्वर १०४ पैरों के घुटनों मे तथा हाथ की सन्धियों में शोथ युक्त तीव्र वेदना थी। खासी श्वास 'टट्टी की कब्जियत पेटपर आध्मान' पेशाब लालरङ्ग का होना था वेदना से बहुत चिल्ला रही थी। रात को निन्द्र बिल्कुल नहीं आती थी। मैंने पिछले विवरण मे जो औषध लिखी है उसी को चालू किया जिससे इसको बहुत आशातीत लाभ हुआ। परन्तु ठीक होने के बाद भी कभी-कभी परिश्रम करने से। या ठण्ढी हवा के लगने से सन्धीस्थान मे पीड़ा हो जाती थी। इस लिये इसको स्वच्छन्द भैरव प्रातः सायं। म० रा रसोन पिण्ड का साधन कराया जिससे यह रुग्णा बिल्कुल स्वस्थ हो गई। इसबीमारी के अनेक रोगी मेरी चिकित्सा मे आये जिन को उपरोक्त औषधियों से अच्छा फायदा हुवा है।

डाक्टरी नुसखे

तीक्ष्ण प्रकोप मे

मोडियम सिलासिलास ३ ड्राम (Sodium Salsalic)
पोटास बाई कार्ब ४ ड्राम (Potas Bi-carb)
मेंग सल्फ ५ ड्राम (Meg Sulph)
टि० नक्षवमिका १॥ ड्राम (Tr. Nuxwomica)
जल ८ औ०

१६ खुराक बनाई जाती हैं। इसमे से १-१ खुराक ३-३ घन्टो से देते हैं। तथा इस रोग मे विक्ष (Vicks) आयोडेक्ष (Iodex) अमृ-

ताञ्जन के मालिस से अच्छा फायदा होता है। वेदनाजल्दी ही कम हो जाती है। इसके अलावा सोडावाई कार्ब को जलमें घोलकर लेप भी किया जाता है। इससे भी वेदना में कमी हो जाती है।

यूनानी चिकित्सा

अकलील मुल्क बाबूना, गुलेरेवन, जो खुम्बाजी, प्रत्येक १-१ तोला पानी मे पीसकर लेप करना चाहिये। इससे सन्धि पीडा शीघ्र ही शान्त हो जाती है।

खाने की दवा

हर्रे छाल, निशोत, शाहतरा, कासनी, १ तो०, गुलाबफूल १ तो०, इन सबको अधकचरा करके ꠸१॥ पानी में उबाल कर आधा पानी शेष रखे। इसको दिनमें ३ बार पिलाना चाहिये। यदि दस्त अधिक हो तो प्रथम २ औपधियां निकाल देनी चाहिये।

२ सपिस्तान ७ दाना, उन्नाब १० दाना, कासनी बीज १ तो०वनप्सा इनको अधकचरा कर के ꠸। पानी मे भिगो कर रखे घन्टे बाद छान कर मिश्री मिला कर दिन में ३ बार पीना चाहिये। अगर कब्ज हो तो तुरेजबीन १ तो० अमलतास गूदा १ तोला और मिलादेना चाहिये।

साध्या साध्य ज्वर लक्षण

बलवत्स्वल्प दोपेषु ज्वरःसाध्योऽनुपद्रवः

जो बलवान् रोगी के अल्प दोपों से उत्पन्न हुआ, उपद्रव रहित ज्वर हो तो साध्य होता है।

ज्वरो पद्रवा

श्वासो मूर्च्छाऽरुचिश्छर्दी तृष्णातीसार विड्ग्रहाः ।
हिक्का कासाश्च दाहश्च ज्वरस्योपद्रवादश ॥

श्वास, मूर्च्छा, अरूचि, बमन, प्यास, अतिसार, विष्टम्भ, हिचकी, खांसी शरीर में दाह, ये ज्वर मात्र के १० उपद्रव है। इसलिये चिकित्सक को चाहिये कि जहां तक हो हरेक सन्निपात की चिकित्सा करते समय उपद्रवों की तरफ अच्छी प्रकार से सचेष्ट रहे। जो चिकित्सक इन उपद्रवों से रोगी को बचालेता है, वह भयंकर से भयकर सन्निपात को जीतने मे समर्थ होता है। उपद्रवों को देखकर वैद्यको भय भीत नहीं होना चाहिये। जहाँ तक हो चिकित्सा करनी चाहिये, क्यों कि रोग शान्त होने पर सर्व उपद्रव स्वतः ही मिट जाते है। कुशल चिकित्सक प्रथम उपद्रवों को ही जीतते है, उपद्रवो मे जो अधिक दुःख दायक होता है उसकी प्रथम चिकित्सा करते है। यदि प्रधान व्याधि बलवान हो और उपद्रव बल हीन न हो तो वहा पर प्रथम प्रधान व्याधि की ही चिकित्सा करनी चाहिये। अथवा विरोध रहित दोनो बाते हों तो दोनो की एक साथ ही चिकित्सा करनी चाहिये। ऐसा शास्त्र का नियम है।

१० उपद्रवाणा पृथक-पृथक चिकित्सा

यथा सन्निपात ज्वरे श्वास चिकित्सा

सिंहव्याघ्री ताम्रमूली पटोली शृंगी पद्मा पुष्करं रोहिणीच शाकं
शय्याः शैलमल्ल्याश्च बीजं श्वासं हन्यात्स-न्निपातं दशांग ॥

भावार्थ कंटकारी, बड़ी कंटकारी, दुरालभा, पटोलपत्र, काकड़ा सींगी, पद्माख, पोकर मूल, कुटकी, कपूर, इन्द्रजो

इन औषधियों का प्रयोग सन्निपातोद्भव श्वास रोगको नष्ट करता है। इस रोगमे जितनी भी औषधियां है वे सब प्रथक २ अथवा मिलित योग उपद्रव जन्य श्वासमे अच्छा फायदा करता है।

अथवा द्वात्रिंशक्वाथ पिपल्यादि चूर्णके प्रयोगसे तथा अपने उपलोंकी अग्निमे लोहेके दरांतको गरम करके उसके भागसे पसुलीमे दाग देवें तो श्वास में आराम हो जाता है।

ज्वरे मूर्च्छा चिकित्सा

आर्द्रकस्य रसैर्नस्य मूर्च्छायामाचरेन्नरः।
अञ्जनञ्चप्रयुञ्जीत मधुसिन्धु शिलोषणैं॥
शीताम्भसाऽक्षिसेकः सुरभिधूपः सुगन्धि पुष्पञ्च॥
मदुताल वृन्त वातः कदली दल स्पर्शः

मूर्च्छा रूपी उपद्रव मे रोगी को अदरख रसका नस्य (सूघनी) देना चाहिये। अथवा सैन्धवनमक मधु मेनशिल कालीमिर्च इन सबको घिसकर नेत्रोमे अञ्जन लगाना चाहिये। या ठन्ढे जलसे आंखों को भिगोना चाहिये। सुगन्धित धूप सुगन्धित पुष्पों का उपयोग करें। नरम ताड़ के पत्तोकी हवा करे, अथवा कोमल केलों के पत्तोका स्पर्श करावे।

सन्निपात ज्वरेऽरुचि चिकित्सा

अरुचौतु शृंगवेर रजरसकैःसोष्ठौ ससिन्धुजैः कवलः
सिन्धुत्थ मातुलूंगी फल केशर धारणं वक्त्रः

अगर सन्निपात ज्वरमें अरुची रूपी उपद्रव होवे तो अदरख के रसको गरम करके उसमे सैन्धव, डालकर कुल्ला करावे या मुखमें रक्खे अथवा विजोरे निम्बूकी केशर को सैन्धवके साथ मुखमें रक्खे।

वमन चिकित्सा

गिलोयका क्वाथ बनाकर ठन्ढा करके मधुमिलाकर पीनेसे वमन शान्त हो जाती है। मक्षिका विट्को और मलिया गिरि चन्दनको शहत या मिश्री के साथ चाटनेसे वमन शान्त हो जाती है।

ज्वरमें तृषा चिकित्सा

विजोरानिम्बू, जम्भीरीनिम्बू, अनार, वेर, और चूका इनको एकत्र पीसकर मुंहमें रखने से प्यास शान्त हो जाती है। मुखमें चादी की बनी हुई गोली चूसने से भी तृपा शांत हो जाती है। शीतल दूधमे मधुमिलाकर गले तक पोकर वमन करदेवे। इस तरह कईवार करनेसे तृषाशांत हो जाती है। बड़की कोंपल, खील मधुमें चाटनेसे प्यास शात हो जाती है। इस प्रकार अन्य भी जैसे आलूवुखारा, कपूर काचरी, लवङ्गमिश्री जल, बड़ी इलायची, चुहारेकी गुट्ठी, आदि के प्रयोगसे भयंकर प्यास शात हो जाती है।

ज्वरेऽतीसार चिकित्सा

लंघनमेक मुक्त्वा न चान्य दस्तीह भेषजं बलिनः।
समुदीर्णं दोपं चयं समयति तत्पाचयेदपि च ॥

वलवान् ज्वरमें अतिसार वाले मनुष्यको केवल लंघन के सिवाय कोई अन्य औषधि नही है, क्योंकि लंघन ही एक ऐसा कर्म है जोबढे हुये दोप को शमन करता है और पाचन कर देता है। औषध यथा गिलोये, इन्द्रजो, नागर मोथ, चिरायता, नीमछाल अतीस और सोंठ, इनका क्वाथ वनाकर पीनेसे ज्वरातिसार शिघ्र दूर हो जाता है।

अन्यः—सोठ, गिलोय, इन्द्रजो नागरमोथ, इनका क्काथ भी अतिसारघ्न है तथा पाढ़ल, गिलोय, पितपापड़ा नागरमोथ, सोंठ चिरायता, ईन्द्रजो, इनका क्काथ अतिसारको वल पूर्वक नष्ट करता है। अथवा नागरमोथा स्वरस, पु० दाड़िमस्वरस, कुटजादि क्काथ वेलगिरि, जायफल, अतीस, आम्रबीज सोंठ इनका घीसा जल भी अतिसार को नष्ट करता है।

ज्वरे मलवन्ध चिकित्सा

ज्वरमें मलावरोध हो गया हो तो वातानुलोमन या वात नाशक क्रिया करनी चाहिये। गुदामें तीक्ष्ण औपधियों से वनाई हुई फलवर्ती के द्वारा मलको निकाले अथवा ग्लेसरीनकी वत्ती या मधु गरम जलमें मिलाकर वस्ती प्रयोग करे। अगर जीर्ण ज्वरमें मल वंध हो तो आरग्वधादि क्काथ का सेवन करानेसे मलवध खुल जाता है।

ज्वरे हिक्का चिकित्सा

सैन्धव नमकका अत्यन्त वारीक चूर्ण जलमें मिलाकर नस्य देने से हिचकी दूर हो जाती है। या चिनी और सोंठका नस्य देने से हिचकी दूर हो जाती है। अथवा हींग या काली मिर्च की धूआं लगानेसे भी हिचकी दूर हो जाती है। खानेकी दवावोंमें पिप्पल्यादिलौह, श्वास कुठार पिच्छभस्म, जहर मोहरा खताई मुक्तादि चूर्णादिकका प्रयोग किया जाता है।

ज्वरे काश चिकित्सा

ज्वरमें खांसीका उपद्रव हो गया हो तो पीपल, पीपला मूल, मिरच, इन्द्रजो, पित्तपापडा, सोंठ, इनका चूर्ण शहतमें मिलाकर चटावे अथवा अडूसेका स्वरस मधु मिश्रित करके चटावे या अष्टाङ्गावलेह, चन्द्रामृत्त शृंग्यादि, वासावलेह, द्राक्षारिष्ट आदिका प्रयोग करे।

ज्वरे दाह चिकित्सा

ज्वरमें दाह उत्पन्न हो गया हो तो शतधौत घृतका मालिस करें, अथवा यव सक्तू, वेर, आमला, इनका धान्याम्ल कांजीमें पीसकर लेप करे अथवा कांजीसे कपड़ा भिगोकर शरीरपर उढ़ावे, तथा चन्दन घिस कर लगावे। फूलप्रियङ्गु लोधो सुगन्ध वाला खश, नाग केशर, मोथा, पीलाचन्दन, इनका प्रलेप करना चाहिये। दाहवाले पुरुषको कमल का जल पीलावे, मिश्रीका शर्वत पिलावे, दूध मिश्री मिलाकर पिलावे, ईखका रस पिलावे। पित्तघ्न चिकित्सा करनी चाहिये। अथवा चन्दनादि क्राथ, सफेद चन्दन, पित्तपापड़ा, सुगन्ध वाला खश, नागर मोथा, कमल गट्टा, कमलकी नाल, सोंफ धनियां, पद्माख, आमला, इनका क्काथ विधिसे क्वाथ वनाकर मिश्री मिलाकर पिलानेसे उग्र दाह शात हो जाता है।

। श्री ।

होमियो पैथिक चिकित्सा १

नवीनाऽवस्थामे एको नाइट, आर्निका, आर्सनिक, ब्रायोनिया कल्केरिया, रसटक्स सल्फर सेवाडेना।

पुरानी अवस्थामे एमान फास, फास्को रस' कल्केरियाकाव कास्टिकम, कालोसिन्थ, गुपेकम, लाइकोपोडियम, मेगनम, नैट्रम्यूर सैवाइना, साइलिसिया, सलफर, आदिदवाईया दी जाती है पूरा विवरण हौमियो पैथिक मेटग्यामेडिकामें देखिये।

पथ्या पथ्य

इस वीमारीमे पथ्यके समय एक वर्षका पुराना चावल गेहू दूध, घृत, जो, वाजरा, जुवार, सामक, पुरानी शराव, एरण्ड तैल, गरम-जल, गोमूत्र, कुलथो यूप, मटर, चनेकायूप, शाकोमे सूखी मूली

का यूष, सोंठ, कालीमिर्च पीपल, अजमाईन, हल्दी, हींग, कलोंजी सैन्धव नमक, हल्दी, कांजी, वेगुन, परवल, वथुवा, करेला, घृत कुमारी, टमाटर, सोयापत्ती, सहजन कीफली अमलतास के फूल अदरख, मट्ठा, लशुन, आदि देने चाहिये फलोंमें अनार, वेदाना, तालफल, आम, फालसा अंगूर आदि फायदा करते है मछली, मांस न खाना ही अच्छा है।

अपथ्य

दही, मछली, गुड़, पोईका शाक, उड़द की पिट्ठीके वने पदार्थ मावा, मूग' सेमकी फली, केला, शीतलजल, पूर्व दिशाकी वायु मल, मूत्रादिक अवरोध, असमय भोजन, जागरण, मैथुन आदिक अपथ्य है तीव्र आक्रमण के समय स्नान करना, भोजन करना हानि कारक है।

लक्षण:—अन्तक सन्निपात ज्वर २

यस्मिल्लक्षणमेतदस्ति सकलैर्दोषैरुदीते ज्वरेऽ
जस्त्रं मूर्द्ध विधूननं सकसनं सर्वांग पीड़ाधिका।
हिक्काश्वासकदाहमोह सहिता देहेऽति सन्तप्तता
वैकल्यश्च वृथावचांसि मुनिभिः संकीर्तितः सोऽन्तकः॥

भावार्थ—जिस सन्निपात ज्वरमें रोगी शिरको निरन्तर हिलाता रहे तथा खांसा, सर्वांगमे अन्यन्त पीडा हो, हिचकी श्वास, दाह, मोह, सन्ताप'विकलता, प्रलाप असम्वध भापण करे उसको अन्तक सन्निपात कहते है। इसकी अवधि १० दिनकी है यह सन्निपात असाध्य होता है।

अन्तक ज्वर चिकित्सा।

इस सन्निपात ज्वरमे लंघनादि नियमोंको, तथा ज्वरनाशक औषधियोंको छोड़कर ज्वरको हरनेवाले प्राणोंके रक्षक, मृत्युंजय (शंकर-

भगवान)का निरतंर चित्तमें ध्यान करना चाहिये, क्योंकि इसरोगमें गगाजलही औषधि है और भगवान विष्णु ही वैद्य है । इनके सिवाय दूसरा कोई इलाज नहीं है ।

लक्षण—रुग्दाह सन्निपात ज्वर

दाहाधिको भवति यत्र तृषातृषा च
श्वास प्रलाप विरुचि भ्रममोह पीड़ा ॥
मन्याहनु व्यथनकंठ रुजः श्रमश्च
रूग्दाह संपज्ञ उदितस्त्रिभवो ज्वरोऽयम् ॥

भावार्थ—जिस सन्निपातमें दाह अधिकहो, प्यास अधिक लगे, प्रलाप हो अरुचि हो, भ्रमहो, श्वासहो, वेहोशीहो, पीडा हो, ग्रीवा और ठोड़ीमे अत्यन्त वेदनाहो, कंठमें पीडा शरीरमे शिथिलताहो, उसको रुग्दाह सन्निपात कहतेहै इसकी मियाद २० दिवसकी है ।

चिकित्सा ।

(१) इसरोग से आक्रान्त रोगिको तृषा शान्तिके लिये षडङ्गपानीय जल पीनेको देना चाहिये । (२) धनिये को रातको जलमें भिगोकर फिर सुवह उसमें मिश्री मिलाकर रोगी को पिलावे तो अन्तर्दाह और पित्तज्वर शान्त हो जाताहै । (३) अथवा पथ्यावलेह चाटनेको देवे ।

पथ्यावलेह—पथ्यां तैलघृतक्षौद्रै लिंद्याद्दाहविनाशिनीम् ।

(४) वेरी के पत्तेको दहीमे पीसकर लेपकरे । (५) कपूर, लालचन्दन, नीमकेपत्ता इनको मठ्ठे में पीसकर शरीरपर लेपकरे । (६) इस रोगीको सीधा सुलाकर उसकी नाभी स्थानपर तावा या कासी का वर्तन रखकर, फिर उसमें ठन्डे जलकी धारा छोडेतो तत्काल दाह शान्त हो जाताहै । (७) शत धौत घृतको शरीरमे मालिसकरे, (८)कमल फूलों की माला पहनावे, (९) ठन्डे जलाशयमे स्नान करावे । (१०)

कपड़े को कांजी में भिजोकर या तक्रमें भिजोकर अथवा ओटाकर ठन्ढ़ा करके शरीर पर उढ़ावे, इससे भी दाह शान्त होत है।

पथ्य—रोगी को लाज सक्तू मधु, या मिश्री मिलाकर देवे। यह तर्पण है।

अन्योपायाः

पुस्त्स्त्रीस्तन हस्तास्य प्रवृत्तोशीरवारिणी धारा गृहे स्वप्यात्

जिस घरमें ठण्डे जलके फुहारे चल रहे हो, उसके आसपास कमल फूल खिल रहे हों जिस घरमें कमलके कोमल पत्तोंकी शय्या बनी हुई हो उसमें शयन करे अथवा जिस स्त्रीके शरीरमें चन्दनादि कलेप हो रहाहो ऐसी स्त्रीके सेवनसे भी दाह शीघ्रही शान्त हो जाताहै। अथवा मोतियोंकी मालासे अलंकृत और चन्दनादिकसे शीतलकी हुई, सुगन्धित पुष्पोंसे और वस्त्रोंसे विभूषित पुष्ट कुचोंवाली तरुण स्त्रीके आलिगनसे तत्काल दाह नष्ट हो जाता है। आलिगन करनेसे अगर उत्तेजना पैदा हो जाय तो स्त्रीको दूर कर देवे और हल्का रुचिकर पथ्य देवे।

विशेष विवरण

दाह रोग ७ प्रकारका है जिसमे सबसे प्रथम पित्तज दाहके विषयमें यही कथन है कि यह बीमारी गर्मी रूपवाली होती है। इसकी चिकित्सा में भी पित्तज्वरके सामान ही की जाती है। इसके जो ७ भेद बतलाये है वे यह है जैसे पित्तज दाह, रक्तजन्य दाह, रक्तपूर्णकोष्टजदाह मद्यजदाह, तृष्णानिरोधजदाह, धातुक्षयजदाह, मर्माभिघातजदाह। इनकी पहिचान भी अलग अलग हैं तथा चिकित्सा भी रोगके कारणानुसार ही की जाती है। लेकिन जिसके शरीरके भीतर दाह हो, और ऊपरसे शरीर ठण्डा हो गया हो ऐसा दाह रोगी 'असाध्य होता है।

उदाहरण

रोगीनाम	जाति	उम्र	देशका पता	यहा का पता
मदनलालशाह,	अग्र०	१८	कृष्ण	६ नं० जगमोहन मल्लिक लेन

इसको प्रथम १०४ डिग्री ज्वर हुआ उसी रोज प्यास बहुत लगती थी शरीरमें भीतर और बाहर बहुत दाह मालूम देता था।

श्वास जल्दी-जल्दी लेता था, प्रलाप करता था, खानेमें बिल्कुल अरुचि थी। फलरस, बार्ली इत्यादि भी नहीं खाना चाहता था कभी २ हिचकी भी चलती थी। गर्दनमे तथा ठोडीमे दर्द था, प्यास इतनी अधिक थी कि १ मिनट भी जलको छोड़ना नही चाहता था। इसको जब मैंने देखा तो पित्तज्वरका अनुभव हुआ क्योंकि पित्त ज्वरके समान इसके ज्वरके लक्षण थे। रक्त परीक्षा भी कराई गई, लेकिन रिपोर्टमें कुछ नही मिला। तब मैंने पित्तज्वर ज्वर चिकित्सा आरम्भ की।

प्रातः सायं		मध्याह्न—रात्रौ
ज्वर संहार	३ रत्ती	व्रजक्षार—
प्रवाल	१	मिश्री जलसे
अमृतासत्व	२	

चन्दनादि क्वाथमधूसे   षडंग-पानीय पीनेके लिये दिया

पथ्यमें जलबार्ली छीना जल, शर्बत बनप्सा, अनारका रस, मोसम्बी का रस दिया गया। इसको इसी क्रमपर् चार रोज तक चलाया, लेकिन किसी प्रकारका भी फायदा नही हुआ। तब दवा परिवर्तन करना पड़ा।

प्रातः	म० रा०	सायं
महापित्तान्तक रस	संशमनी वटी	चन्द्रकला रस
द्राक्षादि क्वाथ मधूसे	पटोलपत्र स्वरस मधूसे	भूनिम्बादि क्वाथसे,

और खानपानमें चालू व्यवस्था ही रखी।

इस प्रयोगसे इसकी तृषा भी शान्त हो गई तथा दाह भी शान्त हो गया इस रोगीको इस बीमारीमें २० दिन लगे थे ज्वर उतरने पर पथ्यमें रसगुल्ला प्रथम वार दिया गया, बादमें अन्य परवलका भर्त्ता आदि पदार्थ दिये गये।

रुग्दाह सन्निपातमें प्रयुक्त औषधियोंके निर्माणयोग।

(१) षडङ्गपानीय

मुस्त पर्पटकोशीरचन्दनोदीच्यनागरैः ॥
शृतशीतं जलं दद्यात् पिपासा ज्वर शान्तये ॥
यदप्सु शृतशीतासु षडङ्गादि प्रयुज्यते ॥
कर्षमात्रं ततो द्रव्यं साधयेत् प्रास्थिकेऽम्भसि
अर्धशृतं प्रयोक्तव्यं पाने पेयादि संविधौ ॥

भावार्थ—

नागरमोथा, पित्तपापड़ा, खस, लालचन्दन, गन्धवाला, सोंठ सब मिलाकर २ तोला जल २५६ मे डालकर अग्नि पर पाक करे। जब जल आधा रह जाय उतार कर छान ले और ठण्डा होने पर रोगीकी प्यास बुझानेके लिये थोडा-थोडा करके पिलावे। इससे प्यास तथा ज्वर दोनों शान्त हो जाते है।

(२) चन्दनादि क्वाथ

पटीरपर्पटकोशीरनीरनीरदनीरजैः
मृणालमिसिधान्याकपद्मकामलकैः कृतैः।
अर्द्धशिष्टः सिताशीतः पीतः क्षौद्र
समन्वितः क्वाथो व्यपोहयेद्दाहं तृणांचपरमोल्वणम् ॥

भावार्थ—सफेदचन्दन, पित्तपापडा, सुगन्धवाला, खस नागरमोथा, कमलगट्टा, कमलदंडी, सौंफ, धनियाँ, पद्माख, आमला, इनको समान

भाग लेकर जो कूट करके २ तोला काथ्य द्रव्यको ३२ तोला जलमें डालकर पकावे, आधा शेष रखे, शीतल होनेपर मिश्री या सहद मिलाकर पीनेसे भयंकर दाह शान्त हो जाता है।

(३) भूनिम्बादि कषाय

ब्राह्मी द्राक्षा जल धर वचोशीर शम्याकतिक्ता
पथ्याधात् कलितरुवला निम्बकोशातकीभिः।
भूनिम्बाद्यो भवति सहितः पञ्चमूली द्वयेन।
पीतः क्वाथः सकलपवन व्याधि रुग्दाह हन्ता॥

भावार्थ—ब्राह्मी, मुनकादाख, नागरमोथ, वच, खस, आरग्वध, कुटकी, हर्रै छाल, आमला, बेहडा, खरेटीमूल, निम्बछाल, कडवीतुम्बी, बृ० पंचमूल, लघुपंचमूल, यह भूनिम्बादि क्वाथ पीनेसे तमाम बात व्याधि और रुग्दाह सन्निपात मिट जाता है।

अन्यदपि—

(४) जलधर मलयज नागर सवाल कोशीर पर्पटैः क्वथितम्।
यः पिवति पयः शीतं शाम्यति रुग्दाहकस्तस्य॥

भावार्थ—नागरमोथा' सफेदचन्दन, सोंठ; सुगन्धवाला, खस; पित्त-पापड़ा इनको दूधके साथमे औटा शीतल करके पीने से रुग्दाह सन्निपात नष्ट हो जाता है।

(५) चन्द्र कलारसः

प्रत्येकं तोल मादाय सूतं ताम्रं तथाभ्रकम्।
द्विगुणं गन्धकश्चैव कृत्वा कज्जलिकां शुभाम्॥
मुस्ता दाडिम तोयेन केतकी मूलवारिणा।
सहदेव्या कुमार्याश्च पर्पटो शीर मागधि॥

श्री खण्डं मारिचा चैषां समानं चूर्णकं क्षिपेत् ।
द्राक्षाफलकषायेण सप्तधा परिभावयेत् ॥
छाया शुष्कं विधायाथ वटी कार्या चणोपमा ।
महाचद्रकला नाम्ना रसेन्द्रोऽयं निरुपितः॥
अम्लपित्तः प्रशमनः प्रदर ध्वंसकारकः ।
अन्तर्वाह्य महादाह विध्वंसन घना घनः ॥
ग्रीष्मकाले शरत्काले विशेषेण प्रशस्यते ।
रस मूर्च्छा रक्तपित्त पित्तज्वर दवानलः ॥
मूत्र कृच्छाणि सर्वाणि प्रमेहानपि दुस्तरान् ।
हरत्येष रसो नूनं देहे चद्रकलाप्रदः ॥

भावार्थ—शु०पारा, ताम्रभस्म. ये प्रत्येक १-१ तोला शु० गन्धकर तोला इनको कज्जलि वनाकर फिर नागरमोथा, अनार, केतकी जड, सहदेवी, घीकुआंर, इनकेरसों में १-१ दिन मर्दनकरे बाद में पित्तपापड़ा, खस, पीपल, चन्दन अनन्तमूल; इनको १-१ तोला लेकर कूट, कपडछान चूर्ण करके मिलादेवे, और द्राक्षाके क्राथकी, भावना देकर चणक प्रमाण गोलिया बनाकर छायामें सुखाकर रख छोडे। इसमे से अग्निवल देखकर १ से ३ गोली तक पित्तहरानुपानके साथ देने से अम्लपित्त, प्रदर बाहर और भीतर का दाह, रसजन्य मूर्च्छा, रक्तपित्त' पित्त ज्वर, समस्त मूत्र कृच्छ, और प्रमेह सभी नष्ट हो जाते है।

(६) महा पित्तान्तक रसः

जातिकोष फले मांसी कर्प तालीश पत्रकम् ।
मृतं स्वर्ण मृतलोहं अभ्रं दिव्यं समांशकम्।

सर्वं तुल्यं मृतं तारं समं निष्पिष्य वारिणा।
द्विगुञ्जामावटी कार्या पित्तरोग विनाशिनी ॥
कोष्टाश्रितश्च यत्पित्तं शाखाश्रित मथापिवा।
शूलश्चैवाम्लपित्तश्च पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥
दुर्नामं भ्रान्ति वान्तिश्च क्षिप्रमेव विनाशयेत्।
महापित्तान्तकोनाम सर्व पित्त विनाशकः ॥

भावार्थ—जावित्री, जायफल, जटामांसी, कूठ; तालीसपत्र, स्वर्ण भस्म लौहभस्म; अभ्रकभस्म; प्रत्येक १-१ तोला रजतभस्म ८ तोला इन सबको साथमें जलसे घोटकर २ रत्तीकी गोली बनावे। यह रस तमामपित्तरोगों को शीघ्र ही नष्ट करता है।

(७) संशमनी वटी

सिद्धयोग संग्रह (रचियता आचार्य यादव त्रीविक्रम जी) द्वारा निर्दिष्ट।

चित्त विभ्रम सन्निपात

लक्षण

यदि कथमपि पुंसां जायते काय पीड़ा,
भ्रम मद परितापो मोह वैकल्य भावः।
विकल नयन हासो गीत नृत्य प्रलापो ऽभिदधति
तम साध्यं केऽपि चित्त भ्रमाख्यम्।

भावार्थ—जिस सन्निपातमें मानसिक भ्रम हो वेदना, नाचना, गाना, मोह, संताप वेहोशी, दाह घवराहट और नेत्रोंमें व्याकुलतादि लक्षण दिखलाई दें उसको चित्त विभ्रम सन्निपात कहते है। इसकी अवधि २४ दिवस की है।

इस रोगमें वायु प्रधान रहता है। अतः शास्त्रमें इसकी चिकित्सा के विषयमें निम्न लिखित आदेश दिया है।

चिकित्सा

दीपनं पाचनं यस्मात् यद्वायोरनु लोमनम्,
वात हन्नाति कफ कृन्तत्प्रयुञ्जीत भेषजम्।
वात रोगाधिकारोक्तान् घृत तैल रसांस्तथा
रसायनानि च प्राज्ञो भिषगत्र प्रयोजयेत्।

इस रोगमें जो औषध दीपन पाचन एवं वायुका अनुलोमन तथा नाश करती हो और कफको भी बढ़ाने वाली न हो ऐसी का प्रयोग करना चाहिये तथा वात रोगाधिकारोक्त तैल, घृत, रस एवं रसायनोंको काममें लेना चाहिये।

चित्त विभ्रम सन्निपातके रोगीको सान्त्वना देनेवाले बचनोंसे, प्यारसे, तर्पणसे, चित्तमें उत्साह भरनेसे, प्रसन्नता द्वारा, आश्वासन श्रद्धा, एवं शुश्रुषा द्वारा चिकित्सा करो।

उदाहरण—

रोगी नाम	उम्र	जाति	यहांका पता	देश सुजानगढ़
सुरेन्द्रनाथ	४०	जैन	२० न० शोभाराम बैशाषष्ट्रीट	

इसको यह बीमारी इसके घरपर ही हुई थी ४ रोज तक डाक्टरी इलाज होता रहा लेकिन कुछ फायदा नही हुवा, तब वैद्य भगवानदत्त का इलाज चालू हुआ, मुझे भीउन्होंने राय लेनेके लिये बुलाया। मैंने जब देखा तथा पुराने हालत भी पूछे उस समय निम्न लक्षण थे ज्वर प्रात १०० सायं १०२ कुछ खासी मानसिक उद्वेग बहुत था कभी पूजा करता था कभी रोता था, कभी हंसता था, कभी गालिया देता था,

कभी दवा खा लेता था, कभी नही खाताथा, किसी समय सोजाता था किसी समय रात दिन बैठा ही रहता था, बीचमें बोलने वाले पर विगड़ जाता था। घबराहट बहुत थी, नेत्रों में व्याकुलता थी। इस तरह इस मे चित्त विभ्रम सन्निपात के पूरे लक्षण थे, तब मैंने निम्न लिखित औषध प्रारम्भ करनेकी सलाह दी मैंने यह व्यवस्था प्रारम्भ की

३-११-४४ प्रातः	सायं	केवल जलवाली
ब्राह्मी वटी	बृ०वातचिन्तामणि	मिश्रिशृतजलदिया
द्राक्षादिक्वाथसे	ब्राह्मादि क्वाथसे	
मध्यान्ह रात्रि	वज्रक्षार	
	आयामकाञ्जिकसे	

ता० ३-से ७-११-४४ तक यही दवा चालू रही। हालतमें भी कोई परिवर्तन नही हुआ नींद कभी आ जाती थी कभी नही आती थी। ७ ता०को मुझे फिर बुलाकर दिखलाया। रोगी ने मेरे साथ घन्टे भर तरह २ की पागल की तरह बात की। मैंने भी उसकी हां में हा मिलाई और सान्त्वना भी दी जिससे उसके दिलमें कुछ धैर्य्य भी हुआ।

दवा फिर कल वाली ही चालू रखी। रोगी को मेरे साथ बात चीत करने से बहुत सन्तोप हुवा इसलिये वह मेरे को प्रातः और सायं दोनों समय देखने के लिये बुलाने लग गया। मै दोनों समय उसके घर जाकर पूरी सान्त्वना देता था। एक दिन रोगी ने कहा कि मेरा चित्त यहा पर नहीं लगता है, इसलिये मै पारसनाथके बगीचेमें जाकर वहां ही रहना चाहता हूं। घर वालोंने तथा मैंने उसको बहुत समझाया लेकिन वह माना नही। और दूसरे रोजही प्रातः काल बगीचेमें चला गया। दोपहरमें मेरेको बुलाकर फिर दिखलाया, और कहा कि मेरी मोसम्बी और डाव खाने की इच्छा है। मैंने भी आज्ञा दे दी उसने उसी समय मोसम्बी मंगवाई और उसका रस लिया। ज्वर भी उस समय उसको ९९ में था चित्त बहुत खुश था। बहुत शान्ति से बाते

करता था। अस्तु मैं चालू दवाई के लिये, कह कर चला आया। दूसरे रोज में फिर देखने के लिये गया तब इनके स्वजनो के द्वारा खबर मिली कि रातको इनको नींद नहीं आई। और रातको ३बजे ही मन्दिर में जाकर पूजा करने लगगये जो सुबह ६ बजे मन्दिर मे पूजा खत्म करके आये। मैंने रोगी को देखा और बातचीत भी की तो अनुमान हुआ कि कल से तबियत बहुत ठीक है। मैने घर वालों को भी कह दिया कि पूजा करने से इनकी तबियत बहुत ठीक है। अगर इनकी इच्छा हो तो रोज पूजा करने दीजिये। दवा और पथ्य जो चल रहा है वही चलने दीजिये। इसी तरह यह रोगी अपने नित्य नियम का साधन करता हुआ २४ रोजमें बिल्कुल स्वस्थ हो गया और पथ्य दे दिया गया।

प्रयुक्त औषधियो के निर्माण योग, (ब्राह्मी वटी; बृ० वातचिन्ता मणि के योग) आगे प्रकरणमे लिखे जायगें। केवल काथों के योग यहा दिये जा रहे है।

(१) द्राक्षादिक्वाथ

मृद्वीकाऽमरदारु मत्स्य शकलामुस्ताऽऽमलक्योऽमृता
पथ्यारेवत रामसेनक रजो राजी फलैः संयुता॥
हन्युश्चित्त रुजोऽथ दद्दुर दला पाठा पटोली पयः
पथ्या पर्पट राज वृक्ष कटुकाशम्बूक पुष्प्य श्रृताः

भावार्थ— दाख, देवदारु, कुटकी, नागरमोथा, आमला, गिलोय, हरड़छाल, अमलतास, चिरायता, पित्तपापड़ा, पटोलपत्र, । यह मृद्विकादि क्वाथ-क्वाथविधिसे तैयार करके अनुपान रूपमें देने से चित्त विभ्रम सन्निपात में अच्छा फायदा होता है।

(२) ब्राह्मी, पाठा, पटोलपत्र, सुगन्ध वाला, हरड़ छाल, पित्त पापड़ा, अमलतास, कुटकी, शंखाहुली इनका क्वाथ बनाकर देने से चित्त-भ्रम सन्निपात नष्ट हो जाता है।

(३) यदि अतिसार हो तो उपरोक्त क्वाथ नहीं देना चाहिये परन्तु ब्राह्मी, वच, कूठ, शंखाहुलीका क्वाथ वातहर औषधियों के अनुपानसे देना चाहिये। (४) इस रोगमें कपूरकाचरी, सुगन्धवाला, नागर मोथा, महुवा, सफेद चन्दन, देवदारु, शहद, गूगल, अगर, नखी, खस, इलायची, इन सबकी धूप बनाकर भी दी जाती है। इस योगसे भी यह बिमारी मिट जाती है। तथा यह धूप ग्रह दोष को नष्टकर लक्ष्मी की प्राप्ती कराती है और सौभाग्य को बढ़ाती है। अगर इसमें चेतना शक्ति बिल्कुल ही नष्ट हो गई हो तो प्रचेतना गुटिका, योग रत्नाकरमें हैं उसका प्रयोग करे।

(५) इसके अतिरिक्त इस रोगमें कस्तूरी भैरव, रसराज, योगेन्द्ररस, बृ० वात कुलान्तक रस, लक्ष्मी नारायण रस, कस्तूर्य्यादि वटी, गोदन्ती आदि औषधियों मे से दोषका बलाबल विचार कर प्रयुक्त करे।

कस्तूर्य्यादि वटी—कस्तूरी, केशर, लवङ्ग, जायफल, पीपल इनको सम भाग लेकर खरलमे डालकर अदरख की २ भावना देकर २ रत्ती की गोलियां बना लेवे। इसको उचित अनुपानके साथ देनेसेवातोल्वण सन्निपात तथा चित्तभ्रमशान्त हो जाता है। अन्य रसोंका वर्णन आगे के प्रकरण मे किया जायगा।

लक्षण शीताङ्ग सन्निपात

हिम सदृश शरीरो वेपथु श्वासहिक्का
शिथलित सकलाङ्गो स्विन्ननादोग्र तापः।

क्लमथु दवथु कासच्छर्द्यतीसार युक्त
त्स्वरित मरण हेतुः शीत गात्रः प्रभावात् ॥

भावार्थ—जिस रोगमें शरीर वर्फके समान शीतल होजाय, कफ युक्त श्वास खासी आवे, हिक्का और मोह हो; कम्प तृथा प्रलाप हो; अंग सब शिथिलपड़ जाय, आवाज धीमीपड़ जाय,भीतरमें पीड़ामालुमदे कमजोरी हो, कफ वात की वृद्धि हों, दाह एवं मानसिक व्यथा हो वमन तथा अतीसार भी हो ऐसे लक्षण जिस रोगमें एक साथ हो जाये तो उसको शीताङ्ग सन्निपात कहते हैं। यह रोग दो प्रकार से होता है, एक स्वतन्त्ररूपसे, दूसरा उपद्रव रूपसे चिकित्सा दोनोंकी एकही तरह से की जाती है। स्वतन्त्र रुपसे जो होता है। उसकी अवधि १५ दिवसकी शास्त्रकारने वतलायी है, तथा उसको असाध्य भी माना है। लेकिन उपद्रव रूपके लिये यह अवधि नहीं है। वहां पर औषधि प्रभाव से अगर हृदय नाडीकी गति अच्छी हालतमें रहे तो शीघ्र ही फायदा हो जाता है प्रारम्भिक शीताङ्ग के रोगी देखनेमें वहुत कम मिलते है। उपद्रव रूप से वहुत से रोगी देखनेको मिले है। जिनका यहां उदाहरण देने की आवश्यक्ता नहीं। क्योकि आगे मन्थर ज्वरादिको मे जहां इसका विशेषतया प्रकोप होता है। वहांही इसका उदाहरण रोगी को लेकर दिखलाया जायगा।

चिकित्सा

निम्न औषधियां समयानुसार प्रयोग की जाती है, चन्द्रोदय, अर्जुनाभ्र, कस्तूरी, मल्लसिन्दूर, तालसिन्दूर, रससिन्दूर, पंचवक्त्ररस, प्रवालभस्म, अम्बर, मृतसंजीवनीसुरा, दशमूलासव, प्रतापलंकेश्वर कस्तूरी भैरव, अर्कादि क्काथ दशमूल क्वाथादि सिद्ध भेषज्य मन्जूषा में भी इस रोगके लिये निम्न लिखित प्रयोग लिखे है।

(१) शीतविहारात्क्रुद्धसमीरे श्लेष्म विवृद्ध्यात्यन्तमधीरे
रोगिणियुञ्ज्यादार्द्रक नीरं ह्यभ्रमदभ्रं शीतशरीरे

भावार्थ - शीतल वायु अथवा शीतल जल के सेवने से वायु कुपित होकर कफकी वृद्धि कर देता है तब रोगी की शीताङ्गावस्था हो जाती है। उस समय अभ्रक भस्म अदरख रस मधु के साथ देने से रोग की निवृत्ति हो जाती है।

(२) अन्यदपि—मोह रूजादेःस्याद्यदि सूतीस्तत्रच देयापारदभूतिः
बद्ध बलासे रूद्धगलस्य वक्षसि भूयः स्वेदन मस्य ॥

यदि सन्निपात रोगी को मूर्च्छादि उपद्रव हो जायतो वहा पर पारद भस्म याने रस सिन्दूर देना चाहिये। अगर गलेमें कफ बढ़ कर गले मे घर घर शब्द होने लगे तो छाती पर बार-बार सेंक करे जिस से रूका हुवा कफ पतला होकर निकल जाय।

(३) पूर्वानुपानैः कणयाच भुक्ता रसाभ्रयुक्ता मृगनाभि रुक्ता।
हिताङ्गशैत्ये त्विति वच्मि तथ्यं मल्लालसिन्दूर मपीहपथ्यम्

शीताङ्ग के समय चन्द्रोदय, अभ्रक भस्म, कस्तूरी इनका संमिश्रण करके रोगीका बलाबल देख कर अदरख रस मधुके अनुपानसे, या पानरस मधु से अथवा पिप्पली चूर्ण मधुके साथ देने से अवश्य ही फायदा होता है। यह बचन सिद्धभैषज्य मन्जूषाका है। अथवा इसकी जगह मल्लसिन्दूर-ताल सिन्दूर से भी पूरा फायदा होता है।

(४) अन्यदपि—श्रीसुम शुक्ति कषायः पीतइहान्य सहायः,
संशमनस्त्रिमलस्य ज्ञात मिदं नहि कस्य ॥

इस रोगमें केवल लवङ्ग २ तोलाका क्वाथ तैयार करके पिलाने से सन्निपात का नाश होता है। यह बात हर एक मनुष्य की जानी हुइ नही हो ऐसा नहीं है।

(५) पर्णार्णसा वर्णितकृष्णवर्णा तूर्ण निगीर्णा हिमचर्मणाचेत् ।
हिरण्यगर्भाभिधपोट्टलीसा हिरण्यरेतस्यत् एतदङ्गे ॥

शीताङ्ग सन्निपाता क्रान्त रोगी को जब एकदमत्वचाबरफ के समान शीतल हो गई हो; और अन्य दवाईयां काम नहीं करतीहों, उस समय हिरण्यगर्भपोट्टली रस की १ खुराक पान रस मधु के अनुपान से देने पर जैसे अग्नि द्वारा गर्मी बढ़ जाती है उसी तरह शीतलता नष्ट होकर शरीर गरम हो जाता है।

निर्माण योग

(१) मल्लताल सिन्दूर विधि

शु० पारद ८ तो०, शु० गन्धक ८ तो०, शु० सोमल४ तो० शु० ताल तपकी ४ तो०, इन चारोंको खरलमें डालकर २ रोज तक मर्दन कर।कज्जली तय्यार करके कपड़ मिट्टी की हुई आतशी शिशी में भर कर २ रोज तक वालुका यन्त्रमे पकावे, तैय्यार होने पर काम में लेवे।

(२) हिरण्य गर्भ पोट्टली निर्माण विधि

शु० पारद ४तो०, शु० गन्धक २तो०, सुवर्ण भस्म १ तो०, ताम्रभस्म ३तो,० इन द्रव्योंका संग्रह करके प्रथम पारा, सुवर्ण भस्म, ताम्र भस्म, का खरलमे डालकर मर्दन करे फिर गन्धक मिलाकर ७रोज तक घृत कुमारी रस की भावना देकर गुटिका बना लेवे। फिर रेशमी वस्त्रमे थोड़ी गन्धक बिछा कर, गुटिका रख देवे और पोटली बनाकर मट्टी की हंडिया में पोटली को दोला यन्त्र की तरह रख देवे, तथा उसके उपर नीचे गन्धक हंडिया में भर देवे। और अग्नि के ऊपर चढ़ादेवे जब गन्धक द्रव होकर गाढी हो जावे तव दवा को बाहर निकाल कर कपड़ा हटा कर काम में लावे।

(३) अर्कादि क्वाथ

भास्वन्मूलं जीरकव्योषभार्गी व्याघ्री शुंठी पुष्करं गोजलेन ।
सिद्धं सद्यः शीत गात्रार्तिमोह श्वास श्लेष्मोद्रेक कासान्निहन्ति ॥

भावार्थ—आककी जडकी छाल, सफेद जीरा, कालीमिर्च, पीपल, सोंठ, भारंगी, कंटकारी सोंठ, पोहकर मूल, इनको समान भाग लेकर यव कूटक कर गोमूत्र में क्वाथ विधिसे पका कर सेवन करनेसे शीघ्रही शीताङ्ग सन्निपात, मोह, श्वास कफ बृद्धि, खासी, नष्ट होजाती है।

(४) शीताङ्गे लेपः

कर्कोटिकाकन्दरजः कुलत्थः कृष्णो वचाकट्फल कृष्ण जीरैः ।
किराततिक्ता नलकटःफलाम्बु पथ्याभिरुद्वर्तनमत्र शस्तम् ॥

भावार्थ— बांझ ककोड़ेकी जड़ कुलथी, पीपल;वच, कायफल,काला-जीरा, चिरायता, चित्रक मूल, कायफल, नागर मोथ, हरड़ छाल इनका कपड़ छान पाऊडर वनाकर शरीर पर मलने से शीताङ्ग सन्निपात दूर हो जाता है।

(५) रस विषमरिच महेशप्रियफलभस्मैकभू चतुर्वसुभिः।
भागैर्मितमुद्धूलनभिदमति स्वेदशैत्य हरम् ॥

भावार्थ – पारा १ तोला, वत्सनाभ, १ तोला, कालि मिर्च ४तोला, धत्तूरे के फलको भस्म ७तो० इन सबको एकत्र पीसकर शरीरमें मालिश करने से अत्यन्त पसीनेका आना रुक जाता है।

एलोपैथिक मतसे शीताङ्ग वर्णन

सन्नि पातज बीमारीयों में शीताङ्ग एक बड़ी भयानक अवस्था है। इसके होनेपर अंगुष्ठमूल मे नाड़ी का स्पन्दन नहीं मिलता है, अंग-प्रत्यङ्ग ठण्डे पड़ जाते है। हृत्पिण्ड मे रक्तकी कमी के कारण अथवा जलीय अंशकी कमीके कारण खून जमने लगता है, इसलिये शिराओंमें रक्तका द्वारा नहीं होता, इससे रक्त संचालन क्रिया बन्द हो जाती है। यह अवस्था जीवनी शक्ति की अन्तिम अवस्था है, रोगी देखने में मुर्दे की तरह मालूम होता है, शरीर सिकुड़ जाता है, आखे भीतरमें वैठ जाती है, ओष्ठ, मुख और नख नीले पड़ जाते हैं, नाक पतली हो जाती है अथवा टेढ़ी हो जाती है, सम्पूर्ण शरीर में ठण्डा पसीना हुआ करता है। हाथकी अङ्गुलियां पानी मे पड़ी-पड़ी सिकुड़ जाने की तरह हो जाती है, तापमान घट जाता है, श्वास प्रश्वास में वहुत कष्ट होता है तथा श्वास प्रश्वास बरफ के समान ठण्डे रहते है। अगर प्रतिक्रिया नहीं होती है तो मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा—

शीताङ्गावस्था मे गरम पानी बोतल मे भरकर, कार्क लगा देना चाहिये, बोतलपर कपडा लपेटकर रोगी के पंर के दोनों बगल में रख देना चाहिये, प्यास के समय गरम जल पीनेको दें इस उपरोक्त सेकसे प्राय स्वेदावरोध हो जाता है। यदि देखे कि रोगी मुंह खोलकर श्वास लेता है, और श्वास-प्रश्वासमें बहुत कष्ट होता है हृदिपण्डकी संचालन क्रिया बन्द होकर शीघ्र ही मृत्यु की सम्भावना हो जावे तो उस समय राई पीसकर फेफड़ेके ऊपर मोटी पडतोमे उसकी पुल्टि सलगावे।

उस समय तुम्हारी प्रयोग की हुई औपधिया निरर्थक होनेपर भी इस पुल्टिस द्वारा आशा से भी अधिक लाभ होगा। पाश्चात्य चिकित्सक ऐसे समय मे एकोनाइट, कोरामिन, एड्रिनलिन, ब्रान्डी, एट्रोपीन, सैलाइन आदिका व्यवहार करते है। तथा रिडेक्षन, ग्लुकोज एट्रोपीन, पिच्युट्रीन का इन्जेक्सन भी देते है।

होमियो पैथिक चिकित्सा

आसर्निक, एकोनाइट, कैम्फर, वेरेट्रस, कूप्रम आदि औपधियां दी जाती है। उनका कथन है कि यदि शीताङ्गावस्था के पहले उपरोक्त औषधियोंका प्रयोग न किया गया हो तो शीताङ्गावस्था आनेपर इन सबका लक्षणानुसार प्रयोग करें। इनके सेवन से भी यदि फायदा नजर न आता हो तो जैवोरण्डिकी उग्रवीर्य औपधिया दें। पाइलो-कर्पिन ६ × जल्दी जल्दी प्रति घन्टे के अन्तर से द, शीताङ्गके साथ श्वास कष्ट अधिक हो तब आर्जेन्ट सायनाड ६ × जल्दी जल्दी प्रयोग करना चाहिये एण्टिम आर्स ६ शक्ति भी लाभदायक है।

अत्यन्त स्वेदागमन के समय ठन्डे पानी से माथा अच्छी तरह धोकर कपाल मे और माथेपर ठन्डे पानी की पट्टी रखकर माथेपर धीरे-धीरे हवा करो पानीके साथ थोडा रेक्टिफा ड स्प्रीट या सिरका मिला देना और भी उत्तम है। इस उपचार से भी शीताङ्गमे फायदाहोता है।

तन्द्रिक सन्निपात इनफ्लुएन्जा फीवर (Influenza)

माधवाचार्य मतानुसार लक्षण

तन्द्राऽतीव ततस्तृपाति सरणम् श्वासोऽधिकः कासरुक् ।
सन्तप्तार्त्ति तनुर्गलः श्वयथुना सार्धश्च कण्डूः कफः ॥
सुश्यामा रसना क्लमः श्रवणयोर्मान्द्यश्च दाहस्तथा ।
यत्रस्यात्सहि तन्द्रिको निगदितो दोषः त्रयोत्थो ज्वरः ॥

जिस ज्वरमे तन्द्रा अधिक हो, प्यास अधिक लगती हो तथा टट्टी पतली होती हो, श्वास वेगपूर्वक जल्दी २ चले, खांसी का वेग अधिक हो, ज्वरके कारण शरीरोष्मा विशेष रूपसे प्रतीत होती हो, गलेमे सूजन, खुजली हो तथा कफावृत हो गया हो, जिह्वा काली हो जाय, ग्लानि, कानोमे वधिरता और दाह हो ऐसे उपरोक्त लिखित लक्षण जिस ज्वरमे दिखलाई द उसको तन्द्रिक सन्निपात कहते है ।

आयुर्वेद मतसे यह रोग अधर्मादि पापा चारोंके द्वारा वायु मण्डलके दूपित होनेपर महामारीके रूपमे शरद्, शिशिर, वसन्त ऋतुमे फैला करता है । जिस समय इसका आक्रमण महामारी रूपमें होता है, तव वहुत आसानीसे इसका निदान हो जाता है । परन्तु साधारण तया होने पर सहज ही मे पहिचानना मुश्किल होता है । पाश्चात्य चिकित्सक साधारण प्रतिश्याय जनित ज्वर को ही इनफ्लुएन्जा ज्वरके नाम से पुकारने लग जाते है लेकिन उनका यह कथन शास्त्रानुकूल नही है । वहुतसे आयुर्वेद सेवी वैद्यगण भी इस ज्वरको वात-कफज्वर मानते है । सिद्धान्त निदान कारने भी इसका श्लेष्मक ज्वर नामसे ही उल्लेख किया है । परन्तु यह रोग केवल श्लेष्मा जनित ही नहीं है । इसके साथमें वायु पित्त का संसर्ग भी रहता है, इसलिये दैदारिक सन्निपात के लक्षणोंके साथ इसका समन्वय करना उचित प्रतोत होता है, क्योकि कितनो ही वार अतिसार, आमाशयिक विकार,

जाड़ा लगना, तीव्र ज्वर, सरमे वेदना, पलकोंमे वेदना, आंख नाकसे पानी गिरना, छींक, खांसी, देह टूटना, शरीरमे वेदना प्रभृति इस रोगमें प्रधान लक्षण होते है। साधारण सर्दीके ज्वरमे इतने लक्षण नही होते है फिर भी इसको ऐलोपैथिक वाले कैसे ऐसा नाम करण करते है। मेरी समझ मे उनके यहां साधारण प्रतिश्याय जन्य ज्वरके लिये इतर शब्दके प्रयोग का अभाव ही है। इसीलिये ही वे साधारण ज्वरको इन्फ्लुएञ्जा शब्दके द्वारा ही सम्बोधित करते है। अस्तु यह रोग समग्र पृथ्वी मण्डलमे सं० १९७६ मे महामारीके रूपमे फैला था, उस समय मैं भी राजपूतानामे ही रहता था, तब ही इस रोग से आक्रान्त बहुतसे रोगी मेरे देखनेमे आये थे। हमारे ग्राम चिड़ावेमे ही इस रोगके द्वारा ३०-४० रोगी प्रति दिन मरा करते थे। उस समय मेरी निगरानीमे भी ३० रोगी थे जिनका इलाज स्वर्गीय वैद्यराज पं० जगन्नाथजी आयुर्वेद शास्त्री किया करते थे। इनकी चिकित्सा अत्यन्त ही श्रेयस्कर हुई। जितने भी रोगी मेरे पास थे वे इनकी चिकित्सासे आरोग्य हुये थे। आयुर्वेदसे विशेप रूपसे इस रोगका विवरण नहीं मिलता है। आधुनिक विज्ञान वेत्ताओंने जो इसका विशद् रूपसे वर्णन किया है वह निम्न प्रकारसे है वे इस रोगको कीटाणु जन्य मानते हैं। उनका कथन है कि दूपित वायुके द्वारा ही इस रोग के कीटाणुओं की उत्पत्ति होती है। मनुष्यके शरीरमे कीटाणुओंका प्रवेश श्वासमार्गसे, मुखसे, भोजनादिके साथ संसर्ग होने से एवं दूपित वस्त्रादिकोके धारण करनेसे हो जाता है। बादमें ३-४ रोजमे ही रोग उत्पन्न कर देते है। बहुधा यह रोग २० से ४० वर्पकी आयुवालोको ही अधिकतया होता है। एलोपैथिकमे इस रोगके उत्पन्न करने वाले कीटाणुओंको हीमोफालस वक्टीरिया (Haemobhilus Bacteric) तथा वेसिलस इन्फ्लुएन्जा (Baccillus Influenze) कहते हैं। इन कीटाणुओंका ज्ञान नासाश्राव परीक्षण क्रियाके द्वारा होता है। इस

रोगका प्रारम्भ सर्दी याने प्रतिश्यायसे ही होता है। दोप संचयकाल ३-४ दिवस ही माना है। रोग निवृत्ति होने पर भी थोड़ी सी वद-परहेजीके कारण पुनः आक्रमण हो जाता है। इसलिये पथ्यादिक पर विशेप रूपसे ध्यान रखना चाहिये। एलोपैथिकमे इन कीटाणुओको २ विभागमे विभक्त किया है। १ वक्टीरिया (Bctaric) २ प्रोटोज़ुआ (Protozoa) वक्टोरिया को वनस्पति वर्गमें, और प्रोटाज़ुआ को प्राणी वर्गमें माना गया है। प्रथम वक्टीरिया भी आकृति भेद्से ३ प्रकार का होता है जैसे सरलाकृति वेसिलस, अण्डाकृति कोकसगोल, स्क्रू सदृश स्पिरिला। इनमे वेसिलस अनेक प्रकारका होता है, स्पिरिला २ तरहका होता है कोकस जाति, आकृति भेदसे पांच प्रकार की होती है। १ युग्म डिलपो कोकस, २ स्ट्रेप्टो कोकस ३ टेट्रीजिनस (Tctri gcnous) ४ सार सिना, इस प्रकार एलोपैथिक वाले इस रोगमे अनेक तरहके कीटाणु मानते है, यह सब माइक्रोस्कोप यन्त्र द्वाग ही देखनेमें आते है। इसलिये इसकी परीक्षा लेब्रोरेटरीमें ही करानी चाहिये।

सम्प्राप्ति-उपरोक्त कीटाणु जब श्वास मार्ग द्वारा शरीरमें प्रवेश करते है तव श्वासनलिका ओर दोनों फंफड़े विकृत हो जाते है। इससे श्वास नलिकाओमे शोथ हो जाता है और कफसे भर जातो है, तथा न्युमोनिया के सदृश रक्त ष्ठीवनादि उपद्रव हो जाते हे। इसी तरह अन्नमार्ग द्वारा कीटाणुओंका प्रवेश होने पर आमाशय, पक्काशयमे खराबी आ जाती है तव वमन, अतिसार आदिको प्रवृत्ति होती है। यदि कीटाणुओं का प्रवेश नासिका द्वारा शिरमे हो जाता है तव वहा पर अनेक उपद्रव हो जाते है। इस रोगमें वात-कफोल्वण सन्निपातके समान ही विशेषतः उपद्रव होते है। तथा ये कीटाणु कभी शनैः शनैः तो कभी तीव्रता से धातुओंका दूपित कर देते ह। रोग होने पर रक्त मे श्वेताणुओंकी संख्या घट जाती हे। लसीकाणओंकी सख्या बढ़ जाती है हृदयके

दक्षिण खण्ड विस्तृत हो जाते हैं तथा हृत्स्नायु मे दाह हो जाता है। तब अत्यन्त शक्तिका ह्रास होता है।

रूप रोगकी उत्पत्ति आकस्मिक होती है। कार्यरत पुरुषके अचानक वेदना युक्त ज्वर हो जाता है तब निम्नोक्त लक्षण होते हैं यथा नाकमे जल समान पतला श्राव, कण्ठोंमें वेदना मुखमें दाह, जिह्वा सफेद मैली, शोथयुक्त, किनारेलाल, नेत्रलाल, शिरमें वेदना बार २ ठन्ड लगना कम्प हाथ पैर टूटते रहना, कमर, पीठ, छातीमें पीडा खासीका ज्यादा आना जी मिचलाना ज्वर होना ४-५ रोजमें ही शरीरमें दुर्बलताके लक्षणोंकी प्रतीति होना, शारीरिक मास पेशियोंकी शक्तिका ह्रास हो जाना या हृदयकी दुर्बलताके कारण मृत्यु तक भी हो जाती है। ये उपरोक्त लक्षण साधारण विकारमे ही होते है ज्वर भी इस अवस्थामे ५-७ रोजतक १०३ से १०४ डिगरी तक रहकर अकस्मात उतर जाता है।

तीव्र आक्रमण होनेपर इसके ३ विभाग हो जाते है।

प्रथम जब इसका आक्रमण फेफडों पर होता है। तब दोनों फेफड़ों मे प्रदाह, थूकनेमे कफमे रक्त मिला हुआ आता है तथा प्रलाप श्वास कासादि न्युमोनियाके लक्षण दिखलाई देते है. तथा किसी समय प्रदाह के कारण पूय भी भर जाती है।

अन्न मार्ग द्वारा कीटाणुओका प्रवेश होनेपर जिसको रोग हो जाता है तब उसको वमन, अतिसार, उदर रोग, अग्निमान्द्य, प्लीहा वृद्धि पाण्डु आदि रोग तथा विष भक्षण जैसे लक्षण दिखलाई देते है।

तीसरा आक्रमण नासिका द्वारा मस्तिष्क और नाडी तन्त्रपर होता है; तब मूर्छा, वायु प्रकोप, हाथ पैरोंमे पीड़ा हृदयकी मन्द गति तथा वेदना, निद्रा नाश प्रलापादि सन्निपात के लक्षण दृष्टिगोचर होते है। हलका आक्रमण होनेपर रोगी शीघ्र ही ठीक हो जाता है तीव्र आक्रमण में रोग कष्टसे मिटता है।

साधारण समयमें इस रोगकी पहिचान करनी मुश्किल है। लेकिन

देशव्यापी महामारी रूपसे जब यह रोग फैलता है तब परीक्षा सुगमता से हो जाती है। अन्य समयमें वातकफ ज्वरके लक्षणोंमें से इसको पहिचानना असम्भव है। शक्ति ह्रास होनेसे ही इन्फ्लुएञ्जा जाना जाता है इस रोगमें मस्तिष्क विकृति, अपस्मार, उन्माद, रक्त श्राव, पक्षाघात, तीव्र ज्वर वृक्कशूल, सन्धि वातादि उपद्रव नही हो तब यह रोग साध्य होता है। उपद्रव होनेपर मारक ही होता है। कितनी ही बार अतिसारादि उपद्रवोंके रहते हुये भी इन्फ्लुएञ्जाके प्रधान उपसर्ग सर्दी, खासो, ब्रांकाइटिस और ब्रांको न्युमोनिया है। परन्तु शायद बहुत से मनुष्य यह अच्छी तरह नही जानते होंगे कि यह क्या है। इसलिये इनका विषय दूसरी जगह पर न्युमोनिया प्रकरणमे देखनेसे स्वत ही समझ जायेंगे लेकिन फिर भी कुछ जानकारीके लिये थोडासा परिचय दे देता हूं। यानी इन्फ्लुएञ्जाकी ब्राकाइटिस या ब्राको न्युमोनियामें जो श्लेष्मा निकलता है, वह गाढा और गोंदकी तरह लसदार होता है, रोगी लगातार खासता रहता है, यहां तककी खांसते खांसते क्लान्त हो जाता है परन्तु कफ शीघ्र नहीं निकलता, साधारणतः इन्फ्लुएञ्जा का ज्वर ४-५ दिनोंसे अधिक प्रायः नहीं रहता; पर यदि उसके साथ पहिले बताये उपसर्ग शामिल हो जाते है तो बीमारी जल्द आरोग्य हो जानेमें बाधा पड़ जाती है। बहुत दुर्वल तथा वृद्ध के लिये तो यह बीमारी घातक ही होती है क्योंकि कमजोरी के कारण रोगी कफ निकालनेमें असमर्थ रहता है अतः श्वास रुक कर मृत्युतक हो जाती है।

उपरोक्त बीमारीके अलावा एक तरहका इन्फ्लुएञ्जा और भी होता है, जिसके शिरमे बहुत तेज दर्द होता है, रोगी रोगाक्रान्त हो पडा रहता है और भूल वकता है, सर दर्दके साथ कानमें भी दर्द हुआ करता है, इसको सेरिब्रोस्पाइनल इन्फ्लुएन्जा कहते है।

प्रतिरोधक चिकित्सा इस महामारीके प्रकोपके समय अदरखरस मधु या तुलसीरस मधुका नित्य सेवन करना चाहिये। कर्पूर, इन्नहीना, या

नीलगिरी का तैल सूँघते रहना चाहिये। रातको सोते समय यवहरीत की चूर्ण ३ मासा गरम जलसे लेवे, या त्रिफला चूर्ण ३ मासा गरम जलमें खाना चाहिये समशीतोष्ण स्वच्छ कमरेमें जिसमें दोनों समय लोहवान की धूप दी गई हो उसमें स्वच्छ विस्तर पर शयन करना चाहिये। शरीर पर सरसोंके तैलको मालिस कराकर गरम जलसे स्नान करना चाहिये। जहाँ तक हो सर्दी गर्मी यानी जुखाम से बचना चाहिये।

चिकित्सा

जिस समय ज्वर हो जाय तब पथ्यमे गरम जल गरम दूध-साबू वाली चाय प्रभृति पीना चाहिये। फलोंमें बहुत थोडी मात्रामें अनार बीदानेका रस गरम करके लेना चाहिये, रोगीको बिछावनसे उठना मना है, यह बीमारी संक्रामक होती है, किसी जगह पर अगर एक आदमीको हो जाती है तो उसके संसर्गमें आनेवाले सबको ही यह बीमारी हो जाती है, यह रोग बहु व्यापक रूपमें दूर दूर तक भी फैल जाया करता है। अतएव रोगीका थूक, कफ वगैरह सावधानीसे दूर फेंक देना चाहिये, और इस बात पर भी पूरा खयाल रखना चाहिये कि रोगीका कमरा हमेशा गरम रहे आरोग्य होनेपर भी बहुत दिनों तक सर्दीसे बचावकी चेष्टा रखनी चाहिये। ज्वर उतारनेके लिये औषधिका प्रयोग नहीं करना चाहिये, यदि आवश्यकता हो तब भी अल्प मात्रामें ही देवें। क्योंकि दोष पाचन होनेपर स्वतः ही ज्वर शान्त हो जाता है।

प्रारम्भावस्थामें चिकित्सा

प्रातः सायं	म० रा०
लक्ष्मी विलास	चन्द्रामृत
वनप्सादि क्वाथ से	तालीशादि मधुसे

यदि इसका ३ दिवस सेवन करने पर भी अगर ज्वर शान्त न होवे

तो त्रिभुवन कीर्तिरस का प्रयोग क्षुद्रादि क्वाथ या गुडुच्यादि क्वाथके अनुपान से सेवन कराने पर रोगका बढ़ना रुककर रोगी स्वस्थ हो जाता है। यदि इसके उपयोग से भी रोग शान्त न हो तो, कस्तूरी भैरव नारदीय लक्ष्मी विलासके प्रयोगसे अथवा तुलसी मञ्जर्यादि क्वाथ के अनुपानसे अवश्य ही लाभ होता है यह मेरा प्रत्यक्ष अनुभव है। ज्वरके साथ मलावरोध हो तो ज्वरमुरारिसे भी उपकार होता है इस रोगमे खांसीका वेग अधिक रहता है एतदर्थ व्योषादि वटी या मरीच्यादि वटी चूसने के लिये देनी चाहिये। छातीमे वेदना हो तब पुरातन घृतको महानारायण तैलमें मिलाकर मालिस करना चाहिये। जब तक उपद्रव न हो तब तक साधारण औषधि को ही व्यवहारमें लाना चाहिये। उपद्रवोंकी अधिकता देखकर दोषानुकूल चिकित्सा करनी चाहिये। आयुर्वेदमें इस रोगकी चिकित्साके लिये असंख्य औषधिया वर्णित हैं परन्तु जहाँ तक हो सौम्यगुण वाली औषधियां रोगीके लिये हितकर होती है वैसी तीक्ष्ण द्रव्य निर्मित नहीं, क्वाथीय चिकित्सा ७ सप्त दिवस पूर्व नहीं करनी चाहिये। इसलिये रस चिकित्साके समय अनुपानकी जगह क्वाथकी आवश्यकता हो तो ८ व रोजसे दशमूल क्वाथ, गुडूच्यादि क्वाथ, तुलसी मञ्जर्यादि क्वाथ, भार्ग्यादिक्वाथ आदि क्वाथ दे सकते हैं। प्राचीन पुरुप औषधिके समय क्वाथों का ही ज्यादा तर उपयोग करते थे। इसलिये ही उनका जीवन सुख पूर्वक व्यतीत होता था, परन्तु आजकलके आलसी पुरुप इसकी पाचन क्रियाको झंझट समझते है तथा मिक्श्चरको श्रेष्ठ समझकर उनका ही ज्यादातर सेवन करते है इस कारण सर्वदा रोगाक्रान्त रहते है तथा अल्पायु भी होते है। राजपूतानामें तथा अन्य ग्रामीणोंमे भी क्वाथोंका ही प्रचार विशेषतया होता है इससे ही वे लोग सदा स्वस्थ रहते है। स्वर्गीय वैद्यराज प० जगन्नाथजी शास्त्री चिड़ावेमें प्रधान चिकित्सक थे, वे प्रायः क्वाथीय

चिकित्साको ही प्रधानता देते थे, जिससे असंख्य रोगी आरोग्य होते थे यह मेरा प्रत्यक्ष अनुभव है।

राजपूतानामें महामारी रूपसे सं० १९७६ मे इस रोगका भयंकर प्रकोप हुआ था तब वैद्यराजजीने निम्नलिखित औषधियों द्वारा ही हजारों रोगियोंके प्राण बचाये थे। उस समयमें इस महामारीका तीव्र आक्रमण मस्तिष्क और नाड़ीतन्त्र पर हुवा था। शायद आप लोगोंको भी याद होगा कि उस समयमे तमाम रोगियोंको प्रलापादि उपद्रव ही विशेष रूपसे बढ़कर रोगी मरते थे, इसलिये वैद्यराजजी अधिकतर ब्राह्मीवटी, मृतसञ्जीवनी वटी, आनन्द भैरव, कस्तूरी भैरव, महावातविध्वंसन रस, दशमूल क्वाथ, लवङ्गादि क्वाथ, तगरादि क्वाथ, आदि औषधियों का प्रयोग किया करते थे, उस समयमे किसी किसी वैद्यने ज्वर संहार (लालगुड़ा) का भी प्रयोग किया था। परन्तु राजपूतानामें इस दवाईसे लाभ न होकर नुकसान ही हुआ था। एलोपथिक डाक्टरोंके पास भी कोई अनुभूत औषध नही थी। सल्फर ड्रगका आविष्कार भी बादमे ही हुआ है। अस्तु वैद्यराजजीकी चिकित्सा शैली प्रायः चरक संहिता पद्धतिके अनुकूल ही थी। जैसे लिखा भी है।

कफ वातज्वरे स्वेदान कारये द्रूक्षनिर्मितान्।
स्रोतसां मार्दवं कृत्वा नीत्वा पावक माशयम्॥
स्नावात कफ स्तम्भं स्वेदोज्वर मपोहति।

शरीरे सर्वांगे वायत्रा कुत्रक स्मिन्नङ्ग वेदना सम्प्रजायते, तत्र वह्नि विधिना ... वालुका पोट्टली सन्तप्य सन्तप्य काञ्जिके निषिच्य रुग्णस्याऽङ्गानि स्वेदयेत्। यावत् संजात मार्दवे स्तम्भ पारुष्यादिकानां ... स्वस्थ लक्षणे देहे जाते स्वेदनाद्विरामः स्यात।

... स्वेद विधानं हितम्।

आमज्वरे वात कफजे वा कफोत्थिते मारुत सम्भवेवा। त्रिदोषजे

स्वेद मुदाहरन्ति स्तम्भ प्रमोहाङ्गरुजा प्रशान्त्यैः। अन्यदपि।

लंघनं स्वेदनं तिक्तं दीपनानि कटूनिच।
विरेचनं स्नेहपानं वस्तयश्चाम मारुते ॥ इति

आमज्वरे अपक्वज्वरेऽथवा आम वातज्वरे, वातबलासज (बेरी-बेरी नामके ज्वरे प्रायतया शोथः समुत्पद्यते तत्र तथा वातश्लेष्मोद्-भवेतन्द्रिकान्तर्गत इन्फ्लुएञ्जा नामके ज्वरे, केवल मारुतजे केवल कफ जेवा च त्रिदोपजे ज्वरे वैद्याः स्तम्भप्रमोहाङ्ग रुजाना निर्वाणार्थं स्वेदं ददन्ति।

सम्यक् विहित स्वेदगुणानाह

अग्ने र्दिप्तिंमार्दवंत्वक् प्रसादं भक्तश्रद्धां स्रोतसां निर्म्मलत्वम् कुर्यात्। स्वेदस्तन्द्रि निद्रे च हन्यात् सन्धीस्तब्धा श्चेष्टये दाशु युक्तः॥

अतः तीव्र आक्रमण होनेपर तन्द्रिक सन्निपातकी चिकित्सा जो शास्त्रमें लिखी है, उसके ही अनुसार मैंने अस्पतालमे जिन जिन प्रयोगों का अनुभव रोगियोंपर किया है, वेही, आपके सामने लिख रहा हूं कृपया आपलोग भी कार्यमें लाकर देखे।

तीव्र आक्रमणके समय प्रथम गतिके रोगीकी चिकित्सा।

नाम रोगी—प्रह्लादराय, वय—३० वर्ष

जाति—वैश्य निदान-तन्द्रिक (प्रथम गति

इसको ३-४ रोज से सर्दी (जुखाम) लगकर ज्वर हो गया था। बादमे श्लेष्मा दोनों फेफडोमेजमगया जिससे खाँसी बहुत जोरसे आती थी। कफ रक्तमिश्रित निकलताथा, श्वासवेगपूर्वक चलता था. प्रलाप, तन्द्रा-अङ्ग मर्द, आदि निमोनियांके से लक्षण प्रतीत होते थे, यह अस्पताल में सायंकाल ५ बजे आया, भर्ती ता० २३ ५-४४ कियागया तब उपरोक्त लक्षण थे।

चिकित्सा

प्रातः	सायं	म० रा
ज्वरसंहार ३ र०	त्रिभुवनकीर्तिरस १गो०	चन्द्रामृत गो०
शृंग २ र०	शृंग २ रत्ती	शृंग्यादि १ मा०
प्रवाल १ रत्ती	स्फटिक २ रत्ती	नरसार १ रत्ती
दशमूलक्वाथ मधुसे	क्षुद्रादिक्काथमधुसे	पानरसमधुसे

पुरातनघृतकी छातीपर मालिस, तथा अलशीकी गरम पुल्टिस का सेंक कराया, एलादि बटी आचूपणार्थ दी गयी, पथ्यमें जलवार्ली।

ता०२४-५-४४ ज्वर सुवह १०२ हुआ रातका प्रलाप कास विशेपरूपसे रहा, निद्रा विल्कुल नहीं आयी कफ चिकनाहटयुक्त वहुत कष्टसे रक्त-मिश्रित निकलता था, एवं रातमें कुछ पसीना आया था। प्रातः काल एकवार टट्टी भी हुईथी। दवाई कल वालीही चालू रक्खी तथा रातको नींदकेलिये द्राक्षासव १ औंस और खिलाया। ता० २५-५-४४ को प्रातः ज्वर १०१ रात्रिको कुछ निद्रा हुई तथा कफभी वहुत निकला, रक्त विल्कुलवन्द हो गया, प्रलापभी कमरहा लेकिन् तन्द्रा अधिक थी एतदर्थ प्रातः कालके दृशमूलक्काथको हटाकर भार्ग्यादि क्काथकी व्यवस्थाकी और दवा सर्व पूर्ववत चालू रक्खी गयी।

ता०२६-५-४४ हालत कुछ ठीकथी, दवा पूर्ववत। ज्वर प्रात ९९-सायं १०१। २७-५-४४ ज्वर प्रातः ९८ सायं १०० हालतठीक, पसोना अधिक आया रातको निद्रा अच्छी तरहसे आयी उपद्रवोका शमन हो गया, परन्तु कुछ पेटमें भारीपन तथा टट्टीकी कब्जियत मालूम हुआ, तव भार्ग्यादि क्वाथको हटाकर आरग्वाधदि क्वाथ का प्रयोग किया जिससे दिनमें १वार मलोत्सर्ग हो गया, ज्वर १०० तकवढ़ा था। ता० २८-५-४४ ज्वर प्रातः ९७॥ हो गया हालत बहुत ठीक कफ पक कर आसानी से निकलने लगगया, कुछ क्षुधा भी लगी एवं उपद्रव सर्व शान्त हो गये, दवा पूर्ववत चालू रक्खी। ज्वर सायं काल ९८।३० तक चढा।

ता० २९-५-४४ रातको क्षुधाके कारण नीद कम आयी,अतः बकरी का दूध ⟆—क्षीरपाकविधिसे पकाकर वार्लीमे मिलाकर दिया। ज्वर ९८-३०से ऊपर नहीं बढ़ा, अशक्ति का अनुभव विशेष रुपसे करने लगा

तब मुद्गयूससे पथ्य चालू कर दिया तथा औषधियां भी दुर्बलता निवारणार्थ बदल दी गयीं।

प्रातः सायं — म० रा

वसन्त मालती १ रत्ती।

अभ्रक भस्म १ रत्ती — द्राक्षासव १ औं०

सितोपलादि चूर्ण १ मा० मधूसे।

इस प्रकार यह रोगी १४ दिवसमें बिल्कुल आरोग्य होगया।

तीव्र आक्रमणके द्वितीय गतिके रोगीकी चिकित्सा।

रोगीनाम गोविन्दी देवी उम्र ३०, जाति खंडेल,वैश्य, स्थान खिदिरपुर, रोग नाम इन्फ्लुएञ्जा।

इसको घर पर साधारण सर्दीलगकर ज्वर हुआ था, इसने किसी प्रकार का परहेज नही रखा, खाना पीना स्नानादिक चालू रखा, जिससे इसको बीमारी बढ़ गयीतब ता-२७-७-४६ को सुबह १० बजे अस्पताल मे लाये तब लक्षण निम्नलिखित थे ज्वर १०२ सूखी खांसी-वमन, अतिसार, पेट में शूल, क्षुधानाश, प्लीहा वृद्धि, कामला आदि लक्षण थे, इसको इन्डोरमे भर्ती करके निम्न औषधिया चालूकी गयीं।

प्रात॰ सायं — मध्याह्न — रात्रिको

आनन्द भैरव १ गो० — लवङ्गादि १ गो०

लवङ्गादि २ रत्ती — सिद्धप्राणेश्वर १ गो०

प्रवाल १रत्ती — अर्क मकोय से

नागर मोथास्वरस मधुसे — पथ्यमें जल वार्ली ऽ।

ता २८-७-४६ सुबह मैंने देखा और रात की व्यवस्था पूछी तो ज्ञात हुआकि दवाई बिल्कुल पेट मे ठहरती नहीं है तथा और अवस्था भी कल जैसी ही है। ज्वर भी सायं १०४ डिगरीतक हुआ था, अब १०२ डिगरी है, पिपासा अधिक है परन्तु वमनके भय से पीना नही चाहती, दवा कल वाली ही चालूरखी, एलादि चूर्ण मधुसे चाटने को

दिया गया था। ता० २६-७-४६मे।

सुवह देखनेको गया ओर रातके हाल पूछा तव उपवैद्य ने कहाकि रात को टट्टी ६ हुई परन्तु वमन वहुत हुआ, इसलिये जो भी औषधि खाने की दी गई सभी उल्टोसे निकल गयी तथा पसीना भी वहुत हुआ हालत जव मैंने देखी तो हृदय तथा नाडीमे दुर्वलताका अनुभव हुआ, तव मध्या० रात्रि की दवा मे परिवर्तन किया उसकी जगह रसादि वटी, जहरमोहराखताई, पिच्छ भस्म दिया गया तथा वीच वीचमें ४-४ घन्टाके हेरफेरसे मृगमदासव—३० बूंद लवङ्ग शृत जलमे मिलाकर देने का आदेश दिया।

ता० ३०-७-४६ में

टट्टी रात को चार हुईथी, वमन भी कम हुई परन्तु आखो मे पीलापन दिखलाई दिया, घरवाले भी वहुत चिन्तित हो गये तथा फिर दवाई वदलनी पड़ी।

प्रातः सायं — म० रा०

खण्ड खाद्य लौह ४रत्ती — रसादि वटी २ गो०
मुक्तापिष्टी १ रत्ती — जवाहर मोहरा १रत्ती
प्रवाल भस्म १ रत्ती — पिच्छ भस्म १ रत्ती
अमृता सत्व १ रत्ती — मधुसे।
भीमसेनी ३ — रातको वृ० वाताचिन्तामणी १रत्ती
नागर मोथा स्वरस मिश्रीसे। — प्रस्वप्नार्कसे

पीपलकी छालको जलाकर शृतशीत जलमे बुझाकर पीनेको दिया पथ्यमें छेना जल दिलाया। मृगमदासव वन्द करके वहा पर कोरामिन (Coramine) १५ बूंद चार चार घन्टासे दी गयी।

३१-७ ४६ सुवह देखा और रात को अवस्था पूछी तो मालूम हुआ कि रातको टट्टी नहीं हुई,वमन २-३वार ही हुआ, ओपधियां भी प्राय: पेट मे ठहरी, कल से आज कुछ ज्ञान भी हुआ है, मैंने भी देखातो हालत

कुछ सुधरती हुई दिखलाई दी तब दवा में कोई भी परिवर्तन नही किया इसी दवाको ३रोज तक चालू रखा ।

ता०-४-८, ४६ हालत बहुत सुधर गई, उपद्रव सबशान्त हो गये ज्वर भी प्रातः ६६-३० था तथा खाने को भी मांगने लग गई, तब क्षीर पाक विधिसे पकाकर ऽ— गो दूध दिया।

ता० ५-८-४६, अवस्था बिलकुल ठीक हो गयी पथ्यक्रम पूर्वक चालू कर दिया। इस तरह इस रोगी को स्वस्थ होने मे चौदह १४ दिवसका समय लगा परन्तु प्लीहा अभी भी वढ़ीथी एतदर्थ चालू दवा वन्द करके उसकी जगह निम्न लिखित औषध चालूकी।

प्रात· सायं	म० रा०
नवायस लौह ३ रत्ती	चन्द्रप्रभा १ गो०]
मुक्ताशुक्ति १ रत्ती	बज्रक्षार ६ रती जलसे

कुलखाड़ारस मधुसे, इस तरह इस रोगीको अस्पतालमे रखकर २१ रोज बाद छुट्टी दी गयी।

तीव्र आक्रमणके तृतीय गतिके रोगीकी चिकित्सा

रोगीनाम नथमल शर्मा, उम्र ३५, जाति गौड, स्थान चोरबगान न० २०, रोग नाम इन्फ्लुएञ्जा ।

इसको इसके घरपर ८ रोजसे बीमारी थी, अस्पताल में लाये तब निम्न लिखित लक्षणथे। प्रलाप, मूर्छा, निद्रानाश, हाथपैरों में फूटनी, वायुका प्रकोप, हृदयमें दुर्बलता आदि चिन्ह थे, इसको गाडीसे उतार कर ता० ६ २-४७ को अस्पतालमे भर्तीकिया पलंग पर सुलातेही मूर्छा हो गयी, पसीना आकर हाथपैर ठन्डे होगये नाडीका स्पन्दन अत्यन्त हीन प्रतीत होता था तब सर्व प्रथम इसको १ खुराक निम्न लिखित औषधिकी दीगई।

न० १		न० २
मकरध्वज	१रत्ती	
प्रवाल	१ रत्ती	महाशक्तिरसायन १ रत्ती

मुक्ता १ रत्ती
अर्जुनाभ्रक १ रत्ती
भीमसेनी ½ रत्ती
कस्तूरी १ रत्ती
पान रसमधुसे १ पु०

दशमूलार्जुन अर्कसे इसप्रकार १ न०—२ न० दवाईया २—२ घन्टाके हेरफेर से चालूको गयी, हाथपैरोंमे सोंठकी मालिस करनेको दी इन दोनों औपधियों की २—२मात्रा देनेके बाद पसीना बन्द हो गया। रातको निद्रा नही आयी प्रलाप बहुत करताथा इसलिये वृ० वातचिन्तामणि १ खु० प्रस्वप्नार्क से दी गयी ता०७-२-४७ सुबह मैंने देखा और रातके समाचार उपवैद्यसे पूछा तो मालुम हुआ कि ज्वर रातभर १०२ रहा पेशाव -२ वार बेहोशोमे किया,प्रलाप रातभर करता रहा,नीद नहीआयी नाड़ीकी गति प्रतिमिनट १०२ रही। सुवह रक्तपरीक्षा करायी गयी जिसमे इन्फ्लुएञ्जा निकला तव निम्नलिखित औपधिया चालू की गयी।

प्रातः	सायं	मध्याह्न
कृष्णचतुर्मुख१ रत्ती	मकरध्वज १ रत्ती]	शृंग्यादि१ मा०
प्रवाल १ रत्ती	सौभाग्यवटी १ वटी]	पान मधु रससे
अर्जुनाभ्रक १ रत्ती	प्रवाल १ रत्ती]	
तन्द्रिक अधिकारोक्त	मृगमद ½ रत्ती]	
तगरादिक्काथ मधूसे।	जटामांस्यादि क्काथ मधूसे	

रातको वृ० चिन्तामणि १ रत्ती —। तालछाड़ारस मधूसे

इस तरह उपरोक्त औपधिया चालू की गयी।

ता० ८—२ -४७ सुबह मैंन देखा तथा रात्रिके समाचार पूछे तव मालुम हुआकि रातको प्रलाप कमती किया, निद्रा ३ घन्टे आयी, कलसे आज ज्ञानभी हुआहै, ज्वरभो १०१ था रातको ज्वर १०३ डिगरी तक हुआ था। अस्तु मैंने देखकर दवाई कलवाली ही चालू रक्खी।

९—२--४७ तवियत बहुत ठीक, प्रलाप शान्त, निद्रा रात्रिभर आयी

१ टट्टी भी हुई दवा पूर्ववत् ज्वर प्रातः १०० सायं १०२ ता० १० सुवह ९९ उपद्रव सर्व शान्त सायं ज्वर १०१ तक हुवा ता० ११—२—४७ ज्वर प्रातः ९७। सायं ९९ तक रहा भूख की इच्छा हुई तब पथ्य में जलवार्ली दीगयो इसप्रकार १७ रोजमें विल्कुल स्वस्थ होगय। औरक्रमानुसार पथ्य चालू करदियाऔषधियाभी परिवर्तन करदी गयी।

प्रातः सायं	म०रा०
मकरध्वज १ रत्ती	द्राक्षासव १ औंस
नवायस २ रत्ती	१ औंस जल मिला कर
मुक्ता १ रत्ती	२० रोज अस्पतालमें रहकर
मधुसे।	घर चलागया।

तीसरी गति की चिकित्सा

(३)-यदि इन फ्लुएञ्जामें मस्तिष्क और नाडी तन्त्रपर आक्रमण होता है तब मूर्छा, बात प्रकोप, हाथ पैरमें फूटनी, हृदयकी गतिमें अनियमित मन्द गति, निद्रा नाश प्रलापादि सन्निपातिक लक्षण होजाते हैं।

ऐसी उपरोक्त अवस्था में निम्नलिखित चिकित्सा करनी चाहिये। प्रथम ज्वर यदि तीव्र होतो पञ्चवक्त्र रस प्रातः सायं गुडूच्यादि काथ से देना चाहिये। मूर्च्छा होतो संचेतनी वटी या ब्राह्मी वटी ब्राह्मी काथ से देनी चाहिये।

प्रलाप - अथवा वातकी अधिकता होतो वातकुलान्तक रस,मृत्तोत्थापनरस ,रसराज रस, आदि वातनाशक औषधिया अष्टादशाङ्गकाथ, दशमूल काथ आदि के अनुपान से देनी चाहिये। हृदयगति की मन्दतामे पूर्ण चन्द्रोदयरस, कस्तूरी, प्रवाल,अ र्जुनाभ्र आदि ताकत देने वाली औषधियों का प्रयोग करना चाहिये। हाथ पैर में फूटनी ज्यादा हो तो महानारायण तलकी मालिस करना चाहिये। यदि उपरोक्त चिकित्सा से कोई फायदा नजर नहीं आवे तो प्रलापक सन्निपात की जो चिकित्सा है उसी को करना चाहिये।

ज्वरसंहार

सोठ, कालीमिर्च, पीपल, कुटकी, नीमकीअन्तरछाल, नागरमोथा, सफेद्सरसों, इन्द्रजौ, शु० सुहागा, ममीरीलालचन्दन, अतीस, सर्व—१-१ तोला रससिन्दूर ६ तोला, शु० हिंगुल ६ तोला।

प्रथम रससिन्दूर हिंगुल को बारीक पीसकर अन्य द्रव्योंको कूट छानकर सबको एक साथ मिलाकर खरलमें डालकर अदरख तुलसीके रसमे ३-३ दिन तक घोटकर सुखालेंव। मात्रा २-४ रत्ती तक देव। ज्वरसंहार रस अनुपान विशेपसे सर्वप्रकारके ज्वरोंमें विशेपतः कफ वात प्रधान ज्वरमें अच्छा लाभ करता है।

दशमूलक्काथ

विल्वश्योनाक गम्भारी पाटला गणिकारिका।
दीपनं कफवातघ्नं पंचमूलमिदं महत्॥
शालपर्णी पृश्नपर्णी बृहती द्वय गोक्षुरम्।
वातपित्तापहं वृष्यं कनीयं पञ्चमूलकम्॥
उभयं दशमूलंहि सन्निपात ज्वरापहम्।
कासश्वासे च तन्द्रायां पार्श्वशूलेचशस्यते॥
पिप्पली चूर्ण संयुक्तं कण्ठहृद्ग्रह नाशनम्।

वेलगिरी, अरनी, सोनापाठा, गंभारी, पाढ़ल, शालपर्णी, पृश्नपर्णी, वडी कटेली, छोटी कटेरी, इसे अधकचरा कूटकर रखलेवे। १ तोला लेकर १६ तोला जलमे पकाकर ४ तोला जल वाकी रखे और आवश्यकनानुसार देवे।

उपयोग मुंहका सूखना,हाथ पांव आदि अवयवोंका ठण्डापन, चक्कर आना, पसीना अधिक आना, खांसी श्वास छाती तथा पार्श्वशूल तन्द्रा शिरकेदर्द युक्त सन्निपात ज्वर सूतिका ज्वरमें तथा शोथमें प्रयोग करे

यदि सन्निपातमें नींद न आनी हो तो काथमें लवंग, जटामासी, ब्राह्मी, तगर, शखाहुली, सर्पगन्धा ये द्रव्य १-१ भाग मिला देवे।

चन्द्रामृत

त्रिकटु त्रिफला चव्यं धान्यजीरक सैन्धवम्।
रसगन्धक लोहाभ्रं प्रत्येकं कार्षिकम् शुभम्॥
टंकणस्य पलं दत्वा वासानीरेण मर्दयेत्।
अथवा अजाक्षीरेण मर्दयेत्।
गुञ्जात्रय प्रमाणेन वटिकां चैव कारयेत्॥
कासेयञ्चविधेचापि श्वासंज्वर समन्वितं।
अनुपानविशेषेण हन्ति चन्द्रामृतो रसः॥
कासे सरक्ते दातव्यो रक्तोत्पल रसाप्लुतः।
भैषज्यरत्नावलिसे किंचित् परिवर्तित।

सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़छाल, बहेडाछाल, आमलाछाल, चव्य, धमासा,जीरा, सेन्धानमक, शु० पारा, शु० गन्धक, लोहभस्म, अभ्रभस्म, प्रत्येक १-१ तोला शु० सुहागा ४ तोलाले प्रथम पारे गन्धककी कज्जली करके पीछे उसमे अन्य भस्मे तथा वनस्पतियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर बकरीके दूधमे या वासास्वरसकी ३ भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोली बना छायामें सुखाकर रख छोडे। मात्रा और अनुपान।

१ गोली सहदमें मिलाकर चटावे ऊपरसे वनप्सादिक्काथ, द्राक्षारिष्ट या शर्वत जूफा पिलावे, यदि खासीमे रक्त आता हो तो १ गोलीमें ५ रत्ती खूनखरावा मिलाकर लाल कमलके फूलके स्वरसके साथ देवे। खांसीके साथ श्वास भी हो तो सोमचूर्ण ५-७ रत्ती मिलाकर शहदके साथ देवे।

उपयोग सर्वप्रकारकी खासी श्वास हल्काज्वर हो तो इस योगसे अच्छा गुण होता है।

शृंग्यादि चूर्ण

शृंगी कटुत्रय फलत्रयकंटकारी,
भार्गी च पुष्परजटालवणानिपंच ।
चूर्णं पिबेदशिशिरेण जलेन हिक्का,
श्वासोर्ध्ववात कसनारुचि पीनसेषु ॥

काकडा सींगी, सोंठ, मिर्च, पीपल, हरड़छाल, बहेड़ाछाल, आमलाछाल, कंटकारी, भार्गीछाल पोहकरमूल, पांचोनमक। इन सर्वको सम भाग लेकर कूटकर कपड़ासे छानकर चूर्ण बनाकर गरम जलमें या पानरस मधूसे, सेवन करनेसे श्वास, ऊर्ध्व वात, खासी, अरुचि, जुखाममे अच्छा फायदा होता है।

आरग्वधादिक्काथ

आरग्वधग्रन्थिक मुस्ततिक्ता हरीतकीभिः क्वथितः कषायः ।
सामे सशूले कफवातयुक्ते ज्वरेहितो दीपन पाचनश्च ॥

अमलतासका गूदा, पीपलामूल, नागरमोथ, कुटकी, हरड छाल. सर्व सम भाग लकर यव कूट करके १ तोलाको १६ तोला जलमें पकाकर ४ तोला बाकी रखकर किसी भी दवाके साथ अनुपान रूपसे देनेसे सामदोषयुक्त ज्वरमें, कफवात ज्वरमें, जहाँ टट्टीकी कब्जी हो वहा अच्छा फायदा करता है ।

बसन्तमालती रस

स्वर्ण मुक्ता च दरदं मरिचे भाग वृद्धितः ।
खर्पर्यष्टौ कलांशं स्यान्नवनीतं पयोभवम् ॥
निम्बुकै मर्दयत्तावत् यावत् स्नेहोलयं व्रजेत् ।
मालती प्राग्वसन्तोयं रसोधातुज्वरं जयेत् ॥

मात्रा गुञ्जाद्वयोन्माना शाणंमधु समन्वितः ।
प्रकुञ्चपञ्चके पञ्चनवतिर्निम्बुकान्यलम् ॥
सिद्धभैषज्यमणिमाला

द्रव्य और निर्माण विधि—

सुवर्णभस्म अथवा सोनेके वर्क १ तोला, मोतीकी पिष्टी २ तोला, शु० हिगुल ३ तोला,कालीमिचका कपडछान चूर्ण ४ तोला,जसदकी भस्म ८ तोला। यदि सुवर्णकी भस्मली हो तो सर्वद्रव्योंको एक साथ मिला कर ३ घन्टा मर्दन करे, यदि सोनेके वर्कलिये हो तो अन्य द्रव्योंको मर्दन करके वादमें १-१ वर्क मिलाता जावे और मर्दन करता जावे, जबतक सोनेके वर्क अच्छी तरहसे मिल न जाय। वादमें २ तोला दूधमेंसे या छाछमेंसे निकाला हुआ मक्खन मिलाकर १ दिन मर्दन करे। पीछे कागजी निबूका छाना हुआ रस मर्दन योग्य डालकर दिन भर मर्दन करे। एक वारका डालाहुआ रस सूखनेपर ही दूसरा रस डाले। इस तरहसे जबतक मक्खनकी चिकनाई दूर न हो, तबतक निबू रसमें मर्दन करे। सामान्यतः चिकनाई हटानेके लिये ६५ नीबू मध्यम श्रेणोका रस पर्य्याप्त है। पीछे गोली बनाकर छायामे सुखा ले यह रस वसन्तमालती नामसे संसारमें प्रसिद्ध है। मात्रा १-२ रत्ती सुबह सांम दिनमें दो बार है।

अनुपान—छोटी पीपलका बारीक चूर्ण २ रत्तीके साथ मधु मिलाकर चटावे। अथवा सितोपलादि चूर्ण १ मासा मिलाकर मधुमें देवे।

यह योग जोर्णज्वर राजयक्ष्मा रोगान्त दौर्वल्य, श्वेतप्रदर, पाडुरोग, अग्निमान्द्य, गण्डमाला, अन्त्रक्षय, फुफ्फुसकला शोथ, वाल-शोप इन रोगोमें विशेष फायदा करता है।

सितोपलादि चूर्ण

सितोपलां तुगाक्षिरीं पिप्पली वहुलात्वचम् ।

अन्त्यादूर्ध्वं द्विगुणितं लेहयेन्मधुसर्पिषा ॥
चूर्णितं प्राशयेद्वातच्छ्वास कासकफातुरम् ।
सुप्तजिह्वारोचकिन मल्पाग्निं पार्श्व शूलिनम् ॥
चरक चि० अ० ११

निर्माणविधि—मिश्री १६ तोला, वंशलोचन, ८ तोला, छोटी पीपर ४ तोला, इलायची छोटी २ तोला, दालचीनी १ तोला सर्व कूट कपड-छान चूर्ण करके रखलेवे।

मात्रा और अनुपान ४-१२ रत्तीतक शहद और गायके घृतके साथ मिलाकर देवे। यदि वातपित्त प्रधान रोगोंमें अथवा वातपित्त प्रकृतिवाले पुरुषको देना हो तो अनुपानमें शहद १ भाग घृत २ भाग लेवे। यदि कफ प्रधान रोगवालेको देना हो तो शहद २ भाग घृत १ भाग लेवे।

सूखी खांसी में घृतके साथ कफ अधिक तथा सरलतासे निकलता हो ऐसी खांसी मे शहदके साथ ही देवें।

मरिच्यादि अवलेह। भैषज्य रत्नावलि

कर्षः कर्षार्धमथो पलं पलद्वयं तथार्द्ध कर्षश्च।
मरिचस्य पिप्पलीनां दाड़िम गुड़याव शूकानाम् ॥
सर्वौषधैरसाध्याये कासाः सर्व वैद्यविनिर्मुक्ताः।
अपि पूये छर्दयतां तेषामिदमौषधं पथ्यम्

निर्म्माण विधि—काली मिर्च १ तोला, छोटी पीपल ½ तोला दाड़िम बीज ४ तोला, पुराना गुड ८ तोला, यवक्षार ½ तोला गुड को पानी में ओटाकर गुड पाक विधि से पाक करके उपरोक्त द्रव्यों का कपड़ छान चूर्ण करके मिला देवे। इसको अवलेह रूप मे अथवा गुटिका रूपमें देने से पांचो तरह की खाँसी जल्दी ही आराम हो जाती है

यह प्रत्यक्ष देखो हुई है। किसी टाइम रक्त अधिक आता है तो इसको न देकर एलादिवटी देनी चाहिये।

युनानी चिकित्सा

इसरोग मे वनप्सादि (जोसांदा) क्वाथ देते है जिसका नुसखा यह है।

गुलबनप्सा, गाजुवान, मुलैहठी, मुनका, सोंफ अंजीर, उन्नाव अडूसा, जूफा, सपिस्तान, खूबकला, हंसराज, सोंठ कालीमिर्च प्रत्येक समभाग लेकर अधकचरा करके छोड ले फिर इसमें से १तोला लेकर उसको १० तोला जलमे पकाकर ४ तोला जल बाकी रहे तब कपड़े से छानकर उसमें ३ मासा मिश्री या मधु मिलाकर दिनमे २-३ बार देवें। मेरेमत से इसको अकेला न देकर नारदीय लक्ष्मीविलासके साथ अनुपान रुपमे देने से अच्छा फायदा होता है।

उपयोग प्रतिश्याय – (जुकाम सर्दी मे कफज्वर में तथा उस खासी मे तथा उस श्वासमें जहा कफ जमा हुआ गाढ़ा हो सरलता से न निकलता हो उसमें इस काथ से बहुत अच्छा फायदा होता है।- इस क्वाथ को केवल या ५ रत्ती नरसार और यवक्षार ५ रत्ती मिलाकर उपयोग कर।

तन्त्रान्तरोक्त आनन्द भैरव रस

हिंगुलञ्च विषं व्योषं टकणं गन्धकं समम्।
जम्बीर रस संयुक्तं मर्दये द्याममात्रकम् ॥
कासश्वासातिसारेषु ग्रहण्यांच हलीमके।
अपस्मारे ऽनिले मेहे ऽजीर्णे वह्निमान्द्यके,
गुञ्जामात्रः प्रदातव्यो रस आनन्द भैरवः ॥

शु० हिंगुल, शु० वत्सनाभ, सोंठ, मिर्च, पीपल, शु० सुहागा, शु० गन्धक, यह सर्व समान भाग लेकर जम्मीरी के रस मे १ प्रहर तक

अच्छी तरह से मर्दन करके १-१ रत्ती की गोली बनाकर छाया में सुखा लेव।

उपयोग—यह आनन्द भैरव रस अनुपान भेद से कासश्वास अतिसार, संग्रहणी, पाण्डु, हलीमक, मृगी, वायु सम्बन्धी रोग, प्रमेह अजीर्ण अग्निमन्द सम्बन्धी बीमारियों में अच्छा फायदा करता है।

लवङ्गादि वटी

जाती फलं त्रिदश पुष्प समन्वितञ्च।
जीरञ्च टंकण युतं मुनिभिः प्रणीतम्॥
एतानि माक्षिक सिता सहितानि लीढ्वा।
आमातिसार मखिलं ज्वर माशुहन्ति॥

जायफल, लवङ्ग, सफेद जीरा, सुहागा इनको सम भाग लेकर कूट छान कर के जल से १ मासा की गोली बनाकर रख लेवे।

उपयोग मधु मिश्री से मिलाकर चटाने से आमातिसार तथा अन्य अतिसारों मे अच्छा फायदा होता है।

खण्डखाद्य लौहम्

शतावरी छिन्नरूहा वृषो मुण्डितिकाबला।
तालमूली च गायत्री त्रिफलायास्त्वचस्तथा॥
भार्गी पुष्कर मूलञ्च पृथक पञ्च पलानि च।
जलद्रोणे विपक्तव्य मष्टभाग विशोषितम्॥
दिव्योषधि हतस्यापि माक्षिकेण हतस्य वा।
पलद्वादशके देयम् रूक्मलोहस्य चूर्णितम्॥
खण्ड तुल्यं घृतं देयं पलषोडशिकं बुधैः।
पचेत्ताम्रमये पात्रे गुड़ पाको मतोयथा॥

प्रस्थार्धं मधुनो देयं शुभाकम जतुके त्वचम् ।
शृंगी विडगं कृष्णा च शुण्ठी जाति फलं पलम् ॥
त्रिफला धान्यकं पत्रं द्यक्तं मरिच केशरम् ।
चूर्ण दत्वा सुमथितं स्निग्ध भाण्डे निधापयेत् ॥
यथा कालं प्रयुञ्जीत चतुर्गुञ्जा मितेततः ।
गव्यं चीरानु पानञ्च सेव्यं मांस रसं पयः ॥
गुरु वृष्यानु पानानि स्निग्धमांसादि वृहरणम् ।
रक्त पित्त क्षयं कासं पक्ति शूलं विशेपतः ॥
वात रक्तं प्रमेहञ्च शीत पित्तं वमिंक्लमम् ।
श्वयथुं पान्डु रोगञ्च कुष्ट प्लीहोदरं तथा ॥
आनाहं रक्त माऽवेत्र मम्ल पित्तं निहान्ति च ।
चक्षुष्यं वृहणं वृष्यं मांगल्यं प्रीतिवर्धनम् ॥
श्री करं लाघव कर खण्डखाद्यं प्रकीर्तितम् ॥

सतावर, गिलोय, अडूसा, गोरख मुण्डी, खरेटी, मुसली, खैरसार, त्रिफला, भारंगी, पोहकर मूल, ये प्रत्येक औषधि २०-२० तोला लेकर कूट कर १०२४ एक हजार चौवीस तोले भर जल मे डालकर पकावे, जब पकते पकते आठवाँ हिस्सा काढा शेप रह जावे तब छान कर इस में मैनसिल से अथवा सोना माखीसे मारा हुआ तीक्ष्ण लोहा ४८ तोला, चीनी ६४ तोला, घृत ६८ तोला, इन सब को मिलाकर ताँवे के वर्तन में डालकर जिस प्रकार गुड का पाक बनता है उसी प्रकार पकावे शीतल होने पर मधु ु॥ मिलावे फिर वंशलोचन, शिलाजीत, काकड़ासिगी, पीपल, वायाविडङ्ग सोंठ, जायफल, त्रिफला, धनियाँ तेजपात, दालचीनी, नागकेशर, प्रत्येकका चूर्ण ४-४ तोला लेकर सबको

मिलाकर अच्छी तरहसे मथ कर चिकने बर्तन मे भर कर रख देवे इसी को खण्ड खाद्य लौह कहते है।

उपयोग—इस औषधि में से ४ रत्ती अथवा कुछ अधिक समयानुसार लेकर गाय के दूध के साथ सेवन करना चाहिये। इस लौह का सेवन करनेवाला पथ्य सें मांस का रस दूध,भारी पदार्थ, वृष्य, मांसादि द्वारा पुष्टिकारक पदार्थों का सेवन करे, इस लोह को भक्षण करने से रक्तपित्त् क्षय, खांसो, पार्श्वशूल, वातरक्त, प्रमेह, शीतपित्त, वमन, ग्लानि, सूजन, पाण्डुरोग, कुष्ठ, प्लीहा, उदररोग, आफरा, मूत्रकृच्छ और अम्ल पित्त ये सब रोग नष्ट होते है। नेत्रों को हितकारी पुष्टि करने वाला वृष्य मंगल रूप प्रीति बर्धक लक्ष्मी जनक शरीर मे हल्कापन करने वाला है।

रसादि वटी

रसवली घनसार चन्दनानां सनलद सेव्य पयोदजीवनानाम्।
अपहरति वटी मुखस्थितेयं सकल समुत्थित दाहसम्भ्रमेण॥

योग रत्नाकर, तथा सिद्ध योग संग्रहसे उधृत

द्रव्य और निर्माण विधि

शु पारा, शु० गन्धक, कपूर, सफेद चन्दन, जटामासी, नेत्रवाला, नागरमोथ, खस, प्रत्येक समभाग प्रथम पारद गन्धककी कज्जली करके पीछे अन्य द्रव्यो का वारीक चूर्ण करके मिलावे और गुलावजल चन्दन अर्क मे २-३ दिन मर्दन करके दो दो रत्ती को गोलिया बनाकर छायामे सुखा कर रख लेवे। मात्रा २-४ रत्ती।

वैद्यराज पं० यादवजी बम्बई वाले इस योग में छोटी इलायची दरियाई नारियल की गिरी ओर मिलाते हैं। इस से विशेष लाभ होता देखा गया है।

उपयोग—सभी प्रकार का दाह, तृषा, हिक्का, और वमन मे इस योग

का उत्तम फल होता है। हैजामें वमन निवारणार्थ इसका उपयोग होता है।

जहरमोहरा खताई पिष्टी

यह बाजार में प्राय: मुसलमान पंसारियों के पास इसी नाम से मिलता है। यह एक पत्थर है जो रंग में सफेद कुछ पिलाई और हरापन लिये हुए होता है। जो वजन में हल्का तथा चिकना हो वह अच्छा समझा जाता है। यह युनानी में प्रचलित द्रव्य है। हकीम लोग इसको विपघ्न, हृदय बलकारक, वमन को बन्द करने वाला तथा नरगरम मानते हैं।

पिष्टी की विधि

इसको इमाम दस्ते में कूटकर खरल में डाल कर गुलाब जल में पीस कर अति सूक्ष्म पिष्टी बनाले।

उपयोग—इसका उपयोग वमन, दाह, दिलकी घबराहट, अम्लपित्त विसूचिका बच्चों के हरे पिले रगके दस्तों में होता है। मात्रा २ रत्ती से १ मासा

होमियोपैथिक चिकित्सा

एकोनाइट ६, ३०—तीव्रज्वर, सर्दी, बैचेनी, प्यास, सूखी खासी प्रभृति लक्षणोंमें दिया जाता है।

जेलसिमियम १ + ६, ३०—शीत कम्पयुक्तज्वर तथा ज्वरके साथ कोई विशेष उपसर्ग नहीं हो—तथा नासिकासे जलश्राव अधिक होता हो, माथा गर्म हो छींकें आती हो, गलेमें जलन अथवा वेदना होती हो शरीरमें भी दर्द होता हो, तन्द्रा आती हो ऐसे लक्षण होनेपर दिया जाता है।

इयुपेटोरियम पर्फो—३, ६, ३०—शरीरमे हड्डी टुटने जैसी वेदना, पित्त का वमन, जी मिचलाना, कमरमे दर्द, दुर्वलता, तृषा प्रभृति लक्षणोंमें फायदा करता है।

आर्सेनिक आयोड ३×, ६, ३० यह इस रोगकी प्रधान औपधि है। अगर जेलसियमके साथ इसका पर्य्याय क्रमसे प्रयोग किया जाता है, तो ज्वर तथा अन्य उपद्रव वहुत शीघ्र ही घट जाते है। जेलसियम १×, आर्सनिक १× व्यवहारमें लाना चाहिये।

अन्य औषधियां जैसे एलियम सिपा ३, ६, कैलिवाईक्रोम ६, ३०-२००, मर्कुरियस सोल ६, ३०। नैट्रमसल्फ ३० वौप्टोशिया १×। इन्फ्लुएञ्जिनम ३०, २०,। आदि औषधियां भी दी जाती है।

ऐलोपैथिक चिकित्सा

नुस्खा नं० १ सोडासैलीसिलास	Soda-Salycilas	४० ग्रेन
लाइकर स्ट्रीकनिया हाइड्रोक्लोराइड	Liq. Strychnia Hydrocholore	१० बूंद
पोटास बाईकार्ब	Pot Bicarb	१ ड्राम
पोटास ब्रोमाइड	Pot. Bromide	३० ग्रेन
एक्सट्रैक्ट ग्लीसरी जालिक्विड	Ext. Glyceriza liquid	१॥ ड्राम
लाईकर एमोनियां एसिटास	Liq. Ammonia Acetas	६ ड्राम
जल	Aqua	३ औंस

इन सबको मिलाकर ३ हिस्सा करके दिनमे ३ समय देंवे।

नुस्खा नं० २ उपर उठा कर एमानियाकार्ब	Ammonia Carb	३ ग्रेन
टिंचर सिल्ला	Tı. Scillae	१० बूंद
लाईकर एमोनिया एसिटेट	Liq. Ammonia Acetate	१ ड्राम
टिंचर डिजिटेलस	Tr. Digitelis	५ बूंद
टिंचर नक्सवमिका	Tr. Nux-Vomica	५ बूंद
स्प्रिट् कैम्फर	Spt. Camphor	१० बूंद
दालचीनी सुवासित जल		१ औंस

यह प्रयोग इन्फ्लुएञ्जाके लिये उत्तम है और आजकल Influenza Tablets भी व्यवहारमें लाई जाती है।

कण्ठ कुब्ज सन्निपात (डिप्थेरिया)

शिरोर्ति कण्ठ ग्रहदाह मोह कम्प ज्वरा रक्त समीरणार्ति ।
हनुग्रहस्ताप विलाप मूर्च्छाः स्यात्कण्ठकुब्जः खलुकष्ट साध्यः

जिस सन्निपातमें शिरमे पीडा हो, कण्ठ रुक जाय, दाह हो, मोह हो, रक्त तथा वात जन्य पीड़ा हो, ठोडो जकड़ जाय, शरीरमें ताप हो, तथा विलाप मूर्च्छा ऐसे लक्षण हों, उसको कंठ कुब्ज सन्निपात कहते है कंठकुब्जमे और त्रिदोषज कण्ठ रोहिणी में कुछ भी फर्क नहीं है क्योंकि जो लक्षण कण्ठकुब्जमे है वही रोहिणी में है। इसकी अवधि १३ दिवस की है।

रोहिण्याः सनिदान सम्प्राप्तिः

गलेऽनिलः पित्तकफौ च मूर्च्छितौ प्रदूष्य मांसञ्च तथैव शोणितम्
गलोपसंरोधकरैस्तथांकुरै निंहन्त्यसून्व्याधिरयं च रोहिणी ॥

भावार्थ—यस्मिन रोगे गले अनिलः वृद्धः तथा पित्त कफौ मूर्छितौ दग्धौ मासं शोणितं च प्रदुष्य तथा गलोपसंरोधकरैरसून्निहन्ति स रोहिणी संज्ञो व्याधि ज्ञेयः। सर्वा रोहिण्यस्त्रिदोष जा इति।

भावार्थ—गलेमें वायुके दोष से अथवा पित्त और कफ के दोषसे अथवा रक्त दोष अथवा मांस दोष से रक्त दूषित होकर मांसांकुरोको पैदा कर देता है तब उससे रोहिणी नामक रोग हो जाता है और यह शीघ्रही प्राणोंका नाश करने वाला होता है।

अथरोहिणी मरणाऽवधि

सद्य स्त्रिदोषजा हन्ति त्र्यहात्कफ समुद्भवा ।
पञ्चाहा त्पित्त सम्भूतासप्ताहा त्पवनोत्थिता ॥

भाषा—त्रिदोषसे उत्पन्न रोहिणी तत्काल मार देती है। कफोद्भवा तीन दिनमें मारदेती है पित्त जन्य पांच दिनमें मार देती है। वातजन्य ७ दिनमें मारदेती है।

अथ कंठकुब्ज चिकित्सा

(१) फल त्रिकत्र्यूषण मुस्त तिक्ताकलिंग सिंहानन शर्वरीभिः
क्वाथः कृतः कृन्तति कण्ठकुब्जं कंठीरवः कुञ्जरमाशु तद्वत् ॥

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु, नागरमोथा, कुटकी, इन्द्रजौ, अडूसा, हल्दी इन सब औषधियोंका क्वाथ इस सन्निपातको तत्काल नष्ट करता है। जैसे सिह हाथी को मार देता है।

(२) किरातादि चिरायता, कुटकी, पीपल, इन्द्रजौ, कंटकारी कचूर, बहेड़ा, हरड,देवदारु, मिर्च,कायफल,नागरमोथ, अतीश, आमला, पोहकरमूल, चीता, काकड़ासिङ्गी, अडूसा, सोंठ इनका क्वाथ कण्ठ-कुब्जको नष्ट करता है।

(३) अपनयति कंठकुब्जं कृष्णापामार्गवीजदंनस्यम्।
अथ हन्ति सलिल सहितं त्रिकटुककटुतुम्बिनी नस्यम् ॥

छोटी पिपल, चिरचिरा बीज, कानस्य देनेसे कंठ कुब्ज नष्ट हो जाता है।

(४) त्रिकटु, कडुवी तुम्बीवीज; जलमें पीसकर नस्य देने से भी कण्ठ कुब्ज नष्ट हो जाता है।

गलरोगोंकी सामान्य चिकित्सा

(१) कंठ रोगेष्वसृङ्मोक्षैस्तीक्ष्णैर्नस्यादि कर्मभिः।
चिकित्सक श्चिकित्सान्तु कुशलोऽत्रसमाचरेत् ॥

विद्वान् वैद्यगलरोगोंकी चिकित्सा जोको द्वारा अथवा शस्त्र कर्म द्वारा रक्त मोक्षण कराकर अथवा तीव्र नस्यादिकोंके द्वारा करे।

(२) दारु हल्दी, तज, नीमछाल. रसोत, इन्द्रजौ, इनका काथ पिलावे। या हरड़ छालके काथमे मधु मिला कर पिलावे। इससे वातज रोहिणी नष्ट हो जाती है।

(३) पित्तज रोहिणीमें, कुटकी, अतीश, देवदारु, पाढल नागर-मोथा, इन्द्रजौ, इनका काथ गोमूत्रमें पकाकर पिलावे।

(४) कफज रोहिणी में दाख, कुटकी, सोंठ, मिरच, पीपल दारु-हल्दी, त्रिफला, नागरमोथा, पाठा, रसोत, दूर्वा तेजवल, इनका काथ मधु मिलाकर पिलावे।

(५) यवक्षार, तेजवल; पाढल, रसोत, दारुहल्दी पीपल इनक शहदमें गोली बनाकर चूसनेको देनेसे समस्त गलेके रोग मिटजाते हैं।

नोट—

इस रोगसे ग्रस्त बहुतसे रोगी मैंने देखे। और इलाज भी किया परन्तु फिरभी इसकी चिकित्सा जैसी ऐलोपैथिक में डिप्थीरिया सीरम के प्रयोगसे आशुफलदायिनी होती है वैसा हमारे यहां नही होती निदान भी डाक्टरी वालोंके यहां जैसा विशद रूपसे मिलता है वैसा हमारे यहां विशेष रूपसे नहीं मिलता। अतः इस रोगमें डाक्टरी निदानकी सहायता लेनाभी अत्यन्त हितकारी है। अतः आगे डाक्टरी मतानुसार ही इसका विवरण दिया जारहा है।

कंठ कुब्ज सन्निपात। डिफ्थीरिया (DIPTHERIA रोहिणी

यह एक प्राण घातक बीमारी है। इसमें शरीर का रक्त दूषित हो जाता है। ज्यादा करके कम उम्र वाले बालक बालिकाओ को यह बीमारी अधिकतया होती है। अगर किसी घरमें एक बच्चेको यह बीमारी हो जाती है तो उसमे रहने वाले दूसरे बच्चोंको भी होने की सम्भावना रहती है। १ से ५ वर्ष को आयु वालोंको अगर यह बीमारी हो जाय तो यह प्राण घातक ही होती है। डाक्टरी मतसे

इसकी उत्पत्ति एक तरहके कीटाणु से मानी है। जिसको (B. diptheria कहते हैं। जिन बच्चोंको अकसर तालुमूल प्रदाह (टोनसिलाईटिस) हो जाता है अथवा जिनके दांत का मसूड़ा फूलता है या दांत मे कीडे लग जाते है, या गलेमे दर्द हो जाता है, उनको ही यह बीमारी अधिक दिखाई देती है। इसके अलावा जो मनुष्य गलेसडे स्थानोंमे रहते है उनको पुष्टि कर स्वच्छ भोजन न मिलनेके कारण रोग हो जाता है उनको भी यह बीमारी हो जाती है।

प्रथमावस्था के लक्षण

प्रारम्भावस्थामे गले के भीतर देखनेसे उपजिह्वा और उसके चारों तरफ याने टोनसिल के आस पास लालिमा युक्त सूजन दिखलाई पड़ती है। तथा टानसिल के ऊपर सफेद रंगके छोटे छोटे मलाई के टुकड़ों जैसा प्रलेप २-३ दिन बाद दिखलाई देता है। इस समय रोगी को हर एक वस्तु निगलने मे बहुत तकलीफ होती है। तथा ज्वर १०२ डिगरी से १०४-१०५ तक हो जाता है। एकदम हलका रूप होने से गलेमें तथा शरीरमे हलका दर्द निगलनेमे कष्ट इत्यादि भी होते हैं। उग्र रूप होने से ग्रीवा अकड जाती है। कानमे दर्द होता है जबड़ेकी दोनों तरफकी ग्रन्थियां फूल जाती है। गले के भीतर सफेद पदार्थ दिखाई देता है तथा श्वास लेने में बहुत कष्ट होता है। कभी कभी सफेद पदार्थस्वर-यन्त्र तक फैल जाते है तब उस समय उसको लेरिंजियलडिप्थीरिया कहते है।

तीव्राऽवस्था के लक्षण

जब इस रोगका आक्रमण श्वासनलिका पर होता है तब श्वासकी ध्वनि को सुनते ही अथवा श्वासक्रियाऽवलोकन से ही सहज ही मे इस रोग की पहिचान हो जाती है। याने इस रोगमें श्वास मार्ग अवरुद्ध होजाता है इसलिये रोगी को खूब ज़ोरसे कष्ट के साथ श्वास

लेना आरछोड़ना पड़ता है। इस रोगमें गलेमेंजोरकी आँधीकी तरह एक प्रकार की आवाज होती है। पॅसलियां खिचती है और शरीर नीला-पड़ जाता है यह एक भयंकर सांघातिक रोग है इससे प्रायः रोगी मरहो जाते हैं इस रोगका आक्रमण अन्न नलीमें होनेसे निगलना विल्कुल बन्द हो जाता है, तथा कभी-कभी इस रोगके साथ ब्रांकोनिमोनियां ब्रांकाइटिस प्रभृति उपसर्ग भी वर्तमान रहते है। पक्षाघात भी इस बीमारी का एक प्रधान उपसर्ग है। यह प्रायः बीमारीसे छुटकारा होनेके २-४ सप्ताह बाद होता है। पक्षाघात का दौरा अगर तालू पर हो जाता है तो रोगी नासिका द्वारा गुनगुनाता हुआ बोलता है। तथा खाद्य पेय वस्तुओं को खाते समय नाकसे निकाल देता है।

इस बीमारी के साथ निची लिखी हुई कई बीमारियों का भ्रम भी हो जाता है इसलिये उनके भेदोंको जानने की भी आवश्यकता है। यथा काली खांसी इसमें भी श्वासनलिका और उसके ऊपरी अंशकी श्लैष्मिक झिल्लीमें प्रदाह हो जाता है और वहापर एक नकली पर्दा उत्पन्न हो कर श्वास कष्ट युक्त एवं खासी की आवाज कुत्ता भोंकनेकी तरह या फूटे वर्तन की तरह होती है। तथा ज्वर भी हल्का ही रहता है खांसीका वेग भी अत्यन्त आक्षेपिक होता है। डिप्थोरिया के लक्षण इससे विपरीत होते है। . जैसे डिप्थीरिया में गलेमें घाव होता है उसके ऊपर एक सफेद पर्दा पड़ा रहता - है, घाव गला नाक और फेफड़े के ऊपरी भाग तक फैल जाता है। इसलिये इसको कोई सडने वाला गलक्षत और कोई मारात्मक टानसीलाईटिस कहते हैं। डिप्थीरिया में ज्वर प्रबल रहता है तथा रोगीकी अवस्था बहुत ही कमजोर और शिथिलहो जाती है। लेकिन हपिंग कफ Hooping Cough काली खांसी में प्रायः ज्वर नहीं रहता दौरेके रूप में प्रबल वेगसे खांसी चलती है। और खांसी का वेग न रहनेसे रोगी स्वस्थकी तरह हो जाता है तथा

गलेके भीतर पर्दा भी नही होता है ब्रोंकाइटिस में परीक्षा के समय नानाप्रकार की आवाजें मिलती हैं छातीमें दर्द रहता है। लेकिन गलमें घाव दिखाई नहीं पड़ता।

इस रोग मे अन्य रोगो का सम्पर्क विशेष भय प्रद होता है। जो रोगी ठीक होन वाले होते हैं तो उनके सांसकी दुर्गन्धि मिट जाती है, शोथ और प्रदाह घट जाता है। गलेके भीतर से सफेद सफेद मलाई के से टुकडे निकल कर घाव साफ हो जाता है। जो रोगी बिगड़ने वाले होते है। उनके श्वास प्रश्वासमें बहुत सड़ी दुर्गन्धि आनेलगती है। नाड़ी क्रमशः क्षीण उतावली और मन्द पड़ जाती है तथा वमन बेहोशी प्रलाप, ज्वर बृद्धि, श्वासमें कष्ट, या श्वासावरोध', इत्यादि लक्षण होने लगते हैं, तथा पेशाब भी रुक जाता है' नासिका आक्रान्त होने पर समस्त पीने की चीजें नाक से बाहर आ जाती है। इसके अलावा बीमारी ठीक होने पर भी कितनेक रोगियोंको स्थानिक या सर्वांगिक पक्षाघात हो जाता है, कभी कभी बोलनेकी शक्ति, खाने की शक्ति कम या एकदम लुप्त हो जाती हैं।

चिकित्सा और पथ्य

डिफ्थीरिया मे तीव्र आक्रमण के समय जिस घरमें रोगी रहे उस घर की हवा हर समय तर रखना आवश्यक है, निम्न लिखित उपायों से कमरे मे वाष्प पैदा कर देने पर कमरे की हवा तर रहती है, और इससे रोगी का श्वासीयकष्ट भी घट जाता है, तर रखने का उपायः-

१-या २ ड्राम रेक्टिफाइडस्पीट, एक औंस जल में मिलाकर, वह पानी स्टीम ओटो माइजर नामक यन्त्रके ग्लासमें डाल कर उसका स्पिरीट लैम्प जला कर, युवा" मनुष्यके मुंहके पास और बच्चों के विस्तर के पास रख देना चाहिये। उससे जो वाष्प निकले, उसको रोगी अपने श्वास मार्ग से ग्रहण करे। यह यन्त्र ऐलोपैथिक औषध विक्रेताओंके पास मिल जाता है। अगर यह यन्त्र नहीं मिले तो इसकी

जगह चाय की केतली, या गंगा सागर में ऊपर वताये हुये हिसाव स्पिरिट से मिला हुआ पानी रखकर उस केतलीके नलीके नलसे रवड़ की नली जोड़ कर केटली को आगपर चढ़ाकर भाफको काममे लावे, लेकिन ऐसे समय केटली या अन्य गंगासागरादि यन्त्रको कमरे केबाहर और नल को रोगीके विछोने के पास रक्खे इस क्रियासे हवा भीतर हो जाती है, और रोगीको श्वास लेने में भी कष्ट कम हो जाता है। हमारे यहां रेक्टिफाइडकी जगह लोहवान का चूर्ण पानी मे डाल कर उसकी भाफ से भी काम लिया जाता है। मुंहके घावको भी हर समय साफ करते रहना चाहिये, इसके लिये डाक्टरी वाले ग्लिसरीन, हैड्रोजिन-प्रोक्साइड, वोरो फैक्ष आदि का प्रयोग करते है।

हमारे यहाँ आयुवद में मुख शुद्धिके लिये टंकण मधुमे मिलाकर रुई की फुरेहरी द्वारा प्रयोग किया जाता है। अथवा उदुम्बर सार का कुल्ला या अजवाईन अर्क को गरम जलमें डालकर कुल्ला कराया जाता है। इस प्रयोग से मुंह का घाव वहुत कुछ साफ हो जाता है, इस बीमारीमें गलेमें दोपका संचय होने से श्वासावरोध होकर मृत्युकी सम्भावना हो जाती है। ऐसे समय रोगीके गलेकी नली काट कर श्वास दिलाने का प्रयत्न करना चाहिये। इसक्रियाके लिये अस्पताल में भेज देना चाहिये।

पथ्य में —जलवाली, सावू आरारोट,हार्लिक्स,ग्लुकोज वाटर, मिश्रीजल देना चाहिये। अगर मुंह से न खासके तो डाक्टर लोग मल द्वार रास्ते से आहार देनी की व्यवस्था करते है।

मल द्वार से आहार प्रदान करने की विधि

यह कार्य वस्ति यन्त्रके द्वारा किया जाता है जैसे काचनिर्मित एनिमा यन्त्र जिसमें रवरकी ट्यूव लगी रहती है, उसको एक ५-६ इञ्च लम्बी कांचकी नली में रवर के नल को एक तरफ जोड़ दे, और दूसरी

तरफ भी ५-६ नम्बरके मेलका साफ्ट कैथिटर लगादे, इसके बाद रोगी को बांयी करवट सुलाकर कथिटर जिस मुंह की तरफ छिद्र है उसीकी तरफसे मल द्वारके भीतर जितनी दूर तक सम्भव हो प्रवेश करादे, प्रवेशके पूर्व कैथिटर के मुंह पर थोड़ा सा ग्लेसरीन, या जैतुन का तैल अथवा नारियलका या एरंण्ड का तैल चुपड़दे, फिर आहारद्रव्य एनिमा (डूस) के पात्रमें धीर धीरे ढाल दे, और उस कांच की नली में से जाते हुए खाद्य पदार्थ को देखता रहे कि नली से पदार्थ आहिस्तेसे' भीतर प्रवेश कर रहा या शीघ्रतासे या नहीं जा रहा है, इस क्रिया मे खाद्य पदार्थ धीरे२ ही जाना चाहिये शीघ्रता पूर्वक जानेसे आंत ग्रहण नहीं करती है। इसलिये इसक्रियामें कुछ अधिक समय लगाना चाहिये। अगर नियम से आहार न पहुंचाया जा सके तो कांचकी पिचकारीके द्वारा भी यह कार्य होने सक्ता है। रोगी की कमजोर हालतमें स्टिमुलैण्ट की जरुरत होती है। ऐसे समय डाक्टरी वाले पुरानी ब्राण्डी देते हैं। आर्युदमें ऐसे समयमें मृतसंजीवनी सुराका प्रयोग किया जाता है।

ऐलोपैथिक औषध

डिफ्थेरिया सिरम ही इसकी विशिष्ट औषधि है। इसके सामयिक प्रयोग से लगभग ८० प्रतिशत रोगी ठीक हो जाते है।

आयुर्वेदीय चिकित्साका उदाहरण

रोगीनाम	उम्र	जाति	देश	यहाका पता
सावित्री	३ साल	अग्र०	गुड़ा	खिदिरपुर, रासकुमार

इसको सं० १६४३ में यह बीमारी हुई मुझे भी देखनेके लिये बुलाया,—मैं जब वहां गया तब निम्नलिखित लक्षण थे। ज्वर १०४ श्वास लेने मे कष्ट, खासी सूखी बार २ मे चलती थी, स्तनपान नहीं करती थी, जिह्वा सफेद घाव युक्त थी, पानी पीनमे बहुत कष्ट होता था, याने

प्रायः जल बाहर ही निकल जाता था, गले के बाहर शोथ था, गले को खोल कर देखने से भीतर सफेद मल जैसा जमा हुआ था कुछ आंकोके लक्षण भी थे। मैंने उसको देख कर कंठ कुब्ज सन्निपात स्थिर किया, उसी समय एक डाक्टर भी आया उसने देख कर रक्त परीक्षा के लिये आर्डर दिया। दवा के लिये मैंने घरवालोंसे पूछा कि इलाज कौन का करायेंगे। घर वालों ने कहा कि डाक्टरी इलाज हमारे घरमें शुभ नहीं होता है। कविराजी इलाजही करायेंगे, आप ही इसकी चिकित्सा कीजिये। अतः निम्नलिखित औषध व्यवस्थाकी गई।

प्रातः	सायं	मध्यान्ह
बालरोगान्तक रस १ रत्ती कुटकी, अतीश, देवदारू, पाठल, मोथा, इन्द्र जो इनके क्वाथ के अनुपान से दिया।	कुमार कल्याण रस माता दूधसे	पुस्करादि चूर्ण २ रत्ती अदरख रस मधुमें

कालक चूर्ण मधुसे बार २ चाटनेके लिये दिया, लोहबान का बफारा दिया तथा छातीमें और गलेपर पुरातन घृतकी मालिस करा कर बालुका सेक दिया इस तरह इस दवा को ७ रोजतक चालू रखा। मुंहको दिनमें ३-४बार अजवाइनअर्क मिले हुये जलसे साफ करने के लिये कहा गया ७ रोज मेही यह लड़की बिल्कुल ठीक हो गयी। पथ्यमें माताका दूध, जल बार्ली, मिश्रीका शर्वत दिया गया, ज्वर ७ रोजके बाद भी ९८-९९ डिग्री ५-६ रोजतक रहा था लेकिन और कोई त्रुटि नहीं रही थी।

आयुर्वेद में इसकी चिकित्सा के लिये कितनी ही औषधियां हैं। परन्तु इस रोग को देखतेही वैद्यलोग घवड़ाकर, अथवा घरवाले घबरा कर इलाज डाक्टरों को दे देते है। ऐसा करना उनकी भूल है,आयुर्वेदके बराबर चिकित्सा प्रणाली अन्य कोई भी नहीं है, त्रुटि सिर्फ अनुभवकी है, अगर हर एक वैद्य अपना अनुभव मासिक पत्रो के द्वारा, अथवा पुस्तक रुपमें बाहर प्रकाशन करने लग जावें तो अन्य चिकित्साओंका

महत्व भारत वर्षमें टिकने ही नहीं पाये। लेकिन हमलोगोमें यह बहुत बडा दोष है, इसको मिटाये बिना वैद्य समाजकी उन्नति असम्भव है।

रोगी का नाम	उम्र	जाति	देश यहा का पता
बाबूलाल	१८	अग्र०	झाझर, मारवाड़ी छात्र निवास

इसको प्रारम्भमे ज्वर १०४ हुआ था। इससे २-३ रोज डाक्टर को बुलाकर दिखाया और उनका इलाज चालू किया। २-३ रोज तक इलाज चलनेके बाद भी ज्वर कम नहीं हुआ तब उन्होंने मियादी ज्वर कायम करदिया, और आज कलकी टाईफाईडकी दवा चालू कर दी। ४ रोज यह दवा चलनेके बाद ज्वर उतर गया, लेकिन जी घबराना, खाँसी, गलेमें भयंकर वेदना, प्रलाप, श्वासमें रुकावट आदि उपद्रव खड़े होगये, तब घरवालोने मुझको देखनेके लिये बुलाया तब निम्नलिखित लक्षण थे। ज्वर ९८ था। गलेमे भयंकर वेदना, निगलनेमे पूरी रुकावट, सूखी खांसी, सन्धियोंमें पीड़ा, शिरमे दर्द, मोह एवं दाह था। नाड़ीकी गति कमजोर थी। मैंने इसको देख कर डिफ्थीरिया रोग कायम किया, और निम्नलिखित इलाज चालू किया।

प्रात:	सायं	मध्याह्न
कस्तूरी भैरव १ रत्ती	लक्ष्मी विलास १ गो०	शृंग्यादि चूर्ण
माणिक्य रस १ रत्ती	माणिक्य रस १ रत्ती	
भार्ग्यादि क्वाथ मधुसे	पान रस मधुसे	अदरख रससे

रातको कृष्ण चतुर्मुख पान रस मधुसे। गले पर धस्तूरादि घृतकी मालिस कराकर गुलबनप्सा गरम करके पट्टी बाँधी गयी।

लोहवानका भफारा दिया। पथ्यमें जल साबू दिया इस तरह यही दवा ७ रोज तक चालू रखी, इससे १३ रोज की अवधिमे ही ठीक होकर देश चला गया।

नोट—यह रोग बालको के लिये जितनाकष्ट दायक है, उतना बड़ोंको नहीं। इस रोगमें वायु तथा कफ प्रधान रहता है। इसलियेकफ नाशक चिकित्सा करनी चाहिये। जैसे शास्त्रमें भी लिखा है।

ऊर्ध्व जत्रु विकारेषु विशेषान्नस्य मिष्यते।

नासाहि शिरसोद्वारं तेन तद्व्याप्य हन्तितत्॥

जत्रु वक्षोऽसयोः संधिः जत्रुण ऊर्ध्वं मूर्ध्वं जत्रु। याने जतुकास्थि के ऊपरके हिस्से का नाम ऊर्ध्व जत्रु है। इसलिये इसमें जितने भी रोग होते है उनकी चिकित्सा नस्य है और इसका देनेका मार्ग नासिका है, अतः नासिका द्वारा दिया हुआ नस्य ऊर्ध्व जत्रु विकारों का नाश करता है। और यह नस्य तीन प्रकार का होता है।

विरेचनं वृंहणं च शमनं च त्रिधामतम्।

रेचन क्रिया द्वारा दोषोंको निकालनेवाला, तथा वृंहण क्रिया द्वारा दोष मेटनेवाला, और शमन क्रिया द्वारा शान्त करनेवाला, इस तरह यह तीन तरहका है इसलिये इस रोगमे शास्त्रमे लिखा है कि—

विरेचनं शिरःशूलजाड्यस्यंद गलामये।

शोफ गंड कृमिग्रन्थिकुष्ठापस्मार पीनसे।

जिस नस्य से भीतर के पदार्थोंकी हीनता हो उसको रेचन नस्य कहते है। इसलिये शिरो रोग, जड़ता, कफ रोग, गलेके रोगमे नस्यका विधान है अतः इस रोगमें नस्य देना होतो प्रातः ही देना चाहिये। अगर रोगीकी स्थिति भयंकर हो तो किसी भी समय दे सकते है। बाल्यावस्थामें ८ वर्षके नीचे की अवस्थामें इसका प्रयोग नही करे तथा ८० वर्ष से ऊपर के वृद्ध को भी नही देवे।

———

इसरोगमें प्रयुक्त औषधियोंके योग

बालरोगान्तक रस

शाणः सूतस्य शुद्धस्य गन्धकस्य च तत्समम् ।
सुवर्ण माक्षिकस्यापि चार्धभागं विनिक्षिपेत् ॥
ततः कज्जलिकां कृत्वा लोह पात्रे दृढे नवे ।
केश राजस्य भृंगस्य निगुण्ड्याः पत्र सम्भवम् ॥
स्वरसं कोक माच्याश्च ग्रीष्म सुन्दर कस्य च ।
सूर्य्यावर्तवर्षाभू भेकपर्णीरसैस्तथा ॥
श्वेता पराजितायाश्च रसं दद्याद्विचक्षणः ।
देयं रसार्धभागेन चूर्ण मरिच सम्भवम् ॥
शुभ्रे शिलामये पात्रे लोह दन्डेनमर्दयेत् ।
शुष्कमातप संयोगात् वटिकां कारयेत्भिषक् ॥
प्रमाणं सर्षपस्येव बालानां विनियोजयेत् ।
ज्वरं त्रिदोषकञ्चैव ज्वरमामं सुदारुणम् ॥
कासं पञ्चविधञ्चापि सर्वरोगान् निहन्ति च ।
शिशूनां रोग नाशाय निर्मितोऽयं महारसः ॥

निर्म्माण विधि

शु० पारद $\frac{1}{2}$ शु०गन्धक $\frac{1}{2}$ स्वर्णमाक्षिक भस्म $\frac{1}{4}$ इन सबको लोहेके पात्रमें डालकर कज्जलि बनावे, फिर केशराज, जलभांगरा, सम्हालु पत्ता, मकोय, मण्डुकपर्णी इसके रसकी १-१ भावना देवे और काली मिर्च

का चूर्ण ३ मिलाकर लोहेके खरलमें पत्थरकीमुसलीसे मर्दन करके सरसों के परिमाण की गोली वनालेवे। यह गोली अनुपान भेदसे देने पर सन्निपातज्वर, आमज्वर, कास, सम्बन्धि बालकोंके समस्त रोगोंको नष्ट करता है। मैंने डिप्थीरियारोगमें इस रस का प्रयोग किया है इससे अच्छा फायदा होता है।

कुमार कल्याण रसः

सिन्दूर मौक्तिकं हेम व्योमायो हेम माक्षिकम्।
कन्यातोयेन सम्मर्द्य कुर्यान्मुद्ग मिता वटी॥
वटिकां वटिकार्द्धं वावयोवस्थां विविच्यच
क्षीरेण सितया सार्द्धं बालेषुविनियोजयेत्॥
कुमाराणां ज्वरं श्वासं वमन पारिगर्भकम्।
ग्रहदोषांश्च निखिलान् स्तन्यस्याग्रहणं तथा॥
कामलामतिसारञ्च कृशतां वह्निवैकृतम्।
रसः कुमार कल्याणो नाशयेन्नात्र संशयः॥

निर्म्माण विधि—

रससिन्दूर, मुक्ताभस्म, स्वर्ण भस्म, अभ्रक भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म इनसबको बराबर लेकर खरलमें डालकर घृत कुमारी स्वरसमें ३ रोज तक मर्दन करके मूंगके बराबर वटी बनालेवे। और बालककी आयु बलाबल तथा दोष के बलाबलको देखकर मात्रा से दूध चीनी में या माता के दूध के साथ सेवन करावे। इसके सेवनसे बालकों का ज्वर, श्वास, वमन, पारिगर्भिक रोग, ग्रहदोप, स्तन्यदोष, कामला, अतिसार, दुर्बलता, अग्निविकृति नष्ट होता है।

१ रोहिणी प्रति विष Diptheria Antitoxics इसकी मात्रा रोगके बलाबल को देख कर ही प्रयुक्त की जाती है साधारणावस्थामें प्रारम्भिक मात्रा ४००० एक यूनिट की है। असंदिग्ध अवस्था में विष प्रभाव की अनुपस्थिति में १५००० यूनिट देनें चाहिये। विषका प्रभाव बढ़नें पर ३०००० ६०००० यूनिट तक दें लेकिन अधिक मात्रा में देने से विलम्ब से दिये जानें की त्रुटी की पूर्ति नहीं होगी इस लिये रोगारम्भके साथ ही इस चिकित्सा का उपयोग कर लेना अधिक श्रेयस्कर है। पहली मात्रा देने के १२ या २४ घन्टे बाद दूसरी मात्रा पहिले से आधी ही देनी चाहिये। तीव्रावस्था में यह मात्रा ३-४ दिन तक देनी पड़ती है। इस इन्जेक्सन को पेशीवेध से देना चाहिये इसके लिये उत्तम स्थान उरूप्रसारिणी पेशी है। अत्यावश्यकीय अवस्थामें सिरावेध द्वारा भी दे सकते है। इसका अधिक प्रयोग होने से मूर्च्छा, प्रकम्प, अशक्ति आदि उपद्रव उत्पन्न हो जाते है। ऐसे समय एंड्रीनलीन का इन्जेक्सन दे देना चाहिये। प्रायः इस इन्जेक्सन प्रयोग के १० दिन बाद त्वचा मे फोड़ें हो जाते है तथा सन्धिशूल और तीव्र उदर शूल भी हो जाता है। ज्वर तथा वमन भी होने लग जाते है। फोड़े प्रथम इन्जेक्सन स्थान के पास होते है फिर क्रमश: समस्त शरीर में फैल जाते है। ये २-३ दिन तक रहते है तथा इन मे खुजली भी बहुत चलती है। इस दोष से बचने के लिये १ रत्ती चूना दिन मे ३ बार देना चाहिये। जब फोड़े अच्छी तरह से बाहर आजावं तब एक औंस पैराफीन मे एक ड्राम मेन्थोल डालकर मरहम बनाकर लगाना चाहिए। सन्धिशूल के लिये सोडियम सिलसिलास दे देना चाहिये।

बिशेष आवश्यक्ता पडने पर पेनीसिलीन टेब्लेट या इन्जेक्सन भी दिया जाता है। निरन्तर श्वास में कष्ट रहने पर तथा श्वास

ध्वनि में वृद्धि का अनुभव होता हो वहां पर कण्ठ नाडयुच्छेद योग्य सर्जन के द्वारा करा देना चाहिये अन्यथा स्वासावरोध से मृत्यु हो जाती है।

होमियोपैथिक चिकित्सा

नवीनाऽवस्था में फेरम-फास, एकोनाइट, वेलाडोना, कास्टिकम, ड्रोसेरा, कैलि-वाइक्रोम, हिपर, केलीफास, लैकेसिस आदि।

मध्यमावस्थामें आर्सनिक, एपिसवेल, क्रोटेलस।

तीव्रावस्था में एकोनाइट और स्पञ्जियाका। मात्रा क्रम ६-१२

डा० सुसलर के मत से प्रारम्भावस्था में इस रोग में फरम फास उत्तम काम करती है। इसकी ३ × शक्ति में ग्लेसरीन मिलाकर गाल के भीतर लगाने से अच्छा फायदा होता है। अगर इसके साथ केलीसल्फ की पर्याय क्रम से व्यवस्था की जाती है तो और भी अच्छा फायदा होता है। कफ निकलने पर नेट्रम्यूर, कैलीम्यूर देना चाहिये मात्रा ३× ×३०+ और भी लिखा है कि अगर वीमारी का मालूम हो जाय कि ठीक डिफ्थीरिया है तो वहां पर डिफ्थेरिनम (Diptherinum) ३०० २०० शक्ति वाला की २-१ मात्रा के प्रयोग से वीमारी की तीव्रता घट जाती है। कभी-कभी इसके प्रयोग के वाद दूसरी औषध की जरूरत ही नहीं होती।

डा० क्लार्क का भी यही मत है। वे इस रोग में डिफ्थेरिनम, मकुरियस, सियानेटस और फाइटो लैक्का इन तीन औषधियों को ही श्रेष्ठ मानते है तथा यह भी लिखते हैं कि इस बिमारी के अन्य भी कोई त्रुटी अवशेष रह जाती है वे सब उपरोक्त औषधियो द्वारा ही मिट जाती है।

कर्णिक सन्निपात (Mump)

लक्षण—

प्रलापश्रुतिह्रास कण्ठग्रहाङ्ग व्यथाश्वासकास प्रसेकप्रभावम् ।
ज्वरंताप कर्णान्तयोर्गल्लपीडा बुधाःकर्णकं कष्टसाध्यं वहन्ति ॥

भावार्थ—जिस ज्वरमें तीनों दोष अत्यन्त कुपित होकर कानकीजड़में अत्यन्त सूजन कर दे और जिससे सूजनमें पीडा तथा कंठ रुक जाय, बहरापन, श्वासकास, प्रलाप, पसीना, ज्वर, दाह, गलेमें पीड़ा आदि लक्षण हों उसको कर्णिक सन्निपात कहते हैं। और यह कष्टसाध्य व्याधि है।

अन्यत्—सन्निपात ज्वरस्यान्ते कर्णमूले सुदारुणः ।
शोथः सञ्जायते तेन कश्चिदेव प्रमुच्यते ॥

सन्निपात ज्वरके अन्तमें कर्णमूलमें कठिन शोथ उत्पन्न होता है, इसके होनेपर कोई ही रोगी बचता है। ऐसा शास्त्रका सिद्धान्त है। लेकिन् इस विषयमें यह बात भी याद रखनी चाहिये।

ज्वरस्यपूर्वं ज्वर मध्यतोवा ज्वरांततोवा श्रुतिमूल शोथः ।
क्रमादसाध्यः खलुकष्टसाध्यः सुखेनसाध्यो मुनिभिः प्रदिष्टः ॥

यदि यह शोथ ज्वरके पूर्व ही हो जाय तो असाध्य, बीचमें होवे तो कष्ट साध्य, और अन्तमें साध्य माना है, परन्तु कहीपर मियादि ज्वरके अन्तमे भी होनेवाले शोथसे रोगी बच जाते हैं। प्रारम्भसे होनेवालेकी अवधि २ मास तककी मानी है।

डाक्टरीमें मम्पस पेरोटाइटिस कहते हैं (Mups or pavotitis)

डाक्टरीमें यह तीव्रसंक्रामक कीटाणु जन्य माना है, प्रायः यह रोग शीतकालमें बच्चोंको या युवाओंको ठण्ड लगनेसे होता है। इस रोगमें कर्णमूलिका ग्रन्थियोंपर दाहयुक्त शोथ होता है। और इसमें कठोरपन अधिक होनेके कारण मुखकी तमाम क्रियायें नष्ट हो जाती हैं

तथा इस रोगीके श्वासमें दुर्गन्ध आती है। तथा जिह्वा सफेद रंगकी मैली हो जाती है खाने पीनेमें भी बहुत कष्ट होता है। इसके कीटाणु रक्त परीक्षामें नही मिलते है। दोषोंका संचयकाल २-३ सप्ताह माना है।

चिकित्सा

आदौविम्लापनं कुर्यात् द्वितीय मवसेचनम्।
तृतीय मुपनाहंच चतुर्थी पाटनक्रिया ॥
पंचमे शोधनं कार्यं षष्ठेरोपण मिष्यते।
एते क्रमाव्रणस्योक्ताः सप्तमं वैकृतापहम् ॥

व्रणके प्रारम्भमे ८ उपक्रम इसके लिसे शास्त्रमें बतलाये है। जैसे विम्लापन, अवसेचन, उपनाह, पाटन, शोधन रोपण विकृतापह।

सुश्रुतमते शोफस्यैकादशो पक्रमाभवन्ति—अपतर्पणाद्यो विरेचनान्तास्ते च विशेषेण शोथ प्रतिकारा वर्तन्ते व्रणभावमापन्नस्य च न विरुध्यन्ते शेषास्तु प्रायेण व्रणप्रतिकार हेतव एव। अपत्तर्पणस्त्वाद्य उपक्रम एष सर्व शोफानां सामान्यः प्रधानतमश्च।

शोथ शान्तिके लिये शास्त्रमे अपत्तर्पणसे लेकर विरेचन पर्य्यन्त ११ उपक्रम बतलाये है। वे निम्नलिखित हैं। अपतर्पण (आलेप, परिषेक, अभ्यङ्ग, स्वेद, स्नेहन, विम्लापन, उपनाह, पाचन, विश्रावण, स्नेहन, वमन और विरेचन, इसतरह ये ११ ग्यारह शोथके उपाय है। परन्तु यही शोथ व्रणभावको (याने फटकर घाव हो जाता है) तब यह उपरोक्त उपाय उचित नही है। तब तो अन्य उपाय जो घावको ठीक करनेके है वेही श्रेष्ठ है। जैसे अपतर्पण लंघन कराना सर्वशोफों का प्रथम उपचार है क्योंकि कहा भी है "वातेसामेऽपि लङ्घनम्। अर्थात दोषोंसे आनद्ध पुरुषके कफाधिक दोष और उन करके दूषित धातु तथा मल और बल अवस्था और प्रकृतिको देखकर दोषके वेगको

रोकनेके लिये अपतर्पण कराना चाहिये। लेकिन् जिनके लिये अप-तर्पणका निषेध है उनको नही करावे।

आलेप कहां करना चाहिये—

शोफपूतिथित मात्रेषु व्रणेषूग्ररुजेषुच।
यथास्वैरौषधैर्लेपं प्रत्येकञ्चैव कारयेत्॥

ज्योंही शोथ अथवा तीव्र वेदना युक्त व्रण उत्पन्न हो उसी समय यथोक्त औषधियोका लेप करे। इस विषयमें एक दृष्टान्त है कि जैसे जिस घरमें आग लग जाय और उसमें यदि जल डाल दिया जाय तो अग्नि शीघ्र ही शान्त हो जाती है। उसी प्रकार लेप करनेसे शोफ युक्त वेदना भी शीघ्र ही नष्ट हो जाती है। इसके करनेसे केवल वेदना ही शान्त नही होती है, साथमे शोफका शोधन, हरण, उत्सादन, रोपण, अवसादन सवर्णीकरण भी हो जाता है।

लेप एवं नस्य

(१) हल्दी, इन्द्रायण, कूठ, सैन्धव नमक, देवदारु, हिंगोटकी जड इनको समभाग लेकर कूटकर चूर्ण वनालेवे और आकके दूधमे पीसकर लेप करनेसे कर्णक नष्ट हो जाता है। परन्तु यह लेप दोपहर वादमे करे, प्रातःकाल करनेसे आकका दूध विषका काम कर जाता है।

(२) कुलथी, कायफल, सोंठ, काला जीरी, इनको समान भाग लेकर गोमूत्र में पीसकर कुछ गरम करके वार २ लेप करनेसे कर्णक नष्ट हो जाता है।

(३) सद्भूत चूना हल्दीका लेप करनेसे भी कर्णक शान्त हो जाता है।

(४) गेरु, सज्जीखार, सोंठ, बच, राई, इनको थूहरके रसमें पीसकर लेप करनेसे व्रण जल्दो ही पककर फूट जाता है।

(८) एलुवा, मुसब्बर,) समुद्र फेन, अफीम, धतूरेका पत्ता इनको धतूरेके रसमे मर्दन कर लेप करनेसे भयंकरसे भयंकर भी कर्णमूल

शोथ शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। यह सैकडोवार अनुभव किया हुआ है।

(९) मिर्च, पीपल, जीरा, सैन्धवनमक, इनको जलमे पीसकर गरम करके नस्य देनेसे कर्णककी पीडा शान्त हो जाती है।

(१०) विजोरेकी जड, अरनी, देवदारु, सोंठ बड़ीकटेली, रास्ना, इनका लेप वातज शोथको नष्ट करता है।

(११) हिंगोटकी छालका चूर्णकांजीमें पीसकर लेप करनेसे वातज शोथ का नाश होता है।

दूर्वा, नालुक, मुलेहटो, लालचन्दन, इनकालेप अथवा शीतल द्रव्यों का लेप पित्त जन्य शोथ को नष्ट करता है।

असगन्ध, वच, तगर, देवदारु, कमीला, वच्छनाभ, इनको जलमें पीसकर गरम करके लेप करनेसे कफ जन्य शोथ नष्ट होता है।

(१४) सापकी कांचुली की भस्मको कडवे तेलमें मिलाकर लेप करने से कर्णमूल शोथ नष्ट हो जाता है।

लेप करने के नियम—

न रात्रौ लेपनं दद्याद्दत्तं च पतितं तथा।
न च पर्युपितं चैव शुष्यमाणं च धारयेत् ॥
शुष्यमाण मुपेक्षेत प्रदेहं पीड़नं प्रति।
नचापि मुख मालिम्पेत्तेन दोषः प्रसिच्यते ॥

रात्रीमे लेप नहीं करना चाहिये, लेपके ऊपरभी लेप नही करना चाहिये। लगाया हुआ लेप नीचे गिरजाय तो उसको ही उठाकर नहीं करना चाहिये। बासी लेप नही करना चाहिये। लेपके सूखने पर भी नही रखना चाहिये। लेप प्रतिलोम गतिसे करें, अनुलोम गति से न करें, क्योंकि प्रतिलोम रीतिसे लेप करने परही औषध अच्छी तरह से ठहर सकती है, और रोमकूपोंसे भीतर प्रवेश करके रोगोंको शमन करती है।

शुष्कलेप निष्फल तथा फोड़े-फून्सी करने वाला होता है। लेप शास्त्रमे तीन प्रकारका माना है, १ प्रलेप, २ प्रदेह, ३ आलेप,

(१) प्रलेप उसे कहते है जो ठन्डा होता है, और पतला किया जाता है, और अविशोषी तथा विशोपी होता है।

(२) प्रदेह वह होता है जो उष्ण, अथवा शीत, पतला अथवा गाढा, और अविशोपी होता है।

(३) आलेप प्रलेप और प्रदेह दोनों के लक्षणों के मध्यवर्ती होता है। रक्त पित्त जनित रोगों में आलेप हितकारी है।

प्रदेह कफवात जनितरोगों को शान्त करता, सन्धान, शोधन, रोपण करनेवाला, सूजन की पीड़ाको नष्ट करता है, यह शोथमें तथा व्रणमे हितकर है। इसको कल्क और निरुद्धालेपन भी कहते है। अगर इसमें स्नेह मिलाना हो तो पित्तजनित रोगोंमें छः गुना और वातजनित रोगोंमेंचार गुना, कफ रोगोमें अठगुना मिलाना चाहिये।

लेप का प्रमाण

भैसके गीले चमड़े के समान मोटा लेप करना कहा है रात्रिमें लेप करना उचित नहीं क्योंकि शीत गरमीको रोक लेता है और गरमी के न निकलने से अनेक उपद्रव हो जाते है। अतः जो रोग प्रदेह से साधन करनेके योग्य हों उनमें तो दिनमें ही लेप लगाना चाहिये। अगर लेपादि करने पर भी शोथका शमन न हुआ हो तो वहांपर परियेक करना उचित है।

बात शोकमें परिषेकका फल और प्रयोग

बात जन्य शोथ में वेदना की शान्ति के लिये घृत, तैल, काजी, मांसरस, और बातहर औषधियों के गरम-गरम क्वाथ से परिषेक करें। पित्तादि दोषोसे उत्पन्न शोथमें दूध, घी सहत, और चीनी मिल हुआ जल ईखका रस, काकोल्यादि मधुर औषधि, वटादि क्षीर वृक्ष इनके शीतल क्वाथसे परिषेक करें।

कफज शोथमे तेल, गौमूत्र, खार, मद्य, शुक्त, चन्दन, अगर और कफघ्न औषधी इनके काथको ठन्डा करके सेक करे। जैसे जल डालने पर अग्नि शान्ति हो जाती है वैसे ही परिषेक से दोषाग्नि शीघ्रही शान्त हो जाती है।

अभ्यङ्गका प्रयोग

दोषोंके अनुसार यदि उचित रुपसे मालिस किया जायतो वह दोषों को शान्त कर देता है, और सूजन स्थान को कोमल बना देता है। वात कफ जनित सूजन में तेल, और रक्त विषादि जन्य शोथमें शतधौत घृत का मर्दन हितकारी है। यह क्रिया स्वेदन, विम्लापन मर्दन विरेचनादि क्रियाओं के पहिले ही की जाती है।

स्वेदन क्रिया

वातकफ जनित वेदना युक्त दारुण और कठोर सूजन में पसीना देना चाहिये।

विम्लापनम्

अभ्यज्य स्वेदयित्वातु वेणु नाड्या शनैः शनैः विम्लापनार्थं गृहीत तलेनाङ्गुष्ठकेनवा पहिले मालिस और स्वेदन क्रिया करके एक बांसकी पोगली को गरम करके हथेली अथवा अँगुठे से रगड़े इससे सूजन नष्ट हो जाता है। इसीको विम्लापन कहते है।

अवसेचनम्

रक्तावसेचनं कुर्यादादावेविचक्षणः।
शोफे महति संवृद्धे स्वेदनावतिवा व्रणे॥
योनयाति शमं लेपात् स्वेद सेकाऽपतर्पणैः॥
सोऽपिनाशं व्रजत्याशुशोथ शोणित मोक्षणात्।
एकतश्च क्रियाः सर्वारक्त मोक्षणमेकतः॥
रक्तं हि विक्रियां याति तन्मोक्षे नास्ति विक्रियः

जहांपर शोथ बहुत बढ़ गया हो, अथवा जिस व्रणमें वेदना अधिक हो वहांपर बुद्धिमान वैद्यको चाहिये कि सर्व प्रथम रक्तावसेचन क्रिया करे शोणित मोक्षण क्रिया द्वारा जो सूजनलेप स्वेद सेक अपतर्पणादि क्रियाओं के ठीक नहीं होता है वह उपरोक्त क्रिया द्वारा जल्दीसे जल्दी ठीक हो जाता है। सम्पूर्ण लेपादिक क्रियायें एकतरफ हैं, और रक्त मोक्षण क्रिया एक तरफ है परन्तु इन दोनोंमें भी श्रेष्ट रक्त मोक्षण क्रिया ही है। क्योंकि रक्तही दूपित होकर रोगको करता है, उसके निकलने के बाद रोग की जड़ही नष्ट हो जाती है।

उपनाह विधि

शाकयोरूपनाहन्तु कुर्यादाम विदग्धयोः।
अविदग्धः शमंयाति विदग्धः पाकमेति च ॥

आम और विदग्ध दोषमें उपनाह क्रिया करे, इससे कच्चा शोथ शान्त हो जाता हैऔर जो पकने वाला है वह पक जाता है। उपनाहमें निम्नलिखित ओपधियाँ काममें आती है। तील, अलशी, दही, अम्ल-रस, सत्तु, चावलोंकी किणकी, कूठ, लवङ्ग, इनमेसे किसीकी भी जैसे तिलादिकोंका सत्तुमें मिलाकर लूपरी (पुल्टिस) गरमकरके व्रणपर बाधे।

अथवा सनके वीज, सहिजनके वीज, तिल, सरसों अलशी, सत्तु, सुरावीज, तथा अन्य उष्णद्रव्योंको शोथको पकानेके लिये लूपरिके काम में लेना चाहिये। डाक्टरीमें ऐन्टीफ्लोजिष्टीन, को गरम करके व्रण पर वांधा जाता है।

इसके अलावा चोकरकी पुल्टिस, आटेकी पुल्टिस, नीमके पत्तों की पुल्टिस, अलशीकी पुल्टिस, चारकोलकी पुल्टिस भी वांधी जाती है। तथा गीलावाष्प स्वेद भी दिया जाता है।

वाष्प स्वेह विधि—

सूजन स्थानको प्रमाणके फुलालेनके दो चोहरा कपड़े लेकर केवल गरम जलमें या पोस्तकी डोडी डालकर किये गये गरम जलमें डालदेने चाहिये। फिर रुग्ण स्थानपर अंगोछा रखकर फुलालैनके एक टुकड़ेको जलमेंसे निकालकर निचोड़कर, उसको रुग्ण स्थानपर रखकर ऊपरसे अंगोछा ढाप देना चाहिये। यह कपड़ा ठंडा हो, इससे पूर्व दूसरा कपड़ा निचोड़कर वेदना स्थान पर पहिले की तरह सूजन पर रख देवे और पहिलेको गरम जलमे डाल देव। इस प्रकार आध घण्टे तक सेक करना चाहिये। इसके वाद उस स्थानको पोंछकर शुष्ककर देना चाहिये। कईवार सेककिये हुये कपड़को निचोडकर व्रणपर बंधा रखनेसे भी बहुत लाभ होता है। इसी तरह ईंट या पत्थरको भी गरम करके जलमें भिगोकर भाप कम होने पर कपड़ेमे लपेटकर सेककिया जाता है।

एभिरुपायैः पक्वस्य पाटनं (विश्रावणम्) हितम्।

परन्तु वालक, वृद्ध सुकुमार, क्षीण, डरपोक तथा स्त्रियोंके लिये शस्त्र कर्म निसिद्ध है। मर्मस्थानपर किसी भी पुरुपको व्रण हो गया हो तो वहा पर भी शस्त्र क्रिया नहीं करनी चाहिये। ऐसे स्थानोंपर व्रणको दारण करनेके लिये निम्नलिखित उपाय करना चाहिये।

(१) गौके दांतको जलमे घिसकर विन्दुमात्र व्रणपर लगानेसे शोथको फाड देता है।

(२) प्रति सारणीय क्षारकी सीक लगानेसे भी व्रण फट जाता है। दारण द्रव्याणि

अथवा—चिरविल्वाग्निदन्ति चित्रको हयमारकः।
कपोतकङ्कगृध्राणां पुरीषाणि च दारणम्॥

करंजुवा, भल्लातक, जमालगोटा, चित्रक, कनेर, कबूतर, कंकगीध इनकी विष्ठाका लेप करनेसे भी दारण हो जाता है। पाटनक्रिया करनेके बाद भी अगर व्रण दोष रहित न हुआ हो तो वहांपर तिल

सैन्धव नमक, घी, हल्दी, दारुहल्दी, निशोत, मुलेहटी, निम्बपत्र इन्हें एकत्र मिश्रितकर लेप देनेसे व्रणका शोधन हो जाता है अथवा अनन्त मूलका ही लेपकरनेसे व्रण शोधन हो जाता है।

अथवा त्रिफला, खदिरकाष्ठ दारु हल्दी, न्यग्रोधादिगण, बला, नीमपत्र, वेरीकी मूल (रांगजड़) और पटोल पत्र, इनमें प्रत्येकका कषाय व्रणको शोधनकर देता है। शोधन क्रियाके बाद रोपणके लिये कितनी ही प्रकारकी कागलीकी मरहम बाजारमें मिलती है उसे लगाने से व्रण आपही भरकर ठीक हो जाता है, मगर यदि व्रण स्थित मांसांकुर खराब हो गये हो, उसके कारण घाव नहीं भरताहो तो वहांपर तिलकल्कमें मधु मिश्रितकर लगाना चाहिये इससे शीघ्रही व्रण भर जाता है। अगर किसीको नासूर रूप घाव हो गया हो तब मनुष्यकी हड्डीकी भस्मको या महिषीके सींगकी भस्मको घृतमें मिलाकर लगानेसे अवश्यही फायदा होता है। यह मेरा प्रत्यक्ष अनुभव किया हुआ है।

इस रोग से आक्रान्त मेरे पास तीनो अवस्था के रोगी आये जिनका मैंने देशमे तथा यहां अस्पताल मे जो इलाज किया उसका भी थोड़ा सा विवरण आपके सामने उदाहरण रूपसे लिख रहा हूं कृपया आप परीक्षा करके देख।

रोगी नाम	उम्र	जाति	देशमे
पृथ्वीसिह	३०	क्षत्रिय	केड़

यह रोगी राजपूतानाके केड नामक ग्राम का रहने वाला था, इनके जमीदारी अच्छी थी, तथा गावके ठाकुर थे। इसको प्रारम्भमे ही शीत ऋतुमे ठन्ड लग कर कानोंकी जडमे दोनों तरफ सूजन पैदा हो गया, तब २-३ रोज तक तो यह अपने घर मे ही इलाज कराता रहा, परन्तु कुछ फायदा नहीं हुआ और ज्वर तथा प्रलाप कास, मोह आदि उपद्रव बढ़ गये। तब इनके घर वालोने जयपुरसे डाक्टर बुलाये और उनका इलाज चालू कर दिया, डाक्टरोंने १५

रोज तक इलाज किया, लेकिन कुछ भी फायदा नहीं हुवा दिन पर दिन दिन हालत खराब होने लग गई तब डाक्टरोंने कह दिया कि हालत बिल्कुल खराब है, अब आप और किसी का इलाज कराईये हमारे पास तो अब चीरने सिवाय कोई इलाज नहीं है, और चीरा देनेकी रोगीकी हालत नहीं है। यह सुन कर घर वाले घबरा कर रोने लग गये। उनकी ऐसी हालत देख कर उन्हींके घरके वृद्ध पुरुषने कहा कि आप लोग धैर्य्य रखिये, और किसी आदमीको जसरापुर भेज कर रामबक्षजी जोशीके घरसे उनके पुत्रोंमे से किसी को बुला लीजिये अपने घरमे उनके आनेसे ही रोगी ठीक हो जाता है। वृद्धका कहना मान कर जसरापुर ऊंटका सवार भेजा गया वहा से मेरे चाचा केदारनाथ जी उसके साथ केड गये और रोगीकी हालत देखी, और निम्नलिखित चिकित्सा चालु की।

प्रातः सायं	मध्याह्न	रात्रीको
कस्तूरी भैरव	अष्टाङ्गावलेह	कृष्णचतुर्मुख
भार्ग्यादि क्वाथ मधुसे।	अदरख रस मधुमें	पानरस मधुमे

तथा सूजन पर-कबूतर की विष्ठा जलमे मिला गरम करके २-२ घन्टा से लेप करना शुरू किया, दूसरे ही रोज एक तरफ की गाठ फूट गई और पीप निकलने लग गया, परन्तु घावका मुंह छोटा था इस लिये पीप अच्छी तरह से नही निकलता था तब नीमको पत्तियोंका भरथा बना कर घाव पर बंधवाया जिसके दो बार बाधनेसे ही घाव बिल्कुल साफ हो गया और रोगीको दवा वगैरह निगलने में भी सुविधा हो गयी तथा ज्ञान भी हो गया। इसी प्रकार दूसरी गाठको भी भेदन किया गया बादमे लाल रंगकी कागली मरहम की पट्टी लगा दी। इस तरह यह रोगी बहुत जलदी ही चाचा जी के इलाज से ठीक हो गया और पथ्य भी दिलवा दिया गया।

द्वितीय रोगी

रोगी नाम	उम्र	जाति	देश
रायचन्द्र	१०	जैनी	झुंझणूं (जयपुर)

इसको झुंझणू में ही सं० १९८२ की साल में चैत्र मास में मन्थर ज्वर हुआ था। इसकी चिकित्सा वैद्यराज पं० मृजामल्ल जी जोशी कर रहे थे। उन्होंने मेरेको भी बुला कर इस रोगी को दिखलाया, उस समय इसके निम्नलिखित लक्षण थे। ज्वर प्रातः १०२ डिगरी सायंकाल १०३ प्रलाप, तन्द्रा, मोह, गले में कफकी आवाज दोनों फेफड़े कफसे आवृत, टट्टी बिल्कुल नहीं होती थी, पेशाब विस्तर में ही करता था, तब जोशी जी ने तथा मैंने मिल कर चिकित्सा चालू की।

प्रातः सायं	म० रा०	शयनकाले
ब्राह्मी वटी	शृंग भस्म ३ रत्ती कृष्णचतुर्मुख १ रत्ती	
अष्टादशाङ्ग क्काथमधुसे।	शृंग्यादि १ मा०	दशमूलक्काथ से
अष्टाङ्गावलेह मधुसे चाटनेको दिया, पानरस मधुमें		पान रस मधुमें

इसको यह औषध १० रोज तक चलाई गई जिससे ज्ञान की वृद्धि भी हो गई, ज्वर भी कम हो गया, तथा श्लेष्मा भी निकलने लग गया परन्तु अचानक दोनों कानोंकी मूलमें शोथ हो गया, तब उस पर काला जीरी गोमूत्र मे पीस कर गरम करके लेप कराया, उससे कुछ फायदा नहीं हुवा तब कुलत्थादि लेप कराया, इससे शोथमे कुछ कमी हुई परन्तु फिर जुकाम हो गया जिससे शोथ बहुत बढ़ गया और ज्वर भी फिर बढ़ गया, तब लेप बन्द करके अलशी की पुल्टिस चालू की तथा खाने की औषधियों में भी परिवर्तन किया।

प्रातः सायं	म० रा
कस्तूरी भैरव १रत्ती	लक्ष्मी विलास
भांर्ग्यादि क्काथ मधुमे	पान रस मधुसे

पथ्यमें जलवार्लीही दिया गया।

ग्रन्थियां पक गई लेकिन फूटी नहीं तब विदारण के लिये कपोत विष्टाका लेप कराया, जिससे एक ग्रन्थि कानके भीतर मे फूट गई बहुत पूय निकली, इसको निम्ब पत्र श्रृत जल से साफ करते थे. तथा साथ मे हाईड्रोजन पैरोक्साइडसे भी साफ करते थे बादमे पंचामृत तैल कानमे डाला जिससे घाव बिल्कुल ठीक हो गया।

दूसरी गांठके ऊपर प्रतिसारणीयक्षार लगाया जिससे वह भी फूट गई, तब इसके ऊपर नीमका भरथा बंधवाया २ पट्टी बाधनें से ही घाव साफ हो गया बादमे लाल मरहम लगाई जिससे घाव बिल्कुल सूख गया। ज्वर भी छूट गया तब पथ्य चालू कर दिया। यह बहुत पुराना किस्सा है। इसकी तारीख याद नही है इस रोगी के इलाज मे ३ मास लगे थे इस लिये ता० वार विवरण नही लिख सका।

मेरी चिकित्सामे अस्पतालमे तथा बाहर भी बहुत से रोगी आये। जिनमे बहुतो को लेपादिक क्रियाओं के द्वारा ही फायदा हुआ है और कई एक जलौकाऽवचारण से तथा बहुतों के शस्त्र-क्रिया भी करनी पडी है। अतः चिकित्सकको चाहिये कि इस रोगमें समयानुकूल रोगीकी हालतको देख कर ही चिकित्सा करे।

॥ श्रीः ॥

अष्टादशाङ्ग क्वाथ

दशमूली शटी शृंगी पौष्कर सदुरालभम्।
भार्गी कुटज बीजञ्च पटोलं कटुरोहिणी॥
अष्टादशाङ्ग इत्येष सन्निपात ज्वरापहः।
कास हृद्ग्रह पार्श्वाति श्वास हिक्का वमीहरः॥

भावार्थ—दशमूल, कचूर, काकडाशिंगी, पोहकर मूल, धमासा, भारंगी, इन्द्रजो, पटोल पत्र, कुटको, इन सर्व औषधियोंके मिलित योग को अष्टादशाङ्ग क्वाथ कहते है। यह क्वाथ विधि पूर्वक निर्माण करके सेवन करनें से, उपद्रव सहित सन्निपात ज्वर नष्ट हो जाता है।

चतुर्दशांङ्ग क्वाथ

चिर ज्वरे वात कफोल्वणे वा त्रिदोपजेवा दशमूल मिश्रः। किराततिक्तादि गणः प्रयोज्यः शुद्ध्यर्थिने वा त्रिवृताविमिश्र : ॥

भावार्थ—पुरानें ज्वर मे, वातक फोल्वण ज्वर मे अथवा त्रिदोष ज्वरमे किराततिक्तादिगणमे दशमूल मिला कर सेवन करानें से बहुत अच्छा फायदा होता है। यदि मलावरोध होतो इसमें निशोतका चूण और मिला देवे।

भार्ग्यादि क्वाथ

**भार्गीजया पौष्कर कंटकारी कटुत्रिकोग्रा वनकुण्डलीभिः।
कुलीर शृंगी कटुकी रसाभिः कृतः कषायः किल कर्णकघ्नः॥**

भावार्थ—भारंगी, अरणी, पोहकर मूल, कटेरी, सोंठ, मिर च, पीपल, वच. नागरमोथ, गिलोय, काकड़ा शींगी, कुटकी, रास्ना, इनका क्वाथ विधिसे क्वाथ बना कर सेवन करनें से कर्णक सन्निपात नष्ट हो जाता है।

एलोपेथिक चिकित्सा—

इसरोगमे पाश्चात्य चिकित्सक सलफर ग्रूप खानेके लिये देते है तथा लाईकर हाईड्राज एमोनेटा लगानेको देते है, सूजनके न घटने पर ऐन्टी फ्लोजिस्टीनकी पट्टी बंधवाते है। इनके पास इस रोगको विशिष्ट चिकत्सा नहीं है। उनका कथन है कि जब तक तापमान अधिक

तथा शोथ रहे जबतक रोगीकी सेवा बिस्तर पर ही करनी चाहिये। मुंह खोलनेमें कष्ट होनेके कारण भोजन तरल ही देना चाहिये। उसको नलिकासे चूसकर भी पिया जा सकता है। मुंहको हर समय कुल्ला कराकर साफ रखना चाहिये पीड़ा शान्त्यर्थ सेक करना चाहिये। १४ दिवस पर्य्यन्त अन्य रोगियोंसे दूर रखना चाहिये।

अथभुग्ननेत्र सन्निपात ज्वरलक्षणम्

भृशं नयनवक्रता श्वसनकासतन्द्रा भृशं
प्रलाप मदवेपथु श्रवणहानि मोहस्तथा।
पुरोनिखिलदोपजे भवति यत्र लिंगंज्वरे
पुरातन चिकित्सकैः स इह भुग्ननेत्रो मतः॥

भावार्थ—जिस सन्निपात ज्वरमें नेत्रोमें अत्यन्त टेढापन हो गया हो, श्वास, खासी, तन्द्रा भयंकर प्रलाप, मद और कम्प आदि लक्षण हों तथा कानोंमें वहरापन और मोह होवे, ऐसे लक्षण वालेको प्राचीन वैद्य भुग्ननेत्र सन्निपात कहते है। इस रोगसे आक्रान्त रोगी मेरे देखने मे नहीं आये इसलिये इस विषयमे साधारणतया ही चिकित्सा जो ग्रन्थोसे प्राप्त हुई है, उसीको सूक्ष्म रूपसे लिख रहा हूं। इसकी चिकित्सा वैद्य बन्धु स्वानुभवसे ही करें। मियाद ८ दिवसकी है।

शास्त्रीय चिकित्सा—

तुरंगगन्धालवणाग्रगन्धा मधूकसारोपण मागधीभिः
बस्ताम्बुशुण्ठी लशुनान्विताभिर्नस्यं कृशं मुग्रदृशं करोति॥

भावार्थ—असगन्ध, सैन्धवनमक, बच, महुवेका सार, कालीमिर्च, सोठ और लहसुन, इनको बकरेके मूत्रमें पीसकर नस्य देवे, अथवा तन्द्रामें कहे हुये अंजन और नस्य देवे।

अथवा रसराज रस, संज्ञाप्रवोधन रस, सूचिका भरण रस, आदि तीव्र ओषधियोंका प्रयोग कटेहरी, गिलोय, पोहकरमूल, सोंठ, भारंगी, हरड छालके क्वाथके अनुपानसे करे।

रक्तष्टीवि श्वसनक ज्वर

श्वसनक ज्वर फुफ्फुस सन्निपात-रक्तष्ठिवी सन्निपात, न्युमोनिया माधवाचार्य मतसे लक्षण—

रक्तष्ठिवी ज्वरवमितृषामोहशूलातिसाराहिकाध्मान भ्रमणदवथु श्वाससंज्ञाप्रणाशाः । श्यामारक्तोधिकतर रसना मण्डलो त्थानरुपा रक्तष्ठिवी निगदित इह प्राण हन्ताप्रसिद्ध ॥

भावार्थ—जिस ज्वरमें वमन हो, प्यास अधिक हो, शूल हो, अतिसार हो, हिचकी हो, अफारा हो भ्रम हो, छीक ज्यादा आती हो, श्वास अधिक वेगसे चलता हो, संज्ञाकी कमी हो गई हो, जिह्वा काली लाल चकत्तोवाली हो गई हो, उस रोगको रक्तष्टिवी सन्निपात कहते है। इस रोगमें थूकते समय बहुधा रक्तमिश्रित कफ आता है। मारवाड़में इसको गुजरातीके नामसे भी पुकारते है। कहीं पर रक्त नही भी आता है परन्तु और सम्पूर्ण लक्षण होते है। यह रोग प्रायः गरीब लोगोंको जिनके पास बिछाने ओढनेके कपडोका अभाव रहता है उनके फेफड़ोंमे ठण्डके लगनेसे होता है जैसे सिद्धान्त निदानमें भी लिखा है।

समाच्छादनहीनानां दुर्वलानां विशेपतः
दीनानां दूनचित्तानां शीतवर्पादि वाधनात्

उपरोक्त कारणों द्वारा शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म ऋतुमें ही यह रोग प्रायतया होता है। दूसरा कारण कृमि भी माना गया है। जिस समय इस रोगका कारण कृमि होता है, उस समय यह रोग बहुतायतसे महामारी रूपमे फैल जाता है। इस रोगमे सर्दी लगती है। रोगीको कपकंपी लगकर जोरका ४-५ डिग्री तक बुखार चढ़ जाता है जो ४-५ रोज तक नहीं उतरता है। प्रायः शुष्ककास चलती है, कफ गाढा और गंदला रहता है। प्रथम

कफ श्वेत और झागदार आता है, पीछे भूरासा हो जाता है। साधारणतः कोई तीव्र शूल नहीं होता ; जबतककी फुफ्फुसावरण प्रदाह (प्लूरिसी) न मिली हो। परन्तु प्रायः प्लुरिसी इसमें मिली ही रहती है। चाहे दर्द तीव्र हो या न हो परन्तु आयुर्वेद मतसे मन्द चुभनेवाला दर्द छातीमें रहता ही है। रोगीका श्वास तेज याने स्वाभाविकसे दुगुना या इससे भी अधिक हो जाता है ज्वरका वेग १०४°-१०५° तक होता है। अच्छे होनेवाले रोगियोंमें ७ से १२ वेदिन ज्वरमान सहसा गिरकर प्राकृतिक अवस्था पर आ जाता है। यदि दिन भरमे ज्वर १०४ से ऊपर न जावे नाड़ी स्पन्दन १२० से अधिक न बढ़े तथा श्वास की गति ३५ से ऊपर न जाय तो समझना चाहिये कि रोगी ठीक हो जायगा यदि रोगी अच्छा नहीं होनेवाला होता है तो श्वासमें काठिन्यताका अनुभव करने लगता है, नाड़ीको गति बढ़ जाती है। ज्वर १०५-१०६ तक हो जाता है, रोगीको प्रलाप हो जाता है तथा तन्द्रामें पड़ा रहता है। ऐसे लक्षण होनेपर रोगी मर जाता है। श्वास यन्त्र पर इस रोगका आक्रमण होता है इसलिये इसको श्वसनक ज्वर भी कहते है। कितने आचार्योंने इस रोगमे फेफड़े दूषित होते है इसलिये फुफ्फुस सन्निपात भी कहा है। इस तहर भावमिश्रने इस रोगका नाम कर्कटक सन्निपात भी कहा है। आयुर्वेदमें इस रोगका विशेष विस्तार पूर्वक वर्णन नहीं मिलता है। उपद्रव रूपसे प्राय मोतीझरा वगैरह बड़े रोगोमें अक्सर इसका असर देखा जाता है। अतः चिकित्सकको चाहिये कि इसके लिये समयानुकूल परीक्षा करके चिकित्सा करे। सिद्धान्त निदानमें इसका नवीन शैलीसे वर्णन किया है।

सिद्धान्त अरिष्ट लक्षण—

स्वेदोभृशं ज्वरस्तीव्रो वृद्धः क्षीणोऽथवातुरः
पात्रत्रयस्य सम्पत्या सतुजीवेत् कदाचनः ॥

जिसको निरन्तर पसीना आता हो ज्वरका वेग तीव्र हो रोगी वृद्ध हो अथवा क्षीण हो गया हो तो पात्रत्रय विद्यमान रहने पर भी शायद ही जीता है।

अरिष्टलक्षणम्

द्वावेव फुफ्फुसौ दुष्टौ समग्रो यस्यवैकृतः।
नासा श्वासौ भृशंस्वेदो दुर्लभं तस्य जीवितम् ॥
मन्दे किंचित् प्रलपति स्वेदः स्नातः प्रमुह्यति।
वेपते करपादश्च प्राणास्तस्यापि दुर्लभाः ॥
अतीसारेण वाक्रान्तो दुर्वारेण भवेद्यदि
क्षीणः श्वसनके नार्तो दक्षिणाभिमुखोहि सः ॥

भावार्थ—जिसके दोनो फुफ्फुस खराब हो गये हैं अथवा जिसका सम्पूर्ण खराब हो गयाहो, नासिका जिसकी फूल कर श्वास कष्ट से लेती हो, पसीना भयंकर आता हो ऐसा रोगी मुश्किल से ठीक होता है। अथवा जो रोगी कुछ २ मन्द प्रलाप करता हो तथा पसीनोंकी अधिकतासे शिथिल हो जाता हो, हाथ पैर जिसके कांपते हो, ऐसा रोगी मुश्किल से वचता है। अथवा जिस रोगी को बलवान अतीसार हो गया हो तथा लंघानादिकों के द्वारा अति क्षीण हो गया हो, श्वास की गति ज्यादा बढ़ गई हो ऐसा रोगी यमालयको चला जाता है। यह सर्व लक्षण सिद्धान्त निदान मे लिखे है।

डाक्टरो मत से निदान प्रथम जब न्युमानिया होता है तब उसमें सर्व प्रथम दोनो फेफेडो मे शोथ आता हैं। वह शोथ दो प्रकार की होती है १ लोव्युलर न्युमोनिया—इस अवस्था में शोथ फेफड़े के छोटे टुकड़ो में होती है। २ लोव्युर निमोनियां इस रूप में शोथ फेफड़े के एक टुकड़े में होती है। प्रथम रूपको ब्रांकोनिमोनिया

कहते है।। फेफड़ों के अन्दर सूजन चिर कालीन रोगोंमें भी हो जाती है इस अवस्था में कोई विशेष लक्षण प्रारम्भ में दिखाई नहीं देते। यह रोग प्रायः मद्य पीने वालों में या वृद्धों में अथवा बच्चों में पाया जाता है। यह अन्य रोगों की उत्पत्ति में भी हो जाता है। इस रोग का आक्रमण २ तरह से होता है। (१) फुफ्फुस खण्ड प्रदाह २) श्वास नलिका प्रदाह इसमें फुफ्फुस खण्ड प्रदाह विशेष घातक है। फुफफुस क्या वस्तु है ? उत्तर—शासोच्छ्वास क्रिया के साधन २ फेफड़े है वक्ष गह्वर में हृदय के दोनो तरफ १--१ करके दोनो फेफडे रहते है। ये फेफड़े बहुत मृदु कुछ तेजस्वी दबाने पर स्पञ्ज के समान दबने वाले और वजन में हल्के होते है। इनमें मधुमक्खो के छाते के समान छिद्र होते है। यह जल पर तैरने वाले हल्के होते है। इनमें संकोचन प्रसारण क्रिया भी रहती है। सद्योः जात शिशु के फेफड़े का रंग कुछ गुलाबी होता हैं। बड़ी आयु वालों के फेफड़े का रङ्ग मैला हो जाता है। बृद्धावस्था मे इनका रंग काला हो जाता है। स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों के फेफडे अधिक काले होते है।

पुरुषों के दहिने फेफड़ो का वजन ५५ तोला और बाये का ५० तोला होता है। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों के फेफड़े मे वजन कम होता है। फेफड़ा के ऊपर का भाग नीचे की अपेक्षा पतला होता है। ऊपर के भाग को फुफ्फुस शिखर (ऐपेक्स Apex) कहते हैं और नीचे को भाग को बेस (Base) कहते है। इन फेफडों में अनेक छिद्र होते है। इनमे ३ मुख्य है। जिनमें १ वृन्त खात और २ हृदय खात कहलाता है। फुफ्फुसमूल इन छिद्र द्वारा भीतर प्रवेश करता है। हृदय खात बाएं फेफडे की अपेक्षा दाहिने में अधिक गहरा है।

फुफ्फुस वृन्त मूल (Root) फुफ्फुसों में जाने वाली श्वासनलिका

की शाखा मे, रूधिर वाहिनी नाड़ियां रसायनिया, इन सवका समूह जिनके द्वारा फुफ्फुस का हृदय और श्वास नलिकाओं के साथ सम्वन्ध रहता है। इन फुफ्फुसो की वनावट मधुमक्षिका के छत्ते की भांति होती है। जिस प्रकार छत्ता अनेक कोठरियों से वना होता है, उसी तरह फुफ्फुस सहस्रों वायु कोष्ठों से वना होता है, जिसमें वायु प्रणाली से वायु आती रहती है। यह वायुकोष एक दूसरे से बहुत पतली दीवारों के पड़तों के द्वारा भिन्न रहते है। यह भित्ती एक प्रकार की कला वा भिल्ली से वनी होती है। इसमे मोटाई वहुत कम होती है। इसमें अनेक रक्त नलिकाय लगी रहती हैं। यह सब केसिकाय होती है। इनकी संख्या वहुत अधिक होती है। जितने वायु कोष्ठ होते है उनमें हरेक मे केशिकाओ का एक ही परत रहता है, क्योकि इनकी दिवार बहुत पतली होती है। इसलिए उसमें अधिक केशिकाओ का समावेश नहीं हो सकता। दिवारो के पतली हानेका का एक कारण और भी है, कि इनके पतली होने से ही वायु का परिवर्तन हो सकता है। वायु कोष्ठ मे वायु रहता है और कोशको दिवारो की केशिकाओ मे रक्त का प्रवाह होता रहता है। इससे वायु रुपी आक्सिजन दिवारों मे होकर रक्त मे पहुंच जाती है और रक्त की दूषित गैस दिवारों के द्वारा वायु में आकर मिल जाती है। इस प्रकार यह दिवारे वायु परिवर्तन में बाधा नही करती। मोटी दिवार होने से गैस के परिवर्तन मे कठिनाई होती है और श्वास कर्म निरर्थक हो जाता है। इसलिये ईश्वर ने कही पर भूल नहीं की। उसने जो भी वस्तु बनाई है खूब सोच समझकर ही बनाई है।

इन फुफ्फुसों के ऊपर एक प्रकार की खोली चढ़ी रहती है जो सैत्रिक तंतुओ से बनी होती है। इसको फुफ्फुसावरणकला प्लुरा

Peuro कहते है। इसके दो परत होते है। एक बाहरी जो वक्षः स्थल में भीतर की तरफ मांसपेशियों और पर्शूकाओं से मिला रहता है। और दूसरा भीतरी फुफ्फुस के ऊपर चिपटा रहता है। ये दोनों परत एक ही झिल्ली से बने होते है। इन परतों में कुछ तरल पदार्थ रहता है। यह चिकनाहट का काम करता है तथा यह तरल ही हृदय की गति को सुगमता से करने देता है और फुफ्फुसों को फैलने और संकोच करने मे सहायता देता है। परतों में शोथ आने पर तरल का बनना कम हो जाता है। इससे छाती में बहुत तीव्र शूल होने लगता है। जिस मार्ग से श्वास फुफ्फुस तक जाता है वह नासिका के छिद्रों से आरम्भ होता है। प्रकृति ने नासिका के छिद्रों में प्रबन्ध कर रखा है कि जो वायु श्वांस लेते समय भीतर जाता है वह रन्ध्रो में स्थित बालों द्वारा छन कर ही जावे, जिससे वायु के साथ जाने वाले जन्तु तथा कण वही हीं रुक जाते है। नासिका की रचना भी सधारण नहीं है। इसमें भी कई प्रकार की सुरंगे और गढ़े होते है जो श्लैस्मिक कला से ढके रहते है। इसलिये इसमें ठोस वस्तु जैसे कण छिद्रस्थित बालो मे से भीतर पहोंच जाते है तो कला तुरन्त उत्तेजित होकर छींक आने लग जाती है, जिससे तुरन्त वाहरी वस्तु फेकी जाती है। वायु नासिका के द्वारा स्वरयन्त्र में पहुंच कर वहां के नलिकाओं के द्वारा फेफड़ों के कोष्ठों में पहुंचती है। वायु प्रणाली की पिछली भित्ति सैत्रिक तन्तुओं की वनी होती है और चपटी होती है। किन्तु आगे की ओर से गोल और उभरी होती है। यह सारी प्रणाली एक कला से मढ़ी हुई होती है।

इसकी रचना विशेष प्रकार की होती है, इस कला के सेलों के एक ओर से सूक्ष्म तार से निकले रहते है, जिनको सिलिया

कहते हैं। इन सिलियो में हर समय गति होनी रहती है। वायु प्रणाली का सर्वाङ्ग इन सिलियों से आवेष्टित रहता है। इनकी गती एल साल एक ही तरफ होती है। जब वायु प्रणाली में कोई वस्तु घुस जाती है तब एक साथ ये सब क्रुद्ध होकर अपनी क्रिया द्वारा उस घुसी हुई वस्तु को बाहर निकाल देती है। शायद आपने देखा होगा कि जल पीते समय कुछ पानी नलीका में चला जाता है तो बहुत बेग से खांसी आने लगती है। यह सब इन सिलियों की क्रिया के कारण ही होती है। जब तक तमाम पानी इससे बाहर नहीं निकलता तब तक ये विश्राम नहीं लेती।

यह वायु नलिका अन्त में दो भागों में विभक्त होती है। प्रत्येक भाग एक फेफड़े में जाता है। फेफड़े के भीतर के प्रत्येक भाग से शाखाये निकलती है। इनमें से फिर अन्य छोटी २ कितनी ही शाखा और प्रसाखा निकलती है। जो एक वृक्ष की तरह बन जाती है। इन उपरोक्त शाखा और प्रशाखाओं की रचना मूल नासिका की जैसी होती हैं। वह सैत्रिक तन्तु की बनी होती है। जिसमें कारटीलेज के आधे छल्ले रहते है। छोटी शाखाओं में यह नहीं होते वह केवल सैत्रिक तन्तु की बनी हुई होती है। फेफड़े कई भागों में विभाजित होते है। दाहिना फुफ्फुस ३ भागों का बायाँ दो भागों का बना हुआ होता है। इनमें से फिर कितने ही छोटे २ भाग बन जाते हैं। इनमें से सबसे छोटा भाग पालिका कहलाता है। क्योंकि इसमें एक वायु नलिका रहती है, बायु कोष्ठ होते है और स्वयं श्वास क्रिया करता है। इसलिये वायु कोष्ठो के संग्रह का नाम फुफ्फुस है। इनका काम रक्त को स्वच्छ करना है। हृदय जितना रक्त फेफड़ों के पास भेजता है वे उतना ही शुद्ध करके लौटा देते है। उनको पोषण करने के लिये दूसरे ही स्थान से अन्य नलिकाओं द्वारा जो बृधमनी की शाखायें है रक्त आता है। श्वास

कर्म में न केवल फेफड़े ही काम करते हैं; किन्तु पशुकाओ पर लगी हुई जो मांस पेसी है वे भी साथ देती है। ये मांस पेसी जब बाहर की ओर फैलती है तब फेफड़े भी फैलते है। और वायु का भीतर प्रवेश हो जाता है जिस समय पेशियां भीतर की ओर संकोच करती है तब फुफ्फुस भी दब जाते है जिससे भीतर की वायु बाहर आ जाती है। इन पेशियों के अलावा श्वास कर्म में उदर की पेशियां भी सहायता देती है। इसमें जो सबसे बड़ी पेशी जिसको महा प्राचीरा पेशी (Diaphram) कहते है जो वक्षःस्थान और उदर के बीच मे रहती है।

यह दोनों प्रान्तो में छाते के माफिक खुली हुई फैली रहती है। जब यह पेशी नीचे की तरफ संकोच करती है तब फेफड़ों में वायु प्रवेश कर जाती है। जब ऊपर की तरफ फुलती है तो फेफड़े दब जाते है जिससे भीतर की वायु बाहर निकल जाती है। इस तरह वायु फेफड़ों के भीतर जाती है और बाहर आती है। १ मिनट में १८ बार हम श्वास लेते है और छोड़ते है । इस प्रकार एक बार फैलने के बाद फेफड़े फिर अपनी पुरानी दशा में आ जाते है। लेकिन् इससे फेफड़ों की सारी वायु बाहर नही निकलती है। उस समय पर प्रश्वासक पेशी की सहायता लेनी पड़ती है। यह यह उच्छ्वास पेशियों से अलग होती है। साधारणतया श्वांस के बाहर निकलने के बाद फिर भी वक्ष को दबाते है तो कुछ वायु बाहर निकलती है। ऐसा करने में प्रश्वासक पेशी अवश्य काम करती है।

श्वांस कर्म

साधारण अवस्था में हम १ मिनट मे १८ बार श्वास लेते है; किन्तु आवश्यकता पड़ने पर फुफ्फुस अधिक बार भी श्वास ले सकता है। व्यायाम करते समय तथा अन्य परिश्रम करते समय

श्वास जल्दीं जल्दी आने लगता है। उस समय रक्त को अधिक आक्सीजन की आवश्यकता होती है। उस समय मे श्वांस क्रिया वेग से चलने लगती है। जितने फुफ्फुस के ऐसे रोग हैं, जिनमें फुफ्फुसों की कार्य शक्ति घट जाती है, जैसे निमोनियां, राज यक्ष्मा आदि, इन सर्व रोगों मे श्वास कर्म अधिक वेगसे होता है। जैसे निमोनियो मे १ मिनट मे ४० से ५० बार तक श्वांस चलता है।

जो हवाई जहाज से यात्रा करते है, उनको भी अधिक श्वांस लेने की आवश्यकता पड़ती है। न्युमोनिया प्रभृति रोगो में फेफडे का भाग विकृत हो जाता है। जिससे रोग ग्रस्त भाग आक्सिजन ग्रहण नहीं कर सकता, इसलिये इस कमी को पूरा करने के लिये प्रकृति फेफड़ों से अधिक वेग पूर्वक श्वास कार्य करवाती है। साधारण तया श्वास और नाड़ी मे १—४ निपात रहता है। जितने समय में हम एक बार श्वास लेते है, उतने समय में नाड़ी चार बार चलती है।

संचालक

श्वांसकर्म का प्रधान संचालक श्वासकेन्द्र है

शरीर की अन्य क्रियाओं को भाति श्वांस क्रिया भी संचालक के अधीन है। संचालक केन्द्र मस्तिक ही है। इसकी विगर आज्ञा के कोई कर्म नहीं होता। फुफ्फुस भी इसकी आज्ञा से ही श्वांस कर्म करता है। सुषुम्ना के सवसे उच्च भाग में एक केन्द्र है जो श्वास केन्द्र कहलाता है। वह सदा फुफ्फुस और उरस्थ मांस पेशियों को सूचना भेजा करता है। उसी के अनुसार कार्य होता रहता है। हमारी इच्छानुसार हम श्वांस गति को घटा बढ़ा और रोक भी सकते है। किन्तु ज्यों हि हम विचार को छोड़ देते है, श्वास फिर

अपनी पूर्वावस्था पर आ जाता है। इस प्रकार यह क्रिया हमारी इच्छा के आधीन नहीं है। श्वास केन्द्रको जब आवश्यकता होती है श्वास गति को बढा देता है। यह सब जरूरत उसने अपने तत्वावधान में ही रक्खी है। सारे शरीर से इस केन्द्र को सूचनायें मिला करती है। उसी के अनुसार यह घटा बढी हुआ करती है। वैज्ञानिक भी इस बात को मानते है और कहते है कि इन सभी क्रियाओं को उत्तेजित करने वाला श्वास केन्द्र ही है। इसके द्वारा ही उत्तेजना श्वास पेशियों को जाती रहती है। उदाहरणः—जैसे जब रक्तमें अशुद्धि अधिक होती है और रक्त मस्तिष्क में पहुंच जाता है तब वह इस केन्द्र की क्रिया को बढ़ा देता है। इससे अधिक उत्तेजनायें जाने लगती है और स्वास कर्म शीघ्रता से होने लगता है।

॥ श्री ॥

पाश्चात्यमतसे विशेष निदान

रक्तष्ठीवि फुस्फुस खण्ड प्रदाह

निदान—श्वसनक ज्वर (Lobai Pneumonia) में ज्वर तीव्र याने १०५ डिग्री तक होता है तथा आशुकारी होता है। यह रोग छोटे, बड़े, बूढ़े सबको समान रूपसे होता है, परन्तु १० सालसे पूर्व अथवा २० से ५० वर्ष तककी आयुवालोंको विशेष करके होता है। वृद्ध मनुष्योंके लिये यह बीमारी घातक होती है। स्त्रियोंकी अपेक्षा पुरुषों को विशेष करके होती है। इस रोगकी उत्पत्ति ठण्डी हवाके चलनेसे नंगे बदन घुमनेसे, धूपमें घूमकर ठण्डी जगहमें जाकर विश्राम लेनेसे, अथवा ठण्ढे जलसे स्नान करनेसे, अथवा ठण्ढा जल पीनेसे, तेज़ पंखे

की हवामें सोनेसे, दोपहरमें धूपके समय अथवा रात्रिको अधिक ठण्ढेके समय स्नान करनेसे, अतिमद्य पान करनेवाले अथवा जिसको छातीमे चोट लग गई हो, ऐसे मनुष्योंके होता है। इनके अतिरिक्त गन्दे वातावरणवाले मकानों मे रहनेसे ; तथा विषमज्वर, प्रतिश्याय, वृक्क शोथादि रोगोके द्वारा जीर्ण होनेपर थोडा सा भी ठण्ढी हवाका आघात लगने पर तथा मिथ्या आहार विहारके सेवनसे भी यह रोग हो जाता है। दूसरा कारण निम्नलिखित कृमि भी है। जैसे :

(१) न्युमोकोक्कस (Pneumococcus) (२) बेसिलस (Becillis) (३) (३) स्टफिलोकोक्कस (Staphylococcus) (४) स्ट्रेप्टोकोक्कस (Streptococcus) इन कृमियों द्वारा भी होती है। इसके अलावा स्थान और उपद्रव भेदसे भी इनके कितने भेद किये है। (१) उभय फुफ्फुसग्राही (Doublepneumonia) (२) परिभ्रमण करनेवाला (Wandring) विशेपतः यह मद्यपीनेवालोंको और वृद्धोंको ही होता है। (३) केन्द्रिक फुफ्फुसों के बीच के भाग को दूषित करनेवाले (Central) (४) प्रलापादि उपद्रवोसे युक्त जिसमें (Toxemia) के चिन्ह प्रारम्भसे ही हो जाते है। (५) जुकाम होकर श्वासनलिकामे प्रदाह (Lobular) (६) फुफ्फुसावरणके सहदाह (Pleuritic) (७) उपदंश जनित (Syphilitic) (८) आन्त्रिक ज्वरके साथ (Typhoid Pneumonia)

सम्प्राप्ति :—इस रोगके कीटाणु श्वासमार्ग द्वारा फुफ्फुसोंमे जाकर, या वहा ही उत्पन्न होकर दोनों फेफड़ोंमे रक्तको दुष्ट करके जमा देते है। इससे लसिका भी गाढ़ी हो जाती है तथा इस कारणसे वातादि दोष कुपित होकर श्वासनलिका यन्त्रको दूपित कर देते है, जिससे वह स्थान दूपित होकर शोथयुक्त ठोस हो जाता है तथा श्वासोच्छ्वासक्रिया कष्ट युक्त हो जाती है। इन कृमियों द्वारा फुफ्फुस आक्रान्त होनेपर ४ अवस्था होती है। रक्ताधिक्य (१) हायपरेमिया

(Hyparam'a) (२) रक्त घनीभाव रेडहिपटिएसन Red Hepatiyation (३) असित घनी भाव (ग्रेहिपटिएसन) GrayHepatiyation (४) प्रकृतिभाव (रेजोल्युसन) Resolution इस रोगमें वात, पित्त, कफ, तीनो दोष कुपित होते है, परन्तु कफका प्रकोप ज्यादा होता है।

पूर्वरूप—इस रोगमें फेफड़ोंका जकड़ना श्वास, कास, कहीं पर कम्प, ठण्ड लगना, क्षुधानाश, कमजोरी, दिलमें बैचेनी, नाड़ीमें तेजी इत्यादि लक्षण दिखाई देते है।

रूप—इस रोगमें ज्वर प्रायः शीतपूर्वक आता है, प्रायः ज्वर तीव्र होता है। तथा अरुचि, तृषा, पार्श्वशूल, कास, श्वासवृद्धि, बार २ मे रक्तमिश्रित चिकिना गाढालहेसदार दुर्गन्ध युक्त कफ निकलता है। श्वासके वेगसे पंसुली और नाक फूलते रहते हैं। मस्तक और शरीर पर पसीना बार २ आता है, तथा गलेपर सरसोंके समान पिड़िकाये भी दिखती है। रोगीको कमजोरीका अनुभव होता है। मोह प्रलाप गलेमे घर-घर कफकी आवाज सुनाई देती है।

जिह्वा कठोर, शुष्क मैली हो जाती है, नाड़ी कोमल, स्थूल, चंचल हो जाती है, नाड़ीकी गति १०१ से १३० तक हो जाती है। ज्वर १०४ डिग्री तक हो जाता है। वृद्धोंमें ज्वर कम रहता है, स्वस्थावस्थासे श्वासोच्छ्वास गति द्विगुणी या त्रिगुणी तक हो जाती है। मद्य पीनेवालोंको उन्माद भी हो जाता है। यदि प्रारम्भसे ही प्रलाप हो तो निद्रा नाशादि हो जाते है। प्रारम्भमें कफ थोड़े दिन तक पतला निकलता है, फिर फेफड़ोंमें कठोरता आनेपर कफ चिकना पीले रंगका अथवा रक्त मिला हुआ आता ह। यदि रोग बलवान होता हैं तो कफ मैला दुर्गन्धयुक्त पीप सहित लाल रंगका आता है। पीप अधिक होनेपर रोग असाध्य हो जाता है। इस रोगमें अच्छी तरहसे चिकित्सा न होनेपर बालकोंको कर्णस्राव, गर्भिणीका गर्भपात, फुफ्फु-

सशोथ, हृदयावरण प्रदाह मस्तिष्कावरण प्रदाह आदि उपद्रव हो जाते है।

मलपाक नियमानुसार हो जाय तो ७-९-१२ वें दिन अकस्मात जोरका पसीना आकर ज्वर उतर जाता है। पसीना अधिक आनेसे शरीर ठण्ढा हो जाता है, कही पर नाडी भी लुप्त हो जाती है। उस समय सावधानी पूर्वक चिकित्साकी जाती है तो रोगी ठीक हो जाता है। यदि कफका प्रकोप भीषण होता है तो मृत्यु हो जाती है।

परीक्षा विधि

प्रारम्भावस्थामे परीक्षाके समय छातीपर कनिष्ठिका अंगुली रखकर ठेपन क्रिया द्वारा परीक्षाके समय मन्दध्वनि सुनाई देती है. श्रवण यन्त्र द्वारा सुननेसे केशमर्दनकी ध्वनि सुनाई देती है। यह ध्वनि लम्बा श्वास लेने पर ही सुनाई देती है। फुफ्फुसोंमे शोथ होकर कुछ श्राव होने पर ही यह ध्वनि उत्पन्न होती है अन्यथा नहीं। द्वितीय और तृतीत अवस्थामे ठेपनेमे यह ध्वनि पत्थरकी आवाजकी तरह ठोस रूपमे सुनाई देती है। स्टेथिस्कोपके द्वारा परीक्षा करनेपर वायु कोषकी आवाज सुननेमे नही आती है। सिर्फ श्वासनलिकासे श्वासीय शब्द ही सुनाई देता है। श्वास लेने और छोड़नेके समय जो फेफडोंमे संकोचन और प्रसारणकी क्रिया है वही दिखाई नहीं देती वल्कि रुग्णस्थान शोथमय उभरा हुवासा प्रतीत होता है। किसी किसी रोगीको श्रेष्ठ उपचार करनेपर तीसरे चौथे रोज ही पीड़ा शान्त होकर खासी हल्की पड़ जाती है तथा कफ भी पतला होकर निकलने लग जाता है। कहीं पर किसी रोगीको ज्वर भी ४ ५ रोजमे पसीना आकर उतर जाता है। परन्तु यह उतरना खतरे से खाली नही है क्योंकि सर्व क्रियायें पूर्वावस्था मे जब तक नहीं आती है तब तक ज्वर का उतरना अच्छा नही होता है। इसके उतरने से अन्य उपद्रवों की आशंका रहती है। मियाद पक कर

शनैः शनैः निर्दोष रूप में जो ज्वर उतरता है वही आरोग्यता विधायक होता है। यद्यपि किसी २ रोगी को दोष पाचन होने पर भी एक साथ पसीना देकर अथवा ज्यादा अतिसार होने पर भी ज्वर उतर जाता है। इस समय चिकित्सक को भयभीत होने की जरूरत नहीं, अगर अन्य क्रियायें, श्वास, नाडी की तथा हार्टकी गति ठीक हो तो। परन्तु फिर भी सावधान रहने की जरूरत है। पसीना होते समय सर्दी लग कर फिर रोग होने की सम्भावना रहती है। एतदर्थ ठण्ढी हवा से बचने का प्रयत्न रखें। रोग मिटने पर भी किसो २ रोगी को फुफ्फुसों म शोथ अथवा फुफ्फुस विद्रधि तथा कासादि उपद्रव बाकी रह जाते हैं। इस से फेफड़े कमजोर बने रहते हैं। जिससे थोड़ा भी शीत सम्पर्क होते ही फिर मनुष्य को यह रोग पकड़ता रहता है। इस रोग के प्रकोप से मूत्र की क्षारीय क्रिया बहुत कम हो जाती है। रोग मिटने पर स्वतः अपने आप हो चालू हो जाती है। फुफ्फुस रोग में (याने यक्ष्मा प्रभृति रोगो म ऐसी बातें नहीं होती।

Brancho Pneumonia

ब्रांको न्युमोनियां

यह रोग प्रायः छोटे बच्चों तथा दुर्बल और वृद्धोंको, क्षय-अतिसारादि रोगों के अन्त समय मे प्रायः करके होता है। इस रोग का आक्रमण फुफ्फुसों से सम्बन्ध रखने वाली सूक्ष्म श्वास नलिकाओ में होता है, जिससे वे दाह शोथ युक्त हो जाती हैं। प्रायः देखा गया है कि मसूरिका, कण्ठरोहिणी, इनफ्लुएञ्जा आदि विषमय रोगों में उपद्रव रूप से होता है। छोटे स्तन पीने वाले बच्चों को जब यह रोग होता है, तब आयुर्वेद मे उत्फुल्लिका रोग के नाम से पुकारा जाता है। भाषा में इस रोग का नाम डब्बा या पसली उठना कहते हैं। जब यह रोग बच्चोंको होता है तब श्वासले-

नेंसें दोनों पंसलियों के बीच गड्ढा सा पडने लग जाता है, जिसको हिन्दी में बाख उठते हैं ऐसा शब्द बोला जाता है। यह तीव्र संक्रामक होता है, इसमें पूयजनक कीटाणु कफ परीक्षा मे पाये जाते है।

सम्प्राप्ति—इस रोग मे ठण्ढे वगैरह अथवा मिथ्या आहार बिहार के कारण दोष कुपित होकर, श्वास नलिकाओंमे शोथ पैदा करके श्वास मार्ग को संकुचित कर देता है जिससे दोनों फुफुसों के वायु कोष दूपित हो जाते हैं। तब सूक्ष्म श्वास नलिकाओ में लसिका-श्राव भर जाता है, जिससे ये तथा इनसे सम्बन्ध रखने वाले वायु कोष दूषित होकर संकुचित हो जाते है तथा आस पास के अन्य वायु कोष भी सर्व शोथयुक्त हो जाते हैं।

(रूप)—यदि यह रोग स्वतन्त्र रूप से होता है तब तो आक्रमण अकस्मात् ही वगैर अन्य सूचना के हो जाता है। वहां पर इसके प्रारम्भ मे पहिले शीतपूर्वक ज्वर होता है, तथा छाती में दर्द, कास श्वास की वृद्धि तथा किसी को शुरूसे ही ज्वर तीव्र, अथवा किसीको कुछ समय बाद धीरे धीरे १०२ से १०३ तक होता है। इस रोग की परीक्षा सिवाय स्टेथिस्कोपके, अन्य लक्षणों को देखने मात्र से होनी असम्भव है। श्रवण यन्त्र के द्वारा सुनने पर भी स्वस्थ्य ही दिखलाई देते है। क्योंकि छोटे छोटे कोपो मे ठोसपन होनेसे सम्यकतया प्रतीति नहीं होती। जब रोग बहुत बढ़ जाता है, और वायु कोप भी बहुत ठोस याने घन हो जाते हैं, तब ठेपन-क्रिया में जड़ ध्वनि आती है, और स्टेथिस्कोप मे भी साफ शब्द सुनाई देता है। बच्चों को जब यह रोग होता है तो पहले जुखाम होकर नाक से पानी झरता है तथा ज्वर, मल-मूत्र में कमी, श्वांस जल्दी २ चलने लगता है। बालक सुस्त हो जाता है। खाने पीने में अरुचि हो जाती है। बार २ चमक चमक कर जागता है, रोता है, मुख का रंग भी बदल जाता है, इत्यादि लक्षण हो जाते हैं।

यदि अन्य रोगों में उपद्रव रूप से यह रोग होता है, तब शुरू में खांसी होती है। या ज्वर भी बढ़ कर मियादी रूप मे चला जाता है। श्वासोच्छ्वास की क्रिया बढ़ जाती है, खांसी प्रवल वेगसे चलती है और पंसुलीयों म खड्ढे पडने लग जाते है, कफ चिकना ल्हेसदार मुश्किल से निकलता है। नाड़ी भी दुर्बल दिखाई देती है। उस समय ज्वर भी कभी तेज कभी हल्का होता रहता है। उतरते समय क्रम २ से उतरता है। यदि बल क्षय हो जाय तो उपद्रव उग्र रूप धारण करके रोगी को प्राण मुक्त कर देते है। किसी-किसी रोगी को अभिन्यास हो कर मृत्यु हो जाती है। परन्तु यह रोग फुफुसखण्डप्रदाह की तरह मारक नहीं है।

फुफ्फुसधरा कला शोथ (प्लुरिसी) फुफ्फुसावरण प्रदाह

इस रोग में फेफड़ों को आच्छादित करने वाली कला में शोथ हो जाता है। यह शोथ ऊपर आच्छादन मे अथवा नीचेके आवरण में होती है जिससे दोनों आवरण पृथक् २ हो जाते है। स्वस्थावस्था में ये आवरण परस्पर में मिले हुये रहते है, और इनको गीला रखने के लिये एक तरह का श्राव रहता है जो परस्पर की रगड़ को बचाता रहता है। इस रोग मे प्रथम शर्दी लग कर ज्वर चढ़ जाता है फिर पार्श्व में शूल की तरह चुभने वाला दर्द पीछे से अथवा पार्श्वों से उठकर ऊपर की तरफ जाता है। उस समय खांसी सूखी चलती है तथा श्वांस थोडा रुक रुक कर आता है। खांसने या जोरसे श्वांस लेने से या लेटते समय पार्श्व में बहुत पीड़ा होती है। नाड़ी तेज और रज्जुवत कठोर हो जाती है। जिह्वा मैली सफेद हो जाती है, मूत्र भी गंदला और लाल पीले रङ्गका आता है। शरीर गरम, ज्वर १०० डिगरी से १०२ डिगरी तक हो जाता है।

प्लुरिसी और न्युमोनिया से इतना ही भेद रहता है कि प्लुरिसी

में दर्द तेज शूल की तरह चुभने वाला भयंकर होता है। न्युमो-नियां में दर्द मन्द होता है। दूसरा फर्क यह है कि प्लुरिसी मे खांसी जोर देकर सूखी और धीमी चलती है। वल्गाम बिल्कुल नहीं आता है। न्युमोनिया मे खांसी लम्बी और झागदार या भूरे रङ्ग का कफ निकलता है, जिसमें कभी२ रक्त भी मिला हुआ होता है। रोग की हल्की अवस्था में इसका भ्रम वातज शूल से भी हो जाता है, परन्तु वातजशूल मे ज्वर नहीं होता है।

फुफ्फुस खण्डप्रदाह (लोब्युर न्युमोनिया चिकित्सा)

इस रोग की चिकित्सा में सर्वप्रथम सन्निपात ज्वरे पूर्व कूर्यादामकफापहम् इस क्रिया को काम में लाना चाहिये, जिससे दोष का पाचन जल्दी ही हो जाय। फिर दोष को बाहर निकाल ने के लिये लंघन, स्वेदन, निष्ठीवन, अवलेहाञ्जन चिकित्सा करे। रोगी को विस्तर पर सुलाये रक्खे तथा कमरे में वायु मन्डल को गरम वाष्प से तर रखना चाहिये। कभी भी इस रोग से पीड़ित रोगी को अन्धकारमय शीतल स्थान में न रक्खें। रोगी को सीधी वायु से बचाना चाहिये, तथा बोलने डोलने से रोकना चाहिये। कमरे में किसी प्रकार का धूआं या गन्दगी नहीं रहने देना चाहिये। रोशनी में मीठा या कडवे तैल का दीपक हो या बिजली हो तो हल्के पावर की रखनी चाहिये। किराशन तैल के दीपक को बिल्कुल नहीं घुसने देना चाहिये। फेफड़ों को हर समय ठण्ढ से बचाने की चेष्टा करनी चाहिये। छाती पर पुराने घृत की या धस्तूरादि घृत को गरम हाथ से धीरे२ दिन में ३ बार लगाकर अलसी का पुल्टिस या एन्टीफ्लोजिष्टीन की पट्टी लगा देनी चाहिये, परन्तु हृदय को छोड़कर। इस रोग में लंघन करना अत्यन्त हितकर है फिर भी रोगी विशेष कमजोर हो तो

साबू या बार्ली पथ्य मे दे देनी चाहिये। फलों के रस से तथा दूध से एकदम बचाना चाहिये। जल की प्यास हो तो गरम करके कवोष्ण जल देना ही उत्तम है। शृत-शीतजल से कफ जम जाता है। शीतसे बचाने के लिये तथा कमजोरी से बचाने के लिये थोड़ी मात्रा में मद्यका सेवन हितकर है। औषधियों में भी हृद्दौर्बल्य कारक वत्सनाभ घटित औषधि का प्रयोग नहीं करना चाहिये। रोगी को पूर्ण विश्रान्ति दे। जहां तक हो पेशाब का प्रबन्ध भी सोते २ ही कराना चाहिये। अगर कोष्टबद्धता हो तो हल्का रेचन दे देना चाहिये। नींद के लिये पूरा प्रयत्न करना चाहिये। नींद आने से दोष का पाचन जल्दी होता है। नींद न आने से दोष प्रकोप बढ़ता है। परन्तु अहिफेनघटित औषधि का प्रयोग न करे। ज्वर के वेग को कम करने के लिये भी फिनाष्टीन जैसी औषधि का प्रयोग नहीं करना चाहिये। छोटे से लेकर बड़े रोगी तक को उत्तेजक औषधि ही देनी चाहिये। खास कर रोगी तन्द्रावस्था में हो तो उत्तेजक औषधि अवश्य देनी चाहिये।

आयुर्वेदीय औषधियां

कस्तूरीभूषणरस, शृंगभस्म, लक्ष्मीनारायण रस, लक्ष्मी-विलास रस, कस्तूरीभैरव रस, मकरध्वज, समीरपन्नग रस श्री वेताल रस, चतुर्भुज रस, मल्लवटी, हरिताल भस्म, अभ्रक भस्म, चतुर्मुख रस, स्फटिक भस्म, मयूरपिच्छ भस्म, अष्टांगावलेह, दश-मूलासव, द्राक्षासव, मृतसंजीवनीसुरा, चतुर्दशांगक्काथ, अष्टादशांग क्काथ, भार्ग्यादि क्काथ, कटफलादिकषाय, क्षुद्रादि क्काथ, दशमूल क्काथ, अचिन्त्य शक्तिरस; आदि औषधियां दी जाती है।

लाक्षणिक चिकित्सा

ज्वर वेग को कम करने के लिये शिरपर दशांग लेप तथा नवसार कल्मीशोरा को जल मे मिलाकर पट्टी अथवा बर्फ की थैली लगानी चाहिये।

पार्श्वशूल कमकरने के लिये धत्तूरादि घृत, पुरातन घृत महानारायण तैल, अमृताञ्जन बाम आदिकी मालिश करके अलसी का सेक नमक का सेक, या एलुवा को या बारह सींगे को जल मे घीसकर लेप करना चाहिये। शूलशमनार्थ श्रृंगभस्म, कुचला घटित औषधि का प्रयोग करना उत्तम है। निद्रा लाने के लिये सोते समय बृ० वातचिन्तामणि प्रस्वपनार्क मे या शैवरसायन शर्वत का प्रयोग करना चाहिये।

प्रलाप हो तो शिर के बाल कटवा कर पुरातन घृत म पान का रस मिलाकर मालिस करनी चाहिये या वर्फ का प्रयोग, अथवा काकमाची को पीसकर लेप करना चाहिये।

कफ निकालने के लिये अष्टांगावलेह, अदरखरस मधु से अवलेह देना चाहिये। श्रृंग्यादि चूर्ण. चन्द्रामृत, वासाक्षार, अपामार्गक्षार, कंटकार्य्यादि क्वाथ, भार्ग्यादि क्वाथ, वासकादि क्वथ, पानरस मधु मधुयष्ट्यादिक्वाथ का प्रयोग करना चाहिये।

हृदय दौर्बल्य निवारणार्थ पूर्णचन्द्रोदय रस, अर्जुनाभ्र, मुक्ता, भीमसेनी, मृगमदासव, मृतसंजीवनीसुरा, द्राक्षासव आदि औषधिया देनी चाहिये।

कफमे रक्तको बन्द करने के लिये—वासावलेह, खूनयोग, कहरवा, शु० स्फटिक भस्म, एलादिवटी, वासकस्वरस आदि औषधियां देनी चाहिये।

मलावरोध दूर करने के लिये—आरग्वधादिक्वाथ, अश्वकंचुकी, ज्वरमुरारी, मलप्रवर्त्तनी बत्ती, इच्छाभेदीरस इनमेंसे जो अनुकूल हो वही देवे।

मेरा अनुभव—इस रोगके लिये आयुर्वेदमें अगणित औषधियोंका वर्णन किया गया है। परन्तु मेरे अनुभवमें जितना काम शंखियाघटित अथवा तपकिया हरताल घटित औषधियोंसे जल्दी फायद होता है उतना अन्यसे इस अनूपदेशके लिये नहीं। राजपुताना प्रांतमें उग्रवीर्य औषधकी इतनी जरूरत नहीं पड़ती है वहां प्राय· दशमूल, अष्टादशाङ्ग क्वाथ, कस्तूरीभैरव, लक्ष्मीविलास, शृंग, अभ्रकसे ही बहुत रोगी ठीक होते हुये देखे गये है। वैद्यराज पं० जगन्नाथजी के अनुभवसे भी पता चलता है कि उन्होंने भी मेरे सामने बड़े बड़े न्युमोनियांके रोगियोंको उपरोक्त दवाओंसे ही अच्छा किया था। मैंने भी काजडामें तथा झूंझणु में बहुतसे रोगियों की उपरोक्त औपधियोंसे चिकित्सा की थी, जिसमें बहुत सफलता मिली थी। इस विषयमें एक नवीन अनुभव भी याद आ गया वह भी लिखता हूं। घटना इस प्रकार है कि संवत १९८३ में मैं झूझणु में सेठ रामविलासरायजीके दवा खानेमे प्रधान चिकित्सक था, तब १ जाट बीबासर नामक ग्रामसे आया उसने १ कागजमें दवाओंकी लिखी हुई सूची मुझको दी, मैंने देखा तो उसमे तमाम बड़ी २ सन्निपातकी औपधिया लिखी हुई थी, मैंने पूछा कि यह किसलिये लाये हो तो बतलाया कि एक जाट वैद्य हमारे घरपर आ रहा है मेरा भाई बीमार है उसके इलाजके लिये उसने कागजमें लिखी हुई औगधिया मंगवाई है, साथमें २) रुपया भी दिया है। तब मैंने पूछा कि बिमारी क्या है, इसमें तो तमाम सन्निपातों की दवा लिखी है इसका मूल्य भी १००) से कम नहीं लगेगा सो तुम्हारी इतनी सामर्थ्य हो तो ले जावो। इतना सुनकर वह शहरमें चला गया वहा फिर अन्य कई वैद्योंसे भी निगरानी की सबने इतनी ही कीमत बतलाई तब वह वापिस मेरे पास आया और बोला हम लोग गरीब आदमी है। कृपया एक बार आप ही हमारे गाव चले चलिये, और इलाज कीजिये। उसकी दीनताके शब्द सुनकर मुझको भी दया आ

गयो और उसी समय मैं उसके साथ चला गया। वहां पहुंचा उसी समय रोगीकी मा बाहर रोती हुई आई और बोली, बेटा ये कौन हैं, उसने कहा मा यह वैद्य है भाईको दिखानेके लिये लाया हूं। मुझको बैठनेके लिये खटिया दे दी गई और यह भीतरमे चला गया थोड़ी देर बाद मुझको भी भीतर रोगीके पास ले गया वहां जाकर देखा तो ५-६ आदमी उसको पकड़े बैठे है, मुझको देखकर वे लोग सब बाहर आ गये और कमरा जो कच्चा बना हुआ था उसीमे रोगी एक बड़ी खाट (डहला) पर सो रहा था मैं ज्योंही उसके पास पहुंचा वह बैठ गया। मैं उसकी चेष्टाओंको दूर खडा ही देखता रहा जब उसने कुछ बोलते हुये खाटके नीचे पैर रखे, तो मैं और थोडा पीछे हट गया। जब वह वहांसे चला तो मैंने कहा कि क्या करते हो तब उत्तर न देकर पासमें ही पीसनेकी चक्की रक्खी थी उसका पाट ऊपरको उठाया इतना देखते ही मैं बाहर आगया और कमरेके किवाड बन्द कर दिये, और घरवालों को आवाज दी, तब वहां कोई भी नहीं था तब आवाज सुनकर उसकी मां आई बोली क्या बात है, तब मैंने कहा कि सब आदमी कहां चले गये वह चक्कीका पाट लिये खड़ा है, जल्दी बुलाकर लाओ, तब वह दौड़कर बाहरसे ५-६ आदमियोंको बुलाकर लाई तब उस रोगीको मुश्किलसे पाट छीनकर खटिया पर सुलाया। परन्तु वह खाटपर टिकता नहीं था पकड़ने वालोंको मारना पीटना शुरू कर दिया। तब उसके हाथ पैर खटियामें बांध दिये, और उसकी नाडी अच्छी तरहसे देखी तथा छातीकी परीक्षा भी की तब मालूम हुआ कि इसको न्युमोनिया है। पुरानी हिष्ट्री पूछनेसे भी पता लगा कि यह खेतमे वर्षाके समय भीगता रहा था उसी दिन इसको ज्वर हो गया था। चार रोज बाद जाट वैद्यको दिखाया गया था। इसने कमजोरी बताकर इसको गोंदके लड्डू खानेको दिये थे उसी दिनसे प्रलाप हो गया और साथमे शीताङ्ग भी हो गया, तब मैंने उसी समय १-१ घन्टाके हेरफेरसे ज्वर चढानेके लिये

नं०१ मकरध्वज १ रत्ती प्रवाल १ रत्ती मृगमद १ रत्ती भीमसेनो ½ रत्तीका संमिश्रण तथा २नं० कस्तूरीभैरव प्रवालका संमिश्रण पानरस मधुसे चालू किया। इस संमिश्रण दवाकी ५ पुड़िया पहुंचनेके वाद उसको ज्वर १०२ हुआ, और प्रलाप भी कम हुआ, तथा ज्ञान भी हुआ, तब उसने अपने पूरे हालचाल कहे दवा निम्नलिखित चालू की।

प्रातः सायं	म० रा०
कस्तूरी भैरव १	शृंग्यादि १ मासा
प्रवाल १	शृंग ४ रत्ती
चतुर्दशाङ्ग क्वाथ मधुसे	टंकण १ रत्ती
	१ पु० पानरस मधुसे

अष्टाङ्गावलेह अदरख रस मधुमें वार २ चाटनेको दिया, तथा पुरातन घृतकी छातीपर मालिस कराकर अलशीका सेक दिया, इतना बन्दोवस्त करके मैं वापिस आ गया। २-२ रोज बाद रोगीका आदमी हाल चाल कह जाता था। इस तरहसे यह रोगी ठीक रास्तेपर आ गया परन्तु कफ नहीं निकलता था इसके समय २ के हाल चाल तो मिलते नहीं थे। वाहर ग्राम था फिर मैंने एक दिन जाकर देखा कफ पक्क तो गया परन्तु गाढ़ा विशेष है। इसलिये भार्ग्यादि कट्फलादि कषाय भी दिया परन्तु फिर भी नहीं निकला, तब एक नया योग कल्पित किया था।

पांचो नमक ५तो०, सज्जीक्षार १तो०, यवक्षार १तो०, नरसार १तो०, आपामार्ग वीज २ तो०, अर्क छाल १ तो० सबको पीसकर आकके पत्तों के वीच में रखकर हांड़ीमें गजपुटमें भस्म बनाकर ६-६ रत्तीकी मात्रामे दिया जिसकी २-३ पुड़िया पहुंचते ही कफ निकलने लग गया और रोगी विल्कुल निरोग हो गया। जब मैंने इस रोगीका इलाज किया था तब वैद्य मूंगराज मेरे पास उपवैद्य थे उन्होंने यह नुसखा नोट कर

लिया और असंख्य रोगियोंको फायदा पहुंचाया २० साल बाद उन्होंने फिर इस साल जब मैं देश गया तब यह नुसखा याद दिलाया सो आप लोगोंके सामने रख दिया है।

द्वितीय रोगी

रोगी नाम दुर्गादत्त, मोडा ; रोग डवल न्युमोनिया
उम्र ५०, स्थान नं० ६८, बडतल्ला ष्ट्रीट ।

इस रोगी को ७-८ रोज से न्युमोनिया की बीमारी थी। डा० बि० सी० राय का इलाज था। बनारसी लाल केडिया सहायक डाक्टर थे। २ नर्स तथा कम्पाउन्डर उपचारक थे। इसकी रातके ८ बजे हालत बिगड गई और श्वास की गति ५० हो गया, ज्वर १०५ तथा संज्ञाहीन होकर बेहोश की तरह गिर गया। पसीना भी बहुत आता था। कण्ठमें इतना भयंकर कफका प्रकोप था कि ३ तल्लेके श्वासकी आवाज नीचे चौकमे सुन रही थी। डाक्टर लोग जबाब देकर चले गये। तब सुबह ५ बजे मुझको तथा वैद्यराज पं० कृष्णदत्तजी प्र० चिकित्सक लक्ष्मीविलास आयुर्वेद भवन वालेको बुलाया। हम दोनो ने जाकर देखा तो हालत बहुत खराब नजर आयी याने निम्न लिखित लक्षण थे। दोनों फेफडोंके खण्ड रोगाक्रान्त हो रहे थे। याने कफसे व्याप्त थे, श्वासके कारण नासिका छिद्र बहुत जोर फूलते थे, नाड़ी गति अनिमियत थी, जो गणनामे भी नहीं आती थी, हाथ पैरोमे पसीना आकर ठण्ढे हो रहे थे। मस्तक पर पसीना आता था आखे लाल सुर्ख हो रही थी। पानी पिलानेमें भी बहुत कष्ट होता था। मन्द मन्द प्रलाप था अति दुर्बलता के लक्षण दिखाई देते थे। हम लोगोने अच्छी तरह से परीक्षा करके घरवालो को पूछा कि डा० लोग क्या बोल गये है। उन्होने कहा कि उनके पास जो दवा थी वह सब दे चुके आखिरी गैस भी रात भरसे चालू है। दुबारा बुलाने गये

तब उन्होंने साफ कह दिया कि हमारे पास इसका कोई इलाज नहीं है। तब हम दोनोंने परस्पर में राय मिलाई और घरवालों को कहा कि यह इस समय बिल्कुल असाध्य है। हमारे पास इस समय इसकी एक दवा है जो क्या तो २० मिनटमें ठीक कर देगी या खत्म हो जायगा। खत्म हो जाय तो यह दोष हमलोगोंको नहीं दीजियेगा। तब घर वालोंके सम्बन्धी वगैरह राय मिलाकर बोले हमारी तरफसे तो यह खत्म हो गया आप लोगोंको दवा पर भरोसा हो तो दे सकते है। तब हम लोगोंने तपकिया हरताल भस्म आध रत्ती पान रस मधुसे खिलाने के लिये १ पुड़िया में दिया और घरवालोंको कहा कि दवा देनेके १५-२० मिनट बाद यह रोगी छट पटावेगा, तब इसको जितना भी पीने सके गाय का गरम दूध पिला देना बादमें इसको उल्टी होगा उससे आपलोग घबराना नही हमको खबर दे देना। उन्होंने वैसा ही किया दूध भी ऽ॥ पिलाया जिससे उसको वमन शुरू हुई। घन्टा भरमें ही तमाम कफ निकल गया ज्वर १०१ हो गया। ज्ञान शक्ति भी आ गयी। सायं काल इस रोगी की हालत बिल्कुल सुधर गयी। दूसरे रोजसे दवा बदल दी गयी।

प्रातः सायं	म० गा०	अष्टाङ्गावलेह मधु से
कस्तूरी भूषण १ रत्ती	शृंग्यादि २ माशा	चाटने को
प्रवाल १ रत्ती	शृंगभस्म ४ रत्ती	
मुक्ता १ रत्ती	टंकण १ रत्ती	छातीपर मालिश
अर्जुनाभ्रक १ रत्ती	पिच्छ १ रत्ती	
दशमूल क्वाथ मधुसे	पान रस मधुसे	अलसीका सेक

इस तरहसे यह रोगी बहुत जल्दी ही ठीक हो गया।

रोगीका नाम पन्नालाल अग्र०, उम्र २७, रोग न्युमोनिया प्लुरिसी मलेरिया, यहा का पता रामदेव लक्ष्मीनारायण का मकान रामकृष्टोपुर

इसको सं० १६४७ ता० १४-७-४७ को इसे शीत पूर्वक ज्वर हुआ तब इसने ज्वरकी कोई परवाह नहीं की ज्वर उतर गया। दूसरे ही दिन स्नान कर लिया तथा भोजन भी कर लिया और बाजार में चला गया। वहीं पर इसको शीत देकर ज्वर हो गया खांसी भी जोर से आने लगी। श्वांस फूलने लग गया तथा पार्श्वमें शूल भी चालू हो गया। इसने डा० श्याम बाबू को बुलाकर दिखलाया उन्होंने उसका इलाज १६-७-४७ को चालू कर दिया और रक्त परीक्षा के लिये भी आदेश दे दिया। १७-७-४७ को रक्त परीक्षा की रिपोर्ट आई जिसमें मलेरिया न्युमोनियां टाइफाइड निकला तब घर वाले बहुत घबराए और ता० १८-७-४७ को सुबह मेरे पास आये तब मैं भी देखनेको गया वहांपर उन्होने पूरा हालचाल कहा और रक्तकी रिपोर्ट भी दिखलाई। मैंने जब रोगीको देखा तब निम्नलिखित लक्षण थे। ज्वर १०३ खांसी सूखी तथा मुश्किलसे थोड़ा २ रक्त मिश्रित्त कफ निकलता था। पार्श्वमें शूलकी तरह वेदना थी, प्यासके कारण कण्ठ सूखता था, लेटने से तथा श्वांस खांसी लेने मे बहुत कष्ट होता था, टट्टी भी कब्ज थी, ज्वर दिनमें २ बार शीत लगकर १०४-१०५ तक बढ़ता था। पसीना आकर नीचेसें १०२ हो जाता था, प्लीहा और यकृत बढ़े हुये थे, नाड़ीकी गत्ति १३० थी, श्वांसकी गति ४२ थी, ऐसी हालत देख कर मैंने निम्न लिखित दवा चालू की।

१८ ७-४७ प्रातः साय	म० रा०
ज्वर संहार २ रत्ती	श्रृंग्यादि
श्रीवेताल रस १ रत्ती	चन्द्रामृत १ गोली
भार्ग्यादि क्वाथ मधुसे	सोमकल्प ४ रत्ती
	पानरस मधुमें

शिरपर यू० डी० कोलनकीपट्टी तथा छातीपर पुरातन घृतकी मालिश तथा एन्टी फ्लोजिस्टीनकी पट्टी दिलवायी अष्टाङ्गावलेह चाटनेको दिया

इस तरह से ३ रोज तक यही क्रम चालू रक्खा पथ्यमें जल वार्ली मिश्री का औटाया हुआ जल दिया। ता० २१-७-४७ को सुबह ज्वर १०० दोपहरमे ९९ सायं फिर १००। खांसीमें कफ पका हुआ आने लगा। दवा वही चालू रक्खा १० वें रोज यह रोगी बिल्कुल ठीक हो गया। दवामें से वेताल रस हटा दिया इसकी जगह लक्ष्मी विलास कर दिया, ३ रोज वाद ज्वर बिल्कुल उतर गया, पथ्य दे दिया, बाद में दवाई परिवर्तन कर दी गयी।

प्रातः-सायं	म० रा०
मालती वसन्त १ रत्ती	तालीशादि चूर्ण १ मा०
चतु.षष्ठी पिप्पली १ रत्ती	चन्द्रामृत १ गो०
अभ्रकभस्म १ रत्ती	मधुसे
मधुसे	

यह रोगी जैसा कठिन दिखलाई दिया था उतना ही जल्दी ठीक हुआ। इस रोगके लिये ताल जैसी अत्यद्भुत दवा है वैसी अन्य दवाई नहीं, मैंने वेताल रस, चतुर्भुज रस ऐसी औषधियोका बहुतसे रोगियो पर अनुभव करके देखा पर इस योगसे शत प्रतिशत न्युमोनिया प्लुरिसी के बीमार निश्चय करके ठीक होते हैं। ऐलोपैथिक वाले भी आज जो सल्फाग्रूप देते है मेरी समझमें तो वह सल्फरसे न बनकर वह भी ताल घटित योग ही दिखता है। इसलिये उससे भी अच्छा फायदा होता देखा गया है। परन्तु हमारे योगमें और उनके सल्फाग्रूपमें यह भेद जरूर है कि उनका दवा केवल कफ जन्यव्याधियोंमे ही फायदा करता है और उसमें जी घबराकर उल्टीकी शिकायत भी ज्यादा रहती है। लेकिन हमारी दवामें यह शिकायत पैदा नही होती तथा त्रिदोष जनित सर्व व्याधियोंमें फायदा करता है, यही इसकी विशेषता है। यह तो हुआ स्वतन्त्र न्युमोनियांका इलाज अब परतन्त्रका और पढ़िये।

अरुण कुमार उम्र ५, डालमियां, रोग मसूरिका, यहां का पता संगईवगान मदनलालजी डालमियां नं० ६।१ इसको ता० ४-७-४७ में सर्वप्रथम जुकाम होकर ज्वर १०४ हुआ ४ रोज तक लगातार ज्वर रहनेके बाद एक रातको यह नींदमे प्रलाप करने लग गया टट्टी भी २-३ पतले हुये तथा खासी, छींक, नाकसे पानी झरता था। पाचवे रोज सुवह मैं देखनेको गया तव कान, गाल, ओष्ठ पर मच्छड़ काटने जैसे चकत्तो दिखलाई दिये ज्वर भी १०२ हो गया परन्तु खांसीका वहुत वेग था तब मैंने निम्नलिखित दवा चालू की।

ता० ८-७-४७

प्रातः	सायं	म० रा०
ब्राह्मी वटी लवङ्गकाथसे	त्रिभुवनकीर्ति रस पानरस मधुसे	चन्द्रामृत १ गो० टंकण १ रत्ती मधुसे

लवङ्गश्रृत जल पीनेको दिया, पथ्यमे जलवार्ली

ता० ६-७- ७ सुवह मैं जव फिर देखनेको गया तव ज्वर १०० था दाने सर्व बाहर निकलनेसे शरीर लाल वर्णका हो रहा था। दवा वही चालू रक्खी, टट्टी पतली हुई इसके लिये लवङ्ग काथ जलमें जायफल ½ और मिला दिया था।

ता० १०-७-४७ ज्वर प्रातः ६८में हो गया टट्टी नहीं हुई परन्तु खासी वैसे ही आती थी। ज्वर कम होनेसे वच्चा चंचल स्वभावका था इसलिये घूमने फिरने लग गया था-इसीसे फिर ठण्ढ लग गई और शामको ही ज्वर १०४ फिरसे हो गया, खासी बन्द हो गई तथ श्वास तेज चलने लग गया तब मुझको तथा कविराज हिरण्यमयसेनको फिर बुलाकर दिखलाया, तव हमलोगोंने देखकर न्यांको डबल न्युमोनिया कायम किया तथा औषधि भी परिवर्तन कर दी गयी।

प्रातः सायं	म० रा०	रातको
कस्तूरी भैरव ½ गो०	शृंग्यादि ४ रत्ती	चतुर्भुज रस ⅓
लवङ्गादि १ रत्ती	टंकण १ रत्ती	लवङ्ग काथसे
प्रवाल भस्म १ रत्ती	पिच्छ भस्म ½	
पानरस मधुसे	पान रस मधुम	

अष्टाङ्गावलेह, नरसार मधुसे वार २ मे चाटनेको दिया, छाती पर धस्तूरादि घृतकी मालिस की गई।

इस तरह यह २ रोज तक ऐसी ही हालतमे रहा तथा दवा भी यही चालू रक्खी।

१२-७-४६ सुबह हम दोनों आदमी फिर देखनेको गये तब ज्वर १०३ था श्वासोच्छ्वास ४२ था नाडो की गति १२४ थी कफ कुछ पतला भी हुआ लेकिन ज्वर कम न होनेकी वजहसे तथा श्वास गतिकी अधिकता सुनकर घरवाले घबडा रहे थे तब दवा फिर बदली की।

प्रात सायं	म० रा०	शयनकाले
कस्तूरी भूपण १ रत्ती	गोरोचन ⅓	चतुर्भुज रस
प्रवाल १ रत्ती	शृंग्यादि १ मा०	दशमूल काथसे
नरसार १ रत्ती	टंकण १ रत्ती	अष्टाङ्गावलेह
पानरस मधुसे	पिच्छ १ रत्ती	वार २ में चाटनेको
	मधु से	

तथा छाती पर धस्तूरादि घृतकी मालिस करके ऐन्टीफ्लोजिष्ट्रीनका पट्टी लगवाया। दिन भरमें ज्वर १०२ १०३ रहा रातको १२ बजे कुछ पसीना आया तथा ज्वर भी एक बार १०१ हुआ तब फिर रातको हम दोनोंको देखने के लिये बुलाया, तब और सब हालत ठीक थे परन्तु ज्वरको बढ़ाने के लिये मृतसंजीवनी की १ खुराक देकर नीचे आये तब सामने ही सोहनलाल जी जाजोदिया मिले जो आकर डालमियांजी की बैठक में बैठ गये, और मदन लाल जी को बोले कि अरुणकी तबीयत का क्या हाल है। उन्होंने सब

हाल चाल बतलाये, तब सोहन लालजीने कहा कि आप लोगो की बडी भूल है, जो न्युमोनियांके केशमें कविराजी इलाज करा रहे है। मै अभी डाक्टरको बुलाता हूँ उन्होंका इलाज कराना पड़ेगा उन्होंने उसी समय रातको एक बजे डाक्टर साहब को टेलीफोन किया। परन्तु कर्मयोगसे डाक्टर नहीं मिला। तब उनको चुप होना पड़ा, फिर वापिस जाते समय बोले कि मैं सुबह आऊंगा तब ही डाक्टरको बुलाऊँगा। खैर सुबह डा० गोर मोहन रायको बाबू मदन लालजीने ही बुलबाया, और वह आकर देखकर बोला कि कलसे रोगी आज बहुत ठीक है। याने ।।) भर ठीक है। दवाई बदल ने की कोई जरूरत नही है। घन्टे भर बाद मैं भी पहुंचा तो देखा कल से बहुत ठीक है। तब हमने भी घर वालोंको आश्वासन दिया कि कल से आज ठीक है। तब मदन लालजीने कहा कि रातको सोहन लालजी ने आकर हमलोगों को बहुत खोटी खरी सुनाई कि इलाज कविराजी बन्द करो, परन्तु उनको डाक्टर नहीं मिला सुबह गौर मोहन रायको परीक्षाके लिये बुलाया था उसने भी ।।) भर फायदा बतलाया सो अब मेरा दिल जम गया है। इलाज किसी के कहने से भो नही बदलूंगा। अस्तु इस उपरोक्त दवासे ही बच्चा अरुण १४ दिनमे ठीक हो गया। बादमें धीरे २ पथ्य की व्यवस्था की गई खांसी मात्र शेप रह गई थी। उसके लिये दवा दूसरी चालू कर दी गई।

प्रातः सायं	म० रा०
शृंगाराभ्र	चन्द्रामृत
पानरस मधुसे	टंकण मधुसे

प्लास्टर बन्द कर दिया तथा पुरातन घृतकी मालिस १ हफ्तेतक चालू रक्खी। इस तरह से यह बच्चा जल्दी ही १४ रोजमे ठीक हो गया। क्रमशः पथ्य चालू कर दिया। इस बीमारी के असंख्य

रोगी मेरे इलाजमें आये जिनमें से कुछ की चिकित्सा का वर्णन मैंने किया है विशेष वर्णन लिखने से पुस्तक वहुत वड़ी हो जायगी। इसलिये नहीं लिखा। वैसे आज कल कागज छपाई में भी वहुत खर्चा लगता है। अतः संक्षेपमें हीं लिखना उचित समझा।

भार्ग्यादि क्वाथ (त्रिंशति)

भार्गीनिम्बघनाभयामृतलता, भूनिम्ब वासाविषा।
त्रायन्ति कटुका वचात्रिकटुकश्योनाक शक्रद्रुमैः॥
रास्नायासपटोल पाटलित्रिवृद्दार्वीविशालानिशा।
ब्राह्मीपुष्कर सिंहिकाद्वयशटी धात्र्यक्षहेमद्रुमैः॥
क्वाथोयं किल सन्निपातनिवहान् द्वात्रिंशदङ्गः क्षणा।
दुर्धर्षान्निजतेजसा विजयते सर्वान् गरुत्मानिव॥
किञ्च श्वास वलास कासगुदरुग्हृद्रोगहिक्कामरुत्।
मन्यास्तम्भ गलामया हितमला वष्टम्भवध्मानपि॥

द्रव्य और निर्माण विधि

भार्गीमूल, नीमकीछाल, नागरमोथ, हरडछाल, गिलोय, चिरायता, अडूसा, अतीश, त्रायमाण, कुटकी, वच, सोंठ, काली मिर्च, छोटी पीपल, सोना पाठा, कूड़ाछाल, रासना, जवासा, कड-वेपरवलके पत्ते, पाढ़ल, निशोत, कचूर, आंवला, वहेड़ा, देवदारु, इन सव औषधियोंको वरा वर लेकर अधकचरा कूट कर रख ले। फिर १ तोलाको १६ तोला पानीमें डालकर क्वाथ करे ४ तोला अव शेष रहने पर कपडे से छानकर काममें लें।

उपयोग—यह क्वाथ दिनमें दो-तीन वार अकेला या दवाईके अनु-पान से नरसार यवक्षार ५-५ रत्ती मिलाकर देवें। यह क्वाथ कफ ज्वर, कफोल्वण सन्निपात, श्वसनक जर (न्युमोनिया) फुफ्फुस

धरा कला शोथ (प्लुरिसी) पार्श्व शूल, कफजनितकास तथा श्वास रोगमें अत्यन्त उपयोगी है।

चतुर्दशाङ्ग क्वाथ

चिरज्वरे वात कफोल्बणेवा, त्रिदोषजेवा दशमूलमिश्रः।
किराततिक्तादिगणः प्रयोज्यः शुध्यर्थिनेवा त्रिवृताविमिश्रः॥

दशमूल, चिरायता, मोथा, गिलोय, सोंठ, कुटकी सब मिलाकर क्वाथ विधिसे तैयार करे। उपयोग पुरातनज्वर, वातकफ प्रधान ज्वर तथा सन्निपात ज्वरमें देवे।

यदि रोगीको मलावरोध हो, तो निशोतका चूर्ण ३-४ मासे का प्रक्षेप देवे।

अष्टादशाङ्ग क्वाथ

भूनिम्बदारुदशमूलमहौषधाब्दतिक्तेन्द्रबीजधनिकेभकणाकषायः।
तन्द्रीप्रलापकसनारुचिदाहमोह श्वासादियुक्तमखिलंज्वरमाशुहन्ति

चिरायता, देवदारु, दशमूल, सोठ, मोथा, कुटकी, इन्द्रजौ, धनियां, गजपीपल इन अठारह औषधियोंका क्वाथ समान भाग लेकर क्वाथविधिसे बनावे। उपयोग—यह क्वाथ अकेला अथवा अन्य औषधिके अनुपानसे सेवन करने पर तन्द्रा, प्रलाप, कास, अरुचि, दाह, मोह, श्वासयुक्त ज्वरका नाश हो जाता है।

अष्टाङ्गावलेह

कट्फलंपौष्करं श्रृङ्गी व्योषंयासश्चकारवी।
श्लक्ष्ण चूर्णिकृतं चैतन्मधुना सहलेहयेत्॥
एषावलेहिकाहन्ति सन्निपातं सुदारुणम्।
हिक्कां श्वासञ्च कासञ्च कण्ठरोधं नियच्छति॥

उर्ध्वगश्लेष्महरणे उष्णस्वेदादि कर्मणि ।
विरोध्युष्णे मधुत्यक्त्वा कार्यैपार्द्रकजै रसैः ॥

भावार्थः—काय फल, पोहकर मूल, काकडा सिंगी, कालीमिच, पीपल, सोंठ, दुरालभा, कालाजीरा इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण बना लेवें। इसके प्रयोगसे दारुण सन्निपातज्वर नष्ट हो जाता है। उपयोग हिक्का स्वास, कास, कण्ठरोधमें मधुके साथ चटावे। सन्निपातज्वरमे ऊर्ध्वमार्ग द्वारा कफको निकालने के लिये स्वेदन किया जाता है। स्वेदनके उष्ण होनेसे उष्णविरोधी मधुका प्रयोग सन्निपातमें नही करना चाहिये। मधुके बदले इस अवलेहको अदरख रस के साथ देना चाहिये।

क्षुद्रादि क्काथ

क्षुद्रामृतानागर पुष्कराह्वयैः कृतःकषायः कफमारुतो त्तरे ।
सश्वासकासा रुचिपार्श्वरुक्करे, ज्वरेत्रिदोषप्रभवे ऽपिशस्यते ॥

भावार्थः—कंटकारी छोटी, गिलोय, सोंठ, पोहकर मूल, इनको समान भाग लेकर क्वाथ विधिसे क्वाथ तैयार करके सेवन कराने से श्वासकास, अरुचि, तथा पार्श्वशूल, वात कफ ज्वर, सन्निपात ज्वर नष्ट हो जाते है।

बृहत् कट् फलादि क्काथ

कटफलाब्दवचा पाठा पुष्कराजाजिपर्पटैः ।
शृंङ्गी कलिङ्गधन्याकं शटी भृङ्ग कणाह्वयम् ॥
तिक्ताभयाम्बु कैरातं भार्गीरामठकं बला ।
दशमूली कणामूलं निः क्वाथ्य क्वाथ मुत्तमम् ॥
हिंग्वार्द्रक रसोपेतं सन्निपात विनाशनम् ।
गल गण्डं गण्ड मालां स्वरभेदं गला मयम् ॥

कर्णमूलोद्भवंशोथं हन्या द्धनु मुखामयान् ।
कफवात ज्वरं कासं तथा हन्ति शिरोगदान् ॥
शिरोगुरुत्व वाधिर्यं निहन्ति कफवातिकम् ।

भावार्थ– कायफल, मोथा, वच, पाठा, पोहकरमूल, कालाजीरा, पित्त पापडा, काकडा सिगी, इन्द्रजौ, धनिया, कचूर, भांगरा, पीपल, कुटकी, हरड, मोथा, चिरायता, भार्गी, हींग, खरेटो दशमूल, इन सबको समान भाग लेकर अधकचरा कूटकर २ तोलाकी मात्राको ३२ तोला जलमे पकाकर ८ तोला अव-शेप रखे ।

उपयोग--इस क्वाथको हींग तथा अदरख रसके साथ सेवन करनेसे सन्निपात ज्वर गलगण्ड, गण्डमाला, स्वरभेद गलरोग, कर्णमूल शोथ दन्त मुखरोग नष्ट हो जाते हैं । एवं वात-कफ ज्वर शिरोरोग, कानका रोग सर्व मिट जाते है ।

वेताल रसः

शुद्धं सूतं विषंगन्धं हरितालं समाक्षिकम् ।
मर्दयेच्छिलयातावद्यावज्जायेतकज्जली ॥
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ कारयेद्गुटिकाः शुभाः ।
गुञ्जामात्राः प्रदातव्याः सन्निपाते सुदारुणे ॥
साध्या साध्यं निहन्त्याशु सन्निपातं भयंकरम् ।
ईशेन कथितोह्येष वेतालाख्यो महारसः ॥
अस्यमात्रा गुञ्जमिता पिप्पलीमधु संयुता ।
योज्यावाते तथा शिग्रु रसेनोऽद्र रसेनवा ॥

सितयाजीरकेणाऽपि देयापित्तज्वरे बुधैः
शर्करामधुयष्टीभ्यां भुनिम्बसितयाऽथवा ॥
शीतज्वरेषु याज्या सापिप्पली मधुसंयुता ।
अथवा मधुशुण्ठीभ्यामनुपानेनरोगजित् ॥

भावार्थ—शु० पारद, शुवच्छनाग, शु० गन्धक, शु० हरिताल, स्वर्ण माक्षिक भस्म इन सबको समभाग लेकर नीलवर्णको कज्जलीकर अदरख रससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रख छोड़ें।

उपयोग—इसमेंसे १ गोली पीपल चूणके साथ देनेसे साध्य असाध्य सन्निपातको नष्ट करती है। सहजना अदरखके रसके साथ वायु; चीनी और जीरेके साथ पित्तजरोग, मुलहटी चिरायता चीनीके साथ शीतज्वर नष्ट होता है अन्य रोगोंम सोठ अथवा मधु से उपयोग करे।

कस्तूरी भूषण रसः ॥

रसाभ्रटंकणं शुण्ठी कस्तूरी पिप्पली तथा ।
दन्तीमूलं जयाबीजं कर्पूर मरिचं समम् ॥
आर्द्रक स्वरसेनैव मर्दयेत् सप्तवारकम् ।
शृङ्गवेररसैर्युक्त योजयेरक्तिकाद्वयम् ॥
वातश्लेष्मणि मन्देऽग्नौ पित्तश्लेष्माधिकेऽपिच ।
त्रिदोपजनिते घोरेकासे श्वासेक्षयेतथा ॥
ऊर्ध्वजत्रुगरोगे च सशोथे विषमज्वरे ।
एष सर्वामयान हन्तिशुक्रौजोवलकृत्परः ॥

भावार्थ—शु० पारद, अभ्रक भस्म, सुहागा, सोंठ, कस्तूरी, पिप्पल दन्तीमूल, भांगके बीज, कपूर, कालीमिर्च इन सबको सम भाग लेकर काष्ठौषधियोंकाकपड छान चूर्ण बनाकर खरलमे डालकर अदरख रसकी सप्त, भावना देकर २रत्तीकी गोली बनावे। भैषज्यरत्नावली

उपयोग—अदरख रस मधुसे वात कफ जन्यरोग, मन्दाग्नि, पित्त कफाधिक रोग, त्रिदोष रोग, घोर कास, श्वास, क्षय, ऊर्ध्वजत्रुगतरोग शोथयुक्त विषमज्वर, प्रभृति रोगमे फायदा करता है। तथा वीर्य ओज बलको बढ़ाता है।

समीरपन्नगरस

पारदं गंधकं मल्लं हरितालं तथैव च।
एतच्चतुष्टयँ सर्वं तुलसी रस मर्दितम्॥
वटीं कृत्वाऽभ्रकेणैव वेष्टयेग्दोलकन्तुतत्।
शराव युगले क्षिप्त्वा वालुकायन्त्रगे पचेत्॥
दीपिका प्रमितं वह्नि दत्वायाम चतुष्टयम्।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य नाम्नाऽसौवातपन्नगः॥
सन्निपाते तथोन्मादे सन्धिबन्धे कफामये।
नागवल्ल्यादलेनैवभक्षयेग्दुञ्जिकाद्वयम्।

रसयोग सागर

भावाथ पारा १ तो० शु० गन्धक १तोला, शु० संखिया १ तो० शु० तपकिया हरिताल १ तो० सबको खरलमें डाल कर नील वर्णकी कज्जली कर तुलसी रसकी १-२ भावना देकर गोली बनाय सफद अभ्रक पत्तोंमें लपेटकर शराव सम्पुटमें बन्द कर २-३ कपड़ मिट्टी लगाकर बालुका यन्त्रमें रख कर मन्दाग्निसे ४ प्रहरकी अग्नि देवे। स्वांग शीतल हाने पर निकाल कर रख लेवे।

उपयोग इसमें से १ या २ रत्ती लेकर पानरस मधु से देनेसे सन्निपात, उन्माद, सन्धिक सन्निपात और कफ रोग याने न्युमोनिया प्रभृति रागोंमें अच्छा फायदा होता है। श्वासावरोध या खांसोमें कफ निकालने के लिये। वासक छाल या पत्ते, मुलहटी बहेड़ा छाल, भारङ्गीके क्वाथमे मिश्री मिला कर इसके अनुपान देवें। इस समीर पन्नग रसमे सोमल हरताल, मिला है ये दोनों ही अत्यन्त उष्णवीर्य है।

भावार्थ—इन दोनोंमें भी मल्ल प्रधान है फिर भी मल्ल भस्म मल्ल पुष्प, मल्ल सिन्दूरकी अपेक्षा यह रस कम तीव्र है। जहा मल्ल भस्म देनेमे हानि होनेका भय रहता है, वहां पर समीरपन्नगरस अधिक भयप्रद नहीं है। मल्ल सिन्दूर समीरपन्नग दोनों गुण धर्ममे समान है। परन्तु मल्लसिन्दूर अत्यन्त तीक्ष्ण उष्ण श्लेष्मिक कलापर उग्रता उत्पादक है। समीरपन्नगमल्ल कल्प होने पर भी अन्यकी अपेक्षा कम तीव्र गुणयुक्त अल्पदाहक अल्पस्फोटोत्पादक है। समीरपन्नग श्वासनलिकामे उत्पन्न हुए वात कफात्मक दुष्ट व्रणोंको कफ श्रावके द्वारा नष्ट कर देता है। मल्ल सिन्दूरसे कफ शोषण होकर श्वास नलिकाये शुष्क हो जाती है। इसलिये जिन रोगोंमें कफ श्राव कराना हो वहा समीरपन्नग से ही अच्छा फायदा होता है। यदि उरस्तोय याने प्लुरिसी हो वहां पर इससे विशेष काम नहीं होता है वहां पर शृंगभस्म अभ्रक भस्म ही अच्छा काम करती है। समीरपन्नग दिन मे एक वार ही देना चाहिये। और इसमें अन्य दवाका संमिश्रण भी नही करना चाहिये। अन्य दवाका संयोग करनेसे इसकी क्रियामे वाधा पड़ती है। यह समीरपन्नगरस, उपदंश, सुजाक, सन्धिवात, रक्तविकार, त्वचा रोग, जीर्ण पक्षाघात, अर्दित, जिह्वा स्तम्भ, धनुर्वात, आदि रोगोंमें जब कफ मिल गया हो तो अच्छा फायदा करता है। वातजन्य आक्षेपमे भी अच्छा

फायदा करता है। समीरपन्नग कटु रसात्मक विपाकमें कटु उष्ण तीक्ष्णवीर्य उत्तेजक, वल्य कफ वातघ्न है, कितने चिकित्सक इसको मकरध्वजकी तरह शीशीमें भरकर वालुका यन्त्रमें पकाकर भी तैयार करते है यह २४ घण्टेमें तलस्थ रसायन तैयार होता है। इस रसको शीशीमें तैयार करना हो तो डांट हल्का सा बन्द करके पकायें अग्नि बहुत मन्द दे। तीव्र अग्नि देनेसे शीशी फूटनेका भय है। यदि तलस्थ रसका रंग तेजस्वी काला न हुआ हो तथा सख्त न वना हो तो कच्चा समझकर फिर ४-६ घण्टा अग्नि देकर तैयार करे। यदि एकदम कच्चा ही रह गया हो तो फिर गन्धक देकर पाक करना चाहिये।

(मयूर पिच्छ भस्म)

मयूरपक्षंनिर्दह्यतद्भस्म मधुमिश्रितम्।
लीढ्वा निवारयत्याशुछर्दिं सोपद्रवामपि॥

भावार्थ—मोरपंखके चन्दवेको जलाकर कपड़छान करके रख लेवें इसमे से २ रत्ती मधुमें मिलाकर खानेसे हिचकी वमनमें अच्छा फायदा होता हैं।

युनानी चिकित्सा—जुन्दवेदस्तरको शराबमें मिलाकर छातीपर मालिश करनी चाहिये। बच्चोंके रोगमें सारा रेवन्न १-२ रत्ती देनेसे उल्टी टट्टी होकर शीघ्र ही आराम हो जाता है कविराज ज्योतिर्मयजी इस रोगमें बच्चोंके कफ निस्सारणार्थ मुक्ताझुरीका अनुपान दिया करते थे जिससे टट्टी उल्टीके द्वारा कफ निकलकर बहुत जल्दी ही फायदा हो जाता था। हव्वेवनप्सा—गुलवनप्सा, निशोथ, सतमुलहटी, वर्कचादी गुरेसुर्ख, प्रत्येक ४-४ मासे गारीकुन २ मा० सिकमोनिया २ मा० ठंडे पानीसे गोली बनाये।

यह गोली छातीमें जमे हुये कफको निकालती है रातको १ गोली खाकर फिर प्रातःकाल उपरसे यह जोसादा पीवे गुलवनप्सा ७ मा० कासनीकी जड़ ७ मा० मुनक्का ६ दाना सोंफ ७ मासा गाजुवान ५

मासा उस्तखद्दूस ५ मा० रातको गरम पानी १ पाव में भिगोकर छान लेवे। फिर गुलकन्द खमीरा बनप्सा शकर सुर्ख प्रत्येक ४-४ मासा मिलाकर २ बार छान लेवे कब्ज हो तो ७ मासा सनायका पौडर मिलाकर पिलावे। इससे न्युमोनियामे अच्छा फायदा होता है।

एलोपैथिक चिकित्सा—डाक्टरी वाले इस बीमारीमें ऐन्टीफ्लोजिष्टिन (Antiphlogistine) या एन्टीफ्लेमिन (Antiflamin) की पट्टी लगवाते है या कैटाप्लाज्माकेओलिनी चिपका दिया जाय तो उपनाहके बार बार बदलनेका झगड़ा भी नहीं करना पड़ता। यह ध्यान रखना चाहिये कि कहीं अत्यन्त गरम वस्तुका प्रयोग न किया जाय प्राथमिक श्वसनक ज्वरमे सल्फापिरोडीन (Sulphapurudin) या M. &. B. 693 सभी प्रकारके फुफ्फुस सम्बन्धी रोगोंमें अव्यर्थ औषधि है। इसकी बनी बनाई गोलिया बाजारमे बिकती है। इसको मात्रा शारीरिक शक्तिपर निर्भर करतो है। इसकी मात्रा २४ घन्टेमे बालकको उसके प्रत्येक सेर भार पर १ रत्ती औषध दी जाती है। ३ वर्ष तककी आयुवालेको ड्योढ़ी मात्रा तक भी दी जा सकती है। इसका नियम चार चार घन्टेके अन्तरसे तबतक देनेका है जबतक ज्वरका वेग स्वस्थावस्था तक न आ जाय। इसके बाद धीरे धीरे अवस्थानुसार मात्राको कम कर देना चाहिये। बालक इन गोलियोंको सहन कर लेता है। उसको यह गोलिया दुग्ध, तथा फलोंका रस या जलमे घोलकर देनी चाहिये। बादमे जल भी पर्याप्त मात्रामे इतना पिलाना उचित है जिससे ꣿ१। मूत्र बन सके। इस उपचारसे २४-३६ घन्टेमे ज्वर छूट जाता है लेकिन फिर भी कुछ एक अशोंमे रोग बना ही रहता है। कभी कभी औषधि प्रयोगके साथ बमन भी इतना होने लगता है कि वह पच ही नहीं सकती। इस अवस्थामे इसको बन्द करके सल्फाथिया जोल (Sulphathizole) अल्प मात्रामे दी जा सकती है। इन उपरोक्त औषधियोंके सेवनके समय इसके साथ सोडा बाइ-

कार्व या सोडियम साइट्रेटका संमिश्रण अवश्य करना चाहिये जिससे मूत्रको प्रतिक्रिया क्षारोय रक्खी जा सके। यदि इन औषधियोंसे फायदा न मालूम दे तो यहा पेनीसिलिनका प्रयोग करना चाहिये। निद्रा न आनेपर डोवर्स पाउडर देना उचित है। इससे भी अगर निद्रा नहीं आवे तो अमोनियम ब्रोमाइड दे देना चाहिये।

ज्वरका वेग अधिक हो तबतक

पोटास नाइट्रास	(Potas Nitras)	१ ड्राम
लाइकर एमोनिया एसीटास	(Liq Ammonia Acelatis)	१॥ औंस
स्पिरीट ईथरिस नाईट्रोसी	(Spt Eatties Nitrosi)	४ ड्राम
टिञ्चर आरेञ्ज	(Tr. Orange)	३ ड्राम
एका कैम्फर	(Aqua Campher)	६ औंस

इन सबका मिक्चर बनाकर ४-४ ड्राम ३-३ घन्टेपर देते रहें।

लगानेकी दवा—लिनीमेन्ट टरविथनी, एसेटिकम्की मालिस करे अथवा गाया कोल, जैतुन का तेल, युकेलिप्टस ओयल, कैम्फर ओयल, टरपन टाईन ओयल को मिलाकर छातीपर मालिश करावे और गरम सेक देवे।

श्वासाधिक्य होने पर निम्न लिखित औषधियों द्वारा वाष्प क्रिया करे।

टि० वेञ्जोइनको १ड्राम लेकर उबलते हुये जल में मिला कर १ मिनटमें ८-१० बार नाक मुखसे वाष्प लेवे। यह क्रिया १० मिनट तक हो करे। इस क्रियाके लिये बना बनाया यन्त्र बाजारमें मिलता है उसके द्वारा वाष्प लगानेमें सुगमता रहती है।

होमियोपैथिक चिकित्सा

निमोनिया की प्रथमा वस्थामें एकोनाइट, वेरेट्म विरीडी (सल्फर)।

विकारावस्थामें ब्रायोनिया, फास्फोरस, आयोडिन, सैंगुनेरिया मर्कुरियस, एण्टिमटार्ट, चेलीडोनियम, सलफर आदि।

हार्ट दुर्बलताके समय कैम्फर, स्ट्रोफेन्थस, डिजिटेलिस, क्रैटिगस, आइवेरिस प्रभृति।

टाइफाइडके समय वैप्टीसिया, रस टक्स, आर्सनिक, ओपियम, फास्फोरस, कार्वो।

अत्यन्त श्वांसकृच्छ्रतामें ग्रिण्डेलिया, रोवस्टा कार्वोवेज प्रभृति।

दाहिने फेफड़ेमें रोग होने पर एण्टिमटार्ट, चेलीडोन, मर्कुरियस, प्रभृति।

बायें फेफड़े पर रोग होनेसे—सलफर अच्छा काम करता है।

प्रलापक सन्निपात (टाईफस फीवर Typhus)

आयुर्वेद मतसे निदान

यत्र ज्वरे निपिल दोष नितान्त रोष,
जाते प्रलाप बहुला सहसो त्थिताश्च।
कम्प व्यथा पतन दाह विसंज्ञता स्यु,
र्नाम्ना प्रलापक इति प्रथितः पृथिव्याम्॥

भावार्थः जिस ज्वरमें तीनों दोषोंके कुपित होनेसे प्रलाप, कम्प, उठ-उठ कर दौडना, अथवा गिरना दाह और अत्यन्त वेहोशी होना ऐसे लक्षण होते हैं, उसको प्रलापक सन्निपात कहते हैं। प्राचीन शास्त्रों में इस रोगका इतना ही वर्णन मिलता है, लेकिन

नवीन शास्त्र वेत्ताओंने इसका विशेष विवेचन किया है। वह निम्न प्रकार से है।

प्रलापक ज्वर—काला मधुरा—टाइफस फीवर

यह रोग प्रायः शर्दीयुक्त गन्दी जगहमें रहने वाले, निर्धन, क्षुधातुर मनुष्यों मे होने वाला १४ दिवस की अवधि वाला ज्वर है। ऐलोपैथिक में इसको कीटाणु जन्य माना है। उनका कथन है कि यह रोग जूंओं द्वारा मनुष्यो मे फैलता है। इसका सक्रमण काल १२ दिन का बतलाया है याने जुंआदि जन्तुओं के द्वारा काटे जाने पर १२ दिवस के भीतर ही मनुष्य इस रोगका क्षेत्र बन जाता है। यह तीव्र संक्रामक कीटाणु जन्य रोग है। परन्तु अभी तक इसके कीटाणुओंका पूरा ज्ञान पाश्चात्य विज्ञान वेत्ताओं को भी नहीं हुआ है। इसलिये इनको अणु वीक्षण यन्त्रसे न दिखने वाले कहा है। तथापि उनका कथन है कि इस रोगसे ग्रसित रोगीका रक्त लेकर अफ्रीकन बन्दर के शरीरमें संयुक्त करने से उसको यह रोग हो जाता है, इसलिये ही इसको कीटाणु जन्य मानते है। आयुर्वेद में भी ऐसा मत स्वीकार किया है कि संक्रमन्ति नरान्नरम। अर्थात् यह रोग अन्य रोगियों के वस्त्रादिक संसर्ग से भी उत्पन्न हो जाता है। आरोग्य होने पर भी ३-४ हफ्ते तक आहारादिकों की तरफ विशेषतया सावधानी रखनी चाहिये। यह रोग क्या बालक, क्या युवा क्या वृद्ध, क्या स्त्री, क्या पुरुष सब ही को होता है। गरम देशोंकी अपेक्षा शीत प्रधान देशोंमे अधिकतया होता है तथा जो पुरुष बहुत दिनों तक स्नान नहीं करते है तथा मैले वस्त्र पहिनते है और बहुत से मनुष्योंके साथ एक ही विस्तर पर सोते है, उनके कपड़ेमे जूंए पैदा हो जाती है, उनके काटने से इस रोगकी उत्पत्ति हो जाती है। राजस्थनमे प्रायः यह रोग नहीं होता है। यूरोपादि शीत प्रदेशोमें अधिकतासे होता है।

पूर्व रूप

जब यह रोग होने वाला होता है तब शिरमे पीड़ा हाथ पैरो में फूटनी मलावरोध वमनादि उपद्रव होकर शीतपूर्वक तीक्ष्ण वेग युक्त ज्वर हो जाता है।

स्पष्ट लक्षण—इस रोगमें ज्वर होने पर जबतक लाल रंगकी पिडिकाय बाहर नहीं निकलती हैं तब तक ज्वर तीक्ष्ण याने १०४ १०५ डिग्री तक निरन्तर बना रहता है, इसका प्रधान लक्षण यही है। पिड़िकायें ग्रीवासे आरम्भ हो कर नीचे जानु तक जाती हैं। ज्वरके साथ शिरमें, कमर में, सन्धियोंमें भयंकर पीड़ा होती है तथा तन्द्रा, भ्रम, मुख, आंखों लाली तथा नेत्रोंमें श्राव, मल का रङ्ग काला शुष्क, मल मूत्रावरोध कहीं गुदा नाकसे रक्त श्राव, स्वेदाऽवरोध शरीरमें रूक्षता, निद्रा नाश, प्रलाप तीव्र ज्वरादि लक्षण होते है। तथा जिहा काली या मैली स्वेत रङ्गकी रहती है। दुर्वलताके लक्षण प्रतीत होते है, नाड़ीकी गती तीव्र रहती है, कही पर ज्वर १०५ से १०७-१०६ डिग्री तक भी बढ़ जाता है। यह खराब लक्षण है। यह ज्वर प्रायः १४ चौदहवें दिन पसीना आकर या अतिसार होकर उतर जाता है। अथवा जिस रोगीको उपद्रव बढ़ने वाले होते है वह १० व रोज निर्बल होकर संज्ञा हीन की तरह पड़ जाता है। उसके नेत्र खुले रहते हैं; धीरे-धीरे प्रलाप करता रहता है, शरीर पर से कुछ चुनता हो ऐसी चेष्टा करता रहता है कपडोंको फाड़ देता है, तथा वहुत जोरसे चिल्लाने लगता है, कफ वृद्धि होने से पसीना आने लगता है और हाथ कापने लग जाते है। ऐसी अवस्थामे गात्र कोथ होकर रोगी मर जाता है।

असाध्य लक्षण—मूत्रावरोध, ज्वरतिशय, गात्रकोथ शय्याव्रण, शुष्क काश, श्वासवृद्धि, अथवा ब्रांको न्युमोनिया, इसके अलावा गालोंपर शोथ, रक्तमें पूय होकर व्रणोत्पत्ति हो जाना,

पैरोंके शिराओंमें रक्त जमकर व्रण हो जाना इत्यादि कष्ट दायक उपद्रव होनेसे मृत्यु संख्या ३०-४० प्रतिशत हो जाती है।

चिकित्सा

इस रोगमें प्रायः चिकित्सा टाईफाइड, आन्त्रिक सन्निपातके समान ही की जाती है, उसका विवरण आगे लिखा जायगा अतः उसी प्रकरणमें देखें। आयुवदमें इस रोग की चिकित्सामें तगरादि क्वाथ अच्छा फायदा करता है।

मेरा अनुभव

मेरे पास अस्पतालमें तथा बाहर भी इस रोगसे पीड़ित बहुत से रोगी आये उनकी चिकित्सा मैंने जिस विधि से की उसका विवरण मय रोगीके उदा हरण स्वरूप आपके सामने लिख रहा हूं। कृपया आप लोग भी प्रयोगमे लाकर देखो। अस्तु यह रोग २ प्रकारसे होता है एक स्वतन्त्र रूपसे दूसरा उपद्रव रूपसे। स्वतन्त्र रूपसे जहां होता है उसमें प्रथम ज्वर तीव्र होकर प्रलाप चालु हो जाता है तथा उसमें वायु, पित्त दो दोष ही प्रधान रहते है। अत. इसकी चिकित्सामे बहुत सुविधा रहती है। परन्तु जहां परतन्त्र रूपसे आंत्रिक ज्वरादिको में हो जाता है, वहांपर चिकित्सककों भी बहुत बुद्धि लड़ानी पड़ती है। अब यहां इस प्रकरणमे स्वतन्त्र रूपसे जिन रोगियो के प्रलापक हुआ है उसका अनुभव लिख रहा हूं।

रोगीनाम, सत्यनारायण हरलालका उम्र १५ जाति वैश्य देश लक्ष्मण गढ़ यहांका पता ११४ नं० तुलापट्टी।

इस रोगीको इसके घरपर तीव्र ज्वर होकर प्रलाप शुरू हो गया, तब ता० २-१०-४३ को रात्रिमें ११ बजे अस्पतालमें लाकर ऐलोपैथिक विभागमें भर्ती किया गया, तब डाक्टरोने इसकी चिकित्सा चालू कर दी तथा निद्राके लिये बहुत चेष्टा की लेकिन निद्रा रात भर बिल्कुल नहीं आई। सब प्रातःकाल रक्त परीक्षा की गई, जिसमे टाईफस

(Typhus) प्रलापक मिला। तब रोगीके कुटुम्बी घबरा गये और अस्पतालमें मेरे पास आयुर्वेद विभागमें ट्रान्सफर कर दिया, मेरे पास जब यह रोगी प्रवेश हुआ तब इसको चार रोज रोगाक्रान्त हुये हो गये थे। तथा प्रवेश ता० ५-१०-४३ थी, उस समय इसको ज्वर १०४ डिग्री था प्रलाप विशेप रूपसे करता था, याने ४-५ आदमियोंके पकड़ने पर भी काबूमें नहीं आता था मार पीट गाली देना आदि लक्षण थे, तथा मलमूत्रावरोध हो रहा था। प्यास अधिक लगती थी, आंख लालिमा युक्त थी स्वजनोंको पहिचानना बन्द था शिरको इत स्ततः निरन्तर घुमाता था। ऐसी हालत देखकर मैंने निम्नलिखित औषध व्यवस्था चालू की।

ता० ५-१०-४३ को प्रातः

प्रातः ६ बजे से प्रारम्भ	न० २ मकरध्वज १ रत्ती
न० १ रसराज २ रत्ती	गजक्षार $\frac{1}{2}$
प्रवाल १ रत्ती १ पु०	जलसे

दशमूल, ब्राह्मी, शंखाहुली, जटामांसी, दुरालभा, लवङ्गका क्वाथ मिलित १ तोलाको क्वाथ विधिसे पकाकर उपरोक्त औषधिके अनुपान रूपमें चालू किया याने १ न०—२ न० दवाओंको ३-३ घन्टेके हेरफेर से चालू की। पडङ्ग पानीय जल पीनेको दिलवाया। पथ्यमें कुछ नहीं दिया।

ता० ६-१०-४३, जब सुबह देखनेको गया तब रात्रिके समाचार घरवालोंसे पूछे तो उन्होंने कहा कि रात्रिमें कलसे आज कुछ शान्ति रही कभी नींद आती थी कभी प्रलाप करता था, पेशाब भी रात्रिमें ३ बार हुआ, अपान वायु निर्गमन भी हुआ, अस्तु मैंने जब उसके हाथको देखनेके लिये हाथ बढ़ाया तो गाली बकने लगा और उठ बैठ करना प्रारम्भ कर दिया। तब मैंने अस्पतालीय कर्मचारियोंकी सहायतासे अच्छी तरहसे परीक्षाकी उस समय ज्वर १०४ डिग्री था, पेटपर

कुछ अफ्मान था और सर्व लक्षण पूर्ववत थे, नाड़ीकी गति १४४ थी। उसीसमय कविराज श्रीज्योतिर्भयजी जो अस्पतालके प्रधान चिकित्सक थे आ गये और अच्छी तरहसे रोगीकी परीक्षा की तथा उपवैद्य द्वारा चालु व्यवस्था पत्र भी सुना, तदन्तर कविराजने कहा कि औषध-व्यवस्था बहुत सुन्दर है दिनमें इसीको चालू रखिये, यदि रात्रिमें निद्रा नहीं आवे तो १ खुराक वृ० वातचिन्तामणि, तालपत्र स्वरस मधू से दीजियेगा। उनका यह कथन सुनकर मैंने प्रार्थनाकी कि महाराज मेरी समझमे औषधिके साथ २-३ उपचारोंकी प्रथम आवश्यकता है। उन्होंने पूछा कि क्या तब मैंने निवेदन किया, इसको टट्टी हुये ५-६ रोज हो गया अतः फलवर्ती द्वारा मल निस्सारण क्रिया करनी चाहिये, दूसरा उपचार यह होनेकी आवश्यकता है कि इसके सिरके बाल बहुत बड़े है अत. इनको कटवाकर शिरपर शीत क्रिया याने (आइस वेग) का प्रयोग होना चाहिये। इस कथनको कविराजजी ने भी स्वीकार कर लिया और अनुमतिसे दोनों ही उपचार कर दिये गये, जिससे दिन में प्रलाप कुछ कम रहा और रात्रिमे ३ घन्टा निद्रा भी आई।

७-१०-४३ . अवस्था पूर्ववत।

८-१०-४३ ज्वर प्रातः १०२ ज्ञानमें वृद्धि औषधि पूर्ववत।

९-१०-४३ ज्वर प्रातः १०१ सायं १०२ ज्ञान अच्छी तरहसे हो गया। १ टट्टी हुई पेशाब कहकर किया नाड़ीकी गति ११० पथ्यमें जल वार्ली ᐅ॥ मिश्री शृत जल दिया गया। इस उपरोक्त चिकित्सा द्वारा यह रोगी १४ चौदह रोजमे स्वस्थ हो गया और पथ्य विधिसे पथ्य चालू किया गया बिल्कुल स्वस्थ होकर घर चला गया।

नोट—कभी कभी किसी किसी रोगीके शिरपर प्रलापक रोगमे हम लोग बर्फकी जगह काक माची (मकोय) का लेप भी किया करते है, उससे भी अच्छा फायदा होता देखा गया है। गर्दन तोड़ जैसी भयङ्कर बीमारियोंमे चन्दनादि लेपसे अच्छा फायदा होता है परतन्त्र

प्रलापककी चिकित्साका वर्णन आगे मन्थर ज्वर प्रकरणमे लिखी जायगी। अतः कृपया उसी प्रकरणमें देख।

प्रलापक सन्निपातमें काममे आनेवाली औषधियोंके नुसखे।

तगरादि क्वाथ

स तगर वरतिक्ता रेवताम्भोदतिक्ता,
नलद तुरग गन्धा भारती हार हूरा।
मलयज दशमूली शंख पुष्प्य सुपीताः
प्रलपन मपहन्युः पाननोनाति दूरात् ॥

भावार्थः—तगर, पित्तपापडा, अमलताश गूदा, नागर मोथा, कुटकी, जटामांसी, असगन्ध, ब्राह्मी, मुनक्का, लालचन्दन, दशमूल शंखाहुली, इन सबको समान भाग लेकर जो कूट करके रख लेवे। आवश्यक्ता के समय १ तोला क्वाथको १६ तोला जलमे पका कर ४ तो० अवशेष रख छान कर काममें लावे।

उपयोग—यह क्वाथ प्रलापक सन्निपातमें अत्यन्त लाभदायक है। इसका सेवन केवल या० रसराज, बृ० कस्तूरी भैरव रस, वात-कुलान्तक रस, प्रताप लंकेश्वर रस के अनुपान रूपमे प्रयोग करे। यदि रोगीको अतिसार भी साथ में हो तो इसमें से कुटकी, अमलतास, मुनक्का को निकाल कर उपयोग मे लावे।

चन्दनादि लेप

सफेद चन्दन, रक्तचन्दन, गेरू, गिलेअरमानी, कपूरकाचरी, हंसराज, गेहुला इसको सम भाग लेकर जलमे पीस कर लेप करे।

वात जन्यप्रलापमें वातहर लेप अथवा उपनाह जैसे उड़दकी रोटी तथा मावा गरम करके शिरपर बाधना चाहिये।

वातहर लेप

तम्बाकू, कायफल, कोड़िया लोहवान, हींग, गुड़, इनको

समान भाग लेकर जलमें पीस कर गरम करके कपड़ेमें लगाकर कपाल, कनपटी, मस्तक पर बाधे लेप मोटा रखना चाहिये। इस लेपसे वात जन्य प्रलापको बकवाद शीघ्र ही शांत हो जाती है। तथा निद्रा भी आजाती है। पित्त जन्य प्रलाप में इसका उपयोग नहीं करे। वहा पर शतधौत घृत का बार २ में प्रलेपन करे, या पूर्वोक्त चन्दनादिक लेप लगावे। इस रोगमें निद्राका न आना प्रबल उपद्रव है। यदि निद्रा आ जाय तो रोगबल स्वतः ही कम हो जाता है। निद्रा न आने से उत्कृष्ट गुण वाली औषधि देने पर भी रोगका शमन होना कठिन हो जाता है। अतः इस उपद्रवको शीघ्राति शीघ्र दमन करनेके लिये चेष्टा करनी चाहिये।

निद्रा कारक अञ्जन

एरंडकी गिरी को पीस कर कुछ कस्तूरी मिला बत्ती बना कर काजल उपाड कर आँखोमें बार २ अञ्जन करने से वातज प्रलाप शात हो जाता है।

अन्य उपाय—(१) पैरोंके तल भागमें कासीकी कटोरी से घृतको रगड़े।

(२) भांगको बकरीके दूध मे पीसकर शिरपर या पैरके तलुओमें लेप करे।

(३) सेकी हुई भागके चूर्णको मधुसे खिलावे।

(४) पीपला मूल चूर्ण ३ मासा से ६ मासा तक मधुमे चटावे।

(५) घृत या एरंड तैलको कासेके बर्तनमे घिसकर अञ्जन करे।

रस राज रस

पलैकं रस सिन्दूरं व्योम सत्वंच कार्षिकम्।
तदर्धं काञ्चनं दद्यान्मुक्ता विद्रुम मेवच॥

लौहं रौप्यं मृतवङ्गं वाजिगन्धा लवङ्गकम् ।
जाती कोष फले क्षीर काकोलीं च तदर्धतः ॥
कन्यायाः काकमाच्याश्च रसैः पिष्ट्वा वटीं चरेत् ।
गुञ्जा द्वयो न्मितां दत्वा गोक्षीर मनुपाययेत् ॥
पक्षाघाताऽर्दिते वाते हनुस्तम्भेऽपतानके ।
आक्षेपके कर्णनादे तथैव मस्तक भ्रमे ॥
सर्व वात विकारेषु रस राजः प्रकिर्तितः ॥

द्रव्य निम्र्माण विधि

रस सिन्दूर ४ तोला, अभ्रक भस्म १ तोला, सुवर्ण भस्म ½ तो० मुक्तापिष्टी ½ तोला, प्रवाल भस्म ½ तोला, लोहभस्म ¼ तोला, रजत भस्म ¼ तोला, बंग भस्म ¼ तोला, असगन्ध ¼ तोला, लवङ्ग ¼ तो० जावित्री ¼ तोला. जायफल ¼ तोला, काकोली ¼ तोला प्रथम रस सिन्दूर खूब महीन पीसकर उसमें अन्य भस्में तथा काष्ठौपधियों का कपड़ छान चूर्ण मिला एक दिन घृत कुमारी और मकोयके रसमें मर्दन कर २-२ रत्तोकी गोलियां बनाकर छायामें सुखाकर रख लेवे। मात्रा १ गोली मधुमें चटाकर गायका दूध पिलावे।

उपयोग—सर्व प्रकारके वात रोगोंमे विशेपतः पक्षाघात, अर्दित, अपतन्त्रक आक्षेपक कानकी आवाज सिरमें चक्कर आना आदि रोगों में उपयोग करे।

बृ० वात चिन्तामणी रस

भागैकं स्वर्णभस्म द्विभागं रौप्य मभ्रकम् ।
मौक्तिकं विद्रु मं लौहं भागत्रय मितं भवेत् ॥
काकोली मग्निजारं च भागमेकं विनिक्षिपेत् ।
चन्द्रोदयं सप्तभागं कन्यारस विमर्दितम् ॥

द्विगुञ्जा वटिका कार्य्या देया योग्यानुपानतः।
वातचिन्तामणिर्हन्याद्वात रोगान शेषतः॥

सिद्धियोग संग्राहात्

द्रव्य और निर्म्माण विधि

स्वर्ण भस्म १ तोला, रजत भस्म २ तो०, मुक्तापिष्टी ३ तो०, काकोली चूर्ण १ तो०, अम्बर १ तो०, चन्द्रोदय ७ तो० इन सबको खरलमें मिलाकर घृत कुमारी स्वरसमें मर्दन करो अच्छी तरहसे पिस जाने पर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर सुखाकर काममें लावे।

मात्रा अनुपान १-१ गोली यथावश्यक दिनमे ३-४ बार शहदमे मिलाकर चटावे।

गुण और उपयोग—यह रस हृदय और मस्तिष्कके लिये उत्तम बलकारक है तथा वात कफ नाशक और वाजीकरण है। सर्व प्रकारके बात रोगोंमे इसका प्रयोग करे।

आक्षेपक, अपतानक, अपतन्त्रक, मांस्यादि क्वाथके अनुपान से देवे। सन्निपात ज्वरमें जब प्रलाप, मोह नाड़ोकी क्षीणता, हाथ-पांवका कांपना पसीना अधिक होकर शरीर ठण्डा पड़ना इत्यादि लक्षण हों तो इसके प्रयोगसे अच्छा लाभ होता है। प्रलापावस्थामे तगरादि क्वाथके साथ प्रयोग करे। अथवा अनिद्रामें प्रस्वप्नार्क के साथ प्रयोग करे।

प्रस्वप्नार्क

जटामांसी ॥ जवासा ॥ मालकांकणी ॥ सर्वगन्धा ॥ असगन्ध ॥ ब्राह्मोपत्ती ॥ खुरासानी अजवाईन । इन सर्वको १६ गुना जलमें भिगोकर वाष्प यन्त्रके द्वारा अर्क निकालकर अनिद्रा प्रलापादि मस्तिष्क रोगोंमें काममे लावे। मात्रा १ औंससे २ औंस तक।

ऐलोपैथिक चिकित्सा

यह रोग प्रायः तीव्र ज्वरोंमे होता है। अतः रोगीके सिरपर ठन्डे पानीकी पट्टी या वर्फका वेग अथवा कोलन वाटरकी पट्टी रखनो चाहिये। हाथ पांवको ठण्डे कपड़ेमे लपेट देना चाहिये। शीत जलकी वस्ति देना भी उत्तम है। निद्रानाशादि उपद्रव होनेपर निम्न औषधियाँ दी जाती है।

क्लोरल हाई ड्रास (Chloral Hydras) ५ से २० ग्रेन

पोटासियम ब्रोमाइड (Pottasum Bromidc) १० से ३० ग्रेन.

सोडियम ब्रोमाइड (Sodium Bromid.) १० से ३० ग्रेन

एमोनियम ब्रोमाइड (Amonioum Bromide) १० से ३० ग्रेन

इनमेंसे एमोनियम ब्रोमाइड कफघ्न, स्वेदल, मूत्रल, कुछ उष्ण और निद्राकारक है। हृदयको गतिको मन्द भी नहीं करता है। शेष सर्व हृदयको कमजोर करनेवाले हैं। यदि उन्माद का असर कम हो तो निद्रा लानेके लिये सोने से पूर्व सल्फोनाल (Sulphonal) १० से ३० ग्रेन तक गरम जलमें मिलाकर पिलाना चाहिये। यह औषध हृदयाव सादक नहीं है, मलावरोधक अवश्य है। अतः मलावरोध हो तो इसका प्रयोग नहीं करे। इसके अलावा ल्युमिनल (Luminal) (ट्रायोनल (Tryona) भी है जिसको देनेसे आध घन्टे वाद ही नींद आ जाती है। नींद लानेवाली औषधियोंका प्रतिदिन प्रयोग नहीं करना चाहिये।

युनानी चिकित्सा

मगजखयारीन २॥ तोले, मगज कद्दू २॥ तोले, तुख्मकाहु २॥ तोले, मुलहटी का सत्त ६ माशे, निशास्ता ६ माशे, अफीम ६ माशे, कूट छानकर ईशवगोलके लुवावमे लेनी चाहिये, मात्रा ६ माशे।

होमियोपैथिक चिकित्सा

ज्वरकी उष्णत्ताको कम करनेके लिये ऐसिटैनिलिडियम ३ x दिया

जाता है। अन्य लक्षण होनेपर टाइफायड अधिकारोक्त औषधियों द्वारा ही चिकित्सा की जाती है।

आयुर्वेद मतानुसार आन्त्रिक ज्वर (Typhoid) टाइफाइड

यह एक त्रिदोषसे उत्पन्न होनेवाला मियादी ज्वर है, इसमें मियाद का कोई नियम नहीं; किसी रोगीको २१ दिवसमें किसीको २७ में छोड़ता है। वैसे इससे पीड़ित लम्बी मियादके रोगी भी मैंने देखे हैं जो ४५—५१—६७ दिवस पर्यन्त रोगाक्रान्त रहकर आरोग्य हुए हैं।

निदान—इस रोगकी उत्पत्ति अधिक मार्ग गमन, उष्णवात, कृशता, सूर्यतापमें भ्रमण, अशुचिस्थानमें निवास करनेसे दूषित मलमूत्रादि संसर्गयुक्त जलपान, तथा मक्षिकादि दूषित खाद्य पदार्थोंके सेवनादिकसे होती है। पाश्चात्योंका मत है कि यह रोग कीटाणुओंके अन्त्र स्थानमे प्रवेश होनेपर होता है फिर ये कीटाणु ही रसरक्तादि धातुओंको तथा वात, पित्त, कफादि दोषोंको शीघ्र ही प्रकुपित कर देते हैं। प्रथम कीटाणुओंका आक्रमण छोटी आतोंमें होता है, वहासे रोग बढ़ने पर फिर बडी आतोंमें भी प्रवेश हो जाता है।

पूर्व रूप

जब यह रोग होनेवाला होता है तब शिरःशूल, अरुचि, अङ्गमद, मलावरोध, बैचेनी, भ्रम, हाड़फूटनी आदि लक्षण हो जाते है।

रूप—यह ज्वर प्रारम्भमें ५ दिवसतक समान तीक्ष्ण वेगसे रहता है। किसी किसीको शनैः शनैः क्रम क्रमसे पहिले दिवसकी अपेक्षा दूसरे रोज १-१ डिग्री बढता जाता है। पहले हफ्तेमें कुछ प्लीहा भी बढ़ जाती है। ६-७ वे रोज सरसोंके समान पिटिकाये गलेके आसपास दिखलाई देती है। श्यामवर्ण रोगी होनेपर नहीं भी दिखती है। प्रायः पांच दिवसके बाद पीले रंगकी पतली टट्टी होने लगती है। द्वितीय सप्ताहमें ज्वर, बढ़कर स्थिर हो जाता है, सुबह कुछ -कम होकर

दोपहरमें बढ़ने लगता है, तथा सायंकाल तक पूर्णरूपसे बढ़ जाता है। उस समय तन्द्रा, प्रलाप, मुखशोष, बेहोशी, कास, दौर्बल्य, पेटपर आध्मान, जिह्वा मैली फटी हुई तथा लालकिनारी युक्त हो जाती है। इस रोगमें ज्वरानुकूल धमनीमे चञ्चलता नहीं होती है। याने ज्वर की अपेक्षा नाड़ीकी गति मन्द रहती है इसके अतिरिक्त सन्निपातोद्रव भी किसी किसी रोगीको हो जाते हैं। तीसरे या चौथे सप्ताहमें ज्वर शनैः शनैः कम होता हुआ उतर जाता है। प्राचीन आयुर्वेदीय ग्रन्थोंमें इस रोगका विवरण नहीं मिलता है। परन्तु रोगमें होनेवाले लक्षणोसे प्रतीत होता है कि यह सन्निपात ज्वर है। यह महा भयानक रोग है, बच्चों और वृद्धोंकी अपेक्षा युवक इससे विशेष आक्रान्त होते है। १० सालकी उम्रसे ३० सालकी आयुवाले इस रोगके शिकार अधिकतर होते है। ४० वर्षकी आयुसे ऊपर वालोंको कम रूपमे ही होता है। किसी किसीको पिडिकायें विलम्बसे निकलती है तब रोगीको बहुत बेचैनी होती है। पिडिका निकलने पर शान्तिका अनुभव होने लगता है। रोगका समय शरद् वसन्त ऋतु होता है। रोगाक्रान्त होनेपर दोप वृद्धिकाल ७ से २१ दिवसके मध्यमका है। परन्तु प्रायः १० अथवा १४ दिवसके भीतर ही औपद्रविक लक्षण देखनेमें आ जाते है। प्रथम सप्ताहमे ज्वर तीव्र होनेपर दाने पाचवें रोज ही बाहर निकल आते है। किसीको दूसरे सप्ताहमे ज्वर तेज होता है तो दाने १०-१२ वें रोज देखने में आते है। इनका प्रारम्भ जिह्वासे होता है और जानु पर्य्यन्त समाप्ति होती है। पाश्चात्य विद्वान इनका कोई महत्व नहीं समझते है। आयुर्वेदज्ञ चिकित्सक इनका बहुत महत्व मानते है। साध्य रोगियोंमें दाने निकलनेपर ज्वरका वेग कम होने लग जाता है तथा अतिसारादि उपद्रव भी शान्त हो जाते है। यदि इन दानोंका छातीके ऊपर निकलना लोप हो जाय तो वह स्थिति भयप्रद मानी जाती है। ऐसी परिस्थितिमें दानोको निकालनेके लिये उचित चिकित्सा शीघ्र ही करनी चाहिये।

औपद्रविक लक्षण

ज्वर तीव्र हो जाता है, प्रलाप, जिह्वा खरदरी लाल किनारीवाली चमकदार हो जाती है। दातोपर मैल जम जाता है। ओष्ठ फट जाते है तथा रक्त झरने लगता है। रोगीका मास और शक्ति क्षीण हो जाती है। ज्ञान लुप्त हो जाता है यहां तक कि पार्श्वस्थित स्वजनो को पहिचाननेमे भी असमर्थ हो जाता है। प्रलापावस्था होनेपर कपड़ोंको चुनने लगता है, हाथोंमे कम्पन हो जाता है; उपरोक्त लक्षण आंतोंमें विशेषतया विकृति होनेपर ही होते है। यदि रोगीके आखों की पुतलियां (कनीनिका) विस्तृत हो जायं तथा नासिकासे या गुदासे रक्तश्राव, आक्षेप, प्रलापादि लक्षण हो जावे तो रोगीको अवस्था विषम समझनी चाहिये।

रोगीके ताप मानपर हर समय निगरानी रखनेकी आवश्यकता है। रोगोका तापमान प्रथम सप्ताहमे १०४-१०५ तक पहुंच जाता है। दूसरे सप्ताहमें कुछ ऊपर चला जाता है तथा तृतीय, चतुर्थ सप्ताहमे बिल्कुल उतर जाता है।

सहसा अथवा अनियमित रूपसे तापमानका बढ़ना इस बातका द्योतक है कि इसके स्थानीय उपद्रव यथा-ताजे व्रणोका होना तथा रक्ताभि संधिसे व्रणोंका फटना, आध्मान फुफ्फुस प्रदाहादि लक्षण हो जाते है। तापका आकस्मिक पतन रक्तश्रावका सूचक माना जाता है।

असाध्य लक्षण

आतमे छिद्र हो जाना, काले रंगका चिकना रक्त मिश्रित मलका होना, आतोंमें वायुका अवरोध होकर आध्मान हो जाना, शरीरमे कम्प, नेत्रोंमें कालापन, वृक्कशोथ, फेफड़ोमें तथा श्वासनलिकाओंमे शोथ, शीघ्र श्वासोच्छ्वास होना नाडीकी गति १३० से अधिक होना इत्यादि लक्षण होनेसे असाध्य रोग माना जाता है। अतिस्थूल, अति-

कृश, सगर्भा, प्रसूता, दुग्ध पीनेवाले बच्चोंको यह रोग भयप्रद होता है।

पाश्चात्य मतसे निदान

एलोपैथिक वाले इस रोगको कीटाणु जन्य मानते है। उनका कथन है कि वासिलस टाइफोसस (Bycil ustyphousus) जाति के कीटाणु बाहरसे रक्तमें प्रवेश करके इस रोगको पैदा करते है; अथवा अजीर्ण दोषमे उत्पन्न हुआ आमदोप इस रोगके कीटाणुओंको उत्पन्न करता है। फिर ये कीटाणु बड़े होकर आत, मूत्राशय, पित्ताशय, यकृत, प्लीहा, रक्त-नलिका ग्रन्थियोंमे प्रवेश कर जाते है, तथा मल-मूत्र, स्वेद द्वारा बाहर भी आते रहते है। इसी कारण यह रोग एक से दूसरेको भी संसर्ग से हो जाता है। इसका प्रकोप काल सितम्बर तथा मार्च अप्रैल माना गया है।

रोगके प्रारम्भमे ज्वर प्रातः काल १ डिग्री घट जाता है और सायं काल २ डिग्री तक बढ़ता है। इस तरह यह धीरे २ बढ़ता है, इसमें जिह्वा मैली रहती है तथा इसके ऊपर लाल अंकुर होते है और किनारे लाल रहते है; यकृत और प्लीहा भी बढ़ जाते है तथा कहीं पर हृदयकी कमजोरी, शिर, वृक्कस्थान फेफड़ोंमे दाह, ठण्डापन, भ्रम, निद्रा नाश, पेटपर अफरा, दबाने पर नाभीके नीचे पेटमें दर्द होना प्रथम सप्ताहमे मलावरोध पश्चात् पतले दस्त कहीं पर प्रारम्भसे ही पतले दस्त, सायंकाल ज्वर १०४ डिग्री तक बढना ऐसे लक्षण होते हैं। दूसरे सप्ताहमे छोटी आतके अन्तः भागमे लसिका-ग्रन्थियों पर शोथ हो कर व्रण बन जाते है, तथा आन्त्र-पुच्छपर शोथ भी हो जाता है। तब दुर्बलाता, कम्प, प्रलापादि उपद्रव हो जाते हैं। तथा जिह्वा और ओष्ट फट जाते है। दातोपर मैल जम जाता है। किसी किसीको शुष्ककास और रक्त मिश्रित टट्टीयें भी होने लगती है। ऐसे समय पर योग्य चिकित्सक द्वारा

चिकित्सा नहीं की जाती है तो रोग भयकर रूप धारण कर लेता है, अर्थात् रक्तमें विष बृद्धि होनेसे ४-६ सप्ताह तक भी रोगका शमन नही होता है। तथा किसी-किसीको उदर्य्यकला पर शोथ हो कर मृत्यु तक हो जाती है।

यह रोग विद्वान चिकित्सककी व्यवस्थानुसार पथ्य पूर्वक चलने से तीन सप्ताह बीतनेपर चला जाता है। परन्तु फिर भी आतोंमें व्रण तथा दुर्बलता अवशेष रह जाती है। अथवा किसी—किसीको आन्त्रस्थित कृमी भी अधिक दिनों तक रह जाते है। अतः चिकित्सक को चाहिये कि ज्वर शमन होनेपर भी पथ्यके समय पूर्णतया साव-धानी रक्खें नही तो फिर पुनरावर्तक हो जावेगा।

आन्त्रिक ज्वरका विशद् रूपसे वर्णन

इसको एण्टरिक-फीवर (आन्त्रिक ज्वर) मियादी ज्वर भी कहते हैं। यदि किसी अविराम ज्वरमे सामने कनपटीमें अचानक दर्द, भूल बोलना, बहुत वेहोशी, पेट फूलना, पेट दबाने पर गड-गडाना, कब्ज या अतिसार, जल्दी २ कमजोर होते जाना, ज्वरका धीरे २ बढ़ना बिलम्बसे आरोग्य होना, नाशिकासे रक्त श्राव, रक्तके दस्त, जिह्वा पहिले लाल इसके बाद क्रमसे सूखी और भूरी हो जाना, फट जाना और प्लीहा की वृद्धि, गैष्टिक ग्लैण्ड (औद-रिक ग्रन्थि का फूलना, अथवा घाव, फुफ्फुस प्रभृति यन्त्रोमें विकृति होना, इस प्रकारके कितने ही लक्षण दिखाई दें, तो उसको टाइफा-इड (Typhoid) मियादी ज्वर समझना चाहिये। यह बीमारी शरद् और वसन्त ऋतुमें ही अधिकतया होती है। अस्वस्थ और रोगी मनुष्योंकी अपेक्षा सबल और निरोग व्यक्तियों पर इसका अधिक आक्रमण होता है। १५ सालसे लेकर २५ वर्षकी उम्रके भीतर ही यह बीमारी ज्यादा होती है, बच्चोंको और ६० वर्षकी

उम्रसे ऊपर वालोंको यह रोग बहुत कम संख्यामें होता है। बच्चोंकी बीमारीमें प्रबल उपद्रव न हों, तो मारात्मक नही होता है।

यह रोग संक्रामक नही है, इस रोगके रोगीके पास रहने वालोंको यह रोग नहीं होता है। इस रोगीके मलमें ही टाईफाइड का विष रहता है, यही मल युक्त पानी, कपडे, विस्तरोंके द्वारा अथवा सड़ा हुआ मल वायुके साथ मिल जाता है, तब ही इस रोग का आक्रमण होता है।

आन्त्रिक ज्वरके अन्यान्य लक्षणोंके वर्णनके पहिले इसके तापको गतिका कुछ आभास दिया जाता है। इसके चढ़ाव उतारके द्वारा ही रोग असली मियादी ज्वर टाइफाइड है या नही, यह बहुत कुछ समझ में आ जाता है।

तापमान सूची

दिन	प्रातः	संध्यामें
१ दिन	९८-५	१००-५
२ रे दिन	९९-५	,, १०१-५
३ रे दिन	१००-५	,, १०२-५
४ थे दिन	१०१-५	,, १०३-५
५ व दिन	१०२-५	,, १०४-५

इसके पश्चात्‌से प्रायः द्वितीय सप्ताहके अन्ततक प्रति दिन संध्यामें ज्वर १०३-५ डिग्री तक चढता है और सवेरे उससे कुछ कम रहता है, पर रोगकी और उसके साथ वाले उपसर्गोंकी तेजी के अनुसार परिवर्तन भी हो जाता है। इस रोगका अवधिकाल ४ सप्ताह रहता है। उनमे १ प्रथम सप्ताह से ४ चौथे सप्ताह तक रोगी में जो-जो प्रधान लक्षण दिखाई देते हैं।

उनकी सूची निम्न प्रकारसे है

१ प्रथम सप्ताह—ज्वर त्वचाका रूखापन, नाड़ीकी गति तेज। नाड़ीका स्पन्दन प्रति मिनट १०० से १२०। रातमे नाड़ीका वेग

बढना, मनकी अवस्था खराब अर्थात् रोगी अपनी व्यथाओंको समझानेमें असमर्थ रहता है, सिर्फ सिर दर्दकी बातको ही बारम्बार कहता है, रात्रिमें भूल बकता है, पेट बड़ा हो जाता है, ताड़ना करनेपर फूले हुयेकी तरह ढप-ढप आवाज होती है, पेट दबानेपर दर्द होता है। तथा गड़गड शब्द होता है। जीभके बीचमें सफेद मैल (कोटिङ्ग) इकट्ठा होता है, पर किनारे लाल रंगके साफ रहते है। इसके द्वारा रोग निर्वाचन सहज ही में हो जाता है। इसके अलावा अधिक प्यास कानमे आवाज होना, नाकसे रक्त गिरना जी मिचलाना, वमन होना प्रभृति कितने ही लक्षण पाये जाते है। प्रथम सप्ताहमें रोगी इतना अधिक दुर्बल नहीं होता। मुखश्री भी कान्तिहीन नहीं होती।

२ द्वितीय सप्ताह—इस सप्ताहमें रोगी अधिक दुर्बल हो जाता है ज्वर भी बढ़ जाता है, किसी समय दिनमें दो बार करके उतरता बढ़ता है। ज्वर प्रातःकाल कुछ कम रहता है, दिनमे ११-१२ वजनेके समय बढ़ता है, सन्ध्याको ५ बजे कुछ कम पड़ता है, परन्तु रातमें फिर बढ़ जाता है। जो भी हो इस ज्वरमें किसी प्रकारकी स्थिरता नही है। अभी देखेंगे १०२ फिर देखेंगे १०४ डिग्री, फिर एक घन्टे बाद देखेंगे तो १०१, इस तरह प्राय ज्वरमे परिवर्तन होता रहता है। अगर ज्वर तीव्र रहता है, तो फेफडों और श्वास नलीमे रक्त-सञ्चय हो जाता है, इससे ब्रांकाइटिस (श्वासनलियुक्त प्रदाह) ब्रांको न्युमोनिया (फुस्फुस प्रदाह) हो जाता है। छातीके भीतरसे सांय सांय शब्द, जल्दीसे श्वास प्रश्वास, सिर दर्द, तन्द्रा, दांतोंपर मैल इकट्ठा होना, रात्रीमें प्रलाप, मुंहमें चकाचौंधका भाव कानोंसे कम सुनना, आखोकी पुतलियोंका फैलना, कंठ ओष्ठका खुश्क होना प्यास की वृद्धि आदि कितने लक्षण दिखलायी देते हैं। इसी सप्ताहमे आंतोमें घाव हो जाते है। इसीलिये प्रायः पतले दस्त, खूनके दस्त, ओर पेटके विकार पैदा हो जाया करते है। दिन-रातमें ६-७ से

लेकर २५-३० बार दस्त आ जाते हैं, दस्त लगने पर भी पेट हल्का नहीं होता। मल पतला मटरके रंगका दुर्गन्ध युक्त होता है। कभी-कभी दालके छिलकेकी तरह हरे रंगका दस्त होता है, उसमें फेन और रक्त भी रहते है। कभी कभी बिल्कुल कब्ज हो जाता है और दो तीन या चार दिनोके अन्तरसे ही टट्टी होता है। प्लीहा बढ जाती है, प्रथम सप्ताहके अन्तमे परीक्षा करनेपर हाथसे स्पष्ट मालूम होती है तथा मोतीझरा के दाने निकलते है। ये पहिले ग्रीवापर निकलते है, दबाने पर गायब हो जाते हैं, परन्तु फिर पहिलेकी तरह ही दिखायी देने लगते हैं इनका निकलनेका समय ७ से १२ दिनोंके बीचका है तथा रोग भोगनेके अन्ततक रहते है। किसी-किसी रोगीको मूत्र पिडका प्रदाह (नेफ्राइटिस), हृदयावरण प्रदाह (एण्डोकार्डाइटिस), मस्तिष्का वरण प्रदाह (मेनिञ्जाइटिस), प्रभृति उपसर्ग दिखलाई देते हैं। हृत्पिण्ड कमजोर हो जाता है, नाडोका स्पन्दन १०० से ११० होता है। इस ज्वरमे ताप मान तेज रहने पर भी नाड़ीकी गति अत्यन्त धीमी रहती है, यहा तकको नाड़ीकी गति देखकर चिकित्सक कहेंगे कि ज्वर ९९ डिग्री है, परन्तु थर्मामिटर लगाने पर १०२ १०३ डिग्री दिखलाई देगा। नाडीका यह लक्षण रोग निर्वाचनका एक विशेप सहायक लक्षण है इस रोगमें श्वास प्रश्वासके समय चूहेके बदनकी गन्ध जैसी गन्ध निकलती है।

३ रा सप्ताह

जिन रोगियोंमें दूसरे सप्ताहमें कोई विशेष उपद्रव नहीं होते है, उनका ज्वर प्रायः इसी सप्ताहके अन्तमें घट जाता है। प्रातःकाल १०० सायंकाल १०१ डिग्री रहने लगता है, इस तरहके रोगीका ज्वर प्रायः २१ दिनमें छूट जाता है। परन्तु अगर उपसर्ग दूसरे सप्ताहमे उत्पन्न होते है तो वे सभी अर्थात्—ज्वर, कास, दस्त रक्त

श्राव, प्राय ३ रे सप्ताहके अन्तमें घटने लगते हैं। अथवा कभी-कभी ऐसा न होकर रोग कठिन रूप धारण कर लेता है।

उग्र रूप धारण कर लेता है तो रोगी विस्तरपर चित्त होकर पड़ा रहता है और क्रमशः विस्तरके किनारेकी ओर सरकता जाता है। स्थिर नहीं रहता है। जिह्वा पर मोटा सूखा भूरे रंगका मैल इकट्ठा होता है, तथा जिह्वा सूखे मांसके टुकड़के समान फटी-फटी हो जाती है, पेशाबकी मात्रा कम हो जाती है तथा रंग लाल गाढ़ापनयुक्त हो जाता है। कितनी ही बार पेशाब बन्द भी हो जाता है। हाथकी अंगुली कांपती है बिछावनकी चादर नोंचता रहता है, और हाथ उठाकर कुछ पकडना चाहता है, कानोसे सुनाई नही देता, स्वकीय जनोंको भी पहिचानने नहीं सक्ता, नाड़ी क्षीण, दुर्वल चलती चलती। बीच-बीचमें रुक जाती है, लगातार या हल्के दस्त आते है, आँतों में छिद्र हो कर पेरिटोनाइटिस (Petronitis) हो जाता है। ज्वर १०४ से १०५ डिग्री तक रहता है, पेटका आध्मान नहीं घटता, आतोंमें छिद्र होनेसे शीताङ्ग होकर रोगी मर जाता है, किसी समय केवल ज्वरके द्वारा ही उपद्रवोंके न होते हुए भी एका-एक रोगी की मृत्यु हो जाती है।

चौथा सप्ताह—उपसर्गोंके घटनेपर इस सप्ताहमें अक्सर ज्वर घट जाता है, जिह्वा साफ हो जाती है, तमाम उपद्रव घट जाते है और क्षुधा वढ़ जाती है। इसको आरोग्योन्मुखि अवस्था कहते हैं। इस समय रोगीको सावधानी पूर्वक रखना चाहिये, नही तो बीमारी दोहराई जाती है। यदि उपद्रव पूर्ण रूपसे नहीं घटे हो तो और २-१ सप्ताहका समय लग जाता है और ज्वर भी धीरे २ घट जाता है।

आन्त्रिक ज्वरमें प्रधान उपसर्ग— हिक्का, पेटका फुलाव, स्वर-यन्त्रमें विकृति, जिह्वास्तम्भ, कर्णमूल शोथ, मस्तिष्का वरण प्रदाह

(मेनिञ्जाइटिस), कामला, तीव्रज्वर, रक्तके दस्त, मूत्रकृच्छ्र, मानसिक विकारादि इनमेसे गर्दन तोड़, हिचकी, रक्तमिश्रीत मूत्र होना, बहुत ही बुरा लक्षण है।

इस रोगमें होने वाले विपत्ति-जनक उपद्रवोंका विवरण

रक्तश्राव—यह फेफडे या नासिकासे अथवा आंतोंमें व्रण से होता है। कभी कम या कभी अधिक परिमाणमे मल द्वारसे होता है, एका-एक अधिक मात्रासे होने पर रोगीकी हालत बिगड़ जाती है। आंतोंके भीतर रक्त श्राव होनेसे रोगीको मूर्च्छा और मृत्यु तक हो जाती है, अथवा शीताङ्ग हो जाता है।

अशक्ति- बहुत पतले दस्त लगनेसे हो जाती है।

उदर्य कला शोथ (पेरिटोनियम)- आंतोको ढकने वाली कलामें शोथ होनेपर पेटमें तीक्ष्ण शूल उत्पन्न हो जाता है, तथा पेट फूल जाता है, जी मिचलाता है या वमन. मुखकान्ति विहीन हो जाता है, ज्वर बढ़कर या शीताङ्ग होकर २-३ रोजमें ही मृत्यु हो जाती है।

निमोनिया प्लुरिसी—के होने से बिमारीके शीघ्र आराम होनेमें बाधा पडती है या अवसन्नता आकर मृत्यु हो जाती है। इनका विस्तृत विवरण रक्तष्ठीवि अधिकारमे देखिये।

पुनरावर्तक—कितनी हो बार रोग नष्ट होनेपर पथ्यादिक दोषों से दुबारा हो जाता है। कमजोरके लिये यह बहुत कष्टदायक माना है।

मियादि ज्वर—(टाइफायड ज्वर) के साथ बहुतसे स्थानों पर टाइफस, टाइफो मलेरिया (सन्निपातिक मलेरिया ज्वर) का भ्रम हो जाता है, उनकी प्रभेद जानेनेंकी विधि नीचे लिखी जाती है।

टाइफस (प्रलापक)—इसमें ज्वर तथा दूसरे उपसर्ग एका-एक

बढ़ जाते है। ज्वर मान १०४ से १०६-७ डिग्री तक चढ जाता है। प्राय: ज्वर घटता नहीं है, रोग दिनों दिन भयङ्कर रूप धारण करता है। पाचवे या छठवे रोज मच्छर काटनेकी तरह गुलाबी दाने निकल आते है। तथा बिमारीकी अन्तिम अवस्था तक रहते हैं, अधिकतर मलावरोध रहता है। पेटके दाहिने तरफ दबानेसे वेदना और गुड-गुड शब्द नही होता, सिरमे दद रहता है, प्राय: सात आठ दिवसके बाद ज्वर छूट जाता है। इसका अवधि काल १४ से २१ दिनका है। इसका प्रधान उपद्रव निमोनिया है।

आन्त्रिक ज्वर (टाइफायड) में ज्वर प्रातः काल घटता है तथा मध्याह्नमें बढता है। साधारणतः १०४ से १०५ डिगरी तक ज्वर बढता है। ७-१२ दिवसके बीच मोती झरेके दाने निकलते है और रोगावस्थामें हीं गायब हो जाते हैं। इसमे प्राय: पतली टट्टी हुवा करती हैं, किसी-किसीको मलावरोध भी होता है।

दाहिने पेटके तल पेटपर दबानेसे वेदना सहित गड़गड शब्द होता है। कनपटीमें अधिक वेदना होती है। ज्वर धीरे धीरे घटकर छूटता है। इसकी अवधि २१ से ४२ दिवस तक की है। इस रोग में एक तिहाई रोगियोंकी आंतोंसे रक्तश्राव हो जाता है। यह तथा पेरिटोनाइटिस मारात्मक उपद्रवहोते है।

टाइफो मलेरिया—इसमें एकाएक ज्वर बढ़ जाता है—याने कुछ ही समय के भीतर ही ज्वर १०३-१०४ डिग्री तक चढ़ जाता है। इसमें शीतपूर्वक एकाएक ज्वर चढ़ता है। ज्वरकी गति आन्त्रिक ज्वरकी तरह नियमित रूपसे नहीं होती। शरीरपर प्राय: दानें दिखाई नही देते त्वचा पीली रहती है, यकृत्में वेदना होती है और प्लीहा बहुत बढ़ जाती है, इस रोगमें मलेरिया और टाइफाइडके सभी मिश्रित लक्षण दिखायी देते है। बहुतसे रोगियोंमे टाइफाइडकी अवधि व्यतीत होनेपर मलेरियाका लक्षण प्रतीत होता है।

वात ज्वर—इस ज्वरमे भी किसी किसी समय अङ्ग प्रत्यङ्गमें खूब दर्द हो जाता है, टाइफाइडमें भी इस तरहका दर्द रहता है, परन्तु वात ज्वरमें सन्धिस्थानोंका दर्द घट जानेपर फिर अविराम गतिसे ऊंचा ज्वर आने लगता है, इसके साथ ब्राङ्काइटिस भी रहता है, तथा ये लक्षण टाइफाइडके साथ भी रहते है, परन्तु इन दोनोंमें अन्तर यही है कि वात ज्वरमें टाइफाइडके उदर और आतोंसे संबन्ध रखनेवाले तथा अन्य कितने ही लक्षण बिलकुल ही नहीं रहते, यही देखकर इसका प्रभेद जाना जाता है।

सरिब्रो स्पाइनल मेनिञ्जाइटिस—इस बीमारीकी प्रारम्भावस्था में कितने ही लक्षणोंके साथ आन्त्रिक ज्वरका सादृश्य दिखायी देता है। परन्तु मेनिञ्जाइटिसमे प्रथम आक्रमणमें उदर नौकाकृति हो जाता है या उदरमें तनावका भाव रहता है, श्वास प्रश्वास लम्बा या अनियमित रहता है, तथा भयंकर सिर दर्द, प्रलाप, मन्द ज्वर, नाडीमें कोमलता रहती है, और ग्रीवामे दर्द लगातार बमन तथा ग्रीवामे कडापन आदि लक्षण होते है। टाइफायडमे उपरोक्त लक्षणोंका अभाव ही होता है।

एपेडेमिक इन्फ्लुएञ्जा—पक्वाशय आंते आक्रान्त होनेवाले रूप। इस बीमारीमें भी टाइफायडसे भ्रम हो जाता है, पेट फूलना, पेटकी गडगडाहट प्लीहा वृद्धि, अतिसार, ज्वर प्रभृति टाइफायडके लक्षण दिखाई देनेपर भी इस रोगमें ज्वर एकाएक ही १०३-१०४ डिगरी तक हो जाता है और एक सप्ताहके भीतर ही छूट जाता है— ऐसे लक्षण टाइफायडमें नहीं होते है। तथा इन्फ्लुएञ्जामें प्रारम्भावस्था से ही कमजोरी अधिक आ जाती है। लेकिन टाइफायडमे दुर्बलता धीरे धीरे होती है।

पाइमिया सेप्टिसिमिया सूतिका ज्वर

इस रोगमें आन्त्रिक ज्वरके समान लक्षण होनेपर भी इसमें वमन

और अतिसारअधिक होते है तथा नाडीकी गति बहुत तीव्र रहती है। पियोर पेरल सेप्टिसिमिया (Pure Pearl Septicimia) सूतिका ज्वर यह बीमारी सूतिका गृहमें स्त्रियोंके प्रजननके समय रक्त दुष्टिसे हो जाती है इसमें वमन, अतिसार, तीक्ष्ण ज्वर, नाड़ीमें चञ्चलता तथा नासिका से आन्त्रिक ज्वरकी तरह रक्तश्राव भी हो जाता है, परन्तु कानोंमे बधिरता नहीं होती है।

काला आजार—

इसमे मन्द अविराम सन्ततकी तरह ज्वर होनेपर भी ज्वर २४ घन्टेमें २ बार चढता है, उदर विकार तथा फुफ्फुस सम्बन्धी कोई उपसर्ग नही होते है, सिर्फ प्लीहा बढ़ जाती है और बहुत कड़ी रहती है।

पथ्य और चिकित्सा

ज्वरावस्थाके समय इस बीमारीमें औषधियोंको अपेक्षा पथ्य और सुश्रुपा पर अधिक लक्ष्य रखना चाहिये। इस आन्त्रिक ज्वरमें पेटकी बोमारी और पेटमे आध्मान एक प्रधान उपसर्ग है और यह प्रायः प्रारम्भसे ही दिखलायी देने लगते है, इसलिये बहुत आसानी से पचनेवाली हल्की वस्तुओके खाने पीनेका प्रबन्ध करना चाहिये, कितने ही चिकित्सकोंका मत है कि इस रोगमें दूध ही प्रधान पथ्य है, परन्तु बहुतसे रोगियोको दूध ठीक २ नहीं पचता है, पेट फूल जाता है और पतले दस्त आने लग जाते है। आयुर्वेदका भी सिद्धांत है कि—

जीर्णज्वरे रसेक्षीणे क्षीरं स्यादमृतोऽपम्
तदेव तरुणेपीते विषवत्हन्ति मानवम्

इसलिये प्रथम सप्ताहमें दूधका पथ्य बिल्कुल ही नहीं देना चाहिये। इस रोगमें रोगीको जलीय (पानीकी तरह पतली चीजे) ही पीनेको

देनी चाहिये। यदि पतले दस्त आते हों या दस्तमें टूकड़ा टूकड़ा सफेद छीनेकी कोई पदार्थ निकलता हो तो दूध बिल्कुल मना है। रोगीको जलको वार्ली, जलका आरारूट, लवङ्ग शृतजल ठण्डा करके अधिक मात्रामे पिलाना चाहिये, ज्वरकी तीव्रावस्थामें—रक्तमें जलीय अंश कम रहता है, इस समय रोगीको अधिक मात्रामें अगर जल पीने को दिया जाता है तो जल्दी फायदा होता है, इसके अलावा अधिक जल पिलानेसे पेशावके द्वारा आन्त्रिक ज्वरका विष निकल जाता है। इसलिये दिन रातमें ऽ२॥ सेर जलीय पदार्थ रोगी को पिलाना उचित है। जलवार्ली, जल आरारूटके अलावा छीनाका पानी (Whey) भी विशेष लाभदायक है। इसको तैयार करनेके बाद २-३ घन्टेसे ज्यादा न रख छोड़े, प्रत्येक वार नया तैयार करके पिलाना ही उत्तम है।

फलोमें बीदाना रस, या मोसम्बीका रस गरम बर्तनमें ढालकर गरम किया हुआ ही देना चाहिये। तथा ग्लूकोज "डी" १-२ तोलाको गरम किये हुये जल में मिलाकर या मिश्रीका पतला सर्वत १-१ चम्मच करके इच्छानुसार दिन रातमे पीनेको देना चाहिये। कोई भी वस्तु चबाकर देना एकदम मना है। यदि छीना जलका साधन अच्छा हो तो वार्ली प्रभृति श्वेत सार न दे।

आन्तरिक ज्वरके प्रधान उपसर्ग—तीक्ष्ण ज्वरके कारण प्रलाप छटपटाना, इधर उधर भागना इत्यादि है। खूनके दस्त, बहुत अधिक आध्मान, अधिक पतले दस्त, आतोंमें छिद्र हो जाना, मस्तिष्कावरण प्रदाह, रक्तका पेशाव ये सब उपद्रव बहुत हो भय कारक है। अगर ज्वर अधिक बढ़ जावे तो (स्पञ्जिग) शरीरको गरम जलमें तौलिया भिगोकर पोंछ देना और माथेपर दशाङ्गलेपकी पट्टी या यूडीकोलन को ठण्डे जलमें मिलाकर पट्टी अथवा आइस बैगका प्रयोग करना चाहिये।

स्पंजिग (शरीरको पोंछना) शरीरका ताप जब १०२ डिग्री से १०३ १०४ डिग्री हो, उस समय जलको गरम करके ठण्डा होनेपर एक टूकड़ा फलालैन, गमछा या तौलिया जलमें भिगोकर और निचोड कर, प्रथम हाथ, पैर शाखा अंग इसके बाद दूसरे अंगोंको पोछकर, साथ ही-साथ एक दूसरे कपड़े से भीगे-स्थानको पोछकर गरम कपड़ेसे ढॅक दे, इस क्रियाके समय खिडकी दरवाजे सब बन्द कर देना चाहिये, जिससे उस समय किसी तरह हवा न लग जावे और आध घन्टे बाद खोल देना चाहिये। यदि ज्वरके साथ निमोनिया भी रहे, तो पीठ और छातीको छोडकर अन्य स्थानोंको ही पोंछना चाहिये। अगर ज्वर किसी भी समय घटता नही हो तो दिनमें २-३ बार स्पञ्जिङ्ग करना चाहिये। इससे ज्वर अवश्य ही १-२ डिगरी कम हो जायगा। अगर घर वाले इस क्रियाको पसन्द नही करते हों तो वहां पर आइस बैग, यूडी-कोलन, अथवा सिर्काकी पट्टी या नीम्बू रस मिश्रीत जलकी पट्टी, नरसार, कल्मी शोरा की पट्टीका ही उपयोग करे। निमोनिया आदि उपसर्गोंको देखतेही छातीको रूईके द्वारा ढ'क देनी चाहिए। जब तक रोगी पूरी तरहसे आरोग्य न हो जाय, तब तक बिस्तरसे उठने न देना चाहिये, बिस्तर हमेशा साफ सुन्दर रहना चाहिये।

कब्ज— आन्त्रिक ज्वरावस्थाके समय बहुतसे रोगियोंको मलाव-रोधके साथ पेट फूला रहता है, ऐसे समय २-३ रोजके अन्तरसे रोगी के मल द्वारमे ग्लीसरीन सपोजिटरी या नहानेके साबुनका टूकड़ा १॥ इञ्च लम्बा कलमकी नोककी तरह काट कर उसमें थोड़ा घृत या शहद लगाकर मल द्वारमें प्रवेश कर २०-३० मिनट तक छोड देना चाहिये, और मल द्वारको हाथसे दबाके रखना चाहिये, जिससे बत्ती निकल न जावे। इस विधिसे सहज ही मे मल निकल जायगा। टाइफायडके रोगीको जुलाव कभी भी न देना चाहिये। यदि दस्त

२४ घन्टेमें ८-१० बार हो होता हो तो रोकनेकी चेष्टा नहीं करनी चाहिये। परन्तु हमारे समाजमे दस्तोंका लगना बहुत बुरा लक्षण समझा जाता है, प्रायः दस्तोंका लगना सुनते ही घर वाले तथा इष्ट मित्र सबही चिन्तित हो जाते है और चालू इलाज या चिकित्साको बन्द कर देते हैं। आयुर्वेद मतानुसार भी अधिक दस्त लगना इस रोगमे हानि कारक है, परन्तु एकदम रोक देना अत्यन्त ही भय प्रद है। अवरोधक औषधियोंका प्रयोग करनेसे आध्मानादि कितने ही उपद्रव खड़े हो जाते है। अतः जहां तक हो पाचन क्रिया द्वारा ही अतिसारको बन्द करना चाहिये। मूत्रकी तरफ विशेष खयाल रखना अत्यावश्यक है। मूत्रावरोध होनेपर शीघ्रता पूर्वक मूत्रल औषधियों द्वारा अथवा वस्ति प्रयोग द्वारा मूत्रको निकालना चाहिये। अगर मलावरोधके कारण उदरमे वायु सचित होकर मूत्रका अवरोध हुआ हो, तो दारुषट्क लेप, वज्रक्षारको आयामकाञ्जिक में भिगो कर वस्ति स्थान पर शीत परिसेक, अथवा नरसार, कलमी शोरा, हजरतबेरका वस्ति स्थानपर लेप करना चाहिये। अगर मलावरोध हो तो ग्लेसरीन-सपोजिटरीसे मलको निकाल देवे इससे स्वतः ही मूत्रोत्सर्ग हो जायगा। आधुनिक चिकित्सक ज्वरकी प्रारम्भावस्था में विरेचन देते है, इससे रोगीकी हालत बहुत कमजोर हो जाती है। आयुर्वेदका ऐसा सिद्धान्त नहीं है। वहां तो सर्वप्रथम यही लिखा है कि

ज्वरादौ लंघनं प्रोक्तं ज्वर मध्येतु पाचनम्।
ज्वरान्ते रेचनं दद्या देषः सर्वत्र निश्चयः॥

इसोलिये सन्निपातिक रोगमें जैसी आयुर्वेदीय चिकित्सा उपयुक्त होती है वेसो अन्य नहीं। यद्यपि पाश्चात्य चिकित्सकोंने नये-नये आविष्कार किये है जैसे आर्यो माईसीन।

क्लोरोमाइसिटीन (Chloromicitine)

आदि औषधियोंका प्रयोग चालू किया है, परन्तु यह भी एक भारतवासियोके लिये नुकसानकारक ही है। आयुवदमे सन्निपात रोगकी अनेकों औषधियां वर्णित हैं, परन्तु मैंने जिनजिन औपधियोको प्रयोगमें लाकर अनुभव प्राप्त किया है वे निम्न है। इनमेसे योग्य चिकित्सक दोषानुसार काममें लावे। जैसे संजीवनी वटी, ब्राह्मीवटी, लक्ष्मी विलास रस, आनन्द भैरव रस, सौभाग्य वटी, रसराज रस, बृ० वातचिन्तामणि रस, वातविध्वंसन रस, चतुर्भुज रस, सर्वाङ्गसुन्दर, सिद्धप्राणेश्वर रस, लवङ्गादि वटी, अगस्त्य सूतराज रस, सूतशेखर रस, प्रवाल भस्म, मुक्ता भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, अर्जुनाभ्र, भीमसेनी, कस्तूरी, दशमूलक्वाथ, अष्टादशाङ्ग क्वाथ, तगरादि क्वाथ, षडङ्ग पानीय आदि हैं।

तीक्ष्णावस्थामे मकरध्वज, हेमगर्भ पोट्टली रस जैसी औषधियां भी प्रयोगमे लानी पड़ती है।

आंतोंसे रक्तस्राव

आन्त्रिक ज्वराक्रान्त रोगीको जब आतोसे रक्तस्राव होने लग जावे तब उसको पथ्यमे जलके सिवाय और कोई वस्तु खानेको न देना चाहिये। हमारे यहां ऐसे समयमे कत्था और लाक्षाका क्वाथ बनाकर ठण्ढा करके पीनेके लिये जलकी जगह दिया जाता है। इससे रक्तस्राव बहुत ही शीघ्र बन्द हो जाता है। ऐसे रोगीके पेट को सफेद वस्त्र (फलालैन) से बाध रखना चाहिये। आन्त्रिक ज्वरमे यह एक साघातिक उपसर्ग है, इससे रोगीका ज्वर एकाएक छूटकर शीत आजाता है, और पसीना आनेके कारण रोगीके हार्टफैल होने की सम्भावना हो जाती है, अतः ऐसे समय शीघ्रातिशीघ्र सावधानीसे इलाज करना चाहिये।

हार्टफैल किसे कहते हैं ?

जब यह देखें कि किसी बीमारीकी अन्तिम अवस्थामें रोगीका श्वास प्रश्वास जल्दी जल्दी तेज़ीसे चलना आरम्भ हो गया है और हृत्पिण्डका धुक्-धुक (लब-डब) शब्द स्पष्ट सुना नहीं जाता है, केवल सों-सों शब्द ही सुनाई पडता है, हाथ-पैर और सम्पूर्ण शरीर ठण्ढा, नाड़ी अति क्षीण है, पर तेज चल रही है, चेहरे पर बूंद-बूंद पसीना होता है, उसी समय समझ लेना चाहिये रोगीका मृत्युकाल सन्निकट है। हार्ट फैल द्वारा होनेवाली मृत्युका यही प्रबल लक्षण है।

यदि ज्वर अचानक ९६-९७ डिग्री हो जाये, पेटमें बहुत यन्त्रणा हो, पेट फूल जावे, शीत आजाये, नाडी और श्वास-प्रश्वास अति तेज हो तो उसी समय समझ लें कि आतोंमें छेद हो गया है। ऐसे समय हार्ट फेल होनेकी सम्भावना ही अधिक होती है।

नाड़ी—इस रोगमें नाडीपर हमेशा सतर्क दृष्टि रखनी पडती है। क्योंकि इस रोगमें सभी समय नाड़ी और हृदय बिगडनेकी सम्भावना रहती है, इसलिये दोनों समय नाडी देखना अत्यावश्यक है। नाड़ीकी अवस्था किसी समय बिगडती हुई दिखलाई दे तो वहां पर मृतसंजीवनी सुरा, या मृगमदासवका प्रयोग शीघ्राति-शीघ्र करना चाहिये। एलोपेथिक वाले भी नं० १ ब्रान्डी दिया करते हैं। इससे नाड़ीकी दुर्बलता दूर हो जाती है। टाइफायडमें नाड़ीकी गति १ मिनटमें १३० या इससे अधिक हो जाय तो बहुत ही चिन्ताकी बात है। इसके अलावा और भी कई विपत्तिकी आशंकाके लक्षणों को याद रखना चाहिये। नाडीकी तरह घडीका सेकेण्ड कांटा देखता हुआ १ मिनट तक पेट पर हाथ रखकर पेटका चढना उतरना गिने, यही श्वास-प्रश्वासके जाननेकी विधि है। गिनने पर श्वास-प्रश्वास ३० से अधिक, नाडी १३० या इससे अधिक, एक तरफ टकटकी लगाकर देखना, अज्ञानता, पुकारने पर उत्तर न देकर केवल

देखतेही रहना, विस्तर से उठकर भागने की चेष्टा, भूल बकना, मारने काटनेके लिये चेष्टा करना, बिछावनको फाडना, अनजानमे टट्टी पेशाब करना, जिह्वा काली या मैल युक्त होना, जीभ कांपना और बाहर न निकाल सकना ज्वरका ताप प्रातः १०४ सायं १०५ डिग्री कुछ दिनों तक एक भावसे रहना तथा शय्याक्षत (bed sore) का होना, इत्यादि हैं। शय्याक्षत होने पर उस स्थानपर गरम पानीसे सेक करना चाहिये तथा स्प्रोटसे साफ कर ग्लेस-रीन या वेसलीन या शतधौत घृत लगाना चाहिये। इस वीमारी मे किसी-किसी रोगीको रक्त मिश्रित पेशाब भी हो जाता है, यह होना बहुत ही खराब लक्षण है।

साधारण चिकित्सा

अगर शरद् ऋतुमें मोतीझरा की बीमारी हुई हो तो शुरूमे संजीवना वटी या ज्वर संहार, प्रवाल, मुक्ता, प्रातःसायं षडङ्ग-पानीय क्वाथके साथ देवें, मध्याह्नमें वज्रक्षार जलके साथ दें, रात को नींद नहीं आती हो तो बृ० वातचिन्तामणि १ रत्ती जटामासी जवासाके फान्टमें मिश्री मिलाकर देवें। इस प्रयोगसे पित्तका शमन जल्दी हो होकर रोगी जल्दी हो स्वास्थ्य लाभ करता है।

अगर वसन्तमें यह उपरोक्त बीमारी हुई हो तो लक्ष्मीनारायण रस या लक्ष्मीविलासरस, ज्वर संहार, कस्तूरी भैरवादि तेज औष-धियोंका प्रयोग करना चाहिये। अनुपानमें दशमूल क्वाथ, तुलसी-रस मधु, पान रस मधुके अनुपानसे सेवन कराना चाहिये। म० रा० चन्द्रामृत, शृंग्यादि अष्टाङ्गावलेह, तालिशादि चूर्ण आदि औष-धियोंके प्रयोगसे सत्वरही लाभ हो जाता है।

विशेषावस्थामें चिकित्सा

प्रलाप, स्वेद शुष्ककास आन्त्र शोथ, और व्रण शमनके लिये

प्रवाल भस्म, मुक्ता भस्म. मकरध्वज, अर्जुनाभ्र आदि औषधियों का प्रयोग ऊपरकी दवाइयोंमे संयोग कर देना चाहिये।

वायु जनित तीव्र प्रलाप हो तो रसराज, कृष्णचतुर्मुख, योगेन्द्र रस, वृ० वात चिन्तामणि, वात विध्वसन रस आदि औषधियों का प्रयोग तगरादि क्वाथके अनुपानसे सेवन कराना चाहिये। इससे प्रलापका शीघ्र शमन हो जाता है।

शुष्ककास और फेफड़ोंकी निर्बलतामे पित्त कफोल्वण सन्निपात मे कहा हुआ पर्पटादि क्वाथ, श्रृंग्यादि चूर्ण, श्रृंग भस्म, लक्ष्मी विलास, मरिच्यादि वटी, चन्द्रामृत रस, पिप्पली चूर्ण, अमृतासत्व, टंकणक्षार, नरसार, लवङ्गादि चूर्ण, सितोपलादि चूर्ण आदि औष-धियोंके संमिश्रणसे अच्छा फायदा होता है।

नाक, मुख या गुदासे रक्त श्राव हो तो प्रवाल पिष्टी, स्वर्ण माक्षिक भस्म, गिलोय सत्व, गैरिक चूर्ण, स्फटिक भस्म, रक्तपित्त कुलकुठार, चन्द्रकला रस, मुक्ता पिष्टी, शुक्ति भस्म, कुर्सकहरबा आदि औषधियोका संमिश्रण आयापान स्वरस, वासास्वरस मधु, लाक्षा क्वाथ आदिके अनुपानसे देना चाहिये।

मलावरोध हो तो ग्लेसरीनकी वत्ती या मधु १ औंस गरमजल २ औंस मिलाकर वस्ति प्रयोग करे। अथवा एरंड तेल पेटपर चुपड़ दे। इससे आरामसे टट्टी हो जाता है। सुखपूर्वक दाने निकालनेके लिये—मुक्तापिष्टी १ रत्ती, श्रृंगभस्म २ रत्ती खूबकलाके क्वाथसे देनेसे ही दबी हुई फुन्सिया जल्दी ही बाहर आ जाती है।

राजपूतानेमें एतदर्थ ब्राह्मीवटी, लवङ्ग, जायफल, जावित्री, सोंठ, अकरकरा, ब्राह्मीपत्तीके क्वाथसे दिया जाता है। इससे फायदा भी बहुत अच्छा होता है इस रोगमे रोगीकी शक्ति अनुसार १ से २१ लौंग जलमे पीस उबाल, छानकर प्रातः सायं देनेसे दाने सुखपूर्वक निकल आते है, प्यास कम हो जाती है, दस्तकी दुर्गन्धि भी कम हो जाती है।

अग्नि भी प्रदीप्त हो जाती है। लौंगके बराबर इस रोगकी कोई भी दवाई नही है। इसका अकेलीका प्रयोग ही इस रोगसे छुटकारा दिलवा देता है। अगर दवाके साथ दिया जाय तो और भी अच्छा फायदा होता है।

प्यास अधिक हो तो छिलका सहित बड़ी इलायची और कमल-गट्टे को भूनकर शहदमें मिलाकर चटावे।

आफरा और अन्यवात विकार हो जाय तो हिग्वाष्टकवटी, चन्द्र-प्रभावटी, यवक्षार, वज्रक्षार, अजवाइन अर्क आदि औषधियोंका प्रयोग करे तथा पेटपर दारुपट्क लेप, रसोनादिवटीका लेप तथा गरम पानीका सेक करे, या मकोय बीज, अजवाइन, हींगकी पोटलीको गरम करके सेक करे या लेप करे। अगर पेशाव कम होता हो तो नरसार कलमीशोराको पुरातन घृतमें मिलाकर लेप करे या उपरोक्त द्रव्योंको आयाम काजिकमें मिलाकर पट्टी पेटपर रक्खे। अथवा बंगाल में पाना नामक एक औषधि पुराने तलावोंमें मिलती है उसका लेप करे इसको आयुर्वेदमें मूषाकर्णी कहते है। यह पुराने तलावोंमें मिलती है। इसकी पहिचान यही है कि यह जलके ऊपर तैरती रहती है पत्ते चूहेके कानके सदृश होते है। जड चूहेकी पूंछके समान होती है।

अगर भयंकर परिमाणमें अतिसार बढ़ जाय तो लवङ्गादिवटी, सिद्ध प्राणेश्वर, जातिफलादि वटी, गंगाधर चूर्ण, उ० सर्वाङ्गसुन्दर, महा-गन्धक, रसपर्पटी आदि औषधिया नागरमोथा स्वरस, कशेरुस्वरस पुटपक्वदाड़िम स्वरसके अनुपानसे या जायफल, बेलगिरी, अतीश, सुपारी आमकी गिरीको जलमें घिसकर मिश्री डालकर अनुपान रूपमें देनेसे अतिसारावस्थामें बहुत ही अच्छा फायदा होता है।

साधारण अनिद्रामें जटामांसी, जवासाके अनुपानसे वृ० वात-चिन्तामणि देवे या काकमाचीका मस्तक पर प्रलेप करे।

प्रलाप जनित अनिद्रामें निद्रायुक्त कुमुदेश्वर जटामांस्यादि फाण्टसे दे या हमारे यहांका प्रस्वप्नार्क दें, शिरपर शीत उपचार बर्फकी थैली की व्यवस्था करे।

सिर दर्द और व्याकुलता पर। यदि ज्वर १०५ हो तो मस्तिष्ककी रक्षाके लिये बर्फकी थैली लगाव अगर बर्फ उपलब्ध नहीं हो तो नरसार और कलमीसोराको ठन्डे पानीमें मिलाकर शिरपर पट्टी भिगोकर लगावे या कोलन वाटरकी पट्टी या दशाङ्ग लेपकी पट्टी लगावे या पुरातन घृत पानरस मिलाकर लगावे, इससे प्रलापादि उपद्रव भी शान्त हो जाते हैं तथा ज्वर भी हल्का हो जाता है।

हृदय दौर्बल्य शमनार्थ

यदि हृदयमे शिथिलता आ जाय, तो हृदय दौर्बल्य, दाह शमनके लिये तथा शक्ति वढ़ानेके लिये पूर्ण चन्द्रोदय रस, महाशक्ति रसायन वटी, भीमसेनी कर्पूर, बृ० कस्तूरी भैरव, जवाहिरमोहरा, अम्बर, मुक्ताघटित औषध तथा कस्तूरी, प्रवाल, अर्जुनाभ्रक, मुक्ताभस्म, संजीवनी सुरा, मृगमदासव आदि औषधियोका प्रयोग करे।

विशेष दौर्वल्य हो तो हेमगर्भपोट्टली रसकी व्यवस्था करे, इसके प्रयोग से हृदयक्षीणता, नाडीकी मन्दता, प्रस्वेद, हाथ पैरका ठण्डापन, ये सब लक्षण दूर हो जाते है।

आतसे रक्तश्राव हो, तो पेटपर बर्फकी थैली रखकर शीतलता पहुंचावे और खानेकी औषधिमें कर्पूर रस आध ½ रत्ती मिलाते रहें। अन्य गरम औषधियों को बन्द करके मुक्तापिष्टी, भीमसेनी आदि शीतवीर्य चूनेवाली औषधियोका प्रयोग आयापान स्वरस, वासास्वरस, लाक्षाक्वाथ, दूर्वास्वरसके अनुपानसे करे। रोगीको सीधा लेटाये रखे, उठना बैठना बन्द रखे, उदम्बरसार, लाक्षाक्वाथमे शु० फिटकिरी मिलाकर गुदाके रास्तेसे धीरे-धीरे १-१ बूंद करके रबड़ नलिकाके द्वारा

पेटमें पहुंचावे और कुछ समय तक भीतर रखने की चेष्टा करें इससे रक्तश्राव अवश्य वन्द हो जाता है। आतसे रक्तश्रावका उपद्रव उठ बैठ करनेसे अथवा विरुद्ध उपचार या अपथ्य सेवनसे तीसरे सप्ताहमें होता है। यह बहुत ही भयंकर उपद्रव है इसकी तरफ पूरी सावधानी रखनी चाहिये। आंत फटनेपर मुँहसे कुछ भी खानेको नहीं दे। अगर आवश्यकता समझे तो ईशबगोलको गरम जलमें मिलाकर ठण्डा होने पर थोड़ा अनार का रस मिलाकर या मिश्रीका शर्वत मिलाकर १-१ चम्मच करके दिनमे ४ बार देवे।

मूत्रावरोध हो जाय तो रबड़की नलीसे मूत्र निकालना चाहिये।

मूत्रमें जलन हो तो उशीरासव, तृणपचमूल, गोक्षुर अर्कका प्रयोग करे।

भयङ्कर कफ बृद्धि हो जाय तथा वेहोशी हो तो समीरपन्नग रस, कस्तूरी भूषण रस, चतुर्भुज रस, शृंग भस्म, मल्ल सिन्दूर आदि औषधियोका उचित अनुपानके साथ प्रयोग करे।

सर्वाङ्गमें कम्प, हनुस्तंभ, जड़ता आदि उपद्रव हो तो रसराज, महायोग राज, कपील्लू आदि औषधियोंका प्रयोग करे।

प्रस्वेद अधिक आवे तो सोंठ, आरा रोट, चना भूना हुआ का पाऊडर बनाकर मालिस करें। प्रतापलंकेश्वर रस औषधिके रूपमें खानेको देवे। ज्वर उतरने पर मालतीबसन्त, नवायस, मुक्ता, आदि औषधि बल बढ़नेके लिये देवे।

मन्थरज्वर चिकित्सा उदाहरण

रोगीका नाम सुन्दरी देवी, उम्र २५, जाति अग्रवाल, घरका पता ७४ नं० तुलापट्टी, मदन लाल खेताण। इसको प्रारम्भमे ज्वर कुछ ठन्ड लग कर हुआ था, परन्तु हलका होने पर इसने भोजन कर लिया। उसी रोज शामको ३ बजे फिर ठन्ड लगकर ज्वर १०५ डिग्री हो गया। रात भर ज्वर बना रहा सुबह १०४ डिगरी हुआ, घन्टे

भर बाद फिर १०५ हो गया, तब घर वालोंने डाक्टर नवरत्नको बुलाया और उसका इलाज चालू कर दिया। डाक्टरने मलेरिया समझ कर कुनाइनका इन्जेक्सन दे दिया। २ इन्जेक्सन देनेके बाद अतिसार चालू हो गया, तथा टेम्प्रेचर भी पसीना आकर उतर गया परन्तु ज्वर उतरते ही रोगीको घबराहट बढ़ गई। चिल्लाना शुरू कर दिया। तब घर वाले घबराये और गोस्वामी गुलराजजीको बुलाकर लाये और उनका इलाज चालू कर दिया, जिस दिन ज्वर उतरा वह सातवां दिन था, उसी शामको ७ बजे मुझको भी बुलाया जिस समय मैं गया उस समय पसीना बहुत जोरसे आ रहा था, ज्वर ६५ डिगरी था। हाथ पैर ठन्डे हो रहे थे, कम्प था, टट्टी १०—१५ पतली हुई थी। नाडीकी गति १२० थी तथा श्वास गति ३४ थी। दोनों तरफ कफ फेफड़ोंमे जमा था, पेशाब टट्टीके साथ ही थोड़ा २ होता था। अस्तु मेरे को बुलानेके लिये रोगीका बहनोई जो गरीब हालतमें था वही आया था। उसीके दबावसे घरवालोंने दवा चालू की।

ता० १५-८-४६ कस्तूरी भैरव १ रत्ती
प्रवाल १ रत्ती
लवङ्गादि २ गो०
मुक्ता १ रत्ती
भीमसेनी ½ रत्ती | १ पु०

लवङ्ग जायफल मिश्रीके जलसे ३-३ घण्टासे

ता० १६-८-४६ सुबह ७ बजे फिर देखनेको बुलाया। यही दवा चालू रखी। टेम्प्रेचर मुँहमें ६८ में आया, परन्तु पसीना बन्द नहीं हुआ। फिर दो पहरमे १२ बजे देखनेको गया, तब ज्वर मुँहमें ६६ था, परन्तु बगलमें ६६ ही था। टट्टी १२ बजे तक ७ हुई थी। मेरे सामने ही रुग्णाके पतीके दोस्त तथा

भाई वगैरह आ गये थे, और उनका मन कुछ डाक्टरी इलाजकी तरफ हुआ। मैंने इनका रूख देख कर समझ लिया और दवाके लिये कह कर चला आया। मेरे जानेके बाद ही डाक्टर चटर्जीका इलाज चालू हो गया।

ता० १७-८-४६ को मेरे पास दिन भरमें कोई खबर नही आई। इलाज चटर्जीका हो चालू रहा फिर रातको १२ बजे हालत विशेष खराब हो गई, तब चटर्जीको फिर बुला कर लाये। उसने देख कर कह दिया कि हालत बल्कुल खराब है। हमारे यहां जो इलाज है वह सब कर चुका, अब तुम लोगोकी जैसी इच्छा हो वैसा इलाज करावो। तब घर वाले घबराये और रातको एक बजे मेरे पास अस्पतालमें आये और रोने लग गये। इनकी ऐसी अवस्था देख कर मेरे दिलमें दया आ गई, और मैं उसी समय उनके साथ दवाकी पेटी लेकर चला गया। जब रोगीको पास जाकर देखा तो हालत बहुत ही खराब हो गई थी। नाड़ी गति १३० श्वास प्रश्वास ४०, टेम्प्रेचर मुँहमें ६५, प्रलाप, हाथ पैर शीतल बर्फके समान, टट्टी ५-५ मिनटसे लग रही थी, पेटमें आफरा, दोनों फेफड़ोमें कफ वृद्धि, जी घबराकर उल्टी होती थी, रोगी चिल्ला रहा था मरा, मरा, बचाओ मैंने ऐसी अवस्था देख कर २ खुराक दवा घर वालोको दी।

रस राज २ रत्ती	
प्रबाल १ रत्ती	
लवङ्गादि २ रत्ती	
भीमसेनी ½ रत्तो	१ पुड़िया

मधुसे ३-३ घन्टे बाद देनेको कहा और यह भी कहा कि तुम लोग वैद्यपर विश्वास नहीं करते हो जब तक एक वैद्य के हाथमें इलाज नहीं रहेगा रोगी ठीक नहीं होगा।

तब घर वाले बोले महाराज हमारी भूल हुई, सगे सम्बधियोंके फेरमे पड़कर हमने आपका इलाज बदल दिया था। सो अब पछता रहे हैं। अब आप जानें आपके जचे जैसा करें, हमलोगोंने तो इसके जीनेकी आशा छोड़ दी है। यह सुनकर मैंने रोगीका इलाज फिर सम्हाला, २ पुड़िया दे कर अस्पतालमे सुबह ७ बजेका वादा करके चला गया।

१८-८-४६ सुबह ७ बजे गया तब हाल चाल पूछने से पता लगा कि रातको आपकी दवा देनेके बाद ३ टट्टी हुई तथा कुछ नींद भी आई। पेट पर अफारा भी कम है। पेशाब भी होता है। पेटसे अपान वायु बहुत दुर्गन्ध युक्त १०-१० मिनटसे निकलती है। ज्वर मुंहमें ९८ है तथा शरीर भी कुछ गरम है। नाड़ीकी गति भी १२० हो गई तथा श्वास ३२ थे परन्तु पसीना बन्द नहीं हुआ। एतदर्थ दवा निम्न लिखित चालू की।

नं० १			नं० २	
कस्तूरी भैरव	१ गो०		मकरध्वज	१ रत्ती
लवङ्गादि	२ गो०		उ० सर्वाङ्ग	२ रत्ती
प्रवाल	१ रत्ती		लवङ्गादि	२ गो०
मुक्ता	१ रत्ती		प्रवाल	१ रत्ती
भीमसेनी	½ "		अर्जुनाभ्र	१ रत्ती
नागरमोथा रस मिश्रीसे			जायफल लवङ्ग मिश्रीके जलमें	

इस तरहसे इन १—नं० तथा २ नं० दवाइयोंके संमिश्रणको ३-३ घन्टाके हेरफेरसे चालू किया। तथा ४-४ घन्टासे मृतसंजीवनी सुरा।) भर जल मिला कर दी। छातीपर धत्तूरादि घृतकी मालिश कराई। तथा हाथ पैरोंमें सोंठ कायफल आरारोटका पाउडर बनाकर रगड़वाया यह प्रयोग दिनभर चालू रखा, सायंकाल ७ बजे फिर बुलानेको आया तब जाकर देखा कि ज्वर ९९ बगलमें है, प्रलाप बेचैनी अधिक है तब

रातको ८ बजे वृ० वातचिन्तामणि २ रत्ती, प्रस्वप्रार्क १ औंसके अनुपानसे दी। रातको २ घन्टे नींद आई तथा १ टट्टी भी हुई परन्तु रातको २ बजे रोगी फिर घबराया, १ वमन भी हुई तब मेरेको फिर बुलाया रोगीको जाकर मैंने पूछा तो कहा कि जी बहुत घबराता है। उल्टीकी बहुत इच्छा होती है तथ कुछ हिचकी भी आती है, तब मैंने पिच्छ १ रत्ती, रसराज २ रत्ती, बड़ी इलायची चूर्ण १ मासा मिलाकर मधुसे बार २ चाटनेको कहकर चला आया।

१९-८-४९—सुबह ६ बजे घरके आदमीने रात के समाचार कहे कि आपके आनेके बाद उल्टी, जी घबराना बन्द हो गया, टट्टी १ हुई, पेशाब ५-६ बार हुआ, अब आपको बुलाया है। मैं ७ बजे रोगीके घरपर गया तो ज्वर ९९ था, हाल अच्छा था परन्तु खांसी बार २ में आतीथी जिससे रोगी घबराता था, दोनों फेफडोंका कफ भी पतला हो गया था, तब मैंने दवा चालू ही रखी तथा खासीके लिये चन्द्रामृतरस ४ रत्ती तालीशादिचूर्ण ३ मासाको मिलाकर मधुसे बार २ में चाटनेके लिये कहा।
दो पहरमें १२ बजे फिर देखनेके लिये गया तो पसीना कभी २ आता था परन्तु ज्वर १०० डिग्री हो गया था।
सायंकाल ७ बजे फिर गया तब ज्वर १०२ हो गया हाल और सब ठीक थे।

२०-८-४९ रातका हाल कहनेके लिये सुबह आदमी आया कहा कि नींद ३ घन्टे आई आपको देखनेको बुलाया है। मैं ७ बजे गया ज्वर ९९, पसीना बिल्कुल बन्द था परन्तु गलेमे दर्दका अनुभव करती थी इसलिये टंकण मधुमें मिलाकर लगानेको कहा और उन्नावसत चूसनेके लिये दिया, सायं १०२ ज्वर हुआ था दवामें कोई परिवर्तन नहीं किया।

२१-८-४९ हालत कल जसा ही रही।

२२-८-४६ जीभमें कुछ ललाई मालूम दी और रोगीको खुश्कीका अनुभव भी होने लगा तथा कफ भी कम हो गया। एतदर्थ दवा परिवर्तन कर दी।

प्रातः सायं	म० रा०
सौभाग्यवटी १ गो०	
मकर १ रत्ती	चन्द्रामृत १ गो०
लवङ्गादि २ ”	
प्रवाल १ ”	शृंग्यादि १ माशा
मुक्ता १ ”	नरसार १ रत्ती
भीमसेनी ½ ”	
(नागरमोथा रस मिश्रीसे)	मधु से

रातको नींदके लिये पूर्वोक्त दवा ही चालू रखा।

२३-८-४६ हालत ठीक, ज्वर सुबह ६८ सायं १०० ।

२४-८-४६ हालत ठीक, ज्वर भी कल जैसा ही।

२५-८-४६ ज्वर ६८ ऊपरमे ६६

२६-८-४६ कल जैसा ही रहा, नींद कम आई इसलिये नींदकी दवा रातको २ वार देनी पडी।

२७-८-४६ मुखमे कुछ छालेके माफिक अनुभव करने लगी। प्यास तथा पेटमें कुछ जलन भी प्रतीत हुई, खांसी साधारण, छातीमें कफ बिल्कुल नहीं तब जलवाली खानेके लिये ⌐)॥ दी गई तथा अनारका रस ⌐)– दिया।

२८-८-४६ और सब हालत ठीक थी, परन्तु मुखमे छाला होनेसे फल रस लेनेमें कष्ट होता था तथा ज्वर भी प्रातः ६७॥ सायं ६८॥। हुआ था तब दवा परिवर्तन की।

प्रातः सायं	म० रा०
चन्दनादि लौह ३ रत्ती	लवङ्गादि २ गो०
मुक्ता १ रत्ती	सिद्ध प्राणेश्वर १ ”
अर्जुनाभ्रक १ रत्ती	
भीमसेनी ३ ”	
मधु से	नागरमाथारस मधु से

२९-८-४६ सुवह १ टट्टी बंधा हुआ और ज्वर ९७ था, खानेके लिये छटपटाने लगी, तब ।- दूध वार्लीमे मिलानेको कहा तथा छीना जल दोपहरमें ।= दिलवाया अनारका रस दो वार दिलवाया, सायं ज्वर ९८ तक हुआ रातको नींदकी दवा भी बन्द कर दी गयी।

३०-८-४६ हालत बिल्कुल ठीक।

३१-८-४६ बिलकुल ठीक।

१-९ ४६ भूखके कारण छट पटाती थी तब पथ्य जो चालू था वही रखा तथा शाक जूस ।- दिया साय काल तवियत बहुत प्रसन्न थी ज्वर भी दिन भरमें ९७ रहा।

२-९-४६ परवलका भरता दिया गया

३-९-४६ फुलकेका पपडी दिया गया। इस तरहसे रुग्णा २१ दिवस का शीताङ्गोपद्रव युक्त मोतीझरा भोगकर बिल्कुल ठीक हो गई।

ऐसे २ बहुत-से हजारों रोगी मेरे इलाजमे आये तथा अब भी अस्पतालमे तथा बाहर बने ही रहते है। भगवान् धन्वन्तरी की कृपासे तथा कविराज श्री ज्योतिर्मय सेनजी तथा परमादरणीय गुरुवर्य आयुर्वेद मार्तन्ड श्री यादवजी महाराजके आशीर्वादसे मेरे को इस भयंकर रोगकी चिकित्सामें अच्छा अनुभव हुआ। अतः वैद्यगण भी परीक्षा करके देखे।

मंथर ज्वर एवं गर्दन तोड़युक्त रोगी

रोगी नाम कृष्णा देवी, उम्र १४, पिताका नाम रामनाथ जी गोयनका, यहांका पता सेन्ट्रल एवन्यू नं० २८८।

यह लोग मद्रास के रहने वाले थे। कुछ दिन पूर्व ही यहां कलकत्तेमें आये थे। कुछ दिन पहलेसे ही कृष्णाको अम्लपित्तकी बीमारी थी। इसलिये इसके पिताने मुझको बुलाकर दिखलाया था, उस समय इसको ३ रोजसे टट्टी बिल्कुल नहीं हुआ था। खट्टी डकार आती थी। शिरमे बहु दर्द हो रहा था। मैंने इसको देखकर औषधि व्यवस्था पत्र लिख दिया और चला आया। इन्होंने दवाई नहीं मँगवाई। उसी रोज सायंकाल इसको उल्टी टट्टी होने लग गये, तब डाक्टरको बुलाकर इलाज चालू कर दिया तथा टट्टी एक्जामिन भी कराया, जिसमें कोलराके कृमी भी निकले। टट्टी उल्टी बन्द हो गया, परन्तु ज्वर हो गया, डाक्टर ने इन्जेक्सन देकर ज्वर उतार दिया तथा दूसरे रोज खानेको पथ्य में खिचड़ी दी, उसी दिन फिर ज्वर हो गया तथा फिर उल्टी भी होने लग गई, तब मेरेको बुलाया। मै देखने गया तब निम्न लिखित हालत थी।

ज्वर मुंहमें १०५, बगलमें १०३, टट्टी ५-६ पतली होती थी। उल्टी भी कभी २ होती थी। कुछ खासी भी थी। शिरमें बहुत दर्द था। तब मैंने निम्न लिखित दवा चालू की।

ता० ४-४-४५ प्रातः सायं		म० रा०	
सौभाग्यबटी	१ गो०	लवङ्गादि	२
लवङ्गादि	२ रत्ती	महागन्धक	२
प्रवाल	१ रत्ती	जहरमोहरा खताई	१
नागरमोथा रस मिश्री से		अजवाईन अर्क जलसे	

ता० ५-४-४५ सुबह देखने गया तो पूछनेसे पता लगा कि रातको टट्टी ३ हुई ज्वर रात भर १०५ ही रहा सम्पूर्ण शरीरमें दर्द हो गया जी बहुत घबराता था कभी कभी वमन भी होती थी।

ता० ६-४-४५ टट्टी बिल्कुल नहीं हुआ परन्तु वमन उसी तरहसे होता था, इसलिये पित्तान्तकबटो चूसनेके लिये दी जिससे वमन दिनमे कलकी वजाय आज कम हुई, गलेपर सफेद फुन्सिया भी दिखने लगी, कुछ कुछ प्रलाप करने लग गई, ज्वर उसी तरह रहा, तब कविराज हिरण्यमय सेनको राय लेनेके लिये बुलाया। उनको भी अच्छी तरहसे समझमे नही आया तब कविराज श्री ज्योतिर्मय सेनजीको बुलाया उन्होंने पूरे हाल चाल सुने तथा बहुत देर तक बैठकर अच्छी तरहसे देखकर औषध परिवर्तन किया।

ता० ७-४-४५ प्रातः सायं	म० रा०
ज्वर संहार २ रत्ती	वज्रक्षार १ माशा
रामवाण १ गो०	जलसे
प्रवाल १ रत्ती	
रास्ना तेजवल गोक्षुर सोंठ के काथ मधुसे	

ता० ८-४-४५ हालत कल जेसी हो रहो।

ता० ९-४-४५ तन्द्राधिक्य नाड़ी दुर्बल याने १३० प्रलाप तथा वमन अधिक हुआ ज्वर भी बगलमें १०२। मुंहमे १०४ रहा।

ता० १०-४ ४५ कविराजजी को तथा उनके पुत्र हिरण्यमयजी को फिर बुलाया। वे आये और रोगीको देखकर बोले केश बहुत टेढ़ा है। गर्दन तोड और मोतीझरा दोनोंका मिश्रण है। इसलिये औषध परिवर्तन करना पड़ेगा तब उनकी रायसे औषध निम्नलिखित परिवर्तन किया।

प्रातः	सायं
कृष्ण चतुर्मुख १ रत्ती	रसराज ३ रत्ती
मुक्ता १ रत्ती	ज्वरसंहार २ रत्ती
प्रवाल १ रत्ती	प्रवाल १ रत्ती
मृगमद १/२	मगमद १/३
भीमसेनी १/३	क्वाथ से
मुस्तकादि गणके क्वाथ से	

म० रा० वज्रक्षार जलसे

पित्तान्तकवटी चूसनेको गर्दनपर तथा पृष्ठवंशपर महामाष तैल की मालिश तथा माषकलाईको दूधमें औंटाकर सेक किया। पेशाब कम होता था डा० नलनीरञ्जन सेन भी देखनेको आया था उसने खून परीक्षाके लिये कहा तथा १ इन्जेक्सन ग्लुकोज २५ शी० हैक्षामीन मिलाकर देनेको कहा, और दिलवाया गया दवा खानेकी आयुर्वेदिक ही चलती रही।

ता० ११-४-४५ को उपरोक्त दवाके सेवनसे गर्दनकी वेदना शान्त हो गई, परन्तु दुर्बलता अधिक, तथा कुछ छातीमे कफकी आवाज सुनाई दी। ज्वर मुँहमें प्रातः ९९ में आया, तब अमृत बिन्दू १ खु० दो गई जिससे घन्टे भर बाद ज्वर १०१ हो गया। छाती पर धत्तूरादि घृतकी मालिश करवाई तथा निस्सारणार्थ अष्टाङ्गावलेह चाटने को दिया। सायंकाल ज्वर फिर १०३ हो गया प्रलाप शान्त रहा।

ता० १२-४-४५ हालत पूर्ववत। खानेको जल बार्ली दी गई।

ता० १३-४-४५ रातको नींद अच्छी आई कमजोरीका अनुभव करने लगी।

ता० १४-४-४५ ज्वर प्रातः ९८ सायं ९९ और सब हालत ठीक दवा पूर्ववत चालू रखी। रातको नींद भी अच्छी आयी परन्तु उल्टी कभी २ होती थी।

ता० १५-४-४५ हालत कल जैसी ही रही।

ता० १६-४-४५ हालत ठीक।

ता० १७-४-४५ हालत ठीक।

ता० १८-४-४५ को कविराजजीको मैंने फिर बुलाया तब उपद्रव सब शान्त थे सिर्फ शरीरमे कमजोरी के लक्षण विशेष दिखाई देते थे। इसको पहिले भी अग्निमान्द्यकी बीमारी थी। इसलिये इसको रक्तवृद्धिके लिये फिर औषध परिवर्तन किया।

प्रातः सायं		म० रा०
मकरध्वज	१ रत्ती	आग्निमुख चूर्ण
नवायस	२ „	जलमें
मुक्ता	$\frac{1}{2}$ „	
अर्जुनाभ्रक	१ „	
मधुमें		

१६-४-४५ हालत ठीक है। पथ्यमें कुछ बालीमें दूध मिलाकर दिया तथा फलका रस भी बढ़ाया गया।

२५-४-४५ पथ्यमें शाक यूष दोनों समय दिया।

२६-४-४५ परबल का भरता दिया।

२७-४-४५ फुलकाकी पपडी परवल सागसे दिया गया

२८-४-४५ पथ्य जच गया। दवा यही १ मास तक चालू रखी। रोगी बिल्कुल स्वस्थ हो गया।

नोटः—इस रोगीको देखनेके लिये मैं दिनमें ४ बार तथा हिरण्यमय सेन जी १ बार बड़े कविराज जी १ बार आते थे। हेक्सामिन, ग्लूकोज २५ शीशी इञ्जेक्सन १० रोज तक दिया गया था तथा रक्त परीक्षा भी रोज होती थी, परन्तु कभी भी रक्त परीक्षामें टाईफाइडके जर्मस नहीं निकले, जिस दिन पथ्य दिया उसी दिन टाईफाइड निकला। यह है रक्त परी-

क्षामें विश्वास करने का फल। डा० नलिरंजन सेनको भी निदानमें कविराजोंसे हार माननी पड़ी। लड़कीका पिता रामनाथजी गोइनका डाक्टरोंका परम भक्त था परन्तु लड़कीको माता तथा बाबू मदनलालजी डालमियां आयुर्वदके परम भक्त थे, तभी यह इलाज कविराजोंके द्वारा ही हुआ। ऐसे केश बहुत मुश्किलसे ही ठीक होते हैं। भगवान् धन्वन्तरीको कृपा तथा कविराज ज्योतिर्म्मयजीका अनुभव दोनों ही की कृपासे रुग्णा विलकुल निरोग हो गई। रामनाथजी गोइनकाको उस दिनके बाद ही आयुर्वेदमें भक्ति हुई, नहीं तो वह वैद्योंसे बहुत नफरत करता था। अब जब भी कोई बीमारी होती है तब ही कविराजी इलाज ही करवाता है।

मन्थरज्वरा क्रान्त रोगी

रोगीका नाम बाबूलाल जाती अग्र० ग्राम सीकर यहांका पता २० नं० चोरबगान, सेवाराम कालूराम भर्ती, ३ ७ ४२ रोग मन्थर ज्वर।

इसको ७, ८ रोजसे घर पर ज्वर होता था। ता० ३-७-४२ को यहां अस्पतालमे सुबह १०—२० पर भर्ती हुआ। उस समय ज्वर १०१ था टट्टी ५, ६ पतला होता था। छातीमें कफ तथा वेदना थी, खांसी आती थी। जी बहुत घबराता था। प्यास थी। प्रवेश के समय निम्न दवा चालूकी गई।

प्रातः साय		म० रा०
आनन्द भैरव	१ गो०	लवङ्गादि
लवङ्गादि	२ रत्ती	सिद्ध प्राणेश्वर
प्रवाल	१ ”	अर्क सोफसे
मुक्ता	१ ”	
भीमसेनी	½ ”	
नागरमोथा रस मधुमें		

छाती पर पुरातन घृतकी मालिश तालीशादि चन्द्रामृतका अवलेह मधुसे बार २ चाटनेको दिया। पथ्यमें जलवाली तथा लवङ्ग श्रृत जल पीनेको दिया गया। टट्टी पेशावके लिये सोते २ ही करनेको बोला। १ घरका आदमी भी पासमें रहा सायंकाल ज्वर ऊपरमें १०३ तक बढ़ा।

४-७-४२ हालत पूर्ववत

५-७-४२ हालत पूर्ववत

७-७-४२ हालत पूर्ववत्

८ ७ ४२ नींद बिल्कुल नहीं आई कुछ प्रलाप शुरू हो गया। इसलिये रातको ८ बजे वृ० चिन्तामणी २ रत्ती प्रस्वग्नार्कसे देनेको बोला था और रातको इस दवासे २–३ घन्टे नीद आई॥

६–७-४२ सुबह अचानक पसीना आकर ज्वर गिर गया याने ६६ व ६७ हो गया। तब जल्दी ही

मकर ध्वज	१ रत्ती
प्रवाल	१ "
मुक्ता	१ "
अर्जुनाभ्रक	१ "
मृगमद	१ "

का संमिश्रण कर पानरस मधुसे दिया जिससे कुछ हार्टमे ताकत आई, परन्तु ज्वर नही बढ़ा। तब मृगमदासव १ खुराक दी, तब ज्वर ६८ में हुआ। दिन भर ३–३ घन्टासे यही दवा चालू रखी, तब ज्वर सायं काल फिर १०२ हो गया रातको कल वाली दवाई नीदके लिये दी। रातको ३ घण्टे नीद भी आई।

१०-७-४२ सुबह देखने गया तब मालूम हुवा की कफकी वृद्धि हो गई। श्वास संख्या भी ३४ थी नाडी गति १३० थी तब दवा फिर परिवर्तन किया।

प्रातः सायं		म० रा०	
कस्तूरी भैरव	१ गो०	स्वल्फ लवंगादि	२ रत्ती
वृ० लवङ्गादि	२ रत्ती	महागन्धक	२ ”
मुक्ता	१ ”	अर्जुनाभ्रक	१ ”
प्रवाल	१ ”	मकर	१ ”
भीमसेनी	½ ”		
मोथा रस मधुमें		अजवाइन अर्क जलमें	

पेटपर कुछ आध्मान था दारुषट्क लेपको व्यवस्थाकी सायंकाल ज्वर १०३ हो गया। स्वेदका अवरोध हो गया कुछ प्रलाप अधिक होने लग गया तब रातको :—

चतुर्भुज रस १ रत्ती ताल छाड़ारस मधुसे दिलवाया।

११-७-४२ सुबह ज्वर १०१ था परन्तु प्रलाप बहुत करता था। रात भर नींद नहीं आई टट्टी विल्कुल नही हुई तथा पेशाव भी नहीं हुआ पेटपर भारीपन था, तब शिरके बाल कटवाकर पुराना घृत पानका रस मिलाकर लगवाया पेटपर बज्रक्षार, आयाम काञ्जिकमें मिलाकर पट्टी भिगोकर रखा जिससे २ घन्टा बाद खुलासा २ पेशाब हुये। सायंकाल ज्वर १०४ हो गया, प्रलापमे ही मारना, पोटना, दौडना, शुरू कर दिया तब शिर पर बर्फ की थैली लगवाई जिससे कुछ शान्ति मिली। दवा कलवाला ही चाल रखा।

१२-७-४२ हालत कल जैसे ही रही

१३-७-४२ हालत पूर्ववत।

१४-७-४२ हालत पूर्ववत

१५-७-४२ कफ निकलने लगा, प्रलाप भी कम हो गया तथा ज्वर भी प्रातः १०० हुआ सायं १०२ हुआ। टट्टी बिल्कुल नहीं हुआ। पेशाब ५ हुये।

१६-७-४२ हालत सुधरने लगगई ज्वर प्रातः ९९ सायं १०१।

१७-७-४२ ज्वर प्रातः ९८॥ मे सायं १००॥ भूख जोरसे लग आई इसलिये चिल्लाना शुरू कर दिया।

१८-७-४२ भूखके मारे फिर प्रलापकी तरह रोना शुरू कर दिया तब मोसम्मी का रस ऽ- दिया, थोड़ा छीना जल भी दिया जिससे कुछ शान्त होकर २ घंटे तक नींद आई।

१९-७-४२ तबियत ठीक रहीं तब अनारका रस और बढाया।

२० ७-४२ ज्वर प्रातः ९७ सायं ९८ उपद्रव सर्व शान्त पथ्यमें बार्ली में दूध मिलाकर दिया गया।

२३-७-४२ शाकयूषादिसे पथ्य चालू किया।

२४-७-४२ दवा पुरानी हटाकर निम्नलिखित चालू की। टट्टी ग्लेसरीनकी बत्तीसे ही लगानी पड़ी।

प्रातः सायं	म० रा०
मकर	चित्रकादि बटी
नवायस	जलसे
मुक्ता	
मधु से	

इस तरह से यह रोगी २७ दिनमें ठीक हुआ।

इस रोगीको अस्पतालमें जब तक अच्छी तरह से ताकत नहीं आई तब तक रखा गया। बिल्कुल स्वस्थ हो गया तब ही छुट्टी दी।

मन्थर ज्वर चिकित्सा

रोगीनाम सत्यनारायण, जाति गौड़ ब्राह्मण, उम्र १४ यहांका, पता ४७ नं० बड़तल्ला स्ट्रीट शंकरलाल मिश्र भर्ती ता० २६ ७ ४५

इसको ७-८ रोजसे घरपर ज्वर निरन्तर रहता था। यहां अस्पताल में ता० २६ ७-४५ को दिनमें १० बजे भर्ती हुआ तब निम्नलिखित लक्षण थे। ज्वर १० , डिग्री, टट्टी पतला होता था खांसी बहुत आती थी प्यास अधिक थी तथा तन्द्रा थी। तब प्रारम्भमें दवा यह चालू की।

प्रातः सायं		म० रा०	
ज्वरसंहार	२ रत्ती	चन्द्रामृत	१ गो०
लक्ष्मीनारायण रस	१ "	शृंग्यादि	६ रत्ती
प्रवाल	१ "	मधु से	
तुलसी रस मधुसे			

छातीमें पुरातन घृतकी मालिस। पथ्यमें जलवार्ली ٥।। यह व्यवस्था की गई। सायंकाल ज्वर १०२।। तक बढ़ा।

२७-७-४५ प्रातः ज्वर १०० सायं ज्वर १०२।।

२८-७-४५ हालत कल जैसी ही रही परन्तु कुछ प्रलाप शुरू हो गया, नींद बिल्कुल नहीं आई।

२६-७-४५ ज्वर प्रातः १०२ सायं १०३।। हो गया। हृदयमें दुर्वलता, श्वासकी गति ज्यादा, प्रलाप टट्टी ४-५ हुये तब दवा परिवर्तन की गई। याने चालू दवा ३-३ घन्टाके हेरफेरसे दी गई तथा रातको वृ० वातचिन्तामणि १ खु० प्रस्वप्नार्कसे दी गई।

३०-७-४७ रातको कुछ नींद आई सुवह ज्वर १०१ तथा साय १०३ तक बढ़ा परन्तु खांसी प्रलाप वैसे ही रहा। खांसीके लिये अष्टाङ्गावलेह बार २ में मधुसे चाटनेको दिया।

१-८-४५ ज्वर प्रातः १००।। सायं १०४

प्रलाप बहुत विशेष बढ़ गया मारना, पीटना, उठ २ कर भागना मुंहसे काटना आदि उपद्रव जोरसे हो गये। दोनों फेफड़ोंमें कफ व्याप्त हो गया कर्करायन शब्द सुनाई देता था। नाड़ीकी गति १३० श्वास गति ४० हो गई—तव औषध वदलना पड़ा।

प्रातः सायं	म० रा०
चतुर्भुज १ रत्ती	शृंग्यादि
लवङ्गादि २ रत्ती	शृंग
तालछाड़ा रस मधुसे	टंकण
	पिप्पली
	पाना रस मधुसे

अवलेह मालिस पूर्ववत चालू रखो।

२-८-४५ अवस्था पूर्ववत रही। कफ बहुत हो गया। प्रलाप बढ़ता ही गया। श्वासगति ५० हो गई नाड़ी १३० रही। प्रलाप इतना भयंकर हो गया कि तमाम वार्डके अस्पताल के रोगी रातभर नही सो सके ४ आदमियोंके पकड़ने पर भी काबूमें नही आता था। तव शिरपर वर्फकी थैली रखवाई, दवाईमें भी चतुर्भुजके साथ रसराज १ रत्ती मिलाकर तगरादि काथके अनुपानसे दिया जिससे प्रलाप कुछ कम हुआ।

		ज्वर प्रातः	सायं
३-८-४५	अवस्था पूर्ववत	१०१	१०३
४-८-४५	अवस्था कल जैसी ही रही	,, १००।।	,, १०२
५-८-४५	पूर्ववत	,, ९९	,, १०३
६ ,,	,,	,, १०१	,, १०३
७ ,,	,,	,, १०१	,, १०२।।
८ ,,	,,	,, ९७	हो गया।

९ ,, पसीना वहुत आया हाथ पैर ठन्डे हो गये नाडी वहुत कम-

जोर श्वासगति ५० हो गई टट्टी २ पतला हुआ तब औषध फिर परिवर्तन करना पड़ा।

नं० १

मकरध्वज १ रत्ती
प्रवाल १ „
अर्जुनाभ्र १ „
मृगमद १/२ „
मुक्ता १ „
भीमसेनी १/२ „
पानरस मधुमें

नं० २

कस्तूरीभूषण १ रत्ती
प्रवाल १ „
टंकण १ „
पिच्छ १ „
३-३ घन्टाके हेरफेरसे
दशमूलार्जुन अर्क के
अनुपानसे दिया गया।

बीच बीचमें मृगमदासव ४० बूंद जलमें मिलाकर दिया गया जिससे सायंकाल ५ बजे ज्वर फिर १०२ हो गया रातको। वृ० वातचिन्तामणि २ रत्ती जटामांसी फान्टके साथ दी गई।

१०-८-४५ प्रातः ज्वर फिर ९७ हो गया तब दवा कलवाली ही चालू रखी सायं ज्वर ऊपरमें १०० हुआ।

११-८-४५ ज्वर प्रातः ९८ सायं ९९ और हाल सब बदस्तूर प्रलापमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

१२-८-४५ ज्वर प्रातः ९८ परन्तु अतिसार बढ़ गया प्रलाप भी वैसे ही रहा तब ओषध फिर बदलना पड़ा श्वासकी गति भी ३० हो गई नाड़ी १२० रही हाथ पैर ठन्डे रहे।

प्रातः सायं

मकरध्वज १ रत्ती
३ सर्वांगसुन्दर १ „
लवङ्गादि १ „
प्रवाल १ „
मुक्ता १ „
मृगमद १/२ „
भीमसेनी १/२ „
(जायफललवङ्ग मिश्रीजलसे)

म० रा०

कृष्ण चतुर्मुख १ रत्ती
चन्द्रामृत १ गो०
सिर्फ वासक से
नींदके लिये
वृ० वातचिन्तामणि
पोटी० ब्रोमा० मिलाकर
दी गई

शिरपर पुरातन घृत पान रसके साथ मिलाकर मालिसकी तथा ऊपरसे वर्फकी थैली भी रखी।

१३-८-४५ ज्वर प्रातः ९८ सायं १०० और सब हालत कल जैसी ही रही।

१४-८-४५ ज्वर प्रातः ९७ सायं १०० और सब हालत कल जैसी ही टट्टी २ हुये।

१५-८-४५ ज्वर प्रातः ९७ सायं ९७ टट्टी रात दिनमें १० हुआ। प्रलाप शान्त नहीं हुआ तब शिरपर नीलोत्पलादि लेप कराया रातको वर्फ चालू रखी। इस तरहसे २१-८-४५ तक यही दवा चालू रखी तथा बीमारीका क्रम भी उसी तरह चालू रहा तब कृष्ण चतुर्मुखको हटाकर सन्निपात भैरव रस किया गया। तथा शिरपर घृतकुमारी स्वरसकी मालिस कराई जिससे कुछ ज्ञान बढ़ने लगा। टट्टी अभीतक ८-१० आतो ही रही प्रलाप शांत नहीं हुआ दांत पीसने लगा। पथ्यमे जलबार्ली तथा मिश्री जल देते थे बमन कर देता था तब म० रा० की दवा हटाकर लवंगादि सिद्ध प्राणेश्वर कृमि मुद्गर रस अर्क सौंफ अर्क पुदीना अजवाइनके अनुपानसे दिया। प्रातः सायंकी दवाका अनुपान भी वेलगिर्य्यादि क्वाथ किया गया इस तरहसे २१-८-४५ से १२-९-४५ तक यही दवा चालू रखा तब सब उपद्रव शान्त हो गये ज्वर तो इतने समयमें नीचेमे ९५ ऊपरमे ९७ तक ही रहा टट्टी कम हो गये परन्तु दस्त बिल्कुल नहीं मिटे तब रोगीकी हालत बहुत कमजोर समझकर बकरीका दूधबार्ली मे मिलाकर अल्पमात्रासे चालू किया गया तथा पथ्यमे भी केलाका झोल ही सबे प्रथम दिया इस तरह बहुत चेष्टा करनेपर यह रोगी ५१ दिनमें एकदम निरोग होकर अपने घर चला गया।

मन्थर ज्वराक्रान्तरोगी

रोगीका नाम लाजपत उम्र १५ जाती वैश्य

यहांका पता १० नं० ढाकापट्टी सूरजभान चन्द्रभान

इसको ६ दिनसे घर पर ही बिमारी हुआ था। डा० अमिय कुमार चटर्जीका इलाज चलता था। ६ दिन बाद मुझको भी बुलाकर दिखाया। उस समय ज्वर १०५ डिग्री था। टट्टी ८—७ रोज होती थी। खासी, प्यास, उल्टी, जीघबराता था। घरवालोंको भी बहुत चिन्ता हो रही थी। तब उन्होंने इलाज मुझको ही करने के लिये कहा और मैंने निम्नलिखित औषध व्यवस्था चालू की।

ता० ६-६-४५

प्रात सायं	म० रा०
सौभाग्यवटी १ गोली	लवङ्गादि १ गोली
लवङ्गादि १ गो०	सिद्धप्राणेश्वर १ गो० १ खु०
प्रवाल १ रत्ती १ पु०	अर्क सोफसे
नागरमोथा रस मिश्रीसे।	

ता० १०-६-४५

प्रतः सायं	म० रा०
सौभाग्य वटी १ गो०	मकरध्वज १ रत्ती
लवङ्गादि २ रत्ती	उ० सर्वांग सुन्दर २ ,,
मुक्ता १ ,,	लवङ्गादि १ ,,
प्रवाल १ ,,	अजवायनअर्क जलसे
नागर मोथारस मधुमे	

चन्द्रामृत ४ गो० टंकण १ रत्ती मधुसे वार २ चाटनेको दिया गया। पीनेके लिये लवङ्ग शृतजल पथ्यमें जलवार्ली ऽ॥

११-६-४५ ज्वर प्रातः १०३ सायं १०४ और हालत वैसेकी वैसी टट्टी ६ हुए।

१२-६-४५ हालत पूर्ववत्

१३-६-४५ हालत पूर्ववत्

१४-६-४५ कल जैसी ही

१५-६-४५ पेटमें, शिरसें, पैरोमें वेदना, पेशाब कम हुआ रात्रिको निद्रा नहीं आई। खांसी बढ़ गई तथा जुखाम फिर से हो गया; इससे गलेमें टॉन्सिल बढ़ गया। जिससे खासो हो गई, खसीके कारण १ मिनट भी शान्ति नहीं मिलती थी। इसलिये दवा फिर बदलना पड़ा यानि सौभाग्यवटीके जगह कस्तूरी भैरव दिया तथा तालीशादिचूर्ण चन्द्रामृतका अवलेह मधुसें बार २ चाटनेको दिया।

१६ ६ ४५ हालत कल जैसी रही। ज्वर प्रात १०२ सायं १०३ रहा। पानी पीनेमें कष्ट होने लगा तब गरम पानीमे नमक डालकर कुल्ला करवाया। धस्तूरादि घृतका मालिश छाती पर करवाया। टट्टी ७-८ बार पतला ही होता था।

१७ ६ ४५ कल जैसा ही रहा

१८ ६ ४५ कल जैसा ही रहा

१९ ६ ४५ को भी वैसा ही पेट पर आध्मान हो गया तथा शूल भी चलने लगी। तब घरवाले घबराये और बोले किसो की रायकी जरूरत समझे तो बुलावें। तब कविराज श्रीज्योतिर्मयसेनको बुलाया और उन्होंने देखकर निम्न लिखित व्यवस्था चालूकी।

नं० १	नं० २
प्रातः सायं	म० रा०
ज्वर संहार ३ रत्ती	वज्रक्षार
राम बाण १ गोली	अजवायन अर्क जलमें
मुक्ता १ र०	३-३ घंटेके हेर फेरसे दवा
प्रवाल १ र०	दिलवाई।
भीमसेनी ½ रत्ती	
षडङ्ग पानीय क्वाथसे	

पेट पर आध्मान शमनार्थ रांधनी (मकोय बीज) अजवाईन हींग ≈) भरकी पोटली बनाकर गरम करके सेक कराया। दिनमें ज्वर १०१ रहा था। रातको १०४ रहा।

२० ६ ४५ टट्टी ५—६ हुआ वेदना कम ज्वर प्रातः १०३ १२ बजे १०१ सायं १०४ रातको फिर १०२ रहा। इस तरहसे दिनमें २ बार घटा बढ़ी रही। २० ६ ४५—२४-६ ४५ तक यही दवा रखी गई। २४ ता० को पेटमें से २ कृमि गुदाके रास्ते टट्टीके साथ निकले, जिससे पेटका आध्मान मिट गया। पेशाब ५ ६ बार होने लग गया। परन्तु तन्द्रा बढ़ गई बहुत हिलाने डुलानेसे ज्ञान होता था। तब कविराजजी फिर आये और दवामें फिर उनकी रायसे परिवर्तन किया।

प्रातः सायं		म० रा०	
कस्तूरी भैरव	१ रत्ती	लवङ्गादि	१ रत्ती
लवङ्गादि	१ ,,	महागन्धक	२ ,,
मुक्ता	१ ,,	मकरध्वज	१ ,,
प्रवाल	१ ,,	अर्जुनाभ्र	१ ,,
भीमसेनी	½ ,,	भीमसेनी	१ ,,
निर्गुण्डीस्वरस मधुमें		अजवायन अर्क जलमें	

और सव व्यवस्था वैसीकी वैसी ही रखी।

२४-६-४५ से ३० ६ ४५ तक औषध व्यवस्था समान ही रखो हालतमे भी कोई तरहक परिवर्तन नहीं हुआ।

ता० १-७-४५ को रातको ६ वजे चतुर्भुज रस १ रत्ती। ताल छाड़ा स्वरस मधुसे दिया।

४-७-४५ तन्द्रामे कुछ कमी हुई ज्वर दिनमे २ वार घटता वढ़ता था टट्टी बिल्कुल नहीं हुई।

५-७-४५ हालत पूर्ववत्।

६-७-४५ „

७-७-४५ अचानक पसीना आकर ज्वर कम हो गया एतदर्थ मृत्संजोवनी सुरामृगमदासव मिलाकर दिया ज्वर फिर बढ़ गया याने ९९ से १०१ हो गया परन्तु टट्टी फिर पतला हुआ जिसके साथमे कुछ लालिमा दिखलाई दी।

८-७-४५ टट्टी रक्तका बहुत जोरसे हुआ ज्वर भी उतरकर ९७ मे आ गया पसीना आकर शरीर ठन्डा हो गया तब घरवाले बहुत घबराये कविराज जीको बुलाने गये तब कविराजजी खुद बीमार थे। आ नहीं सके तब २-३ डाक्टरोंको भी बुलवाया वे लोग भी देखकर घबरा गये और केशको नहीं सम्हाला तब मैंने घरवालोंको धोरज बंधवाया और दवा चालू सब बन्द करके दूसरी दवाका बन्दोवस्त किया जिससे बहुत अच्छी सफलता मिली दवा निम्नलिखित दी गई।

औषध व्यवसाय

प्रातः सायं		म० रा०	
शोणितार्गल रस	१ गो०	मकरध्वज	१ रत्ती
मुक्ता	१ रत्ती	जवाहिरमोहरा	१ रत्ती
प्रवाल	१ ,,	खूनयोग	१ मा०
भीमसेनी	१ ,,	कर्पूररस	१ रत्ती
कहरवा	४ ,,	वासक स्वरस मिश्रीसे	
आयापान स्वरस मिश्रीसे			

पेटपर बर्फकी थैली रखवाई तथा शु० स्फटिक चूर्णको ठन्डे पानीमें मिलाकर केथेटर रबड़ नलके द्वारा गुदाके रास्तेसे पेटमे पहुंचाया।

९-७-४५ ज्वर ९९ हो गया परन्तु रातभर टट्टी कोई नही हुयी पेशाब खुलासा होता था इस तरहसे इस रोगीको ता० ९-७-४५ से ता० १४-७-४५ तक इसी दवापर रखा।

१५-७-४५ रोगीकी हालत बिल्कुल ठीक ज्वर भी प्रातः ९८ में, सायं ९९ मे ही रहता था उपद्रव सब शान्त थे।

१६-७-४५ पथ्यमे बकरीका दूध ऽ-जलवाली मिलाकर दिया हालत ठीक

१७-७-४५ हालत सब ठीक ग्लेसरीनकी बत्ती लगाकर टट्टी कराई जिससे १ गाठवाली टट्टी हुई रक्त बिल्कुल नहीं आया ज्वर अभी तक होता था।

१८-७-४५ ज्वर शमनार्थ औषध परिवर्तन करना पडा

प्रातः सायं	म० रा०
वृ० सर्वज्वर हरलौह १ रत्ती	वज्रक्षार
मुक्ता १ रत्ती	अर्क सुदर्शन
प्रवाल १ ,,	
हारश्रृंगार पत्तारस मधुमे	

दूध धीरे २ बढ़ाते गये तथा अनार मौसमीका रस भी चालू किया गया। इस तरहसे ता० १८ ७ ४५ को ता० २५ ७ ४५ तक इसी दवाको चालू रखा गया। इसके वीच में ज्वर भी बिल्कुल उतर गया।

२७ ७ ४५ से पथ्य चालू कर दिया।

इस तरह इस रोगोकी चिकित्सामें ५१ दिन लगे वीचमें इसने फिर कुपथ्य कर लिया जिससे फिर ज्वर हो गया था। इसलिये इसको इतना समय लगा।

मन्थरज्वरमें दी जानेवाली औषधियोंका विवरण

संजीवनी वटी

विडङ्गं नागर कृष्णा पथ्यामलक विभीतिकौ।
वचा गुडूची भल्लातं सविषं चात्रयोजयेत्॥
एतानि सम भागानि गोमूत्रणैव पेषयेत्।
गुञ्जाभा गुटिका कार्या दद्यादार्द्रकजै रसैः॥
एकामजीर्णे गुल्मेषु द्वेविसूच्यांश्च दापयेत्।
तिस्रः स्युः सर्पदंष्ट्रेषु चतस्रः सान्निपातके॥
वटी संजीवनी नाम्ना संजीवयति मानवम्।

रसयोग

वायबिडङ्ग, सोंठ, पीपल छोटी, हरड छाल, आमला, वहेड़ा वच, गिलोय, शुद्धभिलावा, शु० बछनाग, सम भाग लेकर वारीक चूर्ण करके ताजी गिलोय और बछनागको २ ३ बार गोमूत्रमें घोटकर अन्य चीजे मिलावे तथा अच्छी तरहसे घोटकर १-१ रत्ती की गोली बनाकर रख छोड़े। इसमेंसे एक गोली अदरख रसके साथ अजीर्ण और गुल्ममें देवे। हैजेमें २ गोली और सर्प काटने पर ३

गोली सन्निपातमें ४ गोलियोंकी मात्रा देनेसे मनुष्यको जीवन दान देती है। संजीवनीमें इतनी विशेषता क्यों है? उत्तर—इसमें वत्सनाभ विष मिलता है। वत्सनाभमें उष्ण, स्वेदल और ज्वरघ्न गुण होनेसे भीतर बढ़ा हुआ दोष पसीना द्वारा एवं मूत्र द्वारा बाहर निकल जाता है; आमका शोषण होता है। इस कारणसे अजीर्णादि रोग दूर हो जाते है। एवं स्थावर जंगमादि विष एक दूसरेके प्रतिद्वन्दि होते हैं इसलिये विष निर्मित इस औषधि द्वारा सर्प विषका शमन हो जाता है। विसूचीकामें वमन और अतिसार द्वारा जलीयांश अधिक निकल जानेके अतिरिक्त कोष्ठके भीतर उष्णता बढ़ जानेके कारण प्रायः मूत्रोत्पत्ति नहीं होती। इसके सेवनसे पेशाव लानेका कार्य हो जाता है। यह मूत्रल गुण भी वच्छनाग के कारण ही होता है। वछनाग भिलावा वच, त्रिकटुका संमिश्रण होनेसे इस गुटिकामे दीपन पाचन वातश्लेष्म हर गुण हो जाते हैं। अतः यही वटी आम कफका शोषण करके शूल तथा अजीर्णको मिटा देती है। तथा अग्निको प्रदीप्त करती है। इस प्रयोगमे जो त्रिफला वायविडङ्ग, गिलोय, गोमूत्रका संयोग है उसमे त्रिफला रुचिकर और मल शोधक। वायविडंग जन्तुघ्न और गिलोय त्रिदोषघ्न और गोमूत्र अग्नि दीपक मल मूत्र शोधक कफघ्न है। इस तरहसे साधारण द्रव्यों द्वारा निर्मित होते हुए भी यह वटी दिव्य प्रभावशाली सिद्ध हुई। इसको हृददौर्बल्यावस्थामे नहीं देवे।

लक्ष्मी नारायण रसः

शुद्ध गन्धक मेतच्च टंकणं विष हिङ्गुलम्।
राहिण्यतिविषा कृष्णा वत्सकाभ्रक सैन्धवम्॥
एतानि सम भागानि खल्वमध्ये विजिः क्षिपेत्।
दन्तिद्रावैः फलद्रावै र्मर्दयेच्च दिनत्रयम्॥

बल्लद्वयां वटीं कृत्वा आर्द्रकस्य जलैर्दद्त ।
दुष्टज्वरे सन्निपाते विसूच्यां विषमज्वरे
अतिसारे ग्रहण्याश्च रक्तामे मेह शूलजित् ।
सूतिका वात दोषाश्च लंकेश मिव राघव ॥

शु० हिंगलु, अभ्रक भस्म, शु० गन्धक, सुहागा, शु० वछनाग निर्गुन्डीबीज, अतीश, पीपल, कूडाछाल, सैन्धव नमक प्रत्येक समभाग लेकर दन्तीमूल क्वाथ त्रिफला क्वाथकी ३-३ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोली बना लेवे ।

उपयोग १ २ गोली अदरख रस मधुसे देवे ।

यह रस दुष्ट ज्वर, सन्निपात, विसूचिक, विषम ज्वर, अतिसार, ग्रहणी, रक्तातिसार, प्रमेह, शूल, सूतिका रोग वातव्याधि, बालकोंके धनुष वात रोगको दूर करता है। कभी-कभी लक्ष्मी नारायण रसके देनेसे अतिप्रस्वेद होता है। इस कारणसे डर पैदा हो जाता है। ऐसे समय प्रवाल भस्म मुक्ताभस्मका संयोग कर देना चाहिये। इस रसका कार्य विशेषत: आन्त्रकृत्, और प्लीहा, रस, रक्त, मांस, त्वचा पर होता है। यह पित्तशमनके किये उत्तम योग है।

लक्ष्मीविलासरस रसयोगसागर

पलंकृष्णाभ्र चूर्णस्य तदर्धौ रसगन्धकौ ।
तदर्धचन्द्रांशस्य जाती कोष फले तथा ॥
वृद्धदारकबीजञ्च बीजं धत्तूरकस्य च ।
त्रैलोक्यविजयाबीजं विदारीमूल मेव च ॥
नारायणी तथा नागवला चातिबलातथा ।
बीजं गोक्षुरकस्यापि नैचुलं बीज मेव च ॥

एतेषां कार्षिकं चूर्णं पर्णपत्र रसं पुनः ।
निक्षिप्य वटिका कार्या त्रिगुञ्जाफलमानतः ॥
निहन्ति सन्निपातोत्थान गदान्घोराश्चतुर्विधान् ।
वातोत्थान पैत्तिकांश्चैव नास्त्यत्र नियमः क्वचित् ॥

अभ्रक भस्म ४ तो०, शु० पारद २ तो०, शु० गन्धक २ तो०, कपूर १ तो०, जायफल १ तो०, जावित्री १ तो०, विधायरावीज १ तो०, धतूर बीज १ तो०, गाजेका बीज १ तो०, विदारीकन्द १ तो०, शतावरी १ तो०, नागवला १ तो०, अतिवला १ तो०, गोखरू १ तो०, जलवेत १ निर्माण विधि पहले पारे और गन्धककी कजली करके अभ्रक मिलावे तथा काष्टोपधियोको कुटवा कर कपड छान चूर्ण करके मिला देवें। फिर नागर पानके रसमें १२ घन्टा खरल करके १-१ रत्तीकी गोली बना लेवें मात्रा १-२ गोली दिनमे ३ समय दूध दही, सुरा या अन्य रोगानुसार अनुपानसे प्रयोग करे। वह सब प्रकारके सन्निपातको तथा १८ तरहके कुष्ट ० प्रमेह नासूर दुष्टव्रण, गुदाके रोग, गल रोग, अन्त्रवृद्धि, दारुण अतिसार आमवात, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, उरो रोग, कर्ण नासिका, मुख, कान, नाक, नेत्र, खांसो, पीनस, राजयक्ष्मा, अर्श, मोटापन, कुक्षीशूल, शिर शूल, प्रसूता रोग, सकल शूल आदि रोगोंको ध्वजभंगको नष्ट करता है। यह आयुर्वेदीय रसोंमे एक प्रसिद्ध औषधि है। यह उत्तम हृदयोत्तेजक है। जिस तरह ब्राण्डी हृदयमे उत्तेजना पैदा करती है और बादमेअसर उतरनेपर जैसा अवसाद करती है। उस तरह इस रसके सेवनसे जो उत्तजना होती है वह अवसादकताको प्राप्त नहीं होती हे इसमे और ब्राण्डीमे यही विशेपता है।

इस औपधसे नाड़ी सुधरनेके बाद दीर्घ कालतक सुधरी ही रहती है। न्युमोनिया और श्लैष्मिक रोगोंमे निर्बलता सम्बन्धी संशय होने पर इस रसका प्रयोग करनेसे उत्तम कार्य होता है। आवश्यकतानुसार

इस रसका सेवन करानेसे कासश्वास ज्वराधिक्य, फुफ्फुसावरण प्रदाह, नाडी और हृदयका स्पन्दन, अधिक वेदना इत्यादिक विकार दूर हो जाते है। मन्थर ज्वरमें हृदयको क्षीणता, सर्वाङ्गशूल, भ्रम, प्रलाप, मोह. शुष्ककास आदि लक्षण हो, अथवा ज्वरकी मियाद पूरी होनेपर भी रोग वैसाका वैसा रहे तो, इसके सेवनसे थोड़े ही समयमें स्वस्थ हो जाता है, वातश्लेष्म ज्वरमें इस दवासे वहुत ही अच्छा फायदा होता है। हृदयकी अनियमित गति होनेसे व्याकुलता हो जाती है श्वासावरोधसा प्रतीत होता है तथा हाथ पैर ठन्डे नाडी मन्द क्षीण, सर्वाङ्गमें विशेषतः कपालपर प्रस्वेद आदि लक्षण हो जाते हैं। ऐसी अवस्थामें भी इस रसके सेवनसे वहुत ही फायदा होता है। इस रसका उपयोग विशेषतः वात कफ प्रधान दोषवाली बीमारियोंपर हृदावरण, धमनियोंमें शिराओंमें फुफुस और फुफ्फुसावरण इन सवपर होता है।

कस्तूरी भैरव (वृहत्)

मृगमदशशिसूर्या धातकी शूकशिम्बि।
रजतकनक मुक्ता विद्रुमं लौह पाठे॥
कृमिरिपुघन विश्वा वारितालाभ्र धात्री।
रविदल रसपिष्टं भैरवःकादिपूर्वः॥
कस्तूरी भैरवः ख्यातः सर्वज्वरविनाशनः।
आर्द्रकस्यरसैःपेयो विषम ज्वरनाशनः॥
द्वन्द्वजान्भौतिकान्चापि ज्वरान्कामादि सम्भवान्।
आभिचारिक कृतांश्चैव तथा शत्रुकृतान् पुनः॥
विल्वचूर्णैर्जीरकाभ्यां मधुना सहपानतः।
आमातिसारं ग्रहणीं ज्वरातीसार मेव च॥

अग्निदीप्ति करः शान्तः कास रोगनिकृन्तनः ।
क्षपयेत् भक्षणादेव मेहरोगं हलीमकम् ॥
जीर्णज्वरं नूतनं वा द्विकालीनश्चसन्ततम् ।
आक्षेपकं भौतिकंचापि हन्ति सर्वान्विशेषतः ॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकं वा त्र्याहिकं चतुराहिकम् ।
पाञ्चाहिकं वा षाष्टाहं पाक्षिकं मासिकं पुनः ॥
सर्वान्ज्वरान्निहन्त्याशुभक्षणादार्द्रक द्रवैः ।

रसयोगसागर

कस्तूरी १ तो०, कपूर १ तो०, ताम्र भस्म, १ तो०, धायफूल १ तो०, कौंछवीज १ तो०, चान्दी भस्म १ तो०, मुक्ता भस्म १ तो०, प्रवालभस्म १ तो०, लौहभस्म १ तो०, पाठा १ तो०, विडङ्ग १ तो०, नागरमोथा १ सोंठ १ तो०, सुगन्धवाला १ तो०, हरिताल १ तो०, अभ्रक १ तो०, आंवला १ तो० ।

निर्माण विधि ये सब समान भाग लेकर कूटनेवाली चीजोंको कूट कपडछान करके खरलमें डालकर आकके पके हुये पत्तोंके रससे २-३ रोज मर्दन करके १-२ रत्तीकी गोली बनाकर रख लेवें। अदरख रसके साथ सेवन करानेसे सब प्रकारके ज्वर दूर हो जाते है । जीरा, वील और मधुके साथ देनेसे आमतिसार संग्रहणी और ज्वरातिसारको दूर करता है । अग्निको दीप्तकर खांसी, प्रमेह, हलीमक, जीर्णज्वर सतत नवज्वर आक्षेपादि सब ज्वरोंको नष्ट करता है। यह ज्वरकी तरुणावस्थामें आमदोष पाचनार्थ और ज्वर शमनके लिये दिया जाता है। इस रस के सेवनसे १४ दिनका प्रलापक सन्निपात तथा २१ दिनका मोतीझरा आदि त्रिदोषजनित बीमारियोंमें रोगीकी शक्ति कायम रहती है और दोष पाचन होकर स्वतः ही ज्वर चला जाता है। जिन रोगियोको

जीवनकी आशा छूट गई हो, ऐसे मोतीझराके अनेक रोगी औषधिके सेवनसे सुधर गये हैं। यह रस सन्निपातमें प्रलाप, शो वस्था निद्रानाश या वातकोपको दबानेमें श्रेष्ठ कार्य करता है। प्रस जन्यज्वर, धनुर्वात, कम्प, श्वास, कास और हृदयावरोधको दूर कर है, हृदयको मजबूत बनाता है।

सौभाग्यवटी

सौभाग्यामृतजीरपञ्चलवण व्योषाभयाऽक्षामलाः ;
निश्चन्द्राभ्रकशुद्धगन्धकरसानेकीकृतान्भावयेत्।
निर्गुण्डीयुगभृंगराजक वृषाऽपामार्गपत्रोल्लसत्
प्रत्येकस्वरसेन सिद्धगुटिका हन्ति त्रिदोषोदयम् ॥
येषांशीतमतीव देह मखिलं स्वेद द्रवार्द्रीकृतम्
निद्राघोरतरा समस्त करण व्यामोह मुग्धंमनः ॥
शूलश्वास बलास कास सहितं मूर्च्छाऽरुचितृड्ज्वरं।
तेषां वै परिहृत्यमृत्युवदनात्प्रत्यानयेज्जीवनम् ॥

भूना सुहागा, शु० वच्छनाग, जीरा, पांचो नमक, सोंठ, मि पीपल, हरड़, बहेड़ा, आमला, अभ्रक भस्म, शु० गन्धक, शु० प समभाग लेकर कज्जलीको तैयार करके एक साथ मिलाकर निर्गु जल भंगरा, अडूसा अपामार्ग स्वरसमें १-१ दिन मर्दन कर ५-५ रत्ती गोली बनाकर रख छोड़े। उचित अनुपानसे प्रयोग करनेसे पूर्व सन्निपात, शूल, कफ, कास, मूर्च्छा, अरुचि, तृषा और ज्वरको नष्ट करताहै। गई हुई चेतना फिर आ जाती है।

चतुर्भुज रसः

मृतसूतस्य भागौद्वौ भागैकं हेम भस्मकम्।
शिला कस्तूरिकातालं प्रत्येक हेम तुल्यकम् ॥

सर्वं खल्वतले क्षिप्त्वा कन्यया मर्दयेद्दिनम् ।
एरण्ड पत्रैरावेष्ट्य धान्य गर्भे दिनत्रयम् ॥
संस्थाप्यचतदुद्धृत्य सर्वा रोगेषु योजयेत् ।
एतद्रसायनवरं त्रिफला मधुमर्दितम् ॥
तद्यथाग्नि वलं खादेत् वली पलित नाशनम् ।
अपस्मारे ज्वरेकासे शोषे मन्दानले क्षये ॥
हस्तकम्पे शिरः कम्पे गात्र कम्पे विशेषतः ।
वात पित्त समुत्थाञ्च कफजान्नाशयेध्द्रुवम् ॥
सर्वौषधिप्रयोगैर्ये व्याधयोनप्रसाधिताः ।
कर्मभिः पञ्चभिश्चैव मन्त्रौषधि प्रयोगतः ॥
सर्वांस्तान्नाशायत्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ।
चतुर्भुजरसो नाम महेशेन प्रकाशितः ॥

रस सिन्दूर, २ तो०, सुवर्ण भस्म १ तो०, शु० मैनशील १ तो०, कस्तूरी १ तो०, शु० हरिताल १ तो०, सर्वकोपचारीक पीसकर घृतकुमारी रससे मर्दन करे फिर गोला बनाकर एरण्डके पत्तोमे अच्छी तरहसे लपेटकर धान्यराशीमे तीन रोज तक रख देवे। बादमे निकालकर तीन तीन रत्तोकी गोली बनावे। इसमेंसे ३ रत्ती त्रिफलाजल मधुके साथ खानेसे वलि पलित, अपस्मार, ज्वर, खांसी, श्वास शोष, मन्दाग्नि, कफ, हाथ पैर शिरका कांपना, वातज कफज रोग नष्ट हो जाते है। जो रोग बहुतसी दवाओंके सेवनसे पञ्चकर्मसे और मन्त्रौषधियोके प्रयोग से नष्ट न हुये हों उन रोगोंको यह रस ऐसे नष्ट करता जैसे वृक्षोंको नष्ट करती है।

महागन्धक (उ० सर्वाङ्ग सुन्दर)

रसगन्धकयोः कर्षं ग्राह्यमेकं सुशोधितम् ।
ततः कज्जलिकां कृत्वा मृदुपाकेन साधयेत् ॥
जात्या फलं तथा कोशो लवङ्गारिष्ट पत्रके ।
एतेषां कर्षमात्रंहि तोयेन सह मर्दयेत् ॥
शुक्ताशृहे ततः स्थाप्य पुट पाकेन साधयेत् ।
गुञ्जाषट्क प्रमाणेन तोयेन सह भक्षयेत् ॥
महागन्धक मेतद्धि सर्वातीसार नाशनम् ।
दुर्वारं ग्रहणी रोगं जयेच्चैव प्रवाहिकाम् ॥

भैषज्य रत्नावली

द्रव्य और निर्माण विधि - शु० पारद, शु० गन्धक, जायफल, जावित्री लौंग, और नीमकी ताजी पत्ती, प्रत्येक समभाग। प्रथम पारे गन्धककी कज्जली करके उसको घी से चुपड़ी हुई लोहेकी कडछीमें रखकर कोयलेकी मन्दी आंचपर कज्जली सब पिघल जाय इतनी गरम करके नीचे उतारकर रख ले ठन्डी होनेपर निकाल कर खरलमें डाले और साफ की हुई नीमकी पत्ती डालकर खूब मर्दन करे। पीछे अन्य द्रव्योंका कपड़ेसे छाना हुआ चूर्ण डालकर जलसे ६ घन्टातक मर्दन करे। पीछे गोला बनाकर २ सीपोंमें रखकर कपड़ मिट्टीकर के पुटपाक विधिसे पकावे, तयार होनेपर २-३ रत्तीकी गोली बना लेवे।

मात्रा १-२ गोली अनुपान जल, मीठे अनारका रस, तण्डुलोदक, नागरमोथा स्वरससे अथवा अतिसारहर क्वाथसे देवे।

गुण और उपयोग—यह उत्तम, पाचन, दीपन और ग्राही योग है। अतिसार, ज्वरातिसार, ग्रहणी, प्रवाहिका रोगोमे इससे बहुत ही अच्छा फायदा होता है। इसको लाखों रोगियोपर परीक्षा करके देखा गया है।

सिद्ध प्राणेश्वरो रसः

गन्धेशाभ्रं पृथग्वेद भागमन्यच्च भागिकम् ।
स्वर्जिटंक यवक्षारः पञ्चैव लवणानिच ॥
वराव्योपेन्द्र वीजानि द्विजीराग्नि यमानिका ।
सहिङ्गु वीजसारञ्च शतपुष्पा सुचूर्णिताः ॥
वल्लैकं भक्षयेदस्य नागवल्ली दलैर्युतम् ।
उष्णोदका नुपानञ्च दद्यात्तत्र पलत्रयम् ॥
ज्वरातिसारे ऽतिसृतौ केवलेवा ज्वरेऽपिच ।
घोरे त्रिदोपजे रोगे ग्रहण्यामसृगामये ॥
वातरोगेच शूलेच शूलेच परिणामजे ।
सिद्धः प्राणेश्वरः सूतः प्राणिनांप्राणदायकः ॥

शु० गन्धक ४ तो०, शु० पारद ४ तो०, अभ्रक भस्म ४ तो०, सज्जीक्षार १ तो०, शु० सुहागा १ तो०, यवक्षार १ तो०, पांचों नमक मिलित ५ तोला, त्रिफला ३ तो०, त्रिकटु ३ तो०, इन्द्रजौ १ तो०, सफेद जीरा १ तो०, कालाजीरा १ तो०, चित्रकमूल १ तो०, अजवाईन १ तो०, शु० हिंगु १ तो०, वायविडङ्ग १ तो०, सौंफ १ तो० ।

निर्माण विधि—प्रथम पारद गन्धककी कज्जली वनाकर अभ्रकभस्म मिला देवे । वादमें अन्य द्रव्योका कपड़ छान किया हुआ चूर्ण मिलाकर जलमे मदन करके २-२ रत्तीको गोली बनाकर सुखा देवे ।

मात्रा १ वटी

अनुपान-पान रससे या गरम जलसे प्रयोग करे। गुण और उपयोग-ज्वरातिसार, अतिसार, ज्वर सन्निपातातिसार, ग्रहणी रोग, रक्तातिसार परिणामज शूल अथवा शूलमें अच्छा फायदा होता है ।

मकरध्वज (चन्द्रोदय) रस

पलं मृदु स्वर्णदलं रसेन्द्रात् पलाष्टकं षोडश गन्धकस्य,
शोणैः सुकार्पासभवप्रसूनैर्दिनं विमर्द्याथ कुमारिकाद्भिः ।
सत्काचकुम्भे निहितं सुगाढे मृत्कर्पटैस्तद्दिवसत्रयञ्च,
पचेत् क्रमाग्नौ सिकताख्य यन्त्रे ततोरसः पल्लवरागरम्यः ॥

तलस्थ स्वर्ण भागः स्यादेकष्टौ मकरध्वजात् ।
तथैवभाग देयाः स्यु र्लवङ्गात् केशरस्तथा ॥
जातिफलाच्च कर्पूरा देकस्तु मृगनाभितः ।
श्लक्ष्ण पिष्टो रसोनाम जायते मकरध्वजः ॥
वल्लं वल्लं द्वयं चाथ ताम्बुली दलसयुतम् ।
भक्षयेन्मधुरस्निग्धं कटुकाम्ल विवर्जितम् ॥
करोत्यग्नि वलंपुंसां जरा व्याधि विनाशनः ।
मेधायुकान्ति जननो मकरध्वज संज्ञकः ॥

द्रव्य और निर्माण विधि--शु० पारद ३२ तोला सोनेके तबक ४ तोला लेवे । प्रथम पारदको खरलमें डाल उसमें सोनेके वर्क एक एक करके मिलाता जावे, फिर नीबूके रसमें एक दिन मर्दन करे। दूसरे दिन उसको गरम जलसे धोकर शुद्ध गन्धक ६४ तोला या ३२ तोला मिलाकर कज्जली करे। पीछे एक दिन लाल फूलोंवाली कपासके फूलोंके स्वरस में तथा ग्वार पाठेके रसमे एक दिन मर्दन करके सुखा लेवे। पीछे एक अच्छी आतशी शीशीको या समतलवाली काले रंगकी ब्राण्डी जिसमें आती है उस शीशीमें ७ मुल्तानी मट्टीमें कपड़ा मिलाकर याने कपड़ मिट्टी करके सुखाकर कज्जली भर देवे। बादमे लोहेकी या मट्टीकी मजबूत नांद या घड़ेमे शीशीके गले तक बालू मट्टी

भर चूल्हेपर चढ़ा देवे और नीचे क्रमसे मन्द मध्य और तीक्ष्ण अग्नि दे। इस क्रियामें प्रथम गन्धक ऊपर आने लगेगा। गन्धक गलेमें जमकर शीशीका मुखबन्द न हो जाय, इसलिये लोहेकी सलाईको गरम करके शीशीके अन्दर गले तक फिराता रहे। जब सब गन्धक जल जाय तब शीशीके मुखपर खड़िया मिट्टी या मुल्तानी मिट्टीकी डाट बनाकर लगा देवे और ऊपरसे गुड या शहदमें मिला हुआ चूना लगा दे पीछे १२ घन्टेतक तीव्र अग्नि दे। बादमें नया लकड़ी देना बन्द कर दे और आपसे आप ठन्डा हो जाय तब शीशीको निकालकर कपड़ मिट्टी को हटा, शीशीके मध्य भागमें मिट्टीके तेलमे भिगोई हुई सूतलीको लपेटकर दियसलाई लगादे और जलनेपर ठन्ढे पानीका छींटा देकर तोड दे। पीछे शीशीके गलेमें लगे हुये मकरध्वजको सावधानीसे निकाल ले और तलभागमे बचे हुये सोनेको भस्म क्रियासे भस्म बनाकर काममें लावे। इस रसको चन्द्रोदय रस कहते है।

सूचना शीशीमें औषधि तीसरे हिस्सेसे आधे भागसे रहे उतनी ही भरे। ज्यादा भरनेसे उफान आकर कभी कभी औषध निकल जाता है। कज्जली सुखाकर ही डाले गीली औषधिसे शीशी फूटनेका भय रहता है। लकडी बबूलकी सूखी हुई रखे इसके बनानेमे ५) मन लकड़ी लगती है पहले दिन १) मन दूसरे दिन १॥) मन तीसरे दिन २॥) मन यह साधारण अनुमान है।

शलाकासे बार २ में तलस्थ द्रव्यको न चलानेसे पाकमें विलम्ब होता है। औषध पाकमे जल्दबाजी नही करे इससे गुणमे न्यूनता आती है। औषधि पाकका निर्णय करनेके लिये तप्तशलाकाको चलाकर बाहर निकालकर तुरन्त सूंघना चाहिये। यदि गन्धककी गन्ध बिल्कुल न आती हो समझ लेना कि औषधि पाक हो गया है। दूसरी विधि पहिचाननेको यह है—औषध पक जानेपर तप्तशलाका बाहर निकालने पर लाल अग्निकी लपट निकलती है। गन्धक रहनेपर नीले रंगकी

लपट निकलती है। पाक होते ही डाट लगा देवें अन्यथा पारद उड़ जायगा। कोयलेमें पकाई हुई दवामें गुण न्यून रहता है।

सेवन विधि

चन्द्रोदय ४ तो०, कपूर भीमसेनी ४ तो०, को खरलमें पीसकर बादमें जायफल ३ मा०, समुद्रशोष, ३ मा०, विधायरा वीज ३ माशा, लौंग ३ माशा, कस्तूरी ३ मा०, मिलाकर पीसकर शीशीमें रख लेवे।

मात्रा—मिश्रणकी १-३ रत्ती प्रातः अथवा सायं २ वार मधुमें मिलाकर चाटे या पानरस मधुमें देवे अथवा गोली बनाकर खावे ऊपर से दूध पीवे। ज्वरादि रोगोंमें हृदयपौष्टिक देना हो तो आधेसे एक रत्ती तक योग्य अनुपानके साथ देवे।

उपयोग—यह पूर्ण चन्द्रोदय रस हृदयपौष्टिक, वाजीकरण, रसायन वल्य रक्तप्रसादक, जन्तुघ्न, सेन्द्रिय विषशामक और योगवाही है। राजयक्ष्मा, कफ, वायु प्रकोप जन्यव्याधियोंमें और शुक्रकी निर्बलतामें अत्यन्त लाभदायक है। वीर्यश्राव, स्वप्नदोष, धातुक्षीणता, मानसिक कमजोरी, नपुंसकता, हृदयकी कमजोरी, जीर्णज्वर, क्षय, कास, श्वास, विषविकार, मन्दाग्नि, अपस्मार आदि रोगों बहुत शीघ्र ही दूर करनेकी क्षमता रखता है और आयुको बढ़ाता है। इस रसको रतिकालमें सेवन किया जावे तो मदोन्मत्त स्त्रियोंके गर्वको चूर्ण कर देता है। इसके सेवनके समय घृत ओटाया हुआ दूध, मांस रस उड़द, अथवा मावेके बने पदार्थ पथ्य है। स्वर्णघटित औषधियां और स्वर्णभस्म हृदयको ताकत देती हैं और रक्तको निर्विष बनाती हैं। सुवर्णयोगवाही होता है इसलिये राजयक्ष्मा प्रभृति कृमिजन्य रोगोंमें इससे बहुत ही अच्छा फायदा होता है। केवल राजयक्ष्माका संशय होते ही इसका सेवन कराया जाय तो निःसन्देह फायदा होता है।

ब्राह्मी वटी

ब्राह्मी १ तो०, जायफल १ तो०, जावित्री १ तो०, लवङ्ग १ तो०, कूठ १ तो०, स्याहजीरा १ तो०, पीपल १ तो०, अगर १ तो०, दालचीनी १ तो०, असगन्ध १ तो०, अकरकरा १ तो०, धनिया १ तो०, वंशलोचन १ तो०, इलायची छो० १ तो०, शंखाहुली १ तो०, सौंफ १ तो०, श्वेतचन्दन १ तो०, केशर १ तो०, कस्तूरी १ तो०, प्रवाल १ तो०, अम्बर १ तोला, मोती १ तो०, चुन्नी १ तोला अभ्रकभस्म १ तोला, चन्द्रोदय १ तोला।

इन सबको समान भाग लेकर काष्ठौषधियोंका कपडछान चूर्ण बनालेवें। खरलमें डालकर अन्य सब औषधि मिलाकर ब्राह्मीस्वरस या क्वाथकी ३ भावना देकर चनेके बराबर गोली बनालेवें।

मात्रा—१ से २ गोली उचित अनुपानके साथ

उपयोग—मोतीझरे के उपद्रव कारणोमें जैसे बैचेनी, प्रलाप, अतिसार, उदर शूल आदि लक्षण हों तथा हृदयमें कमजोरी हो उस समय देनेसे हृदय और मस्तिष्ककी रक्षा करती है। वात प्रधान, कफ प्रधान सन्निपातमें दोषोंके पचनेमे सहायता पहुंचाती है।

हेमगर्भ रस

रसस्य भागाश्चत्वार स्तावन्तः कनकस्यच।
तयोश्च पिष्टिकां कृत्वा गन्धोद्वादश भागिकः॥
कुर्यात् कज्जलिकां तेषां मुक्ताभागाश्च षोडशः॥
चतुर्विंशच्च शङ्खस्य भागैकं टङ्कणस्यच।
एकत्र मर्दयेत् सर्वं पक्वनिम्बुकजै रसैः।

मुद्रांदत्वा ततो वैद्यः पचेल्लवण यन्त्रके ॥
पिष्ट्वा गुञ्जो द्वयन्मानं दद्या द्रव्याज्य संयुतम् ।
कासे श्वासे क्षये जीर्णज्वरे ग्रहणिकागदे ॥
अपच्यांच प्रयोक्तव्यो रसोयं हेमगर्भक ।

सिद्धयोग संग्रहात्

द्रव्य और निर्माण विधि

शु० पारद ४ तोला लेकर खरलमें डाल देवे और ४ तोला सोनेके वर्क लेकर १-१ करके पारदमें मिलाता जावे और घोटता जावे। जब सब वर्क मिल जावे तब उसमे १२ तोला शु० आमला सार गन्धक मिलाकर कज्जली करे फिर उसमें १६ तोला अच्छे बसरा मोतीका चूर्ण तथा शंखका चूर्ण कपडछान किया हुआ २४ तोला, शु० सुहागा १ तोला मिलाकर कागजी नीबूके रसमे मर्दन करके गोला बनावे, गोला सूखने पर २ सकोरेमें रखकर सन्धि बन्द करके ऊपर ७ कपड़ मिट्टी लगाकर सुखा लेवे। बाद मजबूत घड़ेमें नीचे २ अङ्गुल नमक बिछाकर ऊपर सम्पुटित सकोरा रख देवे, ऊपर फिर नमकसे घडाभर देवे ऊपरसे सकोरासे मुँह बन्द करके कपड मिट्टी से मजबूत कर देवें। बादमें घडेको चुल्हेपर चढ़ाकर ३ रात दिन तक मध्यम अग्नि दे। स्वाग शीतल होनेपर घड़ेसे सकोरा निकालकर कपड मिट्टी हटाकर गोला निकाल लें। जब सब द्रव्य पककर कुछ गुलाबी रंग लिये श्वेत वर्णका हो गया हो तो उसको खरलमें पीसकर काममे लावे, अगर श्यामवर्णका हो तो १ दिन फिर पकावे।

मात्रा १ रत्ती

उपयोग—खासी, श्वास क्षय, जीर्ण ज्वर, ग्रहणी, अपची, हृद्दौर्बल्यमें प्रयोग करे। प्रायः हिरण्य गर्भ पोट्टली रससे जो कार्य होता है वही इस हेमगर्भ रससे भी हो जाता है।

वातकुलान्तक रस

मृगनाभिः शिवानाग केशरं कलिवृक्षजम् ।
पारदो गन्धको जातीफल मेला लवङ्गकम् ॥
प्रत्येकं कार्षिकं चैव श्लक्ष्णचूर्णा निकारयेत् ।
ब्राह्मी रसेन सम्मर्द्य वटी कुर्य्याद् द्विरक्तिकाम् ॥
अपस्मारे महाघोरे मूर्च्छा रोगेच शस्यते ।
वातजान् सर्व रोगांश्च हन्याद्वात कुलान्तकः ॥

द्रव्य निर्माण विधि

कस्तूरी १ तोला, बड़ी हरड़ छाल १ तोला, नागकेशर १ तोला, बहेड़ाछाल १ तोला, शु० पारद १ तोला, शु० गन्धक १ तोला, जायफल १ तोला, छोटी इलायची १ तोला, लौंग १ तोला। पहिले पारागन्धक की कज्जली करके उसमे कस्तूरी मिलाकर तथा अन्य औषधियोका चूर्ण मिलाकर ब्राह्मी स्वरससे १ दिन तक मर्दन करके २-२ रत्तीकी गोली बनाकर छायामें सुखा लेवे।

मात्रा अनुपान १ गोली दिनमें ३-४ वार ब्राह्मी, शंखाहुली लौंग और जटामांसीके क्वाथके अनुपानसे देवें ।

उपयोग- अपस्मार, मूर्च्छा, हिष्टीरिया, आक्षेप आदि वात रोगोंमें प्रयोग करें ।

बृ० सर्वज्वरहर लौहम्

पारदं गन्धकञ्चैव ताम्रमभ्रञ्च माक्षिकम् ।
हिरण्यं तारतालञ्च कर्ष मेकं पृथक्-पृथक् ॥
कान्तलौहं पलंद्देयं सर्वमेकी कृतम् शुभम् ।
वक्ष्यमाणौषधै र्भाव्यं प्रत्येकं दिन सप्तमम् ॥

कारवेल्ल रसैर्वापि दशमूलरसेनच ।
पर्पटस्याश्च कषायेण त्रिफला क्काथ केनवा ॥
गुडूच्याः स्वरसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसैस्तथा ।
पुनर्नवाऽर्द्र काम्भोभि र्भावना परिकीर्तिता ॥
रक्तिकादि क्रमेणैव वटिकां कारयेद्भिषक् ।
पिप्पलिगुड़संयुक्ता वटिका ज्वरनाशिनी ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति जीर्णज्वर हरं तथा ।
वारिदोषोद्भवं चैव नानादोषोद्भवन्तथा ॥
सततादि ज्वरं हन्ति साध्यासाध्य मथापिवा ।
क्षयोद्भवश्च धातुस्थं कामशोकभवस्तथा ॥
भूतावेश भवञ्चैव त्रिदोष जनितन्तथा ।
अभिघातज्वरश्चैव तथाभिचारसम्भवम् ॥
अभिन्यासं महाघोरं विषमंत्र्याहिकन्तथा ॥
शीतपूर्व दाह पूर्व त्रिदोषं विषम ज्वरम् ॥
प्रलेपक ज्वरं घोरमर्धनारीश्वरन्तथा ।
प्लीह ज्वरं तथा कासं चातुर्थिक विपर्ययम् ।
पान्डुरोगं कामलाश्च अग्निमान्द्यं महा गदम् ॥
एतान्सर्वान्निहन्त्याशु पक्षार्धेन न संशय ।
शाल्यन्नं तक्र सहितं भोजयेद्धिङ् संयुतम् ॥
ककार पूर्वकं सर्व वर्जनीयं न संशयः ।
मैथुनं वर्जयेत्तावद्यावन्नो बलवान्भवेत् ॥
सर्वज्वरहरलोहं दुर्लभं परिकीर्तितम् ॥

द्रव्य और निर्माण विधि—

शु० पारद १ तो०, शु० गन्धक १ तो०, ताम्र भस्म १ तो०, अभ्रक भस्म १ तो०, सोनामाक्षीकभस्म १ तो०, सुवर्ण भस्म १ तो०, रजतभस्म १ तो०, रसमाणिक्य १ तो०, कान्तलौह भस्म ४ तोला। इन सबको मिलाकर खरलमें डालकर नील वर्णकी कज्जली तैयार करे। फिर करेला स्वरस, दशमूलक्काथ, पित्तपापड़ाक्काथ, त्रिफलाक्काथ, गिलोय स्वरस, पान स्वरस, मकोय स्वरस, निगुन्डी, पुनर्नवा स्वरसौंकी ७-७ भावना देवे। फिर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर सुखाकर रख छोड़े। इसमेंसे १-१ गोली गुड़ पीपल चूर्णके अनुपानसे देनेसे ८ प्रकारके ज्वर, जलदोपोत्थ ज्वर, सततादि विषम ज्वर, साध्य अथवा असाध्य, क्षयज, धातुस्थ, कामज, शोकज, भूतावेशज, सन्निपातज, अभिघातज, अभिचारज, असाध्यअभिन्यास, शीतपूर्व दाहपूर्व, प्रलेपक, अर्ध नारी-ज्वर, प्लीहज-ज्वर चातुर्थिक विपर्य्यय, इत्यादि समस्त ज्वर, कास, पाण्डु, कामला मन्दाग्नि, इन सबको ७ दिनमें यह नष्ट करता है। भूख लगनेपर चावल छाछसं चरनमक देवे। ककारादिगण वर्जन करे। जबतक पूर्णतया शक्ति न आवे तबतक मैथुन न करे।

शोणितार्गलरस

कान्तलौह भस्म ½ तो०, अभ्रक भस्म, ½ तो०, रसोत, १ तो०, शु० फिटकिरी ½ तो०, लालचन्दन १ तो०, स्वर्णगैरिक १ तो०, रससिन्दूर १ तो०, लाक्षा ½ तो०, बबूलपत्र स्वरसके साथ पीसकर २-२ रत्तीकी गोली बना लेवें।

उपयोग रक्तातिसार, रक्तार्श, रक्तपित्त रक्त प्रदरमें उचित अनुपान के साथ प्रयोग करे।

सूचना—आरम्भमें केवल शृतशीत जलपर ही रखना चाहिये। प्रारम्भमें जलपर रखनेसे ज्वर बढ़नेपर निर्बलता नहीं आती। इतना ही

नहीं ज्वर उतरने पर अशक्ति भी ज्यादा दिन नहीं रहती। दोषपाचन होनेपर दोपहरको फलोंका रस याने अनार मोसम्मीका रस तथा प्रातः सायं गायका दूध तुलसीपत्र डालकर गरम किया हुआ मिश्री मिलाकर पिलावें। यदि किसीको दूध अनुकूल न पड़ता हो तो छाछ पिला सकते है परन्तु अन्न नही देना चाहिये। अन्न खिलानेसे शक्ति क्षय अधिक होता जाता है। अन्न खानेवाले रोगी ज्वर उतरनेपर भी बहुत दिनों तक बलवान नहीं हो सकते, फिर भी अगर कोई रोगी अन्न खाये बगैर नही रह सकता हो तो बाजरेका दलिया दे सकते है। अगर बाजरा खाना पसन्द न हो तो धानकी लाही और कूटूकी लाही अल्पमात्रामें दे सकते है। यदि बाजरेका आटा देना हो तो रोज ताजा पिसवाकर ही देवे।

मकान, वस्त्र, दांत, होठ, और मुंहको साफ करना चाहिये। शय्या कोमल रखे २ या तीसरे सप्ताहमें गरम जलसे शरीरको पोंछना चाहिये। विरेचन ज्वर उतारनेवाली तेज औषध आन्त्रगतिवर्धक कुचलादि औषधि और अन्नमें भोजनका उपयोग इस बीमारीमें जहां तक हो नहीं करना चाहिये।

ऐलोपैथिक चिकित्सा

डाक्टर लोग इस रोगमें पहिले क्लोरीन मिक्सचरका उपयोग करते थे जिसकी विधि यह है २० ग्रेन पोसासियस क्लोरेट (Potas-Chlorate) को एक बारह औन्सको नीली स्पोर्ट बोतलमें डालकर इसमें ४ ड्राम ला० हाइड्रो क्लोरिक एसिड् मिला देना चाहिये। बोतलको गरमपानीमें रखना चाहिये, जिससे क्लोरिन गैस बन जाय। फिर ३० ग्रेन कुना-ईन सल्फेटको १२ औंस पानीमें मिलाकर थोड़ा थोड़ा करके बोतलमें डालते जाना चाहिये और हिलाते रहना चाहिये। इसको अन्धेरेमें रखना चाहिये इसमेंसे १-१ खुराक ३-३ घन्टाके अन्तरसे देनी चाहिये

इससे आंते साफ हो जाती है रोगका संक्रमण भी नष्ट हो जाता है। आजकल डाक्टरोंने यह नुसखा देना बन्द कर दिया सिर्फ टाईफाइट फाज नामक एक दवा बंगाल केमिकल ने निकाली है। उसीको प्रारम्भमें देते हैं फिर लक्षण जैसा देखते है वैसी ही चिकित्सा करते है इनके यहां इस बीमारीकी खास कोई दवा नहीं है फिर भी चेष्टा करते है।

प्राय: डाक्टरीमें निम्न औषधियां प्रयुक्त की जाती है।

१ सल्फा ग्वानीडीन (Sulphaguinadine)
२ वैक्टीरिया फाज (Bacteria Phose)
३ ग्लुकोज डी० (Glucose D.)
४ केल्शीयम ओक्षाइड सनडोज (Calcium Oxide Sandoz)
५ हैक्षामिन (Hexamine)
६ रिडोक्षन (Redoxon)
७ टिचर डिजोटेलिस आदि समयानुसार दी जाती हैं।

आजकल २ औपधियोंका और नया आविष्कार किया गया है, जैसे १ आर्योमाइसीन, क्लोरोमाइसिटीन। आजकल डाक्टर लोग इसका प्रचार बहुत बढा रहे है। प्राय: मैंने भी इसका फलाफल देखा है कि यह औषधि इस रोगमें ज्वरको बहुत शीघ्र ही कम कर देती है लेकिन मियादको कम कर देनेकी इसमें ताकत नही है। समय जितना लगता है उतना ही लगता है।

हिमाङ्गावस्थामें	अनिद्रामें
कोरामिन (Coramin)	पोटास ब्रोमाईड (Potas Bromide)
ड्रीनलीन (Adrenaline)	ल्युमिनाल (Luminal)

ब्रान्डीका प्रयोग अधिकतर किया जाता है, दुर्बलता बढ़नेपर सैला-इनका प्रयोग भी करते है, इससे कोई विशेष फायदा देखा नही गया। वैसे तो आजकलके डाक्टर मरनासन्न रोगीके लिये यमराज रूप ही है,

जबतक १ श्वास भी वाकी रहता है तवतक इन्जेक्सनोंकी भरमार ही रखते हैं।

युनानि चिकित्सा

खूबकला २ माशा

मुनक्का ५ दाना

बनप्सा ३ माशा

गिलोय १ माशा

तुलसी पत्र १० नग

विधि—आधा पाव जलमें ओटाकर चतुर्थांश वांकी रहने पर मधु मिलाकर प्रातः सायं कच्छपपृष्ठास्थि चूर्ण ४ रत्तीके साथमें पिलानेसे मन्थर ज्वरमें फायदा होता है।

होमियो पैथिक चिकित्सा

आन्त्रिक ज्वरकी प्रथमा वस्थामें प्रायः ब्रायोनिया, जेलसियम आदि औपधियां व्यवहारमें ली जाती है। इसके बाद उत्तरोत्तर रोगके लक्षण बढ़ने पर लक्षणोके सदृश औषधका प्रयोग किया जाता है। इस बिमारीमें प्रायः दो तरहकी अवस्था होती है। (१) कोई छटपटाता है। (२) कोई चुपचाप स्थिर भावसे पड़ा रहता है।

छटपटानेपर—आर्सनिक, वेप्टिसिया, रसटक्स दिया जाता है।

स्थिर भावसे पडे रहने पर आर्निका, ब्रायोनिया, जेलसिमियम, एसिड म्यूर, एसिड नाईट्रिक, एसिड फास, कार्बोवेज आदि औपधियां दी जाती है तथा मस्तिष्कादि दोष होनेपर वेलाडोना, हायोसियामस, ओपियम, स्टैमोनियम, हैलिबोरस, लैकेसिस, प्रभृति दी जाती है।

अन्त्र प्रदाह, कोलाइटिस (COLITIS)

यह रोग भी मन्थर ज्वर (टाइफायड) के साथ सम्बन्ध रखने वाला है। प्रायः मन्थर ज्वरकी मियाद खत्म होने पर भी इस रोगका सम्बन्ध होनेसे ज्वर वहुत दिवस पर्य्यन्त बना रहता है। अत: इसकी पहिचानकी भी अत्यन्त आवश्यकता है। आयुर्वेदमें इस रोगका कोई विवरण नहीं मिलता है। एलोपैथिक वाले भी इसकी परीक्षा मूत्र परीक्षा द्वारा करते हैं। अतः वैद्योकी जानकारीके लिये ऐलोपैथिक पुस्तकों द्वारा संग्रहीतकर इस रोगके विषयमें कुछ विवरण लिखना उचित समझकर लिख रहा हूं। वैद्य वन्धुओं को चाहिये कि इस प्रकरणको अवश्य देखें।

विवरण—इसका संस्कृत नाम अन्त्र प्रदाह है। जब छोटी आंतोंमे प्रदाह होता है, तव उसको इङ्गलिशमें एण्टेराइटिस कहते हैं, परन्तु जब छोटी आतकी श्लेष्मिक झिल्ली (म्युकसमेम्ब्रेन का प्रदाह हो जाता है, तव उसको कैटरल 'एण्टेराइटिस कहते है, और जब श्लेष्मिक झिल्ली अथवा उसके साथकी आतोंके अन्य आवरणोंमे प्रदाह हो जाता है, तो उसको फ्लेगमोनसएन्टेराइटिस कहते है। वृहदन्त्रके प्रदाहका नाम कोलाइटिस (COLITI') है। यह बीमारी रक्तातिसार आमातिसारसे विल्कुल अलग ही है।

लघु अन्त्र श्लेष्मिक आवरणप्रदाह (कैटरल एण्टेराइटिस)

यह रोग सभी समय सभी ऋतुओंमें हो जाता है, लेकिन प्रायः छोटे वच्चोंको ही अधिकतर होता है। एक बार आरोग्य होनेपर भी पुनरावर्तक होनेकी सम्भावना रहती है। यह दो श्रेणियोंमें विभक्त है; एक नवीनावस्था दूसरी प्राचीनावस्था।

तरुणावस्थाको इङ्गलिशमें (एक्यूट फार्म) कहते है। इसकी भी दो श्रेणी होती हैं। (१) प्राथमिक (२) द्वितीयावस्था।

निदान

यह रोग मिथ्याहार विहार, गरिष्ठ भोजन, तीक्ष्णरेचनसे तथा सर्दीके लगनेसे, पेटकी कब्जियतसे, एका-एक ऋतु परिवर्तन, ग्रीष्म ऋतुजन्य अतिसार, बहुत दिनोंका अभ्यस्त पीनेका पानी एका-एक बदल देनेसे, आंतोंमे अतिपित्त संचित होकर आंतोमें दोष पैदा होनेसे, अथवा आंतोंमें कठिन मलावरोधके कारण तथा पेटमें कृमि संचित होनेसे, क्रोधादिक स्नायुओंकी उत्ताजनादि कारणोंसे इसकी उत्पत्ति होती है। हिस्टीरिया ग्रस्त स्त्रियोंको भी कभी-कभी यह रोग हो जाता है। इस अवस्थाको प्राइमरी एक्यूट फार्मके नामसे कहते है।

दूसरा कारण यह है कि जिन मनुष्योंको क्षय, क्षत, कैन्सर जनितक्षत, अन्त्रवृद्धि और अन्त्रावरक झिल्लीका प्रदाह (पेरेटोना-इटिस) सिरोलिस लिवर (यकृतकी क्षीणता) फुफ्फुस रोग, हृद्रोग, रक्त संचार क्रियाकी गड़बड़ी, सूतिका रोग, इन्फ्लुएन्जा, टाइफाइड, कालेरा, आमातिसार, विषाक्त ज्वर (पाइमिया) आदि बीमारियोंके कारण एन्टेराइटिस होता है।

अगर कोई मनुष्य अग्निसे जल जाता है तो किसी किसीको डियोडिनमका प्रदाह हो जाता है उसको डियोडिनाइटिस द्वादश अंगुल अन्त्रका प्रदाह कहते हैं। इसके होनेसे श्लेष्मिक कलामें घाव हो जाता है।

लक्षण

इस रोगके होनेपर नाभीके चारों तरफ उदरमें शूलकी तरह वेदना होने लगती है। यह वेदना दबाने पर कभी घटती है कभी बढ़ती है तथा अतिसरण होता है। दिनमें ३-४ बारसे २०-२५ बार तक टट्टी हुआ करती है। टट्टीमें भूरा, पीला, हरा, पित्तयुक्त रंग होता है। मलद्वारकी चमड़ी गल जाती है। पेटपर आध्मान

हो जाता है, तथा पेटमें गड़गड़ाहट भी रहती है, जिह्वा मैली सूखी रहती है, तृषा लगती है, क्षुधाका नाश हो जाता है, कभी २ नाड़ी कमजोर पड़ जाती है, नाडीकी गति तीव्र रहती है, वमन भी होता है।

उग्रावस्थामें अधिक परिमाणमें वमन-अतिसार होते है, पेशियोंमें ऐंठन होती है और तृषाधिक हो जाती है। ज्वर १०२ डिग्री या उससे अधिक भी हो जाता है, तथा दुर्वलताके कारण मुखाकृति बदल जाती है। अथवा शीताङ्ग हो जाता है।

इस बीमारीमें अतिसार पेटका दोष प्रायः रहता है। परन्तु लघुअन्त्रके ऊपरी भागमें प्रदाह होनेपर बहुधा पतले दस्त नहीं होते है। बड़ी आतके नीचेके अंशमे और मलान्त्रमें प्रदाह होनेपर मलके साथ रक्तमिश्रित आम आती है, तथा मलोत्सर्गके समय पेटमें भयंकर वेदना भी होती है, परन्तु मलोत्सर्गके बाद स्वतः ही शान्त हो जाती है। अगर लघु अन्त्रकी श्लेष्मिक कलामें प्रदाह हो जाय तो कला फूल जाती है, उससे पित्तके आने जानेका रास्ता अवरुद्ध हो जाता है, तब कामलाके लक्षण दिखाई देने लगते है और अन्त्र स्थानमें अकड़न तथा खिचावयुक्त वेदना होने लगती है। यहांपर अतिसारके बदले कब्ज हो जाता है। इस बीमारीमें विशेष लक्षण माथेके पीछेकी तरफ एक प्रकारकी वेदना होने लगती है। इससे यदि कभी पेटमें दोष हो जाता है, तो मलके साथ रक्तयुक्त आम भी रहती है, मलोत्सर्गके समय आमाजीर्णकी तरह ऐंठनयुक्त शूलका दर्द होता है, पेटमें वायु अवरुद्ध हो जाता है। बच्चोंको यह रोग होनेपर ज्वर, पेटपर आध्मान, मुखपाक, दुर्बलता, तन्द्रा इत्यादि लक्षण हो जाते है।

लघुअन्त्र प्रदाहकी द्वितीयावस्थामें लक्षण

इसके लक्षण बहुत कुछ मूल रोगोके उपसर्गो और लक्षणोंके ऊपर निर्भर करते है, परन्तु अधिकाश रोगोमे प्रबल अतिसार रहता है।

प्राचीनावस्थाके लक्षण

नया रोग आरोग्य हो जानेके बाद बहुधा बीमारी पुराना आकार धारण कर लेती है, तब पेटमें शूलकी तरह चुभनेवाली वेदना होती है, पेट फूल जाता है, अनियमित ज्वर तथा बीच-बीचमे पतले दस्त आते है। कभी कभी दस्त न आकर डिस्पेप्सिया अग्निमान्द्य हो जाता है लेकिन क्षुधानाश नहीं होता दिन प्रतिदिन मानसिक दुर्बलता बढ़ती जाती है तथा रोगो रक्तहीन हो जाता है।

बृहदन्त्र प्रदाह, ऐक्यूट कोलाइटिस (ACUTE COLITIS)

इस रोगमें कोलन अर्थात् बडी आंतका नवीन प्रदाह हो जाता है, इसीलिये इसको कोलाइटिस (बृहदन्त्र प्रदाह) कहते है। इसके लक्षणों में तथा रक्तामाशय डिसेण्ट्री) के लक्षणोंके साथ बहुत कुछ समानता रहती है इसलिये एकाएक देखनेपर या रोगीकी अवस्था सुननेपर अधिकांश समय रक्तामाशयका भ्रम हो जाता है। परन्तु यथार्थमे ऐसी बात नहीं है, कोलाइटिस और रक्तामाशय दोनों पृथक पृथक रोग है।

लक्षण

इस रोगमें दस्त रक्त और आव मिले हुये जल्दी जल्दी आते है तथा आव और रक्तका परिमाण भी अधिक रहता है। ऐठनी शूल और बड़ी आंतके ऊपर असह्य वेदना आदि लक्षण होते है।

बृदन्त्र प्रदाहमें प्राथमिक लक्षण

अधिकतर यह रोग स्वतः ही उत्पन्न होता है। रोगका आक्रमण अकस्मात होता है, जिससे दस्त जल्दी जल्दी आने लगते हैं, प्रथम दस्तमें मल निकलता है, पश्चात केवल आंवके दस्त ही आने लगते हैं, तथा कभी ताजा रक्त ही आता है। कभी आवरक्त मिले दस्त आया करते है, उदरमें असह्य वेदना और मरोड़ा रहता है, एक वार मलोत्सर्ग

के बाद दूसरी बार मलोत्सर्गके समय भी कुछ कुछ वेदना रहती है। निम्नगामी बृहदन्त्र (डिसेण्डिङ्ग कोलन) के ऊपर उदरके बांई तरफ बहुत स्पर्शासहिष्णुता और वेदना रहती है, इससे जीभपर मैलापन भी आ जाता है। कठिन अवस्था होनेपर ज्वर १०४ डिग्री तक हो जाता है, तापमानके अनुसार नाड़ीकी गति तेज होती है आक्रमणा- वस्थामें तथा अन्य भी किसी समय वमन भी होता है। रोगका प्रबल रूप होनेपर कभी कभी शीताङ्ग भी हो जाता है।

भावी फल

यह बीमारी आराम हो जाती है, परन्तु कड़ी बीमारीमें बहुधा तीन दिनमें ही मृत्यु हो जाती है, किसी किसीको बहुत धीरे धीरे आराम हो जाता है लेकिन आराम होनेमें कई महीने लग जाते हैं, तथा किसी किसीको पुनरार्तक रोग हो जाता है। अथवा किसी किसीको पुराना आकार (क्रानिक फार्म) धारण कर लेता है, तब रोगी को बहुत दिनोंतक कष्ट भोगना पड़ता है।

जीर्णावस्था होनेपर लक्षण

जीर्ण रूप धारण करनेपर सिग्मायड प्लेक्सरमें हर समय एक तरह की भड़कन रहती है, पेट थलथुला हो जाता है और कोलन (बड़ी आंतमें दर्द रहता है, मलोत्सर्ग प्रतिदिन २-३ बारसे लेकर आठ दस बार तक होता है, कभी कभी २-१ दिन तक कब्ज फिर २-४ रोज तक पतले दस्त भी हुआ करते हैं, कभी दस्तके साथ आंव और रक्त मिला रहता है, कभी आंव रक्त पृथक ही निकलते है। पाचन क्रियामें विशेष गडबड़ नहीं होती, रोगी क्रमशः दुर्बल होता जाता है और मानसिक कमजोरी आ जाती है।

अन्यान्य रोगोंसे प्रभेद जाननेके लक्षण

मन्थर ज्वरमें त्वचापर दाने निकलते है और दाहिने तलपेटमे दर्द रहता है , पेरिटोनाइटिस-अन्त्रावरक कला प्रदाहमे पेटके स्पर्शसे वेदना

बढ़ती है और कब्ज रहता है। अन्त्र शूलके दर्दमें क्षणभरमें वेदना कम होती है और क्षण भरमें बढ़ती है, ज्वर नहीं होता है। आमाजीर्ण डिसेन्ट्रीमें क़राहना, शूलसहित अतिसारका वेग अधिक रहता है, और आंव और रक्त मिश्रित दस्त आते हैं, पर मात्रा मलकी अल्प रहती है।

कोलाइटिसमें—आंव और रक्तका परिमाण बहुत अधिक रहता है, आमाजीर्णमें इतना आंव और रक्त नहीं रहता, उसके मलका परिमाण भी थोड़ा रहता है। एण्टेराइटिसमें मलका परिमाण अधिक या अपेक्षाकृत अधिक रहता है, नाभिके चारों तरफ दर्द रहता है।

रोगाक्रान्त आंतोंमें लक्षणोंका भेद

लघु अन्त्रपर रोगका आक्रमण होनेपर शूलकी तरह वेदना होती है, पेटके चारों तरफ अकड़नका दर्द रहता है, तथा दस्त भी जल्दी जल्दी आते हैं, परन्तु पेटपर हर समय आध्मान रहता है। दस्तका रंग पीला, भूरा या हरे रंगका होता है; साथमें कच्चा पदार्थ भी मिला रहता है, कभी कभी अल्प मात्रामें आंव तथा रक्त भी रहता है।

बृहदन्त्रपर रोगका आक्रमण होनेपर मलोत्सर्गके समय ऐंठन और वेदना होती है, आंतपर स्पर्श करनेसे वेदना होती है तथा जल्दी जल्दी मलोत्सर्ग होता है, मलके साथ रक्त आंवका परिमाण भी अत्यधिक रहता है, यहा तक कितनी ही बार मल बिल्कुल ही नहीं रहता है।

चिकित्सा और पथ्य

इस रोगमें पूर्ण रूपसे विश्रामकी आवश्यकता है, रोगीको हर समय बिछानेपर सोते रहना चाहिये। रोगकी उग्रावस्थामें लंघन कराना ही श्रेयस्कर है। प्यास रोकनेके लिये बरफके टूकड़े चूसनेको दिये जायँ तो अच्छा फायदा होता है। आयुर्वेदमें तृषा शान्त्यर्थ षेडङ्ग पानीय श्रृत जल दिया जाता है। कठिन वस्तुका अंश अगर पेटमें सञ्चित

हो गया हो तो प्रथम एरण्ड स्नेहका जुलाब देकर निकाल देना चाहिये। इसके बाद साबू, बार्ली, आरारोट, बीदाना रस, दूध, गीला भात आदि खानेको दिया जा सकता है। उदरस्थित वेदना शान्त्यर्थ उष्ण सेककी व्यवस्था करनी चाहिये। सेकके बाद पेटको रूईसे बांध देना चाहिये। रोगमें न्यूनता होनेपर उपरोक्त पथ्य हल्की मात्रामें देना उचित है।

मलद्वारमें अत्यधिक जलन हो तो गुदाके भीतर बरफ जल या टूकड़ा रखनेसे फायदा होता है।

प्राचीनावस्थामें दूध ही प्रधान पथ्य है।

औषध

साधारण अतिसारमें तथा आमातिसारमें जिन औषधियोंका प्रयोग किया जाता है, इन उपरोक्त बीमारियोंमें भी ठीक उन्हीं सब औषधियोंके द्वारा ही फायदा हुआ करता है। आयुर्वेदमें इसकी चिकित्साका पृथक कोई विधान नहीं हैं। मेरी चिकित्सामें इस रोगसे ग्रसित बहुतसे रोगी आये उनकी मैंने अतिसारोक्त चिकित्सा पद्धतिसे ही चिकित्साकी जिससे बहुतसे रोगी आरोग्य हुये उनमेंसे कुछेकके उदाहरण आपके समक्ष लिख रहा हूं कृपया आप लोग भी परीक्षा करके देखें।

रोगी नाम राधेश्याम, उम्र १२, जाति अग्र०,

यहाका पता—कालीकृष्ण गोर स्ट्रीट, नं० १० बालमुकुन्दजी।

इसको ३५ रोजसे मियादी ज्वर था। प्रातःकाल ज्वर १०१ सायकाल १०४ डिग्री तक बढ़ता था, प्रलाप, कम्प, आध्मान, उदरशूल, मूत्रकृच्छ्रादि उपद्रव थे। चिकित्सा डा० गोपाल बाबूकी चल रही थी कोई फायदा नहीं हुआ तब मेरेको भी बुलाकर दिखलाया गया। मैंने जब रोगीको देखा तब उपरोक्त लक्षण थे, तब निम्नलिखित औषध चालू की।

ता० ९-९-४७ प्रातः	सायं	म०
रसराज रस १ रत्ती	कस्तूरी भैरव १	चन्द्रप्रभा १ गो०
प्रवाल १ रत्ती	प्रवाल १	यवक्षार ३ रत्ती
ज्वर संहार १ रत्ती	मुक्ता १	गोक्षुर क्वाथसे
तुलसीरस मधुसे १पु०	भीमसेनी १	
	पानरस मधुसे	

रातको सोते समय	वज्रक्षार वार वारमें जलमें
चतुर्भुज १ रत्ती	मिलाकर देनेके लिये कहा
तालछाड़ा रस मधुसे	पथ्यमें दूधवार्ली, मिश्री जल।

पेटपर दारुषट्क लेप दिलवाया।

ता० १०-९-४७ हालत पूर्ववत्

ता० ११-९-४६ हालत कुछ ठीक रही, प्रलाप कम हो गया तथा ज्वर भी कम रहा, पेटका आध्मान बिल्कुल ठीक हो गया, १ दस्त भी हुआ, लेकिन मूत्र बहुत कम मात्रामे होता था।

ता० १३-९-५० को सायंकाल देखने गया और रोगीके दिन भरके हालत पूछे तो पता चला कि २ रोज तक ज्वर ऊपरमें १०२ डिग्री तक बढ़ा था तथा नीचेमें ९९ तक हुआ था, लेकिन पेशाब बहुत कम हुआ और पेशाबमें जलन भी होती है तथा आज ज्वर भी १०४ डिग्री हो गया तब मैंने घरवालोंको कहा कि कल सुबहके पेशाबको लेकर लेबोरेटरीमें भेजकर परीक्षा करवा लीजिये। टाइफाइड का दोष ठीक है कुछ कोलाइका सन्देह होता है। अस्तु सुबहका पेशाब शुद्ध शीशीमें भर कर लेबोरेटरीमें भेज दिया वहांसे कल्चरकी रिपोर्ट २ रोज बाद आई जिसमें कोलाइके कीटाणु मिले तब फिर औषध परिवर्तन करनी पडी।

प्रातः सायं	म० रा०
चन्द्रप्रभा १ गोली	वङ्गक्षार ६ रत्ती
वीरतर्वादिगणके क्राथसे	शु० शिलाजीत १ रत्ती
	गोक्षुर अर्कसे

इस औषधके ३ रोज तक सेवन करानेसे रोगीको पेशाब बहुत अधिक होने लग गया जिससे ५-६ रोजमें ही रोगी बिल्कुल स्वस्थ हो गया, पथ्य चालू कर दिया।

द्वितीय रोगी

रोगी नाम कमला, उम्र १३, जाति माहेश्वरी,
यहांका पता केवलरामजी १८ नं० बांसतल्ला स्ट्रीट।

इस लड़की को ६ दिवससे ज्वर १०४, पेटमें भयंकर वेदना, आम रक्तयुक्त अतिसार, शिरःशूल, वमनादि लक्षण थे। डाक्टर रविन्द्रनाथ वायूका इलाज हो रहा था। ७-८ रोज तक चिकित्सा करने पर भी कोई फायदा नहीं हुआ तब लड़कीके पिता केवलरामजी मेरे पास आये और मुझको बुलाकर घरपर ले गये और रुग्णाको दिखलाया। मैंने जब इसको देखा तब निम्नलिखित लक्षण थे। ज्वर प्रातःकाल ७ बजे १०२ डिग्री, वमन, अतिसार पेटमें आध्मान सहित भयंकर वेदना, शिरःशूल आदि लक्षण थे। तब मैंने सर्वप्रथम निम्नलिखित औषध व्यवस्था चालू की।

ता० २०-७-५०	म० रा०	
प्रातः सायं	रामबाण	
आनन्द भैरव १ गो०	दाड़िम चतुः सम	पेटपर दारुपटूक लेप लगवाया
लवङ्गादि २ गो०	अमृत धारा ३ बूंद	
रसादि वटी १ रत्ती	अर्कसोंफ १ औंस	
१ पु०	अनुपानसे	
नागरमोथारस मधुसे		

पथ्यमें जलवार्ली, आरा रोटका पानी, मिश्री शृत जल दिया। सायंकाल ६ बजे लड़कीका पिता मेरे पास फिर आया और कहा कि ज्वर दोपहरसें १०३ हुआ, टट्टी २० हुये तथा वमन भी ४ बार हुआ, पेटमें बहुत वेदना है। तब मैंने रातको एक खुराक धान्य पंचक क्वाथ की दी और कहा कि २ नम्बर औषध जो रातको ८ बजे अमृतधाराके अनुपानसे देनेका है वह इस क्वाथके अनुपानसे दे देना और पेटपर गरम जलका सेक भी दे देना।

ता० २१ ७-५० को सुबह ५ बजे में घरपर देखने गया तब रातके हालत घरवालोंसे पूछे तो पता लगा कि रातको नींद बिल्कुल नही आई तथा और लक्षण भी सब वैसेके वैसे ही रहे कोई भी फायदा नही है रात्रि भर दर्दके कारण चिल्लाती थी। पसीना भी आता था मैंने भी रुग्णाकी हालत देखी तब ज्वर १०२॥ था तथा और लक्षण कल जैसे ही थे तब औषध पुनः परिवर्तन किया।

प्रात. सायं	म० रा०
शूलबज्रिणी १ गो०	रामवाण १ गोली
शंख भस्म १ रत्ती	सञ्जीवनी वटी १ गो०
बराटिका भस्म १ रत्ती १ खु०	जहर मोहरा खताई
पोदीनादि क्वाथसे	नागरमोथारस ।)
	अजवाइन अर्क ≈) के साथ

पेटपर मकोय बीज ≈- अजवाईन ƒ- हीग ≈) को जलमें पीसकर गरम करके लेप २-२ घण्टा पर करानेको दिया सायंकाल ७ बजे केवल रामजी फिर आये और दिन भरके हालत कहे कि आज वमन दो बार हुआ, टट्टी ३ बार हुई, ज्वर १०३ हुआ, रात्रीसे दिनमे कुछ फायदा है। कल प्रातःकाल आप देखनेके लिए जल्दी ही आ जाइये। अस्तु

ता० २२-७-५० को सुबह देखनेके लिये गया और रात्रिकी व्यवस्था घरवालोसे पूछी तो कहा कि रात्रीसे पेटमें दर्द कुछ कम रहा, टट्टी

२ वार हुई, वमन नहीं हुआ, कुछ समयके लिये निद्रा भी आई तब मने चालू दवा ही चालू रखी इस तरह ३ दिवस पर्यन्त इसी दवाको चालू रखा।

ता० २४-७-५० का फिर देखनेके लिये गया तव मालूम हुआ कि टट्टी उल्टी तो नहीं हुई लेकिन पेटमें दर्द आज रात्रिको अत्यधिक रहा, जिससे रात भर निद्रा नही आई तब औषधि फिर परिवर्तन किया।

नं० प्रातः		नं० २	
धात्री लौह	२ रत्ती	रामवाण	१ गोली
शूलहरण योग	१ गोली	यवक्षार	४ रत्ती
शंखभस्म	१ रत्ती	अजवाईन अर्क एवं सौंफ अर्कके अनुपानसे	
धान्यपंचक क्वाथसे			

उपरोक्त दवाका समिश्रण ३-३ घन्टाके हेरफेर से चालू किया। तथा लेप वगैरहकी व्यवस्था पूर्ववत चालू रखी। सायंकाल लड़कीके पिता मेरे पास आये और वोले कि आज दिनमें तबीयत बहुत अच्छी रही, टट्टी भी २ बार हुई, पेटमें दर्द भी बहुत कम है। २ घन्टा निद्रा भी आई पेशाब चार बार हुआ। आप सुवह देखनेके लिये जरूर आइयेगा।

ता० २५–७ ५० को सुबह देखनेको गया। तब खबर मिली कि लड़कीको ३ घन्टा निद्रा आई, वेदना कम रही, टट्टी भी २ बार आमयुक्त हुई, औषध कलवाली ही चालू रखी।

ता० २६-७-५० हालत बहुत ठीक रही।

ता०-२७-७-५० ज्वर प्रात ९८ में सायंकाल १००, अन्य उपद्रव शान्ति रहे।

ता० २८-७-५० ज्वर प्रातः ९७ में सायंकाल १००, वेदना बिल्कुल शान्त, २ टट्टी भी वन्धी हुई काले रङ्गकी हुई।

ता० २९-७-५० ज्वर प्रातः ९७ में साय ९९ डिग्री तक हुआ।

ता० ३०-७-५० ज्वर बढ़ा नहीं हालत ठीक पथ्य चालू कर दिया।

इस रोगमें उपयोगमें आई हुई औपधियोंका विवरण।

वीरतर्वादि गण

वीरतरुर्वृक्षवन्दा काशः सहचर त्रयम्।

कुशद्वयं नलोगुन्द्रा वक्रपुष्पोऽग्निमन्थकः॥

मूर्वापाषाण भेदश्च स्योनाको गोक्षुरस्तथा।

अपामार्गश्च कमलं ब्राह्मी चेति गणोवरः॥

वीरतर्वाविरित्युक्तः शर्कराश्मरि कृच्छ्रहा।

मूत्राघातं वायुरोगान्नाशयेन्निखिलानपि॥

खस, पियावांसा २ प्रकारका कुरंड, दर्भमूल, वदाक, पटेरा, नरसल, कांसमूल, पारवान भेद, अरनीछाल, मूर्वा, गुन्दणी, अर्कसफेद, गजपीपल, सोनापाठा, गोखरू, चिरचिटा कमललाल, ब्राह्मी। इन सब का क्वाथ विधिसे क्वाथ वनाकर उपयोगमें लावें।

अथवा इसकी औपधिया न मिल सके तो तृणपञ्च मूलका उपयोग करे।

तृणपंचमूल

कुशकाशनलदर्भ काण्डेक्षुका इति तृण संज्ञकः॥

मूत्रदोषविकारश्च रक्तपित्तं तथैवच।

अन्त्यः प्रयुक्तः क्षीरेण शीघ्रमेव विनाशयेत्।

भावार्थ कुशा, कास, नरसल, इक्षुमूल, तण्डुलमूल, या सर (पानी) की मूल, इनको तृण पञ्चमूल कहते है।

यह तृणपञ्चमूल दूधके संग देनेसे मूत्रदोषीय विकार और रक्तपित्त नष्ट हो जाता है।

पोदीनादि क्वाथ

पोदीना, सोंठ, अजवाईन, सौंफ, इलायची छोटी, यवहरीतकी, को समान भाग लेकर क्वाथ विधिसे तैयार करे और मिश्रीका प्रक्षेप देकर सेवन करावे।

धान्य पञ्चक क्वाथ

धान्य वालक बिल्वाब्द नागरैः साधितं जलम्।
आम शूलहरं ग्राहि दीपनं पाचनं परम्॥

भावार्थ—धनियां, नागरमोथ, बेलगिरी, सोंठ, नेत्रवाला इनको समान भाग लेकर क्वाथ विधिसे क्वाथ तैयार कर उपयोगमें लावे।

गुण उपयोग— यह धान्यपञ्चक क्वाथ आमशूलको नष्ट करनेवाला, ग्राहि, दीपन, पाचन करनेवाला है।

शूलवज्रिणीवटी

रसगन्धक लोहानां पलार्द्धेन समन्वितम्।
त्रिफलारामठं शुण्ठं शटी त्रिकटु टङ्कणम्॥
पत्रं त्वगेला तालीशं जातीफल लवङ्गके।
यमानी जीरकं धान्यं प्रत्येकं कर्ष सम्मितम्॥
माषैका वटिका कार्या छागी दुग्धेन वापुनः।
एकैका भक्षिता चेयं वटिका शूलवज्रिणी॥
शूलमष्टविधं हन्ति प्लीह गुल्मोदरं तथा।
अम्लपित्तामवातञ्च पाण्डुत्वं कामलां तथा॥
शोथं गलग्रहं वृद्धिं श्लीपद स भगन्दरम्।
वृद्ध बालकरी चैव मन्दाग्निरपिदीपनी॥

भावार्थ शु० पारा और शु० गन्धक, लोहभस्म २-२ तोला, त्रिफला,

शु० हींग, ताम्रभस्म, कचूर, त्रिकटु, शु० सुहागा, पत्रज, तज, इलायची, तालीसपत्र, जायफल, लौंग, अजवाइन, जीरा, और धनियां १-१ तोला लेकर बारीक चूर्ण करके पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय बकरीके दूधमें १-२ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रख छोड़े।

उपयोग—इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे ८ प्रकारके शूल, प्लीहा, गुल्म, उदररोग, अम्लपित्त, आमवात, पाण्डु, कामला, शोथ, गलग्रह, सब प्रकारकी वृद्धि, श्लीपद, भगन्दर, मन्दाग्नि, इन सबको नष्ट करती है।

ऐलोपैथिक चिकित्सा

पाश्चात्य चिकित्सक इस रोगमें हैक्सामिन, यूरोट्रोपिन ग्लूकोज, यूरिनवेक्षिन तैयार करके देते है।

होमियोपैथिक चिकित्सा

एक्यूट एण्टेराइटिसमें – एकोनाइट, ऐलो, ऐसिडवेञ्जो, एण्टिम क्रूड, इथूजा, एपिस, अर्जेन्ट-नाइट्री, आर्स, वेल, कार्वो, कैमो, चायना, कोलोसिन्थ, क्रोटोन, इपिकाक, आइटिस, जेलापा, जैट्रोफा, मैगकार्व, मर्कुरियस, नक्स, फास, इत्यादि दिया करते है।

क्रानिक फार्म (पुरानी बीमारीमें—ग्रैफाइटिस, लाइको, सल्फर सल्फ्युरिक एसिड, कूप्रम, सिकेली, और कैम्फर आदि देते है।

जिह्वक सन्निपात लक्षणम्

श्वसन कास परिताप विह्वल कठिन कण्टक वृतातिजिह्वकः ।
वधिर मूकवल हानि लक्षणो भवति कष्टतर साध्य जिह्वकः ॥

जिस ज्वरमे श्वास, खासो, अधिकतर संताप हो, जीभ अत्यन्त कठिन काटोसे आच्छादित हो जावे, तथा अत्यन्त मूकता, कानोंमे बहरापन, बलका नाश हो, उस रोगको जिह्वक सन्निपात कहते हैं यह एकदम कष्ट साध्य है।

आयुर्वेद मतसे चिकित्सा

किराततिक्ताकुलकृत्कुलिञ्ज कचूर कृष्णा कटुतैल युक्तः।
अम्लद्रव संशमयेद्रसज्ञा दोपान्स्तुतो दाशरथिर्यथात्र ॥

यह किरातादि—चिरायता, अकरकरा, कुलिजन, कचूर, पीपल इनका चूर्ण बनाकर सरसोके तैलमें मिलाकर, फिर इसमें बिजोरेका रस डालकर मुखमें धारण करनेसे जिस प्रकार स्तुति करनेसे भगवान् श्री रामचन्द्रजी जन्मजन्मान्तरके पापोंको नष्ट कर देते हैं उसी प्रकार यह ऊपर लिखित औषधियों द्वारा निर्मित कवल जिह्वक सन्निपातको नष्ट कर देता है।

अथवा वाणीको शुद्ध करनेके लिये—बेलकी जड़, कूठ, शंखाहूली, सहद, ब्राह्मीस्वरस, इनका सेवन करे।

अथवा इस रोगमे क्षुद्रादि या विश्वादि क्वाथको पीनेके लिये देनेसे भी जिह्वक सन्निपात ठीक हो जाता है।

क्षुद्रादि क्वाथ

क्षुद्रानागर पुष्कराऽमृतलता ब्राह्मीवचासुब्रता।
भार्गीवासक यासतोय सुरसा क्वाथो जयेज्जिह्वकम् ॥

कंटकारी, सोंठ, पोहकरमूल, गिलोय, बच, गंधपलासी, भारंगी, अडूसा, जवांसा, सुगन्धवाला, तुलसी, इनका क्वाथ जिह्वकको नष्ट करता है।

विश्वादि क्वाथ

विश्वावर्म विभावरी युगवरा वत्सादनी वारिद।
व्याघ्रीनिम्ब पटोल पुष्कर जटारुग्दारुभिर्वाकृतः ॥

सोंठ, पित्तपापडा, हल्दी, दारुहल्दी, त्रिफला, गिलोय, नागरमोथा, कंटकारी, नीमछाल, पटोलपत्र, पोहकरमूल, बालछड़, कूठ, देवदारु, इनका क्वाथ भी जिह्वक सन्निपातको नष्ट करता है।

घर्षण चिकित्सा

धर्षेज्जिह्वां जडां सिन्धुत्र्यूषणैः साम्लवेतसैः ।

अगर जिह्वा अत्यन्त खरदरी कांटेवाली हो गई हो तो सोंठ, मिर्च, पीपल, अमलवेत, इनका चूर्ण बनाकर जीभपर बारम्बार घीसे इससे जिह्वाका खरदरापन मिट जाता है। अगर इस सन्निपातमें वाणीमें दोष आगया हो तब निम्नलिखित कल्याणावलेहको घृतमे मिलाकर बार बार चटावे।

कल्याणावलेह

हल्दी, बच, कूठ, पीपल, सोंठ, जीरा, अजवाइन, मुलैठी, सैन्धव नमक इन सबको समान भाग लेकर चूर्ण बनाकर सेवन करनेसे स्वरविकृति नष्ट हो जाती है। इस रोगमें कवल ग्रहका ही विशेष महत्व शास्त्रकारोंने लिखा है। अतः उसकी विधि भी लिखता हूं।

गण्डूषकवल प्रति सारण विधि

सुखं सञ्चार्य्यते यातु मात्रा साकवलेस्मृता ।
असञ्चार्य्यातु या मात्रा गण्डूषः सम्प्रकीर्त्तितः ॥

इस रोगमें नानाप्रकारकी औषधियोंके रसोंका, तथा तैलादिकों का गण्डूष, कवल, प्रतिसारणादिका सेवन कराया जाता है। गण्डूष और कवलकी औषधि मुॅखमें धारणकी जाती हैं, और प्रतिसारणसे जीभ पर घर्षण किया जाता है। इनमें मुंहको पूर्णतया औषधि द्रव्यसे भर देनेका नाम गण्डूष है, और सुख पूर्वक मुॅहमें भरी हुई औषधिको घुमा सके उतनी मात्रा वालेका नाम कवल है। गण्डूषमें दूध, क्काथ, तैलादि द्रव पदार्थोंका ही प्रयोग किया जाता है, और कवलग्रहमें विशेषत औषधिके कल्कका ही उपयोग होता है।

गण्डूप भेदाः

चतुर्विधः स्याग्दण्डूषः स्नेहनः शमनस्तथा शोधनो रोपणश्चैवः

कुल्ला ४ चार प्रकारका है। स्नेहन, चिकनाहट करने वाला, शमन शान्त करने वाला, शोधन (श्वच्छ) करने वाला, रोपण स्वच्छ करके भरने वाला; वातकी अधिकता होतो स्निग्ध, पित्तशमनार्थ शमन, (कफ शमनार्थ) शोधन, व्रणके लिये रोपण।

कवल भेदाः

इसी प्रकार कवलके भी चार भेद है। स्नेही, प्रसादी, शोधी और रोपणी। वात रोगमें स्निग्ध और उष्ण द्रव्योंसे स्नेही कवल, तथा पित्त रोगमे मधुर और शीतल द्रव्योसे प्रसादी कवल दिया जाता है, इसी तरह व्रणके रोपण करनेमे कषाय, तिक्त, मधुर, कटु उष्ण इन औषधियोंसे रोपणी कवल दिया जाता है।

गण्डूप कवलौषधमानम्

दद्याद्द्रवेषु चूर्णञ्च गण्डूषे कोलमात्रकम्।
कर्ष प्रमाणः कल्कश्च कवले दीयते बुधैः ॥

गण्डूपके द्रवमे कल्क ½ तोला डालना चाहिये, और कवलमे १ तोला डालना चाहिये।

कवल धारण विधि

मनुष्यको उचित है कि एकाग्र मन और उन्नत शरीर होकर कवल को उस समय तक धारण करे जबतक कपोल, नासिकाके श्रोत और नेत्र जलसे परिपूर्ण न हो जाय ऐसा होनेपर धारण किये हुये कवलको निकाल दे और फिर दूसरी वार कवल ग्रहण करे। परन्तु कवल क्रिया करनेके पूर्व कंठ, कपोल, ललाट इन अङ्गोंको संहित और मृदित कर लेना चाहिये।

वातशमनार्थ तिलकल्क, तिल तैल, दूध और जल मिलाकर कुल्ले करावे। पित्तशमनार्थ घृत, दुग्ध मिश्री, तिल शहद मिलाकर कुल्ले करावे। विषविकार या क्षारीय दोषमें—तिल, नीलकमल, घृत, चीनी, दूध, मधु इनका कुल्ला करावे।

कफ शमनार्थ त्रिकटु, वच, सरसों, हरड छाल, इनके चूर्णको मिला कर तैल, कांजी, मदिरा, मूत्र, क्षार, शहद, इनमेसे किसी एकके साथ नमक मिलाकर गरम करके मुखमें धारण कर कुल्ला करावे।

शुद्ध कवलके लक्षण

व्याधिका दूर होना, प्रसन्नता, मुख शुद्धि, शरीरमें हल्कापन और इन्द्रियोंमें प्रसन्नतादि लक्षण शुद्ध कवलमें होते है।

हीनयोग अथवा अतियोगमें निम्न लक्षण होते है—भारीपन, कफकी अधिकता, रसस्वाद के समय ज्ञानाभाव हीन योगसे हो जाते हैं। अतियोगसे मुखपाक, शोष, तृषा, अरुचि और क्लम ये लक्षण हो जाते हैं।

सूचना—यह उपरोक्त क्रिया ५ वर्षसे कम उम्रवालेको, अतिवृद्ध, को नही करानी चाहिये।

शोधनीय कवलसे भी अतियोग जैसे ही लक्षण हो जाया करते हैं। इसलिये यहांपर भी तिल, नीलकमल वाला योग जो पीछे लिखा गया है उसीका प्रयोग करनेसे क्षारादिसे जले हुये मुखका दाह नष्ट हो जाता है। यह गन्डूप कवल धारण विधि विस्तारपूर्वक लिख दी गई है।

प्रति सारण क्रिया वैद्य अपनी बुद्धिसे विवेचना करके करे। इसके भी चार भेद होते हैं। जैसे कल्क, रसक्रिया, मधु और चूर्ण। इनमेंसे यथायोग्य मुखरोगमें अङ्गुलीके अग्र भागसे प्रतिसारण लगावे इसमें भी कवलकी तरह ही योग अतियोगके लक्षण होते हैं, तथा जो जो व्याधियां कवल धारणसे शान्त होती है वे ही प्रतिसारणसे भी शान्त होती है। इसपर मनुष्यको दोष नाशक और अनभिष्यन्दि पथ्य सेवन करना चाहिये।

यदि सविपान्न भोजन जीभ पर पहुंच जाता है तब जिह्वा पत्थर अथवा अष्ठीला रोगके समान अकड़ जाती है और रसका ज्ञान नहीं होता है, जिह्वामें पीड़ा और दाह होने लगता है। ओर कफ भी बढ़ जाता है—ऐसा होनेपर भाफ प्रकरणमे जो सिरीषादि लेप कहा है सो करे अथवा धायके फूल, हरड़ छाल, जामुनकी गुठली, इनको शहदमें मिलाकर लगावे। या अंकोलकी जड़ तथा सातलाकी छाल अथवा सिरसके वीजोंको शहदमें मिलाकर जिह्वापर लगावे।

अथाभिन्यास सन्निपात लक्षणम्

दोपास्तीव्रतरा भवन्ति वलिनः सर्वेऽपि यत्रज्वरे।
मोहोऽतीव विचेष्टता विकलता श्वासो भृशं मूकता॥
दाहश्चिक्कण माननञ्च दहनो मन्दो वलस्य क्षयः।
सोऽभिन्यास इति प्रकीर्तित इह प्राज्ञैर्भिपग्भिः पुरा॥

भावार्थ—जिस सन्निपात ज्वरमें सम्पूर्ण दोप कुपित होकर वेहोशी संज्ञानाश, श्वासाधिक्य, मूकता (गूंगापन), दाह, मुखपर चिकनापन, अग्निमन्द, वलहानी आदि लक्षण करदेते है, उस रोगको अभिन्यास ज्वर कहते है।

अभिन्यास चिकित्सा

अभिन्यास और सन्यासकी चिकित्सा समान रूपसे ही की जाती है, अतः वैद्य वन्धुओंको चाहिये कि इसी प्रकरणमे आगे सन्यासकी चिकित्सा लिखी जावेगी उसीके अनुसार इस रोगकी चिकित्सा कर। प्रायः इस रोगमे मैंने निम्नलिखित औषधियोंसे फायदा हुआ देखा है।

कारव्यादि क्वाथ, द्वात्रिंशदाख्य क्वाथ, योगराज क्वाथ, शृंग्यादि क्वाथ, अर्कादि क्वाथ, अष्टादशाङ्ग क्वाथ, तथा सूचिका भरण रस, समीरपन्नग रस सन्निपात दावानल रस आदि औषधिया प्रयोगमें

लाई जाती है, तथा नस्यमे संज्ञाप्रबोध रसः संज्ञा प्रबोध प्रथमन नस्यसे भी अच्छा फायदा होता है।

शृंग्यादि क्वाथ

शृंगी भार्ङ्ग्यभयाजाजी कणाभूनिम्ब पर्पटः।
देवदारू वचाकुष्ठयास कट्फल नागरैः॥
मुस्त धान्यकतिक्तेन्द्रयव पाठा हरेणुभिः।
हस्तिपिप्पल्यपामार्ग पिप्पलीमूल चित्रकैः॥
बिशालारग्व धोरिष्ट शटीवाकुचिका फलैः।
विडगरजनी दार्वी यवानी द्वय संयुतैः॥
समांशैर्विहितः क्वाथो हिंग्वार्द्रक रसान्वितः।
अभिन्यास ज्वर घोरं हन्ति तन्द्राश्च तत्क्षणात्।

भावार्थ—काकड़ासिगी, भारङ्गी, हरड, जीरा, पीपल, चिरायता, पित्तपापड़ा, देवदारु, वच, कूठ, जवासा, कायफल, सोंठ, नागर मोथ, धनिया, कुटकी, इन्द्रजौ, पाढल, रेणुका बीज, गजपीपल, चिरचीटा, पीपलामूल, चीता, इन्द्रायन, अमलतास, नीम, कचूर, बावची, बायबिडंग, हल्दी, दारूहल्दी, अजवाईन, इनका क्वाथ बना कर उसमे हींग और अदरखका रस मिलाकर पीनेसे शीघ्र ही अभिन्यास ज्वर, तन्द्रासे आक्रान्त रोगी आरोग्य हो जाते है।

कारव्यादि क्वाथ—कालाजीरा, पुष्करमूल, एरन्डमूल, त्रायमाण, सोंठ, गिलोय, दशमूल, कचूर, काकड़ासिगी, जवांसा, भारंगी, पुनर्नवा, इन द्वादश औषधियोंको समभाग लेकर ५ गुने गोमूत्रमें मिला क्वाथकर पिलानेसे सब नाड़ियोंकी शुद्धि होकर घोर अभिन्यास ज्वर शान्त हो जाता है।

योगराज क्वाथ

नागरं धान्यकंभार्गी पद्मकं रक्त चन्दनम् ।
पटोल पिचुमन्दश्च त्रिफला मधुकं बला ॥
शर्करा कटुका मुस्तं गजाह्वा व्याधिघातकः ।
किरात तिक्तममृता दशमूली निदिग्धिका ॥
योगराजो निहंत्येष सन्निपातं त्रिकोल्वणम् ।
सन्निपात समुत्थानं मृत्युमप्यागतं जयेत् ॥

भावार्थ—सोंठ, धनीयां, भारंङ्गी, पद्माख, लालचन्दन, पटोल-पत्र, नीमछाल, त्रिफला, मुलेहटी, खरटी, मिश्री, कुटकी, नागर-मोथा, गजपीपल, अमलताश, चिरायता, गिलोय, दशमूल, और कटेरी इनका क्वाथ त्रिदोषोल्वण सन्निपातको नष्ट करता है और सन्निपातसे उत्पन्न हुई मृत्युको भी जीत लेता है।

अर्कादि क्वाथ

भास्वन्मूलं जीरकव्योष भार्ङ्गी । व्याघ्रीशुण्ठी पुष्करं गोजलेन ॥
शिद्धं मद्यः शीत गात्रार्तिमोह । श्वासश्लेष्मो द्रेककासान्निहंति ॥

आककी जड, जीरा, मिर्च, पीपल, भारङ्गी, कटेरी, सोंठ, पोहकरमूल, इनको गोमूत्रमें पकाकर सेवन करनेसे तत्काल ही शीताङ्ग, मोह, श्वास, कास, कफकी अधिकता और खासी नष्ट हो जाती है। अष्टादशाङ्ग क्वाथ, सूचिका भरण रस, समीरपन्नग रसादिकका विवरण पीछेके प्रकरणोंमें लिखा जा चुका है। अतः वहीं पर देखलेवें।

सन्निपात दावानल रसः

तालकं नागवङ्गं द्वे हरवीर्यश्च टङ्कणम् ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं गरलं पार्वती शिला ॥

एतानि समभागानि निम्बुनीरेण मर्दयेत् ॥
पाचितं बालुकायन्त्रे दिनैकं तीव्र वह्निना ॥
स्वांगंशीतलमुध्दत्य शिखिच्छागाहिपित्तकैः ।
भावितं मापमात्रञ्च दातव्यं दोप नाशनम् ॥
सन्निपातन्निहंन्त्याशु दध्यन्नं पथ्यमाचरेत् ।
दावानल रसः ख्यातो वीतिहोत्र प्रकाशितः ॥

भावार्थ—शु० हरिताल, नाग और वंगभस्म, शु० पारा, शु० सुहागा, तीनोंक्षार, पांचो नमक, सर्पविष, शु० गन्धक; शु० मैनशिल, सब समभाग लेकर हरिताल पारा गन्धक मैनशिलकी नील वर्ण कज्जलीकर अन्य सब औषधियोंको मिलाकर निम्बूके रसमे १-२ दिन मर्दनकर गोला बनाय शराब सम्पुटमें बन्द कर ६-७ कपड़ मिट्टी देकर अच्छी तरहसे सूखनेपर बालुका यन्त्रमे बन्दकर चार प्रहरकी कड़ी आंच दे। स्वांग शीतल होनेपर मोर, बकरा, और सांपके पित्तोसे १-१ भावना देकर उड़द बराबर गोलियें बनाकर रख छोड़ें। इनमेंसे १-१ समयोचिता नुपानके साथ देनेसे यह तमाम सन्निपातोंको नष्ट करता है। मूर्च्छा जगनेपर अत्यन्त भूख लगे तो दही भात खानेको देवे। इस प्रयोगसे अभिन्यासमे अच्छा फायदा होता है। कविराज श्री ज्योतिर्मयसेनजीके औपधालयमे यह औषध तैयार की जाती थी। उनके यहांसे मँगवाकर मैंने भी कितने ही रोगियोंको खिलाई इससे अच्छा फायदा होता है। कविराजजी प्रायः इस रसको अभिन्यास, सन्न्यास रोगमें प्रयुक्त करते थे।

संज्ञा प्रबोध प्रधमनम्

वचारसोनकटुकं सैन्धवं बृहती फलम् ।
रुद्राक्षं मधुसारञ्चफलं सामुद्रिकं मतम् ॥

गन्धेशौ समभागानि ह्यर्कक्षीरेण भावयेत् ।
भावयेन्मीन पित्तेन त्रिवारं चूर्णयेत्ततः ॥
धमनं कथितं श्रेष्ठं सन्निपाते सुदारुणे ।
कफोल्वणे तीव्रवाते अपस्मारे हलीमके ॥
शिरोरोगे नेत्ररोगे कर्णरोगे विधानतः ।
ध्मापयेद्घ्राणछिद्राभ्यांसज्ञा करणमुत्तमम् ॥

भावार्थ—वच, लशुन, कुटकी, सेन्धव नमक, भटकटैयाफल, रुद्राक्ष, मुलहठी, समुद्रफल, पारा और गन्धक समभाग लेकर बारीक चूर्णकर कज्जलीमें मिलाय आकके दूध और मछली पित्तकी ३-३ भावनाएँ देकर सुखाकर बारीक चूर्णकर रख छोड़े ।

उपयोग—भयंकर कफोल्वण सन्निपात, तीव्रज्वर, अपस्मार, हलीमक, शिरोरोग, नेत्ररोग कर्णरोग इनमे इसका नस्य देनेसे चेतना प्राप्त होती है ।

ऐलोपेथिक, होमियोपैथिक में इस रोगकी कोई अव्यर्थ औषध नहीं है, आजकल पाश्चात्यचिकित्सक इस रोगमे पेनिसिलीन, स्टेप्टोमाईसीन का प्रयोग करते है । लेकिंन फायदा होता है यह बात कहीं पर भी देखनेमें नहीं आई । आयुर्वेद मतसे भी यह रोग बिल्कुल असाध्य है तथापि कभी कभी कोई रोगी उपरोक्त चिकित्सासे ठीक हो जाता है ।

॥ इति सन्निपात ज्वर चिकित्सा समाप्तम् ॥

संन्यास सन्निपात ज्वर लक्षणम्

अतिसरति वमति कूजति गात्राण्यभितश्चिरं नरः क्षिपति ।
सन्यास सन्निपाते प्रलपत्युग्राक्षि मन्डलो भवति ॥

भावार्थ—जिस मनुष्यको सन्यास नामक सन्निपात ज्वर होता है, वहरोगी अतिसार बमन युक्त होकर वार २ अङ्गोको इधर-उधर पटकता रहता है तथा प्रलाप करता हे। उसके नेत्र मन्डल अत्यन्त उग्र हो जाते है। यह सामान्य लक्षण वताये है।

संन्यास सम्प्राप्ति पूर्वक विशेप लक्षण

इस रोगके आक्रमण तीन रूपमे होते है।

(१) रोगी वेहोश होकर जमीनमें गिर पड़ता है। इसकी शारीरिक मानसिक तमाम चेष्टाये नष्ट हो जाती है। देखनेसे मालुम देतो है कि रोगी गाढ़ निद्रामे सो रहा है। इस रोगीका चेहरा तमतमाया हुआ एवं श्वास कष्टसे आता है। नाड़ी भारी और मन्द होती है। आंखोकी पुतलियां फैली हुई होती है। मुंह एक पार्श्व को तरफ झुक जाता है। बार २ मे आक्षेप होता है। यदि सहसा आक्षेप शुरू हो जाय तो बृक रोगकी आशंका करनी चाहिये।

(२) जब रोगका दूसरे रूपमे आक्रमण होता है तव रोग होनेके पूर्व ही रोगीको सूचना दे देता है। जैसे—भ्रम, मूर्च्छा, घबराहट, शिरमें पीड़ा हृदौर्वल्य, शिरमे खिचाहटका अनुभव गरमीका अनुभव, मलावरोध, मूत्रमें गंदलापन, विचारोंमे स्थिरता, वाक् शक्तिका ह्रास, चेहरेपर सुर्खी, रक्तश्राव, आंखोमे अन्धेरापन, एक वस्तुकी दो वस्तु दिखलाई देना, हाथोमें ढीलापन, स्मरण शक्तिका लोप होना तथा पाण्डु वर्ण हो जाता है। इस रूपमें जव आक्रमण होता है तब सर्व लक्षण मूर्च्छासे मिलते हैं। शास्त्रकारोंने इस रोगको मूर्च्छान्तर्गत माना है।

(३) इस रोगका तृतीय आक्रमण पक्षाघात रूपमें होता है। किसीको एक पार्श्वमे पक्षाघात हो जाता है, किसीको एक अङ्गमें याने एक हाथमे या एक पैरमें होता है। पक्षाघात होने पर रुग्णका अङ्ग क्रिया हीन होकर निर्जीव हो जाता है। तीव्र रूपमे मुंहपर आक्रमण होने पर मुंह एक तरफ मुड़ जाता है। वाक् शक्ति नष्ट हो जाती है। जिह्वा स्तम्भ हो जाती है। या जिह्वा टेढ़ी हो जाती है। इसलिये इशारोंसे ही जरूरत की वस्तुएं मांगता है, चेहरेकी कान्ति नष्ट हो जाती है। प्रथम दोनो आक्रमणोके समय रोगके पूर्वही भावी व्याधिकी सूचना मिल जाती है। यथा श्वास पूरा न लेकर बीचमे से ही बाहर फक देना। मुंहसे फेनयुक्त लालश्राव होने लगता है, हन्वस्थि जकड जाती है। निगलनेमें कष्ट होता है, मुंहमें पानी डालने पर ओष्ठोंके द्वारा बाहर आ जाता है। चेहरेका रङ्ग लाल पीले रङ्गका हो जाता है। आंखे सुस्त अलसायी सफेद हो जाती है।

तथा पुतली संकुचित हो जाती है। अङ्ग क्रिया रहित कठोर हो जाते है। बीच २ में कभी-कभी किसी-किसी रोगीको आक्षेप सर्वाङ्गमे या एक पार्श्वमे होने लगते है। तथा हाथ पैर ठन्डे रहते है। पसीना बहुत आता है। दस्तकी कब्जी रहती है या बिगर प्रवाहणके आपसे मल निकल जाता है। मूत्र अच्छी तरहसे होता है या जब तक वस्तीमें पूरा पेशाब नहीं भरता तब तक नही होता है। नाड़ी प्रथम मन्द पीछे तेज भरी हुई होती है। यदि नाड़ीकी गति नीचेमे ६० तक ऊपरमें १२० तक हो जाय तो अवस्था चिन्ता जनक समझी जाती है। तापमानमे थोड़ा-सा अन्तर आना उत्तम है। यदि ज्यादा अन्तर हो जाय तो भयकारी है। इस रोगका आक्रमण २-३ घन्टेसे लेकर कुछ दिनो तक रहता है। जितनी ज्यादा देर तक रहता है उतना ही कष्ट दायक है। यह रोग धीरे-धीरे

अच्छा होता है, या आधा अच्छा होता है या बिल्कुल ही अच्छा नहीं होता। संज्ञा हीन होकर मृत्यु हो जाती है। यह रोग ५ वर्षसे ऊपरको आयु वाले पुरुषोंको स्त्रियोंकी अपेक्षा अधिकतर होता है।

जैसे शास्त्रमें लिखा है

वाग्देह मनसां चेष्टा माक्षिप्यति वला मलाः।
सन्यसन्त्य वलं जन्तु प्राणायतन माश्रिताः॥
सनासन्यास सन्यस्तः काष्ठीभूत मृतोपमः।
प्राणैर्विमुच्यते शीघ्रं मुक्त्वा सद्यः फलां क्रियाम्॥

भावार्थ जब हृदयमे रहने वाले अत्यन्त बलवान कुपित दोष प्राणायतनरूप हृदयमें वाक्शक्ति देह शक्ति मानसिक शक्तिको नष्टकरके दुर्वल मनुष्यको मूर्छित कर देते है, उस रोगको सन्यास रोग कहते है। इस रोगसे ग्रसित मनुष्य क्रियाहीन मृतकके समान हो जाता है।

यह रोग कैसे पुरुषोंको होता है।

जिनकी ग्रीवा मोटी होती है, छाती बड़ी होती है, कफ प्रकृति वालेको शरीर जिसका दृढ़ होता है, जिसके वंश परम्परासे दुवलता हो, जो ज्यादा भोजन पान करने वाला हो, जिसको लगातार गठीयाकी बीमारी चलती हो, जिसको कब्जियतकी बीमारी हो या यकृत रोग वृक्करोग पान्डुरोगोंसे पीडित ऐसे उपरोक्त पुरुषोके मस्तिष्कमें रक्तसंचय होकर अथवा जिसको मानसिक आघात हो गया हो, ऐसेको तथा जिसकी कामेच्छा हो या पेटमे ज्यादा गर्मी पैदा हो गई हो अथवा किसीको रक्तश्राव होता हो उसको तथा अतिसार वमनके एक साथ रोकनेसे तग कपड़ा पहिनने वालेको भी तथा इस रोगके आक्रमण साधारणतः रक्त श्रावके होनेपर होता है। यह श्राव त्वचाके पृष्टपर हो अथवा मस्तिष्कमें हुआ हो मुख्य कारण इस रोगका रक्तबाहनियोंके फटनेसे रक्तके जमनेका है। दूसरा कारण मस्तिष्कमें पानी भर जाना है। इसलिये इस रोग ग्रसित रोगीके निदानके समय निम्नलिखित रोगोंसे तारतम्य कराना

चाहिये। जैसे —साधारण मूर्च्छा, मद्यजन्यमूर्च्छा अफीम विषजन्य मूर्च्छा, अपस्मार आदिसे।

मूर्च्छा वात प्रकृतिवाले पुरुषोंको या स्त्रियोंमें होती है और नाड़ीका ज्ञान ठीक प्रकारसे होता रहता है और ज्ञान भी जल्दी ही हो जाता है।

मद्य जन्य मूर्च्छामे रोगीके मुंहसे मद्यकी दुर्गन्ध आती है आंख की पुतलियाँ समान रहती है, जबकि सन्यासमे १ पुतली संकुचित और दूसरी विकसित रहती है। तथा इसमे हल्ला गुल्लासे रोगीको जगा सकते है परन्तु सन्यासमे नही जागता है।

अफीम जन्य मूर्च्छामें रोगीके मुहसे अफीमकी गन्ध आती है वमनमें भी अफीमकी गन्ध आती है। अफीमके रोगीको शिरपर शीत उपचारकर तथा हिला डुलाकर जगा सकते है, परन्तु फिरसे वेहोश हो जाता है। सन्यासके रोगीको पिन चुभाकर भी जगाने की चेष्टा करेंगे तो भी जगेगा नहीं काटनेवाले अंगोंको खीचकर हो रह जावेगा। अफीमवाले रोगीको चुभानेका कुछ भी अनुभव नहीं होता। सन्यास प्रायः मोटे या पतले रोगियोमे होता है। सन्यासका आक्रमण सहसा होता है। अफीमका आक्रमण धीरे धीरे बढ़ता है।

अपस्माराक्रमणमे रोगीको आखे ऊपरकी पलकोमे चली जाती है सिर्फ सफेद भाग दिखलाई देता है। आक्रमणके समय रोगीके मुंहसे आवाज निकलती है। साथमें झाग आजाते हैं। सन्यासमें ऐसे कोई भी लक्षण नहीं होते।

सन्यास चिकित्सा

शास्त्रमें सन्यासको भी मूर्च्छान्तर्गत ही माना है। परन्तु मूर्च्छा और उन्माद दोषोंके वेग खत्म होनेपर अपने आप ही शान्त हो जाते है। किन्तु सन्यास एक ऐसा रोग है जो औषधि सेवनके बिना शान्त होता ही नहीं।

जैसे और भी लिखा है

प्रभूतदोषस्तमसोतिरेकात्सम्मूर्च्छितो नैवविबुध्यते यः
सन्यस्तसंज्ञः सहि दुश्चिकित्स्योनरोभिषग्भिः परिकीर्त्तितोऽसौ

भावार्थ—अधिक दोषोंवाला मनुष्य तमोगुणकी अधिकतासे मूर्छित होकर पीछे जागृत नही हो उस रोगको वैद्य लोग सन्यास कहते है। और इसकी चिकित्सा अत्यन्त कठिन बतलाई है। फिर भी चेष्टा करनेसे कोई २ रोगी आराम हो जाता है।

अञ्जनान्य व पीडाश्च धूमाः प्रधमनानिच
सूचिभिस्तोदनं शस्तं दाहपीड़ानखान्तरे

सन्यास रोगसे पीडित रोगीको चेतना करानेके लिये सर्वप्रथम अंजन लगाना चाहिये। या मूर्च्छानाशक औषधियोंका स्वरस निकालकर नासिकामे निचोड़ना चाहिये या तीक्ष्ण औषधियों द्वारा धूम देवे। या दो मुखवाली नलिका मे औषध चूर्णको भरकर मुखसे फूंक मारकर चढ़ावे। या अङ्गोमे सूई चुभाकर ज्ञान करावे। या नखूनोपर अग्नि द्वारा दहन क्रिया करे। अथवा बालोंको एवं रोमोंको उखाड़े। या दांतोंसे कटवावे। या कौंछकी फलीको घिसे। इन सब क्रियाओंमेंसे जो भी उचित समझे जल्दी से जल्दी ही करें अगर यह उपरोक्त क्रियाये सर्व व्यर्थ हो जाय तो औषधव्यवस्था करे मेरे पास इस रोगसे आक्रान्त कुछ रोगी आये उनकी मैंने जो चिकित्सा करी वह मेरा अनुभव आपलोगोंके सामने लिख रहा हूं।

शिरीषाद्यञ्जनम्

शिरीषबीजगोमूत्र कृष्णामरिच सैन्धवैः
अञ्जनंस्यात्प्रबोधाय सरसोन शिलावचैः

भावार्थ—शिरीषबीज, पीपल, कालीमिर्च, सैन्धव नमक, लशुन, मनः शिला वच इन सबको समान भाग लेकर बारीक चूर्ण बनावे और गौमूत्रमे मर्दनकर धूपमे सुखाकर अंजन बना लेवे इसको सलाईसे आंखमे लगानेसे संज्ञा प्राप्ति होती है।

सैन्धवादिनस्यम्

सैन्धवं श्वेतमरिचं सर्वपं कुष्ठमेव च
वस्तमूत्रेण सम्पिष्य नस्यं तन्द्रा निवारणम् ।

सैन्धव नमक, सफेद मिर्च, सफेद सरसों, कूठ इनको बकरेके मूत्रमें पीसकर नस्य देनेसे शीघ्रही सन्निपातज-तन्द्रा नष्ट हो जाती है।

मधूकसारादि नस्यम्

मधूकसार सिन्धूत्थ वचोपण कणाः समाः ।
श्लक्ष्णं पिष्ट्वाम्भसा नस्यं कुर्यात्संज्ञा प्रबोधनम्

महुआ छाल, सैन्धव नमक, वच, कालीमीर्च, पिपल, इन सबको समान भाग लेकर वारीक कपड़ छान चूर्णको गरम जलमे मिलाकर नस्य कर्म करनेसे शीघ्र ही चेतना आ जाती है।

नस्यगुणाः-नस्येन रोगाः शाम्यन्ति नराणा मूर्ध्व जत्रजा ।

नस्य कर्म करनेसे जत्रु से ऊपरके सर्व रोग नष्ट हो जाते हैं। नस्यके तीन लक्षण है।

नस्ये त्रीण्युपदिष्टानि लक्षणानि प्रयोगतः ।
शुद्धहीनातिसंज्ञाांन विशेषाच्छास्त्र चिन्तकैः ॥

शास्त्रके जानने वालोंने नस्यके तीन लक्षण बतलाये है। जैसे शुद्धलक्षण, हीन शुद्धिलक्षण, अतिशुद्धि लक्षण। शिरका हल्कापन, स्त्रोतोंकी शुद्धि, व्याधिका दूर होना, चित्त और इन्द्रियोका प्रफुल्लित होना यह शिरकी शुद्धिके शुद्धि लक्षण है।

हीन शुद्धिके लक्षण

खुजली, लिहसापने, स्रोतोमें (नाक कान आंख मुख) में भारीपन, कफप्रवृत्ति, शिरमें भारीपन ये सब लक्षणहीन शुद्धिके हैं।

अति शुद्धिके लक्षण

मस्तिष्कसे चिकनाई आना, वातकी वृद्धि, इन्द्रियोंमें शिथिलता, सिरमें खालीपन प्रतीत होना तथा कठोरताका अनुभव करना यह अति शुद्धिके लक्षण हैं। नस्यकर्म करनेके बाद भी अगर चेतना न बढ़े तो अबपीड़न क्रिया करनी चाहिये।

अवपीड़नका विधान

अवपीड़स्तु शिरोविरेचन वदभिष्यन्दिसर्पदष्टविसंज्ञेभ्यो-दद्यात् शिरोविरेचन द्रव्याणामन्यतममवपीड्यावपिष्य चेता-विकारकृमिविषाभिपन्नानां चूर्णं प्रधमेत्।

भावार्थ शिरोविरेचनके समान ही अभिष्यन्दि, सांपके काटे हुयेको तथा बेहोशको अवपीड़न कर्म करावे। तथा शिरोविरेचन करानेवाले द्रव्योंमेंसे सहजनेका स्वरस अथवा सहजनेका बीज, नीला थोथाको पीसकर शिरोविरेचन देवे अथवा गोमूत्रमें वायविडङ्ग पीसकर अवपीड़न कर अथवा सिरसका रस, मूलीफलका रस या वच पीपलका अव-पीड़न करे। गोंदीकी छाल, अथवा मेढासिगीकी छाल, इनकी बत्ती बनाकर धूमपानमें उपयुक्त करे। प्रधमन क्रियाके लिये कायफलका चूर्ण नकछिकनीके चूर्णका प्रयोग करे। इस रोगमें काम आनेवाले आयु-र्वेदीय औषधियोंके नाम—कूलवधूरस, वैताल रस, ब्रह्मरन्ध्ररस, सूचिका भरण रस, श्रीप्रताप लंकेश्वर रस, श्वासकुठार रस, चतुर्भुज रस, दशमूल क्वाथ, अष्टादशाङ्ग क्वाथ, अभयादि क्वाथ।

उदाहरण रूप रोगी

रोगीका नाम केशवदेव, उम्र ५० जाति गौड़, देश जयपुर, बराकड़-से सं० १६४६ में आया, इसको बहुत दिनोंसे संग्रहणीकी बीमारी थी शरीरसे बहुत कमजोर था यह अस्पतालमें आकर सुबह ६ बजे भर्ती किया गया रास्तेमें इसको टट्टी बहुत लगती थी। इसलिये १ डाक्टरकी दवा साथमें लाया था जिसमेंसे ३ खु० रास्तेमें खाई थी। अस्पतालमें

आया तब बेहोश था पेटपर आध्मान तथा नाड़ी बहुत दुर्बल थी, शिरपर तथा पैरोंमें पसीना आकर ठन्डे हो रहे थे एक अङ्गमें आक्षेप होता था, आंखोंमें एक आंखकी १ कनीनिका संकुचित थी, एक विकसित थी, इस अवस्थाको देखकर हमने समझ लिया कि इसको सन्यास हो गया है। हालत विल्कुल खराव है, घरवालोंने कहा कि अस्पतालमें आनेकी इसकी अत्युग्र इच्छा थी रातको अच्छी तरहसे था। परन्तु न जाने दवा खानेके वाद अचानक मूर्च्छित हो गया। कितनी ही जगानेकी चेष्टा की लेकिन कुछ सुनता ही नहीं है अब ऐसी हालतमें न हम वापिस जा सकते हैं। आप ही ईश्वरकी जगह हैं इलाज कीजिये, भाग्य होगा तो जी जायगा नहीं तो किस्सा खत्म है ही। मैंने उनको धीरज बंधाया और इलाज चालू किया।

नं० १—प्रातः सायं	म० रा०
श्रीप्रतापलंकेश्वर रस	चन्द्रप्रभा
दशमूल क्काथसे	वज्रक्षार
	अजवाइन अर्क जलसे

तथा सर्वप्रथम शिरीषाद्यञ्जन, आंखोंमें लगानेका आदेश दिया हाथ पैरोंमें शंठी चूर्णकी मालिश कराई, तथा शिरपर दशाङ्ग लेप ठन्डे गुलाबजलमें मिलाकर पट्टी लगवाई। तथा पेटपर दारुषटक् लेप लगवाया यह क्रिया चालू की गई। २ रोज तक यह क्रम चालू रखा परन्तु कोई भी तरहका फायदा नजर नहीं आया। फिर औषध परिवर्तन किया।

प्रातः	सायं	रातको
प्रताप लंकेश्वर	वेतालरस	वृ० वातचिन्तामणि
अदरखरस मधुसे	दशमूल क्काथसे	अभयादि क्काथसे
म० वज्रक्षार ६ रत्ती		
मकर० १ रत्ती		
अर्क मकोयसे		

मधूकसारादि नस्य दिया सिर पेटकी व्यवस्था पूर्ववत चालू रखी। दवा मुँहसे बहुत मुश्किलसे खिलाते थे इस तरह यह क्रम २ रोज तक चालू रखा, १टट्टी हुयी जिसमें एक कृमी निकला आंखोंकी पुतलियां कुछ घूमने लगी परन्तु संज्ञा नहीं हुई तब श्वास कुठारका नस्य दिया जिससे २-३ छींक आई परन्तु फिर भी ज्ञान नहीं हुआ। इस तरह इसका नस्य दिनमें २-३ बार दिया लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। तब मधूक-सारादि नस्य दिया जिससे कुछ २ आंख खोलने लगा परन्तु अच्छी तरह दवा नहीं खाता था। अतः वायविडङ्ग गोमूत्रमें पीसकर अवपीड़न कर्म किया जिससे उसको कुछ ज्ञान हुआ। आवाज देनेसे आंख खोलने लगा और जल भी पीने लग गया इस तरहसे ७ रोज तक उपरोक्त व्यवस्था करनेसे यह रोगी विल्कुल स्वस्थ हो गया। और बादमें इसको पर्पटीका साधन कराया जिससे विल्कुल स्वस्थ होकर अस्पतालका गुणगान करता हुआ अपने घर चला गया। दूसरा रोगी एक भागलपुरसे आया था उसको २ मास पूर्व देशमें अलवरमें मन्थर-ज्वरकी बीमारी हुई थी। उसके बाद वहांसे ठीक होकर भागलपुर आ गया था वहां इसकी स्त्री क्षयाक्रान्त होकर मर गई थी। उसी कारणसे इसके मनमें बहुत दुःख हुआ। बादमें कमजोर हालतमें ही जयपुर कांग्रेस देखने चला गया वहांपर इसको ठण्ढ लगकर छातीमे तथा शिरमें दर्द हो गया। वहासे यह फिर वापिस भागलपुर आ गया। लेकिन वहांपर बहुतसे इलाज कराये कोई फायदा नहीं हुआ, तब इसको यहां कलकत्ते अस्पतालमे लाकर आयुर्वेद विभागमें भर्ती किया। तब मैंने इसकी निम्नलिखित अवस्था देखी।

रोगी नाम मूलचन्द, उम्र २२, गौड़, देशमें अलवर
भर्ती ता० ३-४-४७

भर्ती हुआ उस समय ज्वर ९९ में था शरीरसे बहुत कमजोर था, भूख नही लगती थी खांसी आती थी शिरमें बहुत दर्द था। शिरका

दर्द गर्दनसे उठकर आता था ज्वर प्रातः ९९ सायं १०१—१०२ तक हो जाता था। प्रायः क्षयके लक्षण दिखलाई देते थे प्रथम हमने उसको निम्नलिखित औषध चालूकी

प्रातः	म०	सायं०	रातको
सार्वभौमरस	चन्द्रामृत	ना० लक्ष्मीविलास	रसराज
पानरसमधुमें	वासावलेहसे	पान रस मधुसे	दुग्धसे

ता० ३-४-४७ ता० ५-४-४७ तक यही दवा चालू रखी परन्तु ता० ५ को सुबह जब मैंने देखा तो बोला कि मेरे शिरमे बहुत दर्द है गला घुट रहा है आंखोंके सामने अन्धेरी सो आती है। खानेकी इच्छा नही है, खांसी बहुत आती है, जिससे कफके साथ कुछ रक्त भी आता है। तब मैंने कहाकि चिन्तामत करो समय लगेगा तुम अच्छे हो जावोगे लेकिन् वह जीवनसे निराश हो गया था। इसलिये कुछ दवामें अश्रद्धा करता था। अस्तु उसी रातको उसके शिरमें वेदना बढ़ गई। और भूल बकने लगगया, तन्द्राभी आने लग गई। तब मेरेको देखने फिर बुलाया तब मैंने शिरपर दशाङ्गलेप कर दिया तथा कट्फलका नस्य भी दिया। परन्तु कुछभी फायदा नहीं हुवा। और अचानक मूर्च्छा हो गई, घरवाले फिर दौडकर मेरे पास क्वार्टरपर आये, मैंने जाकर देखातो मालुम हुआ कि इसको तो सन्यास हो गया है। मैंने इसको बहुत हिलाया डुलाया, आवाज दी परन्तु बिल्कुल चेतना नही हुई। कम्पाउन्डरको दवा बतलायी लेकिन् वह किसी भी तरहसे निगलने नही सका, मैंने भी दवा खिलाने की बहुत चेष्टाको परन्तु गलेमेसे दवा नीचे उतरती ही नही थी। तब श्वास कुठारका नस्यदिया उससे भी कुछ नही हुआ, तब शिरीषाद्यञ्जन ओखोंमें लगाया उससे भी कोई फायदा नहीं हुआ, धूम अवपीड़न प्रधमन आदि क्रियायेकी लेकिन कुछ भी फल नहीं हुआ तब ब्रह्मरन्ध्ररसका मस्तकपर बाल हटाकर सूचीकाग्र भागसे प्रयोग किया इसके प्रयोगसे आधे घन्टे बाद ही ज्ञान हो गया। मंहसे जल पीने

लग गया अपनी सर्व शिकायत भी वतला दी एक ही वारके प्रयोगसे सन्यास विल्कुल अच्छा हो गया पथ्यमें दूध दिया गया। शरीरमें जलन लग गई तब गरम पानीमें यूडीकोलन डालकर सब शरीरपोंछा शरीरमें दाह बहुत अधिक थी। इसलिये ३ रोज तक ३-४ बार जलसे अर्धस्नान कराना पड़ा। ऐसेही झूंझुणूमे भी एक रोगीको सन्यास हो गया था तब वैद्य प्यारेलालजीने विषवटिका प्रयोग कराया था। उससे बहुत फायदा हुआ था उनसे मैंनें पूछा कि यह विषवटी कहांका नुसखा है। तो उन्होने बतलाया कि सूचिकाभरण रसको ही हम विषवटी कहते है। उन्होंने मेरे सामने ही इसवटीको बनाया इसमें काले सर्पका विष पड़ता है। वह बहुत सावधानीसे संग्रह किया जाता है इसको निर्म्माण विधि आगे लिखी जावेगी।

इसरोगमें अनुभव की गई औषधियोंके नुसखे

ब्रह्मरंध्ररसः

रसाभ्रगंधकं तालं हिंगुलं मरिचं तथा।
टंकणं सैन्धवोपेतं सर्वांशममृतं तथा॥
सर्वपाद समोपेतं महिषी पित्तमर्दितम्।
ब्रह्मरन्ध्रे प्रयोक्तव्यं सन्यास ज्ञान विभ्रमे॥
सहस्र कलशैः स्नानंलेपनं चन्दनादिभिः।
इक्षुमुद्गरसं भोज्यं तक्र भक्तमथेप्सितम्

भावार्थ शु० पारद, शु० गन्धक, शु० हरिताल, शु० हिङ्गलु, अभ्रक-भस्म, मरिच, भूनासुहागा, सैन्धव नमक, सर्व समभाग लेकर इन सबके बराबर शु० वत्सनाभ मिलाकर खरलमें डालकर भैंसेका पित्त उपरोक्त द्रव्योंसे चतुर्थांश ¼ डालकर मर्दन करे। सूखनेपर शीशीमें रख छोड़े। इसमेंसे सन्यास और ज्ञानविभ्रम सन्निपातमें ब्रह्मरन्ध्रके ऊपरसे वाल हटाकर पछनालगाकर मसले तो अवश्य फायदा हो जाता है चेतना

होनेपर जलनका अनुभव हो तो पथ्यमें दूध मिश्री जल, ईख स्वरस देवे, चन्दनादि शीतल द्रव्योंका लेपनकरे तथा ठण्ढे जलसे शरीरको दिनमें २-३ वार पोछ देवे।

सूचिका भरण रस

रसं सर्पविषं नाभि धत्तूर रस मर्दितम्।
सूचिकाग्रेण दातव्यं सन्निपात कुलान्तकम्॥

रस सिन्दूर, सर्पविष, कस्तूरी समभागलेकर धतूरेके पत्तेके स्वरसमें १-२ दिन मर्दन कर रख छोड़े। इसमें सूईके अग्रभागमेंसे याने $\frac{1}{32}$ रत्ती लेकर खानेको तथा शिरमें पछना लगाकर रक्तमें मिश्रणकरनेसे घोर सन्निपात याने सन्यास रोग निवृत्त हो जाता है।

—इस योगमें जो सर्पविष पड़ता है वही एक खास वस्तु है। उसका संग्रह करना आशान काम नहीं है। कालवेलिया लोग जो सर्पविष वेचते है वह नकली चोज है असली लेना हो तो निम्नलिखित विधिसे लेवे।

विधि—काले सर्पको जंगलसे पकडकर मँगवाये और एकान्त स्थान में ले जाकर उसकी पूंछको अच्छी तरहसे पैरसे दवा लेवे। और फनको बायें हाथसे पकडकर उसको क्रोधित करें। जब वह खूब क्रोधित हो जावे और काटनेकी चेष्टा करे तव उसके मुँहके पास ताड़ का पंखा या खजूरका पंखाको कटवावे। इस तरहसे सर्प विष पंखेके ऊपर आ जावे तो उसको पंखेसे तेल द्वारा धोकर उतार लेवे। और काममें लेवे। इस प्रकारसे लिया हुआ ही विष काम देता है। सपेरा लोग जो बिक्री करते हैं वह केवल मांसका टुकड़ा है। उसमें विप नहीं है। सर्प जबतक क्रोध नहीं करेगा विष नहीं निकलेगा जैसे सुश्रुत में भी लिखा है।

शुक्रवत् सर्वसर्पाणां विषं सर्वशरीरगम्
क्रुद्धानामेति चाङ्गेभ्यः शुक्रं निमर्थनादिव।

जैसे वीर्य सम्पूर्ण देहमें व्यापक है उसी तरह सर्पोंके भी सम्पूर्ण शरीरमें विष व्याप्त रहता है। परन्तु जब वे क्रोधित होते हैं तव ही शुक्रकी तरह, जैसे स्त्रीके साथ आलिंगन करनेसे वीर्य निकलता है उसी तरह सर्पोंके काटनेसे विष निकलता है। विना काटे सर्प विप नहीं उगलते।

सूचिकाभरणरस जनित विदाहे शीतोपचारः

रसजनित विदाहे शीततोयाभिषेको।
मलयजघनसारालेपनंमन्द वातः॥
तरुणदधिसिताढ्यं नारिकेली फलाम्भोः॥
मधुर शिशिरपानं शीतमन्यच्च शस्तम्

भावार्थ—पित्तादि सर्पविषादिभिर्भावित रस सेवनकाले यदि विदाहाद्यःस्युस्तदाशीत जलेनाभिषेकार्यः। चन्दन कर्पूरादीनां तनुः लेपस्तथा ताल नलिनी पत्रादिभिर्व्यजनं, पथ्यार्थे दधिशर्करं, नारिकेलाम्बु, अन्यच्च यद्द्रव्यं मधुर शीतञ्च तद्यात् यादिति।

कुलवधू रसः

शुद्धसूतं मृतं नागं मृतं ताम्रं मनःशिला।
तुत्थकं तुल्य तुल्यांशं दिनमेकं विमर्दयेत्॥
रसश्चैवोत्तरवारुण्या श्चणमात्रा वटीकृता।
सन्निपातं निहन्त्याशु नस्य मात्रेण दारुणम्॥
एषा कुलवधूर्नाम जलैः घृष्ट्वा प्रदापयेत्।

भावार्थ शु० पारद १ तो०, नागभस्म १ तो०, ताम्रभस्म १ तो०, शु० मनःशिला १ तो०, शु० तुत्थ १ तो०। इन सबको खरलमें डालकर इन्द्रायणके स्वरसमें मर्दन कर चणेके बराबर गोली बना लेवे। इसमें

से जरूरतके समय १ गोली जलमें घिसकर नस्यमें देवे। इसके द्वारा शीघ्र ही सन्निपातज मूर्च्छाका नाश होता है।

श्री प्रतापलंकेश्वरो रसः

अपामार्गस्यमूलानां चूर्णंचित्रकमूलजैः।
वल्कलैर्मर्दयित्वाऽथरसं वस्त्रेणगालयेत ॥
तेनसूतसमं गंधमभ्रकं पारदं विषम्।
टंकणंतालकञ्चैव मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥
त्रिदिनं मुसलीकंदैर्भावयेद्धर्मरक्षितम्।
मूषाञ्च गोस्तनाकारामापूर्योपरि ढकयेत् ॥
सप्तभिर्मृत्तिका वस्त्रै र्वेष्टयित्वा पुटेल्लघु।
रसतुल्यं लोहवङ्गं रजतंताम्रकंतथा।
मधूक सार जलदं रेणुकं गुग्गुलं शिलाम्।
चाम्पेयञ्च समांशं स्याद्भागार्धशोधितं विषम् ॥
तत्सर्व मर्दयेत् खल्वे भावयेद्भिषनीरतः।
आतपे सप्तधातीव्रे मर्दये द्धटिकाद्वयम् ॥
कटुत्रयकषायेण कनकस्य रसेनच।
फलत्रय कषायेण मुनिपुष्प रसेनच ॥
समुद्रफल नीरेण विजया पत्र वारिणा।
चित्रकस्य कषायेण ज्वालामुख्यारसेनच ॥
प्रत्येकं सप्तधाभाव्यं तद्वत्पित्तैश्चपञ्चभिः।
सर्वस्य समभागेन विषेण परिधूपयेत् ॥

विमर्द्य भक्षयित्वाच रक्षयेत्कूपिकोदरे ।
गुञ्जैकं वह्नि चूर्णेन शृङ्गवेर रसेनवा ॥
दद्याच्च रोगिणे तीव्रमौढ्यविस्मृतशान्तये ।
क्षुरेण तालुमाहृत्य घर्षयेदार्द्र नीरतः ॥
नोद्घाट्यन्ते यदादन्तास्तदा कुर्यादमुंविधिम् ।
सेचयेन्मंत्रविद्वैद्यो वारिकुम्भशतैर्नरम् ॥
दद्याद्वातेषुसर्वेषु सिन्धुजैः सहवह्निभिः ।
दद्यात्कणामाक्षिकाभ्यां कनकाह्वयपाण्डुषु ॥
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वरोगेषुयोजयेत् ।
अय प्रतापलंकेशः सन्निपात हरः परः ॥

भावार्थ अपामार्ग(चिड़चिटा) की जड़के चूर्णको चित्रकमूलके स्वरस या क्वाथसे मर्दन कर कल्क बनावे, फिर इसकी बराबर शु० पारद डालकर ४ प्रहर मर्दन कर इसमे शु० गन्धक, अभ्रक भस्म, शु० हिंगलु, वछनाग, शु० सुहागा, शु० हरिताल पारेके बराबर बराबर लेकर ७ रोजतक मर्दन करे। फिर धूपमें खरल रखकर सफेद मूसलीके स्वरस मे ३ रोज तक मर्दन करे। इसके बाद इन सब द्रव्योंको गोस्तना कार मूषामे भरकर ७ कपड मिट्टी लगाकर सुखाकर लघु पुटकी आच देवे। स्वाग शीतल होनेपर निकालकर लोहभस्म, वंगभस्म, रजतभस्म, ताम्र-भस्म, महुये का सार, नागरमोथ, रेणुका, गूगल, मैनशिल, चम्पाके फूल. ये प्रत्येक पारेके बराबर, पारेसे आधा वछनाग लेकर इसके स्वरस या क्वाथसे ७ भावनाये देकर कड़ी धूपमें २ घन्टे तक रखे। फिर त्रिकटु, धत्तूरा, समुद्रफल, भांग, चित्रकमूल, ज्वालामुखी इनमें प्रत्येकके यथा-सम्भव स्वरस या क्वाथोंसे ७-७ भावना देकर पञ्चपित्तोंकी १-१ भावना देकर रख छोड़े।

उपयोग इसमेंसे १-१ रत्तीकी मात्रा चित्रकमूल चूर्ण या अदरखरस के साथ देनेसे तीव्रसन्यास और विस्मृति रोग नष्ट होते हैं। यदि खानेसे दवा काम न करे तो तालु प्रदेशमें छुरेसे पाछ लगाकर अदरख रसमें दवाको मिलाकर उस जगह मर्दन करनेसे होश आ जाता है। यदि इतने पर भी होश न आवे तो मन्त्रवित्के द्वारा १०० घडोंकी मस्तक पर धारा दे। पथ्यमें यथेष्ट भोजन दे। वात रोगमें वात हर योगराजादि चित्रक मूलके साथ देव। कामला पाण्डु रोगमे तथा क्षयमे पीपल चूर्ण शहदसे दे। तत्तद्रोग हरानुपानसे यह समस्त रोगों को दूर करता है। सन्निपात रोगकी यह खास औषध है श्वासकुठार रस, वैताल रस, चतुर्भुज रस अन्य प्रकरणमें लिख दिये गये है।

परिशिष्ट भाग

गर्दनतोड़ ज्वर

आयुर्वेदमें क्रकच सन्निपात, डाक्टरीमें मनिञ्जाइटिस, सैरिब्रो-स्पाइनल फीवर, कोई वैद्य इसको भुग्न-नेत्र सन्निपात मानते है सिद्धान्त निदानकार आक्षेप ज्वर कहते है। कितनेक वैद्य इसको शीर्षावरण प्रदाहके नामसे कहते हैं। इसके भेदका क्या कारण है ?

उत्तर—आयुर्वेदमे इसको इस कारणसे क्रकच सन्निपात माना है कि इस सन्निपातमे वायु अधिक रहती है पित्त हीन रहता है। कफ मध्यम रहता है। अतः इसके निम्न लक्षण हैं।

भावमिश्र कथितलक्षण

प्रवृद्धि हीन मध्यैस्तु वातपित्त कफैश्चयः।
तेनरोगास्तएवोक्ता यथादोष वलाश्रयाः॥
प्रलापयालसम्मोहाः कम्पमूर्च्छा रतिभ्रमाः।
मन्यास्तम्भेनमृत्युः स्यात्तत्राप्येतद्विशेपतः॥
भिपग्भिः संन्निपातोऽयं क्रकचः सम्प्रकीर्तितः॥

भावार्थ—अधिक वातहीन पित्त, मध्यकफ वाले सन्निपातमें तत्तद् दोषोंके बलानुसार कम्प, दाह, और भारीपन होते है। फिर भी इस रोगमें यह विशेषता है कि इसमें प्रलाप, थकावट, वेहोशी कम्प मूर्च्छा मन्याका जकडना आदि लक्षण होकर मृत्यु हो जाती है। इससे इसको क्रकच सन्निपात कहते है। हिन्दीमें इसको गर्दन तोड़ ज्वर कहते है। कभी २ यह रोग जनपदोध्वंस संक्रामक रोग बन जाता है। कही २ पर इस रोगमें नेत्र खुले हुये तथा भौंहे टेढ़ी देखकर भुग्ननेत्र भी कहते है। परन्तु उनका यह कथन बिल्कुल निरर्थक है। क्योंकि इसमें मुख्य विकृति मष्तिकावरण और सुषम्नामे ही होती है। जिससे आक्षेप, वमन, गर्दनका जकड़ना अतिसार, स्नायुसंकोच आदि लक्षण हुआ करते है। इसलिये भुग्न-नेत्रकहना उचित नहीं है। कोई वैद्य इसको आक्षेप ज्वर कहते है। परन्तु मैंने ऐसे रोगी भी देखे है जिनको आक्षेप नहीं हुआ है और यह रोग हो गया और ऐसे रोगी भी देखे हैं जिनको भयंकर आक्षेप होकर उपरोक्त रोग हुआ है। आक्षेप रोगमें सिर्फ वायुकी ही प्रधानता रहती है। क्रकचमें तीनों दोष रहते हैं। इसलिये मेरी समझमें तो क्रकच मानना ही श्रेष्ठ है।

यद्यपि प्राचीन ग्रन्थोमें इसका विशेष विवरण पञ्च लक्षणी निदानमे नही मिलता है, सिर्फ आक्षेपकके नामसे सिद्धान्त निदान में मिलता है, तथापि कुछ भैषज्य रत्नावलीमें भी लिखा है। उसीका आधार लेकर अथवा इस रोगसे पीड़ित बहुतसे रोगी मेरी चिकित्सामे आये है। उनके द्वारा जो मुझको प्रत्यक्ष ज्ञान हुआ है उसका आधार लेकर लिख रहा हूं। कृपया उचितानुचित लिखा भी गया हो तो वैद्यबन्धु क्षमा करके उसके सुधारनेका कष्ट करेंगें।

शीर्षाम्बुवृद्धिः (मस्तिष्कावरण प्रदाह)

सुरातिपानादति शैत्यतश्चाप्यसात्म्यभोज्याच्च दुरम्बुपानात्।

वायोः प्रदोषाद भिघाततश्च तथान्त्रमध्ये किमिसम्भवाच्च ॥
शिरः स्थितः स्नेहवृतौक्रमेण सञ्चीयते तत्र प्रभूतमम्बु ।
शीर्षाम्बुरोगः कथितो भिषग्भि र्भवत्यसौ कृच्छ्रतरोपचारः ॥

अति मद्यपानसे अति शीतसे, प्रकृति विरुद्ध भोजनके करनेसे, दूषित जल पीनेसे, वायुके दोषसे, चोटसे, पेटमे कृमि पैदा होनेसे, शिरस्थित स्नेहच्छद कलामे प्रभूत जलसंञ्चित हो जाता है। इसलिये इस रोगको "शीर्षाम्बु" रोग कहते हैं।

बाल्येच प्रायशो रोगो विनिधाहित सेवनात् ।
दन्तोद्भेदे शिशूनांवै बाहुल्ये नाभिजायते ॥

यह रोग बालकोंको मिथ्या आहार विहारके सेवनसे तथा दांत निकलनेके समय भी हो जाता है।

पूर्वरूपम्

जिह्वावृताऽति निद्रत्वं दौर्बल्यं गाढ़विट्कता ।
पूतिनिः श्वासता चास्मिन् भवन्त्येते भविष्यति ॥

इस रोगके होनेसे पहिले जिह्वा मैली हो जाती है। पुरुषको अस्वस्थताका अनुभव होने लगता है तथा मल गाढ़ा श्वासमें दुर्गन्धि आती है।

रूप

शिरसो वेदनातीव्रा कृष्णविट्त्वाल्पमूत्रते ।
श्रोत्रे नेत्रे च तैक्ष्ण्यं स्यान्नाड़ी वेगवति भवेत् ॥

त्वचिरौक्ष्योष्णता-च्छर्दिः विषमाच कनीनिका ।
विवर्ण मुखताचैव निद्रायां द्विज घर्षणम् ॥
कन्डुरोष्ठस्य नाशाद्या राक्षेपो रक्तनेत्रता ।
पक्षाघातः प्रलापश्च शीर्षाम्गुगद लक्षणम ॥

जिस रोगमे शिरमे तीव्र वेदना हो, टट्टी कालेरङ्ग की आती हो, मूत्र कम होता हो, कान आखमे तीक्ष्णता हो नाडीकी गति ज्वर वेगसे तेजहो, त्वचा रूक्ष गरम हो गई हो, वमन होती हो, कनीनिका (कालासानसिया) विषम हो गया हो, सोते समय दात कटकटाता हो, ओष्ठोंपर खुजली हो, नासिकासे फुंकारता हो, आखे लाल हो गई हों, तथा प्रलाप, पक्षाघात, गर्दनमे वेदना होती हो, ऐसे लक्षण वाले रोगको गदनतोड़ कहते है।

इस रोगमें दो अवस्था होती है । (१) साधारण रोग (२) तीव्र रोग। साधारण रोगमे ज्वर ऊपरमे १०२ डिग्री तक नीचेमे ९९ तक होता है। तीव्रावस्थामें ज्वर १०६ तक ऊपरमें नीचेमें १०२ तक रहता है। कभी २ टाइफाईडके माफिक पिड़िकांये भी किसी २ रोगीको निकलती है और उससे कुछ ज्वरमें न्यूनता भी आ जाती है। रोगी कुछ स्वस्थताका अनुभव भी करता है। परन्तु फिर तीव्र लक्षण हो जाते है। तथा किसीको अतिसार भी हो जाता है। तीव्र रोगमे ज्वरकी अपेक्षा नाड़ीकी गति अनियमित रहती है। डाक्टरी मतसे रक्तमें श्वेताणुओंकी संख्या बहुत बढ़ जाती है।

विशेष परिक्षाद्वारा लक्षण

(१) रोगीको सीधा लेटाकर दोनों पैर सीधा रखवाकर एक पैरको मोड़नेसे दूसरा पैर स्वतः मुड़ जाता है।

(२) रोगीको सीधा सुलाकर गर्दनके नीचे हाथ लगाकर आगेकी तरफ झुकानेसे पैर भी स्वतः ही मुड जाते है।

(३) रोगीका एक पैर दूसरे पैरपर रखवा कर पर नीचे लटकाया हो, इस तरह अथवा पलंगपर बंठाकर फिर रोगीके घुटनेके पास ताड़न करने से पैर स्वतः आगेकी तरफ चला जाता है। अथवा बिल्कुल आक्षेप नही होता इस चिह्नको डाक्टरीमें नी-जर्क (knee jork) संज्ञा की है।

डाक्टर लोग इसकी परीक्षा तीसरी या चौथी पृष्ठवंशकी कशेरुकाके बीचमें सूची डालकर तरल पदार्थ निकालकर करते है। उसमे उनके हिसाबसे उसी तरलमे इसके कीटाणु मिलते हैं। वैसे यह रोग जब संक्रामक रूपसे फैल जाता है तब उपरोक्त लक्षणोंको देखकर भी आसानीसे निदान हो सकता है। तीव्र लक्षणोंमें फुफ्फुसावरण शोथ सन्धि स्थानोंमे पूययुक्त शोथ भी हो जाता है। प्रायः आखोंमें कनी-निओंकी सञ्चालन क्रिया बिल्कुल स्थिर हो जाती है। या बड़ी हो जाती है।

असाध्य लक्षण - यह रोग छोटे बालकोंको तथा वृद्धोंके लिये अत्यन्त ही घातक है। तीव्र रोग होनेपर १-३ ७ दिनमे ही कष्ट भोग कर रोगी यमालयको चला जाता है। पूर्णरूपसे परिचर्य्या होनेसे तथा रोगका निदान जल्दी हो जानेसे भाग्यशाली रोगी बच भी जाता है। डाक्टरोंके निदानमें तथा आयुर्वेदके निदानमें यही फर्क रहता है कि उनका कथन है कि मनुष्यके मस्तिष्कमे १० औंस तरल पदार्थ रहता है। उसके बढ़नेसे ही यह बीमारी होती है। मैंने बहुतसे डाक्टरोंसे पूछा कि क्या तरल द्रव्य छोटे बच्चेकों, युवा पुरुपको तथा वृद्धोंमे एक ही प्रमाणसे रहता है, या कम वेशी रहता है, तो उनका यही उत्तर मिला कि हा सबमे ही समान भावसे रहता हे। उनका यह कथन अनर्गल है कारण मनुष्यमें हरेक पदार्थ उम्र तथा आहारके हिसाबको लेकर हो घटते वढ़ते है फिर यही एक ऐसी क्या चीज है जो जन्मसे लेकर मृत्यु पर्यन्त, समान ही रहे। हमारा आयुर्वेद शास्त्र इस बीमारीमे तरल वृद्धि को न मानकर वायु द्वारा दूपित मानता है।

इसीकी चिकित्सा करनेमें सफलता भी देखी गई है। मैंने बहुतसे ऐसे भी रोगी देख जिनको विस्रावण क्रिया द्वारा ३-४ वार तरल निकाल भी लिया गया परन्तु फिर भी रोगी मर गये। और ऐसे भी बहुतसे रोगी देखे है जिनको सेक, लेप, और औषधि सेवनके द्वारा ही बिगर तरल निकाले ही फायदा हो गया है। अतः इस बीमारीमें जहातक हो सके डाक्टरी चिकित्सासे दूर रहनेमें ही श्रेय है। क्योंकि प्रथम तो डाक्टरी चिकित्सा अत्यन्त व्ययसाध्य है। दूसरो फिर इसमे शस्त्र द्वारा जो विश्रावण क्रिया की जाती है उसमें भी रोगीको भयंकर कष्ट होता है। अतः उस कष्टमय जीवनसे तो मृत्यु ही अच्छी है। मेरे पास इस रोगसे ग्रस्त बहुतसे रोगी आये उनका इलाज जिस विधिसे कविराज श्री ज्योतिर्मयजीके निर्देशानुसार मैंने करके सफलता प्राप्तकी है। वही अनुभव मैं आप लोगोंके समक्ष रख रहा हूं आप लोग भी रोगियोंके हितार्थ इस चिकित्सा शैलीको अपनावें

MENINGITIS मेनिञ्जाइटिस का पाश्चात्य ढङ्गसे विशद रूपसे वर्णन

हमारे शरीरके भीतरी प्रधान-प्रधान यन्त्र परस्परमें रगड़ न खा जाय, इसलिये उनको बचानेके लिये उनके ऊपर एक आवरण चढ़ा रहता है। उसके नाम भी अलग-अलग ही है। जैसे फुफ्फुसावरण-प्लुरा; हृत्पिण्डका आवरण-पेरिकार्डियम, आंतोंका आवरण-पेरिटोनियम, इसी तरह मस्तिष्कावरणको मेनिनजेस (Meniges) कहते है। मेनिन्जेसका प्रदाह ही मेनिञ्जाइटिस है।

यह रोग दो प्रकारका होता है—सिम्पुल और ट्यूबरक्यूलर।

सिम्पुल—साधारणतः मस्तकमें आघात, मस्तिष्क मेक्षत उपदंश-जनित अस्थिक्षत, कानकाक्षत, मुंहका विसर्प, टाइफाइड (सन्निपातिक ज्वर) चेचक, निमोनिया, ब्रांको-निमोनिया, नवीन वातरोग, पुराना

चर्मरोग, सर्दी-गर्मी, अंशुघात, मानसिक चिन्ताओंके कारणसे मेनिञ्जाइटिस होता है।

"सिम्पल मेनिञ्जाइटिसके" अवस्था भेदसे लक्षण

प्रथमावस्था—जाड़ा लगकर अथवा कभी जाडा न लगकर ज्वर हो जाता है। अगर रोगी शिशु होता है तो अङ्गोमें अकड़न सरमें भयङ्कर वेदना सहित ज्वर १०३-१०४ डिग्रीतक हो जाता है, इसमें नाड़ी तेज और भारी रहती है, आंखे लाल, प्रलाप, बेचैनी, मुंहकी पेसियोंका कांपना, आंखकी पुतलियोंका चक्करखाना, ग्रीवाकी पेशियोमें खींचाव, ग्रीवा कड़ी हो जाती है, हाथ पैरोंमें कम्पन होता है, पलके मिचने लगती है, आखोंकी पुतलियाँ संकुचित हो जाती है, या विस्तृत हो जाती है या इनमे विषमता आ जाती है, जिह्वा मैली, वमन, कब्ज, आदि लक्षण होते है, यह अवस्था १ से १२-१४ दिवस पर्यन्त रहती है।

द्वितीयावस्था—ऊपरी लक्षणोंके बाद प्रलाप घट जाता है तथा सन्यासावस्था हो जाती है नाड़ीकी गति असमान, और मन्द सविराम हो जाती है, आंखोंकी पुतली फैली (dila ed) रहती है, तथा आँखे अर्धनिमिलित रहतो है, दात कटकटाता रहता है, बिछावन नोचता रहता है, श्वासोच्छ्वास क्रिया अनियमित और मन्द हो जाती है श्वास कष्टसे लेता रहता है।

तृतीयावस्था—रोगी निश्चेष्ट हो जाता है, आंखोंकी पुतलियां बहुत बडी हो जाती है—अनजानमे टट्टी पेशाब करने लगता है अथवा टट्टी पेशाब बन्द ही हो जाते है, सर्वाङ्गमें ठन्डा पसीना होने लगता है। चेहरा विकृत हो जाता है जिह्वा, ओष्ठपर मैल जम जाता है, ग्रीवा खिच जाती है, ग्रीवामे कड़ापन और पक्षाघात यह इस रोगका प्रधान लक्षण है।

नाड़ी—पहिले कठोर और तीव्र कभी मन्द और विषम होती है, परन्तु इतनी होनेपरभी गति सविराम होही जाती है। इस तृतीया वस्थामें ही रोगीकी मृत्यु होती है, मृत्युके पूर्व अचानक ज्वर अत्यन्त बढ़ जाता है, याने १०६-१०७ डिगरी तक हो जाता है, फिर एकाएक उतरकर ९६-९७ डिगरी तक हो जात है, नाड़ी सूतकी तरह महीन और शरीर ठण्डा पड़ जाता है। और इसके वाद मृत्यु हो जातीहै। इस वीमारीमें वीचवीचमे रोगी कुछ स्वस्थ होता सा दिखाई देताहै-परन्तु बादमें फिर उपद्रव बढ़ने लगतेहैं। और रोगी असाध्य हो जाता है।

टियुवक्युलर मेनिञ्जाइटिस
TUBERCULAR MENINGITIS

यह रोग अधकितर २ से ६ वर्षके वचोंको अथवा गरीवोंके वचोंको ही ज्यादा होतहै। इस रोगके कारण शीतला, हुपिग कफ, मस्तिष्क आघात, मानसिक उत्तेजना आदिहैं।

पूर्वरूप—वच्चेका शरीर दुवल होता जाता है। स्वभाव चिड़चिड़ा रहता है, खेलनेकी इच्छा नहीं करता, चेहरेका रंग बदल जाता है। वेचैनी, नींद न आना, भूख न लगना, टट्टीसाफ न होना, अङ्गप्रत्यङ्गोमें कमजोरी प्रतीत होना आदि लक्षण हों जाते है।

(१) प्रथमावस्था उपरोक्त लक्षण २-३ सप्ताह तक रहते हैं, इसके बाद ज्वर, सिरदर्द, ग्रीवामें खिचावट, वमनादि लक्षण दिखाई देते हैं। वमन होना इसवीमारीका प्रधान लक्षण है, कनपटीमें दर्द इस वजहसे वच्चा सरको दवाकर रखताहै, डर जानेकी तरह रह रह कर अत्यन्त जोरसे चिल्लाताहै और रोताहै ज्वर पहिले कम और क्रमशः १०२-१०३ डिगरी तक बढ़ जाताहै, नाड़ी मोटी, तेज और अनियमित रहती है, वच्चा सोनेकी चेष्टा करता है' पर सोने नहीं सक्ता है, केवल तकिये पर सिर हिलाता है, इस अवस्थाको स्टेज आफ इरिटेसन कहते है। इसके वाद स्टेज आफ डिप्रेसन आती है।

(२) द्वितीयावस्था —यह अवस्था १० दिवसके बाद मस्तिष्क कोषमें रस स्रावके कारण वमन होना बन्द होजाता है, ज्ञान घट जाता है, प्रलाप भी कम करने लगता है, मलोत्सर्गका अवरोध, पेटमें तनाव, ज्वर कम, नाड़ी कोमल और समान रहती है, ग्रीवा जोरोंसे खिची रहती है, पीठमे भी खिचावट रहती है, रोगी टेढा सोता है, ग्रीवामें इतनी वेदना होती है कि स्पर्श सहन नही होता, आँखकी पुतली फैली रहती है, दात पीसता है, आँखे आधीमुंदी रहती है प्रश्वास दीर्घ रहता है, पदार्थ निगलनेमें कष्ट होता है, पाखाना बहुत चिकना लसदार और बदबूदार होता है। ओठ, मुंह जीभ मे छाले हो जाते हैं, पेशाब कम होता है, पेटमें आध्मान हो जाता है इस अवस्थाको स्टेज आफ डिप्रेशन कहते है।

(३) तृतीयावस्था "स्टेज आफ पैरालेसिस"

यह इस रोगकी अन्तिम अवस्था है। इस समय सभी लक्षण बढ़ जाते है और घोर तर अवस्था धारण कर लेते है, ज्वर फिर बढ़ जाता है, नाडी अत्यन्त तेज, क्षीण और सविराम रहती है, रोगी निःसंज्ञ हो जाता है, ग्रीवा, पीठ, हनु, तथा अन्य अवयवोंमें अकड़न तथा एकदम पक्षाघात हो जाता है। आंखोंके भीतर सफेद अंश का ही अधिक भाग दिखाई देता है, कभी आँख लाल भी हो जाती है, नाड़ी पतली हो जाती है ज्वर ९४-९३ डिग्री तक उतर जाता है। या १०८-११० डिग्री तक चढ़ जाता है। अन्तमें श्वासबन्द, खींचन या हार्ट-फैल होकर मर जाता है। रोगकी अवधि १० से ३० दिवस तक की है।

भावीफल

यह सांघातिक रोग प्रायः आरोग्य नहीं होता अगर रोगका आक्रमण धीरे-धीरे होता है, तो चित्किसा हो सकती है। परन्तु एकाएक आक्रमण होनेपर जीवनकी आशा नहीं रहती।

सेरिब्रो-स्पाइनैल मेनिञ्जाइटिस
(मस्तिष्क मेरुमज्जा प्रदाह)
(CEREBRO SPINAL MENINGITIS)

इसको सेरिब्रो स्पाइनल फीवर, इसलिये कहते हैं कि यह भी पूर्वोक्त स्पाइनल मेनिञ्जाइटिसकी तरह एक माघातिक बीमारी है, यह रोग होनेपर भी रोगीको जीवनकी आशा नहीं रहती। यह रोग संक्रामक होनेसे देशव्यापी होता है। लेकिन स्पाइनल मेनिञ्जाइटिस उतना नहीं फैलता।

लक्षण—इस रोगका आक्रमण भी अकस्मात होता है। आक्रमण के पूर्व कम्प, और शीत लगता है। रोगीके सिरमें वेदना होती है इसलिये अज्ञान होकर पड़ जाता है। इसमें पित्तकी वमन होती है रोगी छटपटाता बहुत है, इसके बाद ज्वर हो जाता है। आंखकी पुतली संकुचित हो जाती है। २-३ दिनके बाद सिरका दर्द ग्रीवा और पृष्ठके भूभाग तक फलता चला जाता है। जिससे रोगीका सिर अपने आप ही पीछेको मुड जाता है।

२-३ दिवस बाद ही धनुर्वातकी तरह अकड़न दिखायी देती है। त्वचाका स्पर्श करनेसे ही रोगी असह्य पीड़ाका अनुभव करने लगता है। तथा प्रलाप भी करने लगता है। इसके बाद संन्यासावस्था या अर्ध चेतनावस्था आ जाती है। कभी कभी पक्षाघात भी हो जाता है। इस रोगक्रान्त रोगीका आखोंसे देखना तथा कानोंसे सुनना भी बन्द हो जाता है, भूख, प्यास का भी ज्ञान नहीं रहता, दस्तकी कब्ज रहती है मूत्र भी अल्पमात्रामें ही होता है, प्लीहा वृद्धि हो जाती है, किसी-किसीको वमन भी होती है।

भावी फल

यदि पाचसे सात दिवसके भीतर सिर दर्द, बमन, ग्रीवा और पीठ का कड़ापनका भाव धीरे धीरे घट जावे तोरोगी स्वस्थ हो जाता है

नहीं तो अन्धा, बहिरा, गूंगा हो जाता है, या रोग उग्र रूप धारण करके रोगीको मार देता है।

गर्दन तोड़ क्रकच सन्निपात चिकित्सा

सव प्रथम इसरोगकेलिये स्वच्छताकी विशेष आवश्यक्ता है। याने मकान आतुरालय स्वच्छ सुन्दर हवादार जिसमें धूप अच्छी तरहसे आती हो ऐसा होना चाहिये तथा रोगीके काममें आने वाले वस्त्रादि सर्व धुले हुये स्वच्छ रहने चाहिये। चिकित्साके भी पादत्रय सर्वांग पूर्ण होने चाहिये। इतना प्रवन्ध होनेपर ही भाग्यवान रोगी अवश्य इस आयुर्वेदीय चिकित्सासे आरोग्य होजाता है ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास "ज्वरादौलंघनं प्रोक्तम्" इस वचनके आधारसे सर्व प्रथम लंघन करावे तथा पीने केलिये केवल शृत शीत जल ही देवे। अगर मलावरोध हो तो उसको दूर करनेका प्रबन्ध करना उचित है

लाक्षणिक चिकित्सा

गर्दन अड़कने पर गुग्गुल घटित औषधियोंका प्रयोग वातनाशक काथके अनुपानसे कराव। तथा महानारायण तैल महामाष तैल आदि वातहर तेलोंकी मालिस कराकर उड़दका स्नेह युक्त सेक देना चाहिये।

ज्वरका वेग अधिक हो तो कम करनेके लिये ज्वर संहार, मृत्युञ्जय, आदि औषधियोंका व्यवस्था करनी चाहिये

तीव्रआक्षेप हो तो—रसराजरस' बृ० वातचिन्तामणि रस, चिन्तामणिचतुर्मुख, कृष्ण चतुर्मुख, वातविध्वंसन रस, वातगजांकुश, आदि वातहारी रसोंका प्रयोग करना चाहिये।

कमरमें गर्दनमें शिरमें दर्द हो तो वातनाशक तेलोंका मालिस करा कर शिरपर मावेका सेक तथा पांचो मगजोंको दूधमें पिसाकर गरम करके वंधवावे। गर्दन पर पीठमें वेदना अधिक हो तो शाल्वण स्वेद, शंकर स्वेद, वातहर उपनाह, माषकलाईको दूध मिश्रित तैलमें पकाकर

लेपकरावे या स्वेद देवे। या वाष्प यन्त्र द्वारा प्रसारिणी, दश मूलका स्वेद देवें या वेरीकी लकड़ी तालकी लकडीकी अग्नि बनाकर उसका सेक लग वावे।

अगर मूर्च्छा हो गई हो तब वहांपर जलौका पातन क्रिया करे।

अगर वमन अरुचि निद्रानाश प्रलाप हो तो-शिरपर शीत क्रिया करे वमनकी अरुचिकी शान्ति के लिये जहर मोहरा खताई रसादि-वटीका प्रयोग करे। निद्रा नहीं आती हो तो दशमूलासव, द्राक्षा-सव निद्रायुक्त कुमदेश्वर आदि औषधियोंका प्रयोग करे हम लोग इस रोगमे रसराज, वृहत वातचिन्तामणि, चिन्तामणि चतु-मुख कृष्णचतुर्मुख, चतुर्मुखरस, वह्निभास्कररस, मकरध्वज, समीर-पन्नगरस, वातविध्वंसनरस वृ० योगराजगूगल, चन्द्रप्रभा, मुस्तकादि क्काथ, सलिलशोषण चूर्ण, दशमूल क्काथ, कुंकुमादिघृत, महानारायण तैल, महामाष तैल आदि औषधियोंका प्रयोग करते हैं। प्रसंगानुसार चिकित्सा क्रम आपके सामने आयेगा सो निगह कर लेंव।

रोगीनाम आत्मप्रकाश उम्र ८ जाति अग्र० डालमिया रोग गर्दनतोड़

जयपुर राज्यान्तर्गत चिड़ावा निवासी सेठ जोहरमलजी डालमियां को बहुत दिनोसे स्नायुदौर्बल्यकी बीमारी थी अतः आबोहवा बदलनेके लिये वे सकुटुम्ब चिडावा गये थे साथ मैं भी था ८ मास वहां रहकर हमलोग वापिस कलकत्ता आ रहे थे रास्तेमें २ रोजके लिये देहलीमें रायल होटलमें ठहरे थे। एक दिन ठहरनेके बाद दूसरे रोज हमलोगों ने साईनबोर्ड देखा; जिसमें लिखा था कि गर्दनतोड़के बीमारको फौरन वार्डमें भर्ती कर दो। यह पढकर मैंने सेठसे कहा कि देहलीमें गर्दन-तोड़का बीमारी फैल रहा है अतः अपनेको यहासे जल्दी ही चलना चाहिये। मेरे कथनको मानकर सेठजी वहांसे उसी दिन चल दिये और बनारस पहुंच गये। वहां दूसरे रोज ही शिवरात्रिका व्रत था इसलिये हम सबने उपवास किया चि० आत्मप्रकाशने भी उपवास

किया सायंकाल भोजनके समय फांफर (कुट) के आटेका हलुआ पूरी साग खाया। दूसरे रोज हमलोग गङ्गास्नानके लिये गये साथमें आत्मप्रकाश भी था। वैसे भी स्नानका उसको बहुत शौक था परन्तु जिस दिन स्नान करनेसे इन्कार कर दिया और बोला कि मेरा जी घबराता है सिरमें दर्द है। अतः मैं घर जाऊंगा वहांसे वह तथा उसका पिता दोनों डालमिया धर्मशालामे आ गये। मैं पीछे पूजाके निमित्त ठहर गया। घन्टेभर बाद आया तो मालूम हुआ कि आत्म-प्रकाशको ज्वर १०३ डिग्री हो गया है। मैं उसको देखने उसके कमरे मे गया तो वह सो रहा था उसको जगाया तो फिर तन्द्रासी आ गई मैंने सिरपर युडीकोलनकी पट्टी लगवा दी तथा पीनेको शृतशीत जल की व्यवस्था की तथा लंघनका आदेश दिया। सेठजीके एकहीं लड़का होनेकी वजहसे बहुत घबराये दवाके लिये चार २ में कहा कि इसका ज्वर शीघ्र ही उतारनेकी दवा दो। मैंने कहा कि ज्वरका अभीतक पूरा निदान नहीं हुआ है। आज दिनभर दवा नहीं दूंगा। परन्तु उनका ज्यादा आग्रह देखकर वहाके ही प्र० चिकित्सक वैद्यराज पं० दुर्गाप्रसादजी शास्त्रीको बुलाया उन्होंने भी दवाके लिये निषेध कर दिया तथा लंघनका ही आदेश दिया। लेकिन उसी रातको इसकी माताने ꠰ गरम दूध रोगीको पिला दिया जिससे रातको ही १ बजे प्रलाप करने लग गया। तब मेरेको बुलाया। तब मैंने देखकर लवङ्ग जलसे २ गोली सञ्जीवनीवटी की दी। इससे उसको नीद आ गई। सुबह ७ बजे में इसके कमरेमें उसको देखने गया तो सो रहा था। सेठजीने कहा कि सो रहा है जागनेसे तुमको बुला लेवेंगे। थोडी देर बाद ही उठ गया और शौचादिक क्रियाये की। मेरे बिना देखे ही उसको चाय बिस्कुट खिला दी गई।

और ताश खेलने लगगये, २० मिनट बादही मेरे पास नौकर आया कि जल्दी चलो सेठ बुलारहे है आत्मको न जाने क्या हो गया-

है। मैं झट दौड़कर वहां पहुंचा तो क्या देखता हूं कि, आत्मको मूर्च्छा हो रही है नाड़ी गतिका अनुभव नहीं हो रहा है, सम्पूर्ण शरीर स्वेदार्द्र हो रहा है आखे ऊपरको चढ़रही है, ज्वर ९६ मे है, पेटपर कुछ आध्मान है। तब मैंने शीघ्रही मकर १ रत्ती प्रवाल १ रत्ती अर्जुनाभ्र ½ रत्ती मृगमद् ½ रत्ती भीमसेनी ½ रत्ती मिश्रण करके लवङ्ग जलसे १पुड़िया दी परन्तु कोई फायदा नहीं हुआ फिर दूसरी दी फिर भी कोई फायदा नहीं हुआ तब तीसरी दी गई। जिससे ज्वर बढ़ गया परन्तु ऊपरमे १०५ तक चढ़ गया। तब उसी समय डाक्टर सुरेन बावू जो मारवाड़ी अस्पताल बनारसमें ही डाक्टर थे आगये। उनको पूरा हाल चाल कहा तब उन्होंने रोगीको देखकर कहा कि इसको मलेरिया ज्वर ही है। किसी किसीको ज्वर बढ़ने केसमय ऐसा उपद्रव हुआ करता है। शिर पर बर्फ लगवाया तथा डाया फ्रेटिक मिक्चर लिखकर चलेगये। थोड़ी देर बाद मिक्चर आगया चालू करदिया गया १ खुराक देनेके बाद प्रलाप शुरू होगया जो इतने जोरसे कर रहा था कि दुतल्लेकी आवाज नीचे सड़कपर सुनरही थी। जिससे बाहरके रास्ते चलने वाले भी सुनकर रोगीके पास आकर पूछने लगे, कितनेही आदमी भूतबाधा बतलाने लगगये तथा तान्त्रिकोंको भी बुलाया गया परन्तु प्रलापमे बिल्कुल कमी नहीं हुई। डाक्टरी खुराक ३ घन्टे बाद दूसरी फिर दी गई उससे ज्वर उतरने लगगया लेकिन पसीना बहुत आनेसे नाड़ी भी कम जोर मालूम देने लगी। तब डाक्टरी इलाज बन्द किया और फिर आयुर्वेदिक इलाज ही चालू किया गया इतनेमें ही वहांके प्रसिद्ध वैद्य पं० सुखदेवजी आगयेउनकी रायसे उनका पेटेन्ट औषध जो कि वीरभद्र रसके नामसे था दिया गया। वैसे देखने केलिये बनारसके जितने भी वैद्य थे उन सबको तथा डाक्टरोको बुलाया गया परन्तु किसीसे भी निदान नहीं हुआ। तब मैंने फिर सेठको कहा कि मेरे को तो गर्दन तोड़ ज्वर जंचता है। यहांके डाक्टर वैद्य इस बातको मानते नहीं

हैं, इसलिये कलकत्तेसे किसी अच्छे कविराजको या डाक्टरको बुलवाइये। अस्तु उसी समय कलकत्ते टेलीफोन किया गया। दूसरे रोज ही प्रातः काल डाक्टर इन्दु भूषण एम० बी० वनारस पहुंचा और रोगीकी हालत देखकर उसने उसको मैंनिञ्जाईटिस् कायम किया और तत्काल ही नम्बर पञ्चर भी किया। जिससे रोगीको फौरन ही शान्ति मिल गई और रोगी सोगया। डाक्टरी इलाजसे हमलोगों को बहुत ही आशातीत लाभ नजर आया। रोगी भी अब अच्छी तरहसे बातचीत करने लग गया लेकिन शिरका दर्द तथा गर्दनकी वेदना अभी भी शान्त नहीं हुई थी। पञ्चर करके डाक्टरने उसी रास्तेसे मैंनेङ्गोकोक सिरमका एक इञ्जेक्शन भी दिया था। पथ्यमें सोर्फग्लुकोज वाटर रेक्टम याने गुदाके रास्तेसे एक एक बून्द २४ घन्टे चढ़ाया था। इस तरह २ दिन तक रोगीकी हालत ठीक रही ज्वर भी प्रातः १०० तथा सायं १०२ से ऊपर नहीं बढा, प्रलाप बिल्कुल शान्त था। डाक्टर साहब भी तथा घर वाले भी बहुत खुश थे। तीसरे रोज ६ बजे सुबह मैंने देखा तो मेरेको नाड़ीमें वायुकी गति का अनुभव हुआ तब मैंने डाक्टर साहबको सूचनादी कि आज मेरे को कुछ वायुकी अधिकता जॅचती है। शायद फिर बीमारी बढ़ न जाव

डाक्टर साहबको यह कथन पसन्द नहीं आया लेकिन् सायंकाल ३ बजे ही ज्वर फिर १०४ हो गया तब डाक्टर साहबने सोडाबाईकार्ब ½ औंस बर्फमें मिलाकर गुदाद्वारसे पेटमे केथेटर डालकर धीरे २ चढाया और शिर पर बर्फ रखवाया जिससे ज्वर कुछ कम हुआ परन्तु प्रलाप फिर जोरसे चालू हो गया और रातभर डाक्टर साहबको जागना पड़ा ; सुबह ही डाक्टर साहब घबरा गये और बोले कि मैं तो आज ही जाऊंगा पटनासे बुलावा आया है। डाक्टर साहब यहां ५००, रुपया रोज में आये थे, सेठने कहा कि आप जावे नहीं, ५००) सौकी जगह ७००) १०००) ले लीजिये, लेकिन डाक्टर साहबकी हिम्मत

नहीं पड़ी और वे बिल्कुल रहनेके लिये नट गये। तब सेठने पूछा कि हमलोग अब क्या करें किसको बुलावे। डाक्टर साहबने कहा कि क्या तो कलकत्तेसे बी० सी० रायको या डीनाह्वाईटको बुलवा लेवें। मैं अपना प्रिस्क्रिप्सन चार्ट बनाकर रख देता हूं, वे आवें तब दिखला देना डाक्टर साहब चले गये, उसी रोज डा० बी० सी० राय कलकत्तेसे रवाने होकर सुबह १० बजे बनारस पहुंच गये और रोगीको देखा तथा दवाका प्रिस्क्रिप्सन भी देखा, चालू व्यवस्था रखकर होटलमें चले गये। दोपहरमें फिर आये तब मैंने डाक्टर साहबसे प्रार्थना की कि आप यहां कितने दिन ठहरने सकेंगे, तो वे बोले कि मैं आज ही रातको चला जाऊँगा रोगीके इलाजमें अभी बहुत समय लगेगा। तब मैंने उनको कहा कि अगर यह रोगी कलकत्ता ले जाने लायक हो तो वहां ले चलने से बहुत सुविधा हो जाय, उन्होंने मंजूर कर लिया। और उसी रातको डाक्टर साहबके साथ हमलोग रोगीको साथ लेकर कलकत्तेके लिये रवाना हो गये। रास्तेमें धर्मशालासे निकलते ही रोगीको फिर ज्ञान हो गया और कलकत्ते आनन्द पूर्वक पहुंच गये। २घन्टे बाद यहाके प्रसिद्ध डाक्टर सब बुलाये गये और राय मिलाकर इलाज चालू किया गया, तथा शासको फिर नम्बरपञ्चर किया गया जिसमेंसे तरल द्रव्य लेकर लेबोरेटरीमें परीक्षार्थ भेज दिया गया। परीक्षामें मैनिञ्जाइटिसके कीटाणु पाये गये, इस तरह २० रोजतक इलाज ऐलोपैथिक चलता रहा पथ्यमें सिर्फ ग्लूकोजका पानी ही रेक्टमसे चढ़ाया जाता था। इस तरह इस इलाजमें चार बार पञ्चर क्रियासे तरल निकाला गया और कोई भी तरहका परिवर्तन नही हुआ। तब एक रोज रोगीके पिताने डा०बी०सी० रायको कहा कि इतना रोजसे आपका इलाज हो रहा है परन्तु कोई फायदा नजर नहीं आ रहा है। इसलिये अगर आपकी राय हो तो कविराजीका इलाज कराकर देखें। इसपर डाक्टर साहब हँसे और बोले कि कविराज लोग सईस है, वे इस रोगको क्या इलाज कर सकते हैं।

उनके ये शब्द सुनकर मेरेको बहुत ही दुःख हुआ तब मैंने उनसे कहा कि आपका कहना ठीक है। समय आनेपर आपको दिखला दिया जायगा कि हमलोग सईस है या आप लोग। रातको ही रोगीकी हालत बिगड़ गई तब वहांकी परिचारिकाने आकर हम लोगोंको सूचना दी, हम लोगोने डाक्टरोंके यहां फोन किये परन्तु कोई जवाब नहीं मिला। आखिर मोटर द्वारा सूचना भेजी गई। डाक्टर साहब खुद नहीं आये और फोन द्वारा ही नर्सको आदेश दिया कि अमुक दवा दे दो। नर्सने सब दवा दे दी लेकिन फायदा कुछ नहीं हुआ तब नर्सने मेरेको कहा कि हम अपना सब दवा दे चुके लेकिन रोगीका हालत बिगड़ता ही जाता है। अगर हो सके तो कविराजी दवा जल्दी दो। मैंने भीतर जाकर रोगीकी हालत देखी जो उस समय निम्नोक्त थी, ज्वर १०३, श्वासगति ५२, नाड़ी गति १५०। पेटपर अफारा, हाथ पैरोंमें ठन्ढापन, कंठमें कुछ कफकी आवाज, गर्दन पीछेकी तरफ विशेष खिंची जाती थी, पानी पीने में कष्ट होता था, संज्ञा बिल्कुल नष्ट हो गई थी। याने अभिन्यासके लक्षण हो गये थे उसी समय मैंने १ खु० बृ० कस्तूरी भैरव पानरस मधु से दिया जिससे कुछ सुभिस्ता याने पल्सरेट कुछ कम १४० हुआ तब २ घन्टे बाद १ खुराक फिर दी, सुबह ८ बजे डाक्टर लोग आ गये और रोगीको देखकर नर्ससे पूछा कि रातको क्या गोलमाल हुआ था। तब नर्सने रातके सब हालात सुनाये तथा दवा जो दी गई वह सब बतलाई तथा उसका रिजल्ट भी बतलाया। बादमें मैंने जो दवा दी उसका नतीजा भी बतलाया। तब डाक्टर साहब बहुत बिगड़े और बोले कि हमारी दवासे कुछ फायदा नहीं हुआ और आपकी दवासे हुआ यह बात हम नहीं मानते। तब मैंने कहा कि अगर आपको हमारी दवामें विश्वास नहीं है तो कोई हर्ज नहीं है। १ घन्टे बाद हमारी दवाका असर चला जायगा तब आप लोग बन्दोबस्त कर लेना। यह सुनकर डाक्टर लोग घडीसे टाईम मिलाकर चले गये। पीछेसे सेठसे बात

हुई तब सेठ बोला डाक्टर लोग तुमसे नाराज हो गये हैं १ घन्टे बाद ही वापिस आवेंगे अगर तबतक तुम्हारी दवाका असर न हटेगा तो यह बी० सी० राय है, यहां प्रेक्टिसतक बन्द कर देगा। मैंने कहा ठीक है, देखा जायगा। अस्तु एक घन्टे बाद ही डाक्टर साहब आ गये और भगवानने भी मेरी रक्षा की दवाका असर उतर गया हालत फिर रात की तरह ही खराब हो गई। डाक्टर साहबने कागज लेकर १ इन्जेक्सन लिखा और जल्दी मंगवानेके लिये मोटर भेजी। इन्जेक्सन आगया डाक्टर साहबने अपने ही हाथसे लगाया, १० मिनट तक असरकी प्रतीक्षामें बैठे रहे जब असर नहीं देखा तब दूसरा इंजेक्सन दिया गया, फिर १५ मिनट तक प्रतीक्षा की आखिर हताश होकर कविराजी इलाज के लिये कहकर चले गये। घरवाले घबराये तब मैंने उनको शान्त्वना दी और इलाज अपने हाथमे ले लिया। सर्वप्रथम धन्वन्तरि भगवानसे पार्थना करके रसराज २ रत्ती १ खुराक लवङ्ग काथसे दी और देते ही शीघ्र ही असर हुआ, हालत कुछ सुधरी इतनेमें ही सेठजीके सम्बन्धी राधाकृष्णजी बागला आ गये और उनकी रायसे कविराज शिवनाथ सेनको बुलाया गया। उन्होंने आकर व्यवस्था पत्र लिखवाया परन्तु मेरेको वह नहीं जंचा तब कविराज श्री ज्योतिर्मय सेनको बुलाया उन्होंने जा रोगीके लिये औषध व्यवस्थाकी वह निम्न प्रकार है।

नं० १ ७ बजे रसराज २ रत्ती
काकमाची स्वरस मधुसे

नं० ३-११ बजे चन्द्रप्रभा १ गो०
वज्रक्षार ६ रत्ती, १पु० गोक्षुर अर्कसे
३ बजे नं० २ दवा, काथसे
५ बजे फिर नं० ३ दवा गोक्षुर अर्कसे

नं० २-६ बजे मकर १ रत्ती
प्रबाल १ रत्ती, अभ्रु नाभ्रक १र०
मुक्ता १ रत्ती, मृगमद ½ भीम-
सेनी १ रत्ती इनकासमिश्रणसे
मुस्तकादि क्वथसे
१ बजे फिर नम्बर १ रसराज २
रत्ती काकमाचीस्वरससे।

नं० ४	
७ बजे रातको चतुर्भुज रस १ रत्ती जटामांसी दुरालभा गोक्षुर फान्टसे दिया	इसी तरहसे उपरोक्त हेर-फेरसे रात दिन औषधि चालू की

शिरपर—पुरातन घृतकी मालिश कराई तथा आयाम काँजीककी पट्टी लगवाई जो हर समय रखी रहती थी। पेटपर आध्मान निवाणार्थ दारुपट्क लेप दिया।

गर्दनपर—महामाष तैलकी मालीश कराकर माप कलाईको दूधमे पकाकर सेक चालू किया।

इस तरह इस व्यवस्थाको तीन दिन तक चालू रखी। इस दवाके चालू रखनेके बाद नाडीकी गति ११० हो गई। श्वास ३५ हो गया, ज्वर भी प्रात. १०० सायं १०२ हो गया। परन्तु ज्ञान शक्ति बिल्कुल नहीं बढ़ी; तथा पेटका आध्मान भी कम नही हुआ, तब पेटपर उन्होंने नरसार कलमी शोराको पुरातन घृतमे मिलाकर लेप कराया, परन्तु फिर भी अफारा कम नहीं हुआ और पेट ज्यादा फूल गया तब मोती लाला राधाकृष्णके बगीचेमेंसे तालावके भीतर मूषाकर्णी जिसको बंगलामें पाना कहते है, उसको मंगवाकर पेटपर लेप कराया। इस लेपके लगानेसे पेशाब बहुत हुआ तथा टट्टी भी ३-४ पतली हुई, जिसमें २ कृमी एक विनालके बराबर निकले। उनके निकलते ही पेटका आध्मान मिट गया।

पाना (मूषाकर्णीकी पहचान)

यह पुराने कच्चे तालाबोंमें जलके ऊपर रहने वाला एक वृक्ष होता है। इसके पत्ते चूहेकेकानकी तरह उभरे हुये रहते है तथा जड़ भी चूहेकी पूंछकी तरह उसीके समान होती है, जो जलमें अधर लटकती रहती है। जमीनसे उसका स्पर्श नहीं होता है। इसके

हरेक पत्तोमें नीचे इसकी जड होती है। शालीग्राम निघन्टुमें इसका वर्णन इस प्रकार दिया है।

सूपा कर्ण्या खुपर्णीच वृष पर्ण्याखुकर्णिका।
भूमीचरी द्रवन्ती च शम्बरी भूधरा प्रपा ॥

इसके इतने संस्कृतमें नाम है। हिन्दीमें मूसाकानी, बंग० उदि-रकानी, पाना, मराठी उंदरकानी, भोपनी गुज० उंदरकमी, अग्र० अजानुल फार पुना० शरदम, कहते है।

अस्याः गुणा

आखुकर्णी कटुस्तिक्ता कषायाशीतला लघुः।
विपाके कटुका मूत्र कफामय कृमिप्रणुत् ॥

मूषाकानी—चरपरी, कडवी कषैली, शीतल, पचनेमें हल्की, मूत्र रोग, कफ रोग, औरकृमी रोगको नष्ट करने वाली है।

इस रोगीको देखनेके लिये कविराजजी दिनमें चार वार आते थे। मैं हर समय रहता था। रातको वैद्य कृष्णदत्तजी तथा वैद्य गुलाब चन्द्रजी सम्हालते थे। अस्तु कवीराजजी सुबह ७ बजे आये तब उन्होंने कहा कि और हालत कलसे ठीक है। परन्तु ज्ञान शक्तिके लिये विचारणीय प्रश्न है। मैंने तब प्रार्थनाकी कि मेरी समझमें तो जोंक लगवानेसे ज्ञान शक्तिमें फायदा हो सकता है। कविराजजीने भी अनुमति दी और मैंने सुश्रुत मतानुसार जोंक लेकर ७ जोंक शिरके चारो तरफ लगा दी। जोंकका वर्णन डाक्टरीमें नहीं है। आयुर्वेदकी सुश्रुत संहितामें इसका बहुत अच्छा वर्णन दिया है। अतः जोंकका उपचार करते समय पूरी विधि देखकर ही उपचार करना चाहिये।

जोंक लगानेकी विधि

नृपाढ्य स्थविर भीरु दुर्बल नारी सुकुमाराणा मनुग्रार्थम् परम सुकुमारोऽयम् शोणितावसेचनोउपायोऽभिहितो जलौकसः। तत्र

वातपित्त कफ दुष्ट शोणितं यथा संख्यं शृंग जलौकालाबुभि रवसेचयेत स्निग्न शीत रुक्षत्वात् सर्वाणि सर्वेण वैवां।

भावार्थ—राजा, धनवान, बालक, वृद्ध, डरपोक, दुर्बल, स्त्री, और भी जो अत्यन्त सुकुमार हैं उनपर दया करके जोंक लगा-दुष्ट रुधिरको निकाल देना चाहिये। यही एक सुन्दर उपाय है। क्योंकि इस क्रिया द्वारा रक्त निकालनेसे किसी भी तरहका कष्ट नहीं होता है। वात दूषित रक्तको सींगी लगाकर निकालें। पित्त दूषित रक्तको जोंक द्वारा कफ दूषित रक्तको तुम्बी द्वारा निकाले। अन्यच्च स्निग्ध शीत रुक्ष होनेसे वात पित्त कफ इन तीनोंमेंसे किसीके द्वारा विगड़े रक्तको सींगी तुम्बी जोंक इनमेंसे चाहिये जिसके द्वारा ही निकाल सकते हैं अथ जलायुका वक्ष्ययन्ते जलमासा-मायुरिति जलायुका जलमासामोक इति जलौकसः। जो जलके बिना जीवन धारण नहीं रख सकती उसे जलायुका कहते है॥ जल ही है स्थान जिसका उसको जलौकस कहते हैं।

जोकोंका भेद

ताद्वांदशताषां सविषाषट् तावत्य एव निर्विषाः :

जोंक १२ तरहकी होती है; उनमें छः सविषा और छः निर्विषाः तत्र सविषाओंके नाम यह हैं? कृष्णा जो काले रङ्ग वाली और बड़े मस्तक वाली होती है, जो बर्मी मछलीके समान लम्बी छिन्न और कुछ ऊंची कूख वाली होती है, उसको कर्बूरा कहते है। बड़े२ वालों वाली बड़ी पसली जिसका मुख काला हो उसको अलगर्दा ही कहते हैं। इन्द्र धनुषके समान चित्र विचित्र रेखाओ युक्त हो उसको इन्द्र-युधा कहते हैं। कुछ काली कुछ पीली चित्र विचित्र फूलोंके समान उसको सामुद्रिका कहते हैं। बैलके अन्डकोसोके समान नीचेके हिस्सेमें २ की तरह हो जिसका मुंह बहुत छोटा हो उसको गो चन्दना कहते हैं। सबिषाके काटनेसे दंश स्थानमें सूजन और खुजली

चलती है। मूर्छा, ज्वर, दाह, वमन, मद,कम्पन, ये लक्षण हो जाते है। इन्द्रायुधानसे काटा हुआ रोगी आसाध्य होता है। यहां विप नाशक औपधिको खिलाना लेप करना तथा नस्य देना चाहिये।

निर्विप जोकोंके भेद

कपिला, पिङ्गला शङ्कुमुखी मूपिका पुण्डरीक मुखी सावरिकाचेति। इसतरह ये भी छः तरहकी है। पहिचान

कपिलाके लक्षण—जिसके दोनों पार्श्वभाग मैनसिलके रंगसे रंगे हुये के माफिक हों। तथा जिसकी पीठ चिकणी मूँगके समान हरी हो उसको कपिला कहते है।

पिगला-चित्रविचित्र रंगवाली शीघ्रचलने वाली होती है।

शङ्कुमुखी—जिसका रंग यकृत् खण्डके समान हो जो शीघ्रपीने वाली जिस कवडा और पैना मुख होता है।

मूषिका—इसका रंग और आकृति चूहेके समान होती है और दुर्गन्ध भी आती है

पुंडरीक मुखी—इसका रंग हरे मूगके समान होता है।

सावरिका--१८ अंगुल लम्बी होती है तथा सचिक्कण कमलके पत्तेके समान रंग वाली होती है। यह जोंक मनुष्योंके लगाने लायक नहीं होती है सिर्फ पशुओंको ही लगाई जाती है।

निर्विष जोकोंका प्राप्तिस्थान

यवन देश जैसे ईरान, तूरान अफगानिस्तान पाठ्य देश इन्द्रप्रस्थ पश्चिमाश्रित देश, सह्यस्थान् नर्मदाके किनारेके देश सहचारि पर्वत की घाटी स्थित देशमें, ये निर्विष जोक होती है उपरोक्त देशोंमे होने वाली जोंकोके शरीर बहुत बड़े २ होते है ये बहुत बलवान शीघ्र रक्त पीने वाली होती है। तथा निर्विषज्यादा खानेवाली होती है।

सविषोंका उत्पत्ति स्थान

सविष मछली कीट (सर्प) मेढ़क आदिके मूत्र और मलके संयोग से उत्पन्न होने वाली तथा सड़े हुये गन्दे जलमें रहने वाली जोंक सविषा होती हैं।

निर्विषाओंका उत्पत्ति स्थान

श्वेत कमल नील कमल, पीत कमल, कमोदनी आदि जिस जलमें हों उसमेंसे पैदा होनी वाली तथा निर्मल जलमें रहने वाली जोंक निर्विषा होती है।

त्याज्य जोंक

जिनका शरीर बीचमेंसे ऊंचा हो जैसा जौका दाना होता है। जो किसी व्याधिसे पीड़ित हो, मोटी हो मन्द चेष्टावारो रक्त पीनेमें असमर्थ हो तथा कम पीनेवाली हो उसको त्याग देवे।

जोंक लगानेकी विधि

जिस रोगीको जोंक लगानी हो उसको बैठादे या सुलादे। जिस स्थानपर लगानी हो उस स्थानको गोवर मिट्टी चूनासे धुलाई करदे। स्थानपर घाव नहीं रहनी चाहिये। फिर जोंकोको गिले कपड़ेसे पकड़कर हल्दी घोले हुये पानीमें कुछ देरतक छोड़ देवें। जब उनकी शुद्धी हो जाय तब निर्दिष्ट वेदना स्थानपर लगाकर सफेद वस्त्रसे ढांक देवे। परन्तु उसके मुखको खुला ही रखे अगर जोक उस स्थानको नहीं पकड़ती हो तो १ बुंद दूधकी या रक्तकी डालकर फिर जोंक लगावे। अगर फिर भी न पकड़े तो स्थानको जरा शस्त्रसे कुर्चदे और फिर लगावे। जो ऐसा करनेंपर भी न पकड़े तो उस जोंकको छोड़ दे और दूसरी लगावे।

जोंक लगनेके लक्षण

जब जोंक लगजाती है तब घोड़ेके खुरके समान मुखको करके कंन्धाको ऊंचा करलेती है। तब समझना चाहिये कि जोंक रक्त पान कर रही है। पीते समय वस्त्रसे ढांक दो और थोड़ा २ जल उसपर डालते रहो। दंशस्थानमें पीड़ा खुजली हो तो समझलें कि शुद्ध रक्त पी रही है। तब उसको छुड़ा देना चाहिये। अगर नहीं छोड़े तो सेन्धव

नमक पीसकर उसके मुखपर डालदे। इस उपायसे शीघ्रही छोड़ देगी। रक्तकी न्यूनाधिक प्रवाहकी परीक्षा करके दंशस्थानको ठण्ढे जलसे साफ करके मधु लगाकर पट्टी बान्ध दे।

अस्तु हमने ७ जोक लगाई जिससे कुछ ज्ञान शक्ति बढ़ी यानें पहिले दवा वगैरह देनेमें बहुत कष्ट होता था। परन्तु जोंक लगानेके बाद आवाज देनेपर दवाई पानी आसानीसे खाने लग गया। परन्तु गर्दन अभी तक सीधी नहीं होती थी इसलिये महामाष तैल धस्तूरादि घृत मिलाकर मालिस कराई तथा उपरसे ताड़के पत्तोंकी अग्नि जलाकर सेक किया इस तरह ३ रोज तक मालिस सेक करनेसे कुछ गर्दन सीधी होने लगी। तथापि पूरी ठीक न होनेकी वजहसे दशमूल काकमाची जयन्ती पत्ताको वाष्पयन्त्रमें डालकर नलिकाद्वारा भफारा दिया जिससे कडापनमे बहुत फायदा हुआ, इसको ७ रोज तक चालू रखा। तथा कुछ औषध भी परिवर्तनको, वह इस प्रकार है।

७ बजे प्रातः सायं
नं०—१ रसराज-१ रत्ती
प्रवाल १ र०
अर्जुनाभ्रक १ र०
मृगमद ½ र०
भीमसेनी ½ र०
काकमाची जटामासी
दुरालभा गोक्षुरक्काथमें,

नं० २—३ घन्टे बाद कृष्ण चतुर्मुख काकमाची स्वरससे।
नं० ३—३ घन्टे बाद चन्द्रप्रभा वज्रक्षार जलमें।
नं० १—इसके ३ घन्टे बाद
रातको
नं० ४ वृ० वातचिन्तामणि रस प्रस्वप्रार्कसे

इस दवाको ३ गोक्षुर रोजतक चालू रखा जिससे नाड़ोकी गतिभी ११० हो गई श्वास गति ३० हो गई तथा गर्दन सीधी करने लगगया लेकिन् आँख खोलकर देखता नही था तथा कुछ प्रलाप भी करता था, खांसी भी कुछ आती थी, पानी निगलनेमे कष्टका अनुभव करने लगा जिससे अनुमान हुआ कि सर्दीके कारण गलेमें सूजन हो गया एतदर्थ दवा फिर बदलना पड़ा।

प्रातः	सायं	मध्याह्न	रातको
नारदीय लक्ष्मी-विलास पानरस मधुसे	कस्तूरी भैरव पानरस मधुसे	खदिरवटी मधुसे	कृष्णचतुर्मुख तालछाड़ा रससे

उसरोज सायंकाल हनुमतप्रशादजी सराफ आये और उन्होंने रायदी कि ऐसे केश हमारे यहां मारवाड़ी अस्पतालमें बहुत आया करते है। जिनका इलाज डा० मन्नाबाबू ही करते हे उसको बुलाकर दिखला लेना चाहिये। उनके कहनेसे उसी समय फोन करके मन्नाबाबूको बुलाया। उसने देखकर निदान किया कि टोन्सिल बढ़ गया है एतदर्थ उसने बोरोफेक्ष गलेमें पेन्ट किया जिससे रोगीको बहुत कष्ट हुआ और ३-४ वार वमन हुआ। वमनको देखकर डाक्टरी इलाज वन्द कर दिया गया। और गुलवनप्सा और भांगको बकरीके दूधमें पीसकर पुरातन घृतमे सेककर गलेमें बाधा इसके २-३ वार बांधनेसे ही गलेकी सूजन बिल्कुल मिट गई। अस्तु इतने रोजतक केवल लंघनपर ही रखा गया था। अब जलवार्ली चालू कर दी गई। बीच २ में कभी कोई उपद्रव उठता था तव ही घरवाले सोनेका दान करते थे परन्तु मस्तक क्रिया पूरी तरहसे ठीक नहीं हुई थी इसलिये शिरपर चन्दनादि निलोत्पलादि लेप भी किया एक रात तो इतना चिल्लाया कि रातभर किसीको भी न सोने दिया और न खुद सोया तब सुबह शतधौत घृत की मालिश की जिससे उसका प्रलाप बिल्कुल शान्त हो गया। अब सब उपद्रव शान्त हो गये सिर्फ ज्वर अभी भी होता था। अतः औषध परिवर्तन कर दिया।

प्रातः सायं	म० रा०	
ज्वरसंहार ३ रत्ती	चन्द्रप्रभा	इस दवाके प्रयोग
प्रवाल १ रत्ती	वज्रक्षार	से ज्वर भी हटकर
मुक्ता १ रत्ती	अर्क मकोयसे	याने प्रातः ९८ सायं
अर्जुनाभ्रक १ रत्ती	शयनकाले	१०० रहने लगा
भीमसेनी ½ रत्ती	वृ० वातचिन्तामणि	पथ्यमें थोड़ा २
तुलसी स्वरस मधुसे	जटामांस्यादि फान्टसे	बकरीका दूध चालू किया गया।

इस दवाको ४ रोज तक चलाया ज्वर फिर भी ९८-९९ में ही रहता था। उसका कारण देखनेसे पता लगा कि कुछ लीवर बढ़ गया इसीसे ज्वर होता है। अतः उपरोक्त दवा सब हटा दी गई तथा नई व्यवस्था की।

प्रातः सायं	
यकृदरि लौह मधुसे	दूधके ऽ१॥ चढ़ जानेपर मुग्दयूष वगैरह से धीरे २ पथ्य चालू कर दिया इस तरह इसको फिरसे बैठना उठना चलना बोलना आदि सिखाया गया। भगवानकी कृपासे यह बिल्कुल स्वस्थ हो गया।
म०रा० अग्निमुख चूर्ण जलसे	

इस इलाजके बाद और भी शहरमें बहुतसे बीमार थे वे सब डाक्टरी इलाजोको छोड़कर कविराजजीके द्वारा ही आयुर्वेदिक चिकित्सासे ठीक हुये। सन्निपात रोगके वे अद्भुत चिकित्सक थे, आज जो मारवाड़ी समाजमे हम लोगोंके द्वारा भयंकरसे भयंकर सन्निपातोंका इलाज हो रहा है यह स्वर्गीय कविराज श्री ज्योतिर्मयजीकी कृपाका फल है। कविराजजी इस रोगको मन्यास्तम्भान्तर्गत ही मानते थे इसलिये मुस्त-कादि क्वाथको अधिकतया देते थे। डाक्टर लोग इस रोगमें भी कई भेद मानते है मेनिञ्जाइटिस ट्यूवरलकोसिस मैनेञ्जाइटिस। सेरेब्रोस्पाइ-नल फीवर।

ट्यूवर क्लोसिस मेनिञ्जाइटिस रोगी

रोगीनाम मदनलाल, उम्र ६, जाति ब्रा०, कलकत्ता।

इसको प्रथम आमातिसारका बीमारी हुई २-३ रोज बाद ज्वर भी होने लग गया, ज्वर प्रातः ९९ सायंकाल १०१ तक होता था, टट्टी १०-१३ प्रतिदिन आमयुक्त होता था। उस समय डाक्टरी इलाज शुरू किया गया, ७-८ रोजतक डाक्टरका इलाज रहा जिससे कोई फायदा नहीं हुआ वमन और शिरमें दर्द और बढ़ गया तब मेरेको बुलाया मैंने निम्नलिखित इलाज चालू किया।

प्रातः सायं	म० रा०
आनन्द भैरव	लवङ्गादि २ गोली
लवङ्गादि	सिद्ध प्राणेश्वर १ ,,
धान्य पंचक क्वाथ मिश्रीसे	अर्क सोंफ अजवाईन

यह दवा रोज चलनेके बाद ज्वर सुवह ९८ में, शामको ९९, तक हो गया परन्तु टट्टी अभी भी ५-६ होती थी शिर दर्दके लिये भी कहता रहता था, उल्टी अभी भी चालू थी, तब दवा फिर बदलनी पड़ी पथ्यमें जलवाली मोसम्मी तथा अनाररस दिया गया।

प्रातः सायं	म० रा०
उ० सर्वाङ्ग	रसादि वटी १
लवङ्गादि	जहरमोहरा १ रत्ती
वालसुधा (जहरमोहरा)	पिच्छ भस्म १ रत्ती
नागरमोथा रस मिश्रीसे	लवङ्ग मिश्री जायफल जलसे

इसको [illegible] रोज तक चलाया जिससे वमन भी बन्द हो गई तथा टट्टी भी बन्द हो गई, १४ वें रोज सायंकाल ज्वर ९७ में होगया, शिरमें दर्द भी कम बताता था और कोई उपद्रव नहीं दिखाई दिये सिर्फ पसीना आता था। तब मैंने जाकर देखा तो नाड़ी गति ९० थी, हार्ट भी ठीक था, परन्तु ज्वरकी कमी देखकर मैंने १खुरा० मृत्सञ्जीवनी सुराह्कीदी तथा एक घन्टे बाद हार्टको ताकतके लिये मकर ½ रत्ती अर्जुनाभ्र १ रत्ती प्रवाल १ रत्ती मृगमद ½ रत्ती १ पु० बनाकर दी और कह दिया कि पानरस मधुसे दे देना अगर पसीना बन्द न हो तो १० बजे १ पुड़िया मकर-योग और दे देना उसी रातको अचानक १ बजे आक्षेप शुरू हो गया। जिससे घरवाले घबराये और मेरेको बुलाया। मैं जब गया तब साथमें डाक्टर हरि सिंहजी वृन्दाको भी ले गया। तथा रोगीके पास पहिलेसे भी २ वैद्य याने वैद्य श्री निवासजी तथा वैद्य गुलाब चन्द्रजी बैठे थे। उनसे बात चीत हुई

और रोगीको हमने देखा तव निम्न लिखित हालत थी। ज्वर १०० तथा आक्षेप ५-१० मीनटसे आ रहे थे। कण्ठमें कफ रुककर घर-घराहटकी आवाज हो रही थी। शिर पर पसीना था, नाड़ी गति भी पूरी समझमें नहीं आ रही थी। वैद्य गुलाव चन्द्रजीने मेरे जानेके पहिले अदरखरस मधु दिया था। श्वासकी आवाजको देखकर न्युमोनिया मालूम हुआ। इसलिये हम लोगोने एक खुराक वृ० कस्तूरी भैरव रसका पानरस मधुसे दिलवाया; जिससे कफकी आवाज वन्द हो गई तथा कमेडा भी २ घन्टे तक नहीं आया। २ घन्टे वाद फिर आक्षेपका दोष हुआ जिससे फिर कण्ठमे कफको आवाज आने लगी। तव फिर रसराज १ रत्ती लवङ्ग जलसे दिया—१ इन्जेक्सन डाक्टर वृन्दा साहवने भी कोरामिनका दिया; जिससे फिर २ घन्टेके लिये शान्ति रही परन्तु विल्कुल नहीं। तव फिर निम्न दवा दी, नं० १ में कस्तूरो भैरव पान रस मधुसे २ नं० रस राज १ रत्ती दशमूल क्वाथसे ३-३ घन्टेके हेर फेरसे चलाया। तथा सुवह ७ वजे डाक्टर विश्वनाथ वनर्जी आये उन्होंने न्युमिनल २ ग्रेनकी १ खुराक जलमें दी जिससे ८ घन्टे तक कमेड़ा नहीं आया। रातको फिर शुरू हो गया तव १ खुराक न्युमिनल फिर दिया गया जिससे फिर आक्षेप ६-७ घन्टातक नहीं आया। इस तरह २ रोज बीत गये परन्तु रक्त परीक्षा करानेपर भी निदान नहीं हुआ। तब अचानक मेरी समझ मे आया तो मैने पैरोंकी तथा गर्दनकी परीक्षाकी तव ज्ञान हुआ कि यह गर्दन तोड़ ही सकता है। तव मैने अपने निदानकी पुष्टिके लिये वैद्यराज पं० कृष्णदत्तजीको बुलाया तब उन्होंने भी गर्दन तोड ही निश्चय किया तव दवा निम्नलिखित चालू की।

६ बजे १ नं०—रस राज
जटामांसी जवांसा क्वाथसे
८ बजे नं० २ २ घन्टेबाद कृष्ण चतुर्मुख
पान रस मधुमें
१० बजे नं० ३
चन्द्रप्रभा बज्रक्षार अर्क मकोयसे
१२ बजे न्युमिनल जलसे
३ बजे नं० १ रसराज क्वाथसे
५ बजे चन्द्र प्रभा बज्रक्षार
८ बजे नं० ४ वृ० वातचिन्तामणि प्रस्व प्रार्कसे

रातको ११ बजे फिर न्युमिनल
रातको ३ बजे चतुर्भुज १ रत्ती तालछाड़ा रस मधुमें
दिनमें पानी पीनेमें कष्ट होता था इसलिये ग्लूकोज हैक्सामिन का इन्जेक्सन भी दिया गया दूसरे रोज भी वही हालत रही तथा दवा भी यही चालू रही; किसी तरहका फायदा नहीं दिखाई दिया

तब २-३ डाक्टरोंको और बुलाया गया तथा दोनों तरहकी दवा चालू की गई।

डाक्टरोंने राय दी कि दिनमें ४-४ घन्टासे सल्फाडाईजिन जलमे चलना चाहिये। तथा पेन्सिलिन ४-४ घन्टासे चलना चाहिये। डाक्टर बृन्दा साहवने तथा मैंने दोनों ही ने साथमें इलाज चालू किया।

७ बजे रस राज क्वाथसे
६ बजे सफा
११ बजे चन्द्रप्रभा बज्रक्षार अर्क मकोइसे
१ बजे सल्फा०
३ बजे वृ० चिन्तामणी चतुर्मुख प्रस्व प्रार्कसे

५ बजे सफ्लाडा०
६ चन्द्रप्रभा बज्रक्षार अर्क मकोय
रातको ११ बजे वृ० वात चिन्तामणी प्रस्व प्रार्कसे
किसी टाइममें आक्षेप होनेपर न्युमिनाल भी देना पड़ता था।

ज्वर घटनेपर कोरामिन देते थे। पेन्सलिन ३-३ घन्टासे चलता था। सायकाल डा० विश्वनाथ बनर्जी आये। उन्होंने पेन्सिलिन ३-३ घन्टासे बन्द करके २४ घन्टा वाला देनेको कहा तथा मँगाकर दे भी दिया। २ रोज यह दवा चलनेपर आक्षेप बन्द हो गया। ज्वर भी प्रातः १०१ सायं १०३ तक रहा। श्वास गति ३४ पसीना बन्द पानी पीने लगा, परन्तु काली पुतली स्थिर ही रही। तब डा० डीना ह्वाइट बुलाये गये। उन्होंने डा० विन्दा साहबको कहा कि खानेकी दवा ठीक है। पेन्सिलिन इन्जेक्सन बन्द करके स्टेप्टो माइसिन २ टाइम दिजिये। और रक्त परीक्षा कराइये तथा नम्वर पञ्चर भी किजिये। अस्तु उसी रोज डा० सुरेन बाबूको बुलाया और नम्वर पञ्चर किया गया तथा तरलकी परीक्षा भी कराई गई, जिसमें ट्यूबरक्लोसिस मैनिञ्जाइटिस पोजिटिव आया। दवा पूर्ववत चालू रखी, इन्जेक्मन भी चालू रहे। परन्तु १ मास पर्यन्त भी चिकित्सा करनेपर कोई फायदा नहीं हुआ। तब अंग्रेजी दवा बन्द करके सिर्फ आयुर्वेदीक इलाज ही किया गया उस समय वैद्यराज हरिवक्षजी जोशी, श्री निवासजी खेड़वाल गुलाबचन्द्रजी तथा मैं चारोंने मिलाकर इलाज निम्नलिखित चालू किया।

प्रातः सायं
बृ० वातचिन्तामणि
रास्नासप्तक क्वाथ मधुसे
म० रा०
पञ्चामृत लोहगुगुल
जलमें
महामाष तैलकी मालिस
तथा उड़दका सेक कराया
गया।

आक्षेपके कारण १ हाथ तथा १ पैर बिल्कुल सूने पक्षाघातकी तरह हो गये थे। इसलिये उनपर भी मालिश सेक कराया। शिरपर पुरातन घृतकी मालिश कराकर पांचो मगज पीसकर लगाये इस दवासे बहुत-कुछ फायदा दिखाई दिया; परन्तु ज्ञान नहीं हुआ।

तब कविराज विमला नन्दजीको बुलाकर भी रायली उन्होंने भी यही दवा चालू रखे। वीचमें २ बार कविराज सुशील कुमार सेनको बुलाकर दिखाया था। उन्होंने कुनाइन इन्जेक्सनकी राय दी थी। २ इन्जेक्सन भी दिये गये थे। ज्ञान न होनेकी बजहसे इलाज आयुर्वेदिक बन्दकर दिया गया उसीकी जगह होमियो पैथिक डा० एस० के० दासको बुलाकर इलाज चालू किया गया। ७ रोज इलाज चालू रहा ८ रोजमें फिर आक्षेप शुरू हो गये। बहुत चेष्टा करनेपर भी नहीं रुके तब फिर डाक्टर आनिल कृष्णदेको बुलाकर उसका इलाज चालू किया परन्तु २ मांस पर्यन्त यह रोगी भोग भोगकर संसारसे चला गया। इसलिये मेरा यही कहना है कि मेनिञ्जाइटिस रोगि फिर भी ठीक हो जाता है। लेकिन ट्यूवरक्लोसिस मेनिञ्जाइटिस विल्कुल असाध्य होता है।

प्रयुक्त औषधियोंकी निर्म्माण विधि

(कृष्णचतुर्मुखः)

रसगन्धक लौहाभ्रं समं सूतांघ्रि हेमच।
सर्वं खल्वतले क्षिप्त्वा कन्या स्वरस मर्दितम्॥
त्रिफला सुरसा ब्राह्मी रसैश्चानु विमर्दयेत्।
एरण्ड पत्रैरावेष्ट्य धान्य राशौ दिनत्रयम्॥
संस्थाप्य च तदुधृत्य त्रिफलारस संयुतम्।
तद्यथाग्नि बलं खादेद्वलीपलित नाशनम्॥
पौष्टिकं वल्यमायुष्यं पुत्र प्रसव कारकम्।
क्षयमेकादशविधं कास पंच विधं तथा॥
कुष्ठमेकादशविधं पाण्डु रोगान् प्रमेहकान्।
शूलं श्वासञ्च हिक्काञ्च मन्दाग्निश्चाम्लपित्तकम्॥

अपस्मारं महोन्मादं सवर्शांसि त्वगामयान् ।
क्रमेण शीलितं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥
जगताश्चहितार्थाय चतुर्मुख मुखोदितः

भवार्थ—शु० पारा शु० गन्धक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, ये सब सम भाग और पारेसे चतुर्थांश स्वर्ण भष्म लेकर सबकी कज्जली बनाकर घीकुआंर, त्रिफला, तुलसी और ब्राह्मी इनके रसोंमे क्रमशः एक एक रोज मर्दनकर गोला बनाकर एरण्डके पत्तोंमे लपेटकर सूतसे बाधकर धान्य राशिमें तीन दिवस पर्य्यन्त रखकर निकाल लेवे। फिर इसको त्रिफला जल मधुके साथ सेवन करावे, अथवा घृत मधुके साथ उचित मात्रासे सेवन करनेंसे वली, पलित, निर्बलता, दौर्बल्य, एकादश लक्षण युक्त क्षय, पांच प्रकारका कास, क्षद्र कुष्ठ, पाण्डु, प्रमेह, शूल, श्वास, हिक्का, मन्दाग्नि, अम्लपित्त, भयंकर उन्माद, बवासीर, चर्मरोग, सर्व नष्ट हो जाते है।

वह्नि भास्कर रसः

सुवर्णमभ्रं वैक्रान्तं रजतं शाणमानकम् ।
लौहं रसं गन्धकञ्च माक्षिकं कर्ण सम्मितम् ॥
रक्तचित्रकतोयेन तथा ब्राह्मचा रसेनच ।
त्रिसप्तकृत्वः सम्भाव्य कुर्य्याद्वल्लसितावटी ॥
रसोऽयं सर्वथा हन्ति मस्तिष्कोदक माशुच ।
अन्यांश्च शिरसो रोगान्वह्निस्तृणगणानिव ॥
वह्निवद्भासते यस्माद्वीर्येणैव रसोत्तमः ।
ख्यातः पृथ्वीतले तस्मादाख्यया वह्नि भास्करः ॥

भावार्थ—सुवर्ण, अभ्रक, वैक्रान्त, और रजत इनकी भस्मे ४-४ माशे, लोहभष्म, शु० पारा, गन्धक, माक्षिक भस्म १-१ तोला, लेकर

नीलवर्ण कज्जलीकर रक्तचित्रक और ब्राह्मीके रससे २१-२१ भावनायें देकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े, इनमेंसे १-१ गोली समयोचितऽनुपानके साथ देनेसे मस्तिष्कमें सञ्चित जल (मेनिञ्जाइटिश) और भी नाना प्रकारके शिरो रोग नष्ट हो जाते है।

वातविध्वंसन रसः

रसगन्धं विषंचैव ताम्रं लोहं समाक्षिकम्।
एतत्सर्वं समं योज्यं विषंच द्विगुणं भवेत् ॥
जैपालं तालकञ्चैव रसेन सहयोजयेत्।
त्र्यूषणञ्च समं योज्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥
निर्गुण्डी सूरणद्रावै र्भानोश्च पयशस्तथा।
तर्कारी भृङ्ग राजश्च ततो धत्तूर कस्यच ॥
भावना खलु दातव्या सप्त सप्त क्रमादितः।
द्विगुञ्जं भक्षयेत् प्रातर्मरीचैश्च समन्वितम् ॥
जानु जंघा कटीस्थूल पाद गुल्फौष्ठ शीर्षकम्।
मन्यास्तम्भं बाहुभवं त्रिकस्तम्भंच पादजम् ॥
अधो भागे च ये वाताः सर्वांगे विचरन्ति ये।
सर्वान्वाताञ्जयेदाशु दैत्यं नारायणो यथा ॥

भावार्थ—शु० पारा, शु० गन्धक, ताम्र, लोहभस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म, १-१ भाग शु० बच्छनाभ २ भाग, शु० जमालगोटा और शु० हरिताल १-१ भाग त्रिकटु चूर्ण सबके बराबर लेकर बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय निर्गूण्डी, आकका दूध, तर्कारी, भंगरा, जमीकन्द, धतूरा इनके यथा सम्भव स्वरस अथवा क्काथसे ७-७ भावनायें देकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रख-

छोड़े इसमेंसे १-१ गोली प्रातः कालमें ७ अथवा २१ कालीमिर्चोंके चूर्णके साथ लेनेसे जानु, जंघा, कमर, पैर, गुल्फ, ओष्ठ और शिर-सम्बन्धी रोग, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, त्रिकस्तम्भ, अधोभाग गतवात नष्ट हो जाता है।

बृहत् योगराज गुग्गुलुः

त्रिकटु त्रिफला पाठा शताह्वा रजनीद्वयम्।
अजमोदा वचाहिङ्गु हपुषा हस्ति पिप्पली॥
उपकुञ्चिका शटी धान्यं विडं सौवर्चलन्तथा।
सैन्धवं पिप्पलीमूलं त्वगेला पत्रकेशरम्॥
फणिज्झकञ्च लौहञ्च सर्जकञ्च त्रिकण्टकम्।
रास्नाचाऽतिविषा शुण्ठी यवक्षाराम्लवेतसम्॥
चित्रकं पुस्कराश्चव्यं वृक्षाम्लं दाड़िमं रुचुः।
अश्वगन्धा त्रिवृद्दन्ती बदरं देवदारु च।
हरिद्रा कटुका मूर्वा त्रायमाणा दुरालभा।
विडङ्गं मृतबंगश्च यमानीवासकोऽभ्रकम्॥
एतानि समभागानि श्लक्ष्ण चूर्णानि कारयेत्।
शोधितं गुग्गुलश्चैव सर्वचूर्णं समं नयेत्॥
घृतेन कुट्टयित्वा च स्निग्धे भाण्डे निधापयेत्।
रसवातेन ये भग्नाः कटिभग्नाश्च ये जनाः॥
एकांगं शुष्यते येषां कुष्ठं वाऽपि क्षतोत्तरम्।
पादौ विस्तारितौ येषां येषां वा गृध्रसिग्रहः॥

सन्धिवातं क्रोष्टुशीर्षं वातं सर्व शरारगम् ।
अशीतिं बातजान्रोगां श्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव हन्त्यवश्यं न संशयः ।
अयं बृहद्योगराजगुग्गुलुः सर्ववातहा ॥

भावार्थ–त्रिकटु, त्रिफला, पाठा, सोफ, हल्दी, दारुहल्दी, अजमोद वच, भुनीहींग, हारूवेर, गजपीपल, कालाजीरी, मगरेला, कचूर, धनियां, विडनमक, संचलनमक, सैन्धव, पीपलामूल, तज, इलायची पत्रज, केशर, मरूवा, लोहभस्म, राल, गोखरू, रास्ना, अतीस, सोठ, यवक्षार, अमलवेत, चित्रक, पोहकरमूल चव्य, कोकम, अनारदाना, एरंडमूल, असगन्ध, निशोत, दन्तीमूल, वेरकी छाल, देवदारू, हल्दी, कुटकी, मरोड़फली, त्रायमाण, जवांसा, विडंग, बंगभष्म, अजवाइन, अड़ूसा, अभ्रक भस्म, ये समभाग लेकर ऊखलमें शु० गुगूलको डालकर गोघृत देकर द्रव होने तक कुटवाकर चूर्णको थोडा थोड़ा चूर्ण मिलाकर फिर कुटवावे जब तककी गोलीबनने लायक न हो जावे। वहुतसे वैद्य इसको करते समय एक लक्ष चोट गिनकर लगवाते है इससे इसमें गुणोंकी बृद्धि हो जाती है। तैयार होनेपर चिकने भांड़में रख छोड़े। इसमेंसे १-२ मासा लेकर उचित अनुपानके साथ देनेसे आमवात, एकाङ्गशोष, कुष्ठ, उरःक्षत, खञ्जता, गृध्रसी, सन्निपात, क्रोष्टुशीर्ष, सर्बाङ्गवात, ८० वातज रोग, और २० कफ रोगोंको यह नष्ट कर देता है।

चिन्तामणिचतुर्मुखः ॥

विशुद्धं रससिन्दूरं तदर्धं लौहमभ्रकम् ।
तदर्धकनकं खल्वे कन्यास्वरसमर्दितम् ॥
एण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्यराशौ निधापयेत् ।
त्रिदिनान्ते समुद्धृत्य सर्वरोगेषु योजयेत् ॥

एतद्रसयनवरं त्रिफलामधुसंयुतम् ।
तद्यथाग्निबलं खादेद्वलीपलितनाशनम् ॥
अपस्मारं महोन्मादं रोगान् वात समुद्भवान् ।
क्रमेण शीलितं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥

भावार्थ—उत्तम विधिसे तैयार किया हुवा रससिन्दुर ४ तोला लोहभस्म, २ तोला, अभ्रकभस्म २ तोला, स्वर्णभस्म, १ तोला इनसबको खरलमें डालकर घृतकुमारी रसमें ३ रोजतक मर्दनकरे, फिर गोला बनाकर एरण्डके पत्तोंको लपेटकर ३ रोजतक धान्यकी राशीमें रखदेवे, बादमें निकालकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछड़े।

उपयोग

इसको त्रिफला क्वाथ मधुके अनुपानसे अथवा समयोचित अनुपानसे सेवन करनेसे अपस्मार, सन्यासादि वायुसम्बन्धी हर तरहके रोग नष्ट हो जाते है।

सलिलशोषण चूर्णम् ।

रसभस्म यवक्षारं पीतमूलीं त्रुटिं तथा ।
भार्गीं त्रिजातकं पथ्या तथाचैवेन्द्रवारुणीम् ॥
समांशेन समादाय पयसा गुञ्जयुग्मकम् ।
शिरसोऽम्बुहरणं चैतच्चूर्णं सलिलशोषणम् ॥

भावार्थ-रससिन्दुर, रेवन्द चीनी, इलायजी, भार्गी, दालचीनि, बड़ी इलायची, पत्रज, हरड़ छाल, इन्द्रायणकीजड़, इन सबको समानभाग लेकर चूर्णबनालेवे। इसमेसे २ रत्ती मात्रा दूधके अनुपासे सेवन कनेपर मस्तिष्काम्बुका शोषण हो जाता है।

क्वाथमाह

मुस्तकादि क्वाथ

मुस्द पर्पट कोशीर देवदारु महौषधम् ।
त्रिफला धन्वयासश्च नीलीकम्पिल्लकं त्रिवृत् ॥
किराततिक्तकं पाठा बला कटुकरोहिणी ।
मधुकं पिप्पली मूलं मुस्ताद्योगण उच्यते ॥
अष्टादशाङ्गमुदिमेतद्वा सन्निपातनुत् ।
पित्तोत्तरे सन्निपाते हितंचोक्तं मनीषिभि : ॥
मन्यास्तम्भे उरोघाते उरः पार्श्वशिरो ग्रहे ।

भावार्थ—नागर मोथा, पित्त पापड़ा, खस, देवदारु, सोंठ, त्रिफला, जवांसा, नीलझिन्टी, कमीला, निशोथ, चिरायता, पाठा, खरेंटी मूल, कुटकी, मुलेहटी, पीपलामूल इन सबको मिलाकर मुस्तादि गण तैयार होता है ।

उपयोग—इन उपरोक्त औषधियोंको समान भाग लेकर यव कूट करके क्वाथ बना लेवे। उपरोक्त रसादिकोंके साथ इसका प्रयोग करनेसे गर्दन तोड़ (मेनिञ्जाइटिस) रोगमें अच्छा फायदा होता है, यह मेरा प्रत्यक्ष अनुभव है।

अन्य चिकित्सा

पञ्चमूली कृतः क्वाथो दशमूली कृतोऽथवा ।
रुक्षः स्वेद स्तथा नस्यं मन्यास्तम्भे प्रशस्यते ॥

भावार्थ—पञ्चमूलका क्वाथ अथवा दशमूलका क्वाथ देनेसे भी फायदा होता है। अथवा रुक्षस्वेद नस्य भी इस रोगमें हितकर है।

महामाष तैलम्

माषक्काथे बलाक्काथे रास्नाया दशमूलजे।
यवकोल कुलत्थानां छागमांस भवेत्पृथक् ॥
प्रस्थे तैलस्य च प्रस्थं क्षीरं दत्वा चतुर्गुणम्।
रास्नात्म गुप्तासिन्धुत्थ शताह्वैरण्ड मुस्तकैः ॥
जीवनीयबला व्योषैः पचेदक्ष समैर्भिषक्।
हस्तकम्पे शिरः कम्पे बाहुशोषेऽपबाहुके।
बाधिर्ये कर्णशूले च कर्णनादेच दारुणे।
विश्वाच्यामर्दिते कुब्जे गृध्रस्यामपतानके ॥
वस्त्यभ्यञ्जन पानेषु नावने च प्रयोजयेत्।
माषतैल मिदं श्रेष्ठमूर्ध्वजत्रु गदपहम् ॥

निर्माण विधि—माष कलाई ऽ१ काथार्थ जल ऽ८ अवशिष्ट ऽ२ बलामूल ऽ१ क्वाथार्थ जल ऽ८ अवशिष्ट ऽ१ इसी प्रकार रास्ना, दशमूल, यव, बदरी फल-कुलथी मिलित ऽ१, जल क्वाथार्थ ऽ८ अवशिष्ट ऽ२ छागमांस ऽ१ काथार्थ जल, ऽ८ अवशिष्ट ऽ२ तिलतैल ऽ१ दुग्ध ऽ४ कल्क द्रव्य रास्ना १ तोला, कौञ्छ १ तोला, सैन्धव नमक १ तोला, सुलफाबीज १ तोला, एरण्डमूल १ तोला, नागर मोथ १ तोला, जीवनीयगण तथा बलामूल १ तोला, सोंठ १ तो० काली मीर्च १ तोला पीपल १ तोला, इन सबको लोहेकी कड़ाहीमें डालकर विधिपूर्वक पाचन करे। इस तैलको वस्तिमें तथा पीनेमें, नस्यमे प्रयोग करनेसे, मालिश करनेसे हाथोंकी कम्पन शिरकम्प, बाहुशोष, अपवाहुक, बधिरता, कर्णशूल, कर्णनाद, विश्वाची, अर्हित, कुब्जवात, गृध्रसी, अपतानकादि रोग नष्ट हो जाते हैं। कोई इसको सप्तप्रस्थ तैलके नामसे भी कहते है। यह तैल ऊर्ध्वजत्रुगत रोगोंको नष्ट करनेमें अत्यन्त ही श्रेष्ठ है।

(मध्यमनारायण तैलम्)

अश्वगन्धा बला बिल्वं पाटला बृहती द्वयम् ।
श्वदंष्ट्रातिबला निम्बः श्योनाकश्च पुनर्नवा ॥
प्रसारिणी चाग्निमन्थः कुर्याद्दशपलं पृथक् ।
चतुर्द्रोणे जले पक्त्वा पादशेषं शृतं नयेत् ॥
तैलाढकेन संयोज्य शतावर्या रसाढकम् ।
प्रक्षिपेत्तत्रगोक्षीरं ततस्तैलाच्चतुर्गुणम् ॥
पृथक्पलमितैः कल्कैर्द्रव्यैरेभिः पचेद्भिषक् ।
वचाचन्दन कुष्ठैलामांसी शैलेय सैन्धवैः ॥
अश्वगन्धाबलारास्ना शतपुष्पेन्द्र दारुभिः ।
पर्णी चतुष्टयेनैव तगरेण प्रसाधयेत् ॥
तत्तैलं भोजनेऽभ्यङ्गे पानेबस्तौ च योजयेत् ।
पक्षाघातं हनुस्तम्भं मन्यास्तम्भं गलग्रहम् ॥
कुब्जत्वं बधिरत्वंच गतिभंगं कटीग्रहम् ।
गात्रशोषेन्द्रिय ध्वंसं शुक्रनाश ज्वरं क्षयान् ॥
अन्त्रवृद्धिं कुरण्डश्च दन्तरोगं शिरोग्रहम् ।
पार्श्वशूलश्च पंगुत्वं बुद्धिनाशश्च गृध्रसीम् ॥
अन्यांश्च विविधान्वातान्हरेत्सर्वांग संश्रयान् ।
अस्या प्रभावाद्वन्ध्यापि नारी पुत्रं प्रसूयते ॥
यथा नारायणोदेवो दुष्टदैत्यविनाशनः ।
तथेदं वातरोगाणां नाशनं तैलमुत्तमम् ॥

निर्माण विधि

असगन्ध, खरेंटी, बेलगिरी, पाढ़ल, बड़ीकटेरी, कटेरी, गोखरू, कंघी, नीम, अरलु, साटी (पुनर्नवा) प्रसारिणी (खींप) अरनी ये प्रत्येक औषधि ४०-४० तोला लेकर कूटकर चार द्रोण जलमे पकावे और चतुर्थांश शेष रखकर छान लेवे, फिर कढ़ाईमें तिल तैल ९४ चार सेर, सतावरीका स्वरस ९४ चार सेर, गोदुग्ध ९२० सेर, क्वाथीय जल ९२० सेर डाले, तथा कल्कार्थ वच, लालचन्दन, कूठ, इलायची, बालछड़, छाड़ छड़ीला, सैन्धव नमक, असगन्ध, खरेंटी, रासना, सोया, देवदारु, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, और तगर इन प्रत्येक औषधियों का कल्क ४-४ चार चार तोले डालकर इस तैलको उत्तम रीतिसे तैयार करे।

उपयोग इस तैलको भोजनमें, मालिससे, वस्ति प्रयोगमे, और पीनेमें प्रयोग करनेसे पक्षाघात (लकवा) हनुस्तम्भ, मन्यास्तम्भ, गलरोग (कुब्ज, बधिरता, गतिभग, कमरका दर्द, गात्रशोष, इन्द्रियध्वंस, वीर्यदोष ज्वर, क्षय, अन्त्र वृद्धि, कुरंड, दन्तरोग, शिरोरोग, पार्श्वशूल पंगुरोग, बुद्धिनाश, गृध्रसी आदि समस्त वातजनित रोग नष्ट हो जाते है। यह तैल अपने प्रभावसे वन्ध्याको भी पुत्र देता है जिस प्रकार नारायण भगवान दैत्योंका नाश करते है उसी प्रकार यह तैल समस्त वात व्याधियोंको नष्ट करता है।

एलोपैथिक चिकित्सा

पाश्चात्य चिकित्सकगण इस रोगमें आज १५ साल पूर्व मैंनेञ्जो कोकशिरम नामक इन्जेक्सनका प्रयोग किया करते थे। लेकिन आजकल वह प्रणाली उठ गई, उसके स्थानपर सल्फा ग्रुप (Sulpha drugs) का ही प्रचार अधिक तया बढ़ रहा है। उनका कथन है कि जैसे ही रोगका सन्देह हो बिना किसी प्रायोगिक परीक्षा किये हुये ही सल्फा पिरिडीन या सल्फाथियाजोलका प्रयोग

मात्रा निश्चित करके शीघ्राति-शीघ्र चालू कर देना चाहिये, तभी सफलता प्राप्त होनेकी सम्भावना होगी। औषधि हर ४ चार घन्टे पर देना चाहिये। यदि इसके प्रयोगसे वमन होने लगे तो गोद या वमन नाशक औषधिमे मिलाकर देवे, या इसका तरल भाग लेकर अन्तर्पेशीवेध द्वारा सूची वेधन करावे। अत्यधिक ग्रीवास्तम्भ होनेपर औषधिको जलमें मिलाकर आमशयिक नलिका द्वारा पेटमें पहुंचाना चाहिये। अत्यधिक शिरः शूल होनेपर कटिवेधकी भी आवश्यकता होती है। अन्यथा नही होती। कुछ समय से तो पेनिसिलीन नामक औषधिने सल्फा ग्रुपको भी दूर हटवा दिया है। प्रायः आज कल इसीका व्यवहार होता है। क्षयज मस्तिकावरण प्रदाहमे तो स्टेप्टो माइसीनका ही प्रयोग किया करते है।

एवं व्याधिर्यदा योगै र्नैयाच्छान्तिं भिषक्तदा।
लघुहस्तस्त्रिकूर्च्चेन शीर्षस्थमम्बु निर्हरेत्॥

होमियो पैथिक चिकित्सा

एकोनाइट, एलायैन्थस, एमोनकार्व, एपिसवेल, ब्रायोनिया, कार्बोलिक एसिड, साइक्यूटा, सिमिसिफ्यूगा, क्रोटेलस, कूप्रम, ग्लोइन, हायोसियामस, हेली बोरस, कैलीब्रोम, लैकनेथिन्स, लम्बम, स्ट्रैमोनियम, सल्फर, वेरेट विरिडी, जिङ्कमादि, औषधियोंकी आवश्यकता होती है। उपरोक्त औषधियोंकी अपेक्षा जिङ्कब्रोम, जिङ्क सल्फ, जिङ्कमेट और आर्जेण्ट नाइट्रिकम यह चार औषधियां अच्छा फायदा करती है।

ट्यूबरक्यूलर मेनेञ्जाटिसमें—एपिसकेल, कैलेकेरिया-आयोड, साइक्यूटा, आयोडिन, आयडो फार्म, लाइको पोडियम।

मस्तिकमे विकृति दिखाई देनेपर—बेलाडोना, हायोसियामस,

ब्रायोनिया, ओपियकम, कफ्यूलस कृप्रम, और जिङ्कादिक आवश्य कता होती है।

पथ्य

रोगीका माथा एकदम मुडवादेना चाहिये, या केश खूब हल्के कटवादेने चाहिये, गर्दनपर लगातार बरफके बैगका प्रयोग करे, क्यो कि रोगी वेदनाके कारण बहुत छटपटाया करता है। अतः बरफके प्रयोगसे कुछशान्तिका अनुभव होता है। माथेके पोछे ग्रीवापर राईका पलस्तर देनेपर बहुत बार वेदना घटजाती है।

आयुर्वेदमे एतदर्थ आयाम काजिककी पट्टी लगवाया करते है पीनेके लिये गरम करके ठण्डा किया हुआ जल देना चाहिये। आहारमे जलवार्ली, साबू, छीनाजल, ग्लूकोज, मिश्रित जल प्रभृति पथ्य है। फलोंमे वेदाना, अङ्गूर, संतरा, मोसम्बीका, रस भी दिया जासक्ता है।

रोगीको स्वच्छ कमरेमें रखना चाहिये और रोगीकी आंखोंको रोशनी से बचना चाहिये, हवाका अवागमन बराबर रहना चाहिये। रोगीका माथा तकियेपर ऊंचाकरके रखना ही उचित है। पेटमे मल संचय न होने पावं ऐसी व्यवस्था रखनी चाहिये।

—

कालाज्वर KALA-AZAR

यदाऽसौधातुसंलीनः काले काले पुनर्भवम् ।
अग्नौमन्दे बलेहीने क्षीयमाणस्य देहिनः ॥
सपाण्डु शोथ वैवर्ण्यः प्लीहोदर युतो भवेत् ।
दुश्चिकित्स्यतमो घोरस्तदा कालज्वराभिधः ॥

इति सिद्धान्तनिदा०

सततक नामका विषमज्वर जब धातुओंमें लीन हो जाता है तब ज्वर बार बार आने लगता है, कभी एकान्तरा रूपसे कभी दिनमें २ बार भी आजाता है, इसलिये इसमें शरीरका रंग पीला पड़ जाता है, हाथ पैर मुखपर शोथ हो जाता है, तथा किसी किसीको पेटपर भी शोथ होजाता है। शरीरका रंग विकृत होजाता है। प्लीहा बढ़कर उदरको आच्छादित कर लेती है किसीके लीवर (यकृत्) भी बढ़ जाता है, रोगी प्रतिदिन क्षीण होता जाता है, इसीलिये इसको कालाज्वर कहते हैं। यह कष्टसाध्य व्याधि है। यह ज्वर आसाम, बंगाल, उड़ीसा बिहारमें अधिकतया पाया जाता है। तथा शीतकालमें प्रायः अधिक होता है और २५ वर्षकी आयुवाले मनुष्यको विशेष करके होता है। आयुर्वेदमे इसका विशेष वर्णन कालाज्वर बोलकर नही मिलता है। प्रारम्भमें यह दिनमें तथा रात्रिमें २ बार शीत पूर्वक आता है, फिर कुछ समय केलिये छूट जाता है, फिर २-३ बार आक्रमण करता हुआ स्थायी ठहर जाता है तब शरीरका रंग काला पड जाता है इसीलिये इसको कालाज्वर नामसे पुकारते है।

उपद्रव—

इसमे किसीको अतिसार होकर मसूढोसे या नाकसे बार बार रक्त गिरने लगता है, किसी किसीको गालोका मांस फूलकर पूय पैदा होजाती है, किसी किसीको न्युमोनियां, प्लूरसी, क्षय, प्रवाहिका भी हो जाते हैं, तब रोगी असाध्य हो जाता है।

डाक्टरी मतसे निदान

इस ज्वरको कालाजार लिश्मनियाशिस कहते हैं।

इस रोगको डाक्टरी वाले कीटाणु जन्य मानते हैं। इनका कथन है कि यह रोग खटमलो द्वारा ही फैलता है। इनके कीटाणुओंकी परीक्षा डा० लोश्मनने की है इनका कहना है कि मलेरियाके कीटाणुओंकी तरह खटमल भी अपना विष मनुष्यमें प्रवेश करके काला-ज्वरको पैदा करने वाले कीटाणु बना देते हैं। उससे अस्थि, मज्जा, प्लीहा, यकृत, फुस्फुस, आंत, अण्डकोषोंमें इनका प्रवेश हो जाता है। इसके प्रवेश होनेसे यकृत प्लीहा भी बढ़ जाते हैं। किसी-किसीको इन कीटाणुओं द्वारा आंत्रिक क्षय भी हो जाता है।

लक्षण—इस रोगमें मुंहका रङ्ग पीला पड़ जाता है, अग्नि मन्द हो जाती है, शरीरमें दुबलापन हो जाता है। रक्तमें रक्ताणु और श्वेताणुओंकी संख्या न्यून हो जाती है। हाथ, पैर, मुंखमें शोथ आ जाता है। प्लीहा ज्यादा बढ जाती है। यकृत भी कुछ बढ जाता है, शरीरका रङ्ग काला पड जाता है, तथा ज्वर अनिश्चित काल तक आता रहता है। पसीना अधिक आता है। मुंहपर प्रातः काल शोथ प्रतीत होता है। सायंकाल उतर जाता है। शाखा-स्थियोंमें पीड़ा या शूल होता है। ज्वर बहुत वेग पूर्वक आता है।

रोगके पहिचाननेकी विधि

इस रोगको सहज ही में पहिचानना मुश्किल है। कारण पहिले यह ज्वर विषम ज्वरकी तरह आता है। फिर उतरकर सियादिकी तरह ठहर जाता है। तेज ज्वर रोकने वाली या उतारने वाली औषधि देनेपर भी नहीं उतरता है। कालान्तरमें यकृत, प्लीहा बढ जानेपर भी रक्त परीक्षाके द्वारा ही परीक्षा होती है अन्यथा नहीं। रक्त-परीक्षा भी सिरामें से रक्त निकालकर ही की जावेगी तो, इस

रोगके कीटाणु मिलते हैं। अङ्गुलीसे रक्त निकालकर यदि परीक्षा की जायगी, तो वह व्यर्थ होगी। हमारे यहां रक्त परीक्षाविधि नहीं है। आज-कलके नये विज्ञानमें ही यह परीक्षा लिखी है। अतः वह भी मैं संक्षेपमें इसी प्रकरणमें चिकित्साके बाद लिखूंगा।

आयुर्वेद मतसे चिकित्सा

इस रोगीको स्वच्छस्थानमें रखे तथा स्वच्छवस्त्रादि बिछाने ओढ़ने को दें, पथ्यमें विषम ज्वरमें जो पथ्य दिया जाता है वही दे। जल शृत शीत देवे, सर्व प्रथम पाचन क्रियाके द्वारा दोषको पचावे एतर्थ मृत्युञ्जय रस, लक्ष्मी नारायण रस, त्रिभुवनकीर्ति रस, वज्र-क्षार, शिवक्षारपाचन, नवायस लौह, रत्नगिरी रस, ज्वर मुरारी, ज्वर केशरी आदि औषधिया प्रयोगमे लावे। जब काला ज्वरका पक्का निर्णय हो जाय, तब कालमेघ नवायस, यकृत् प्लीहारी वटी, प्लीहान्तक पाचन, श्रीकृष्ण चूर्ण, आदिके द्वारा चिकित्सा करे। मेरे पास अस्पतालमें इस रोगसे ग्रस्त बहुतसे रोगी आये, उनका जिन औषधियोसे उपकार हुआ उसका कुछ विवरण लिखता हू।

रोगीका नाम गुलाबचन्द, उम्र, २५ वर्ष गौड ब्राह्मण, देश राम-गढ़, भर्ती २-३-४८ को सुबह ८ बजे हुआ उस समय ज्वर १०१ था, दस्तकी कब्जी थी, वमन बहुत होती थी, तब इसको निम्नलिखित औषध चालूकी गई।

प्रातः सायं	म० रा०	
ज्वर संहार २ रत्ती	रसादि वटी २ गो०	पित्तान्तक वटी
ताल २ ,,	जहरमोहरा खताई	चूसनेको दी गई
अमृता सत्व १ ,,	१ रत्ती	षडङ्ग पानीय
तुलसीरस मधुसे १पु०	प्रवालपिष्टी १ रत्ती	जल पीनेको
	लवङ्गमिश्री जलमें	पथ्यमे जलबार्ली
		वेदाना रस

सायंकाल ज्वर १०३ डिगरी हुआ, तब शिरपर दशाङ्ग लेप दिया। रातको सोते समय सौंफादिक चूर्ण गर्म जलसे दिया गया।

ता० ३-३-४८ को सुवह ज्वर ९९ में हो गया तवीयत खुश था, सायं काल ३ वजे जाड़ा लगकर ज्वर फिर १०४ हो गया, तब शिरपर वर्फ लगाई गई, तब रातको ही ज्वर हल्का हो गया। प्रातः काल ९७ में हो गया, तब हमारे यहांका ज्वराकुश ३-३ घन्टासे दिया गया। सायंकाल ज्वर बिल्कुल नहीं हुआ, इस तरह ३ रोज तक ज्वरांकुश ही चालू रखा गया। ज्वर छूट गया तब पथ्य दे दिया गया। ४-५ रोज वाद छुट्टी दे दिया। १० रोज वाद घरपर फिर ज्वर आ गया तब उपरोक्त औषध दी, जिससे फिर ठीक हो गया देश चला गया। वहां फिर इसको इसी तरह २-३ वार ज्वर आया। वहांके ही वैद्यने इलाज किया। कमजोरी विशेष आ गई, तब वहा ही एक वैद्यने मूसलीपाक वनाकर दे दिया, जिसको खाते हुए ही कलकत्ता पहुंच गया यहा आया तब उसको जोरका ज्वर आ गया। तब फिर अस्पतालमें लाये और ता०५-३-४९ को भर्ती कर दिया। जब मैंने इसको देखा तो मालुम हुआ कि इसको काला ज्वर हो गया है, तब मैंने रक्त परीक्षा कराई जिसमे काला ज्वर निकला, तब निम्नलिखित दवा चालू की।

प्रातः	सायं	म० रा०
पु० विषमज्वरान्तक लौह १ रत्ती	जयमंगलरस १ र०	वज्रक्षार
कालाजीरा २ ,,	भर्जित जीरक २ र०	अमृतारिष्टसे
मधुमें	क्षुद्रादिक्काथ मधुसे	

यह दवा १ हप्ते तक चाल रखी गई परन्तु कुछ भी फायदा नहीं हुआ तब दवा दूसरी परीवर्तन की गई।

प्रातः सायं	म० रा०	पथ्यमे दूधवार्ली
यकृत प्लीहारीवटी	वज्रक्षार	मौसम्बी बेदानेका
प्लीहान्तकपाचनसे	अर्कसुदर्शनसे	रस दिया।

जिससे टट्टी २-३ होती थी। ज्वर भी नीचेमें ९८ में, सायंकाल १०१ रहता था। पहिले दिनमें ज्वर २ बार चढ़ता उतरता था, अब एक बार ही घटता बढ़ता था। इस तरह इस दवाको ७ रोज तक चलाया परन्तु ज्वर विल्कुल नही घटा। रोगीके लीवर तिल्ली बढे हुये थे। जिससे कभी-कभी पेटमे दर्द भी हो जाता था। इसलिये गोमूत्रका सेक किया गया। जिससे ज्वर कुछ कम होगया। प्रातः ९७ सायं ९८॥ रहा, पथ्य भी चालू किया गया। ३ रोज बाद ज्वर फिर जोरसे आने लग गया। तब दवा फिर बदली किया गया।

प्रातः सायं	म० रा०	
वधमानपिप्पली	सुदर्शन चूर्ण	पथ्यमे केवल दूध दिया गया

उससे दूध ꠰२ पीने लगगया ज्वर भी फिर कम होगया, शोथ भी उतर गया, चेहरेपर भी कुछ कान्ति दिखलाई दी, यह प्रयोग १ पिप्पलसे चालू कियागया ७-८ रोजतो इसने निभाया परन्तु बादमें फिर रोटी २ चिल्लाने लगगया, तब प्रयोगको उतारना पड़ा और रोटी खानेको दी जिसके देनेसे २ रोज बाद फिर ज्वर आ गया। उसको बहुत समझाया कि अन्न बन्द रखो जिससे बहुत जल्दी ही ठीक होजावोगे। लेकिन वह माना नही। तब फिर औषध बदली की।

प्रातः	सायं	म० रा०
श्रीकृष्ण चूर्ण पेटेन्ट १ रत्ती प्लीहान्तक पाचनसे।	कालमेघ नवायस ३ रत्ती हार श्रृंगारपत्ता रस मधुमें,	शंखद्राव ३ बून्द जलमे

पथ्यमें दूध बार्ली वेदाना, मोसम्बीका रस रु फुलका साग इसदवाको चार रोज चलानेके बाद ज्वर कम होता चलागया १५ रोजमें विल्कुल ठीक होकर घर चला गया।

दूसरा रोगी

नाम राधादेवी उम्र १५ वैश्य यहांका पता १५ नं० नलनी सेट रोड

यह घरपर एक माससे बीमारथी अस्पतालमें २५-४-४६ को आकर भर्ती हुई उस समय मैं यहा नही था। वैद्यप्यारे लालजी डी०आई० एम०एस० तथा वैद्यसतीश चन्द्र आयुर्वेदाचार्यने इसका इलाज चालू किया, में जब २०-५-४६ को देशसे वापिस आया तो देखा कि पुराने व्यवस्था पत्रमें ज्वरकी तमाम औपधिया लिखी पड़ी थो। इन दोनोंने तथा कविराज सुशील कुमारजीने इस रुग्णापर बहुत ही परिश्रम किया था। परन्तु ज्वर कभी १-२ दिन छूट जाता था कभी वापिस चढ आता था इस तरहसे १ मास पर्य्यन्त इसका इलाज होता रहा परन्तु कोई भी फायदा नहीं हुआ। मैंने जब इसको देखा तब निम्नलिखित लक्षण थे ज्वर प्रातः कभी ६८ मे कभी १००। कभी सायकाल १०३ कभी १०१ पेटमें भयंकर दर्द रहता था। लीवर तिल्ली दोनो बढ़े हुये थे शरीरक. रंग पीला पड़गया था। रक्त परीक्षा इन्होने पहिले ही कराली थी जिसमे काला ज्वर ही निकला था। टट्टीकी कब्ज रहती थी कभी टट्टी २-४ लग जाते उसदिन ज्वर हल्का रहता था। नहीं तो तेज होजाता था। दवासे भी जयमंगल रस, पु० विपम ज्वरांक, मृत्युञ्जय, ज्वरसंहार, ज्वराकुश, वृ० सर्वज्वरहरलोह ज्वरमुरारी, ज्वरकेशरी, सुदर्शन चूर्ण, गोदन्ती, प्लीहान्तक वटी, प्लीहान्तक पाचन, अमृतारिष्ट कालमेघनवायस, दास्यादि पाचन, पंचतिक्त कषाय, संशमनी वटी, वसन्तमालती, आदि सबदवाईया दी गई थी। परन्तु कोई भी फायदा नहीं हुआ, हमलोग नुसखा वदलते २ थक गये तव इसके घरवालोंसे कहना पड़ा कि हमको इसकी आंतमें क्षत प्रतीत होता है। इसलिये अगर आपलोग कहना माने तो वर्धमान पिप्पली प्रयोग चालू करा देवें पथ्यमें केवल दूध ही दिया जायगा उन्होने स्वीकार करलिया तब निम्न-लिखित व्यवस्था की गई।

प्रातः सायं	१२ वजे	रातको ८ वजे
छोटीपीपल पीसकर १-१से	शिलाजत्वादि लौह	लघुपूर्णचन्द्ररस
चालूकी	दूधसे	दूधसे
१ घन्टे वाद	सायं ४ वजे	
मृगाङ्क रस १ रत्ती	वसन्तमालती १ रत्ती	
सितोपलादि १ मा	सितोपलादि १ मा	
अमृतासत्व १ रत्ती	मधुमे १ पु०	
मधुमें		

पेटपर दशांङ्ग लेप लगाया इसतहर इस प्रयोग को २० रोजतक निरन्तर चालूरखा गया तव ज्वर सुबह ९७ में सायं ९८।। मे हुआ इस तरह इसरोगी को पीपल २० तक वढ़ाई जिससे १।। महीनेमें विलकुल ठीक होकर पथ्यलेकर अपने घरचली गई। यह रोग महाहो कष्ट साध्य है। इसरोगसे ईश्वर वचावे।

जयमंगल रसः

हिङ्गूल सम्भवं सूतं गन्धकं टंकणं तथा।
ताम्रं वङ्गं माक्षिकञ्च सैन्धवं मरिचन्तथा॥
समं सर्वं समाहृत्य द्विगुण स्वर्णभस्मकम्।
तदर्धकान्त लौहञ्च रौप्यभस्मापितत्समम्॥
एतत्सर्वं विचूर्ण्याथ भावयेत्कनकद्रवैः।
शेफालिदलजैश्चापि दशमूल रसेनच॥
किराततिक्तक काथैस्त्रिवारं भावयेत्सुधीः।
भावयित्वा ततः कार्या गुञ्जाद्वय मिताबटी॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं जीरकं मधुसंयुतम्।
जीर्णं ज्वरं महाघोरं चिरकाल समुत्थितम्॥

ज्वर मष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापिवा ।
पृथक्‌दोपाश्च विविधान्समस्तान्विपमज्वरान् ।
मेदोगतं मांसगतमस्थिमज्ज गतन्तथा ।
अन्तर्गतं महाघोरं वहिः स्थंच विशेषतः ॥
नाना दोपोद्भवञ्चैव ज्वरं शुक्रगतन्तथा ।
निखिलं ज्वर नामानं हन्ति श्री शिवशासनात् ॥
जयमंगलरस नामायं रसः श्री शिवनिर्मितः ।
वलपुष्टि करञ्चैव सर्वरोग निवर्हणः ॥

रसयोगसागर०

भावार्थ—शु० पारा, शु० गन्धक, शु० सुहागा, ताम्रभस्म, वङ्गभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, सैन्धवनमक, कालीमिर्च, यह सर्व १-१ तोला इन सबसे दूनी १६ स्वर्णभस्म, कान्तालोहभस्म ८ तोला रजतभस्म ८ तो० इन सवको खरलमें कज्जलीके साथमें डालकर धतूरास्वरस, हारश्रृंगारस्वरस, दशमूलक्वाथ, चिरायताक्वाथकी, ३-३ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोली वनावे। इसमेंसे १-१ गोली जीरा और मधुके साथ देनेसे बहुत दिनका जीर्णज्वर, आठ प्रकारके साध्या-साध्य ज्वर, अथवा त्रिदोप ज्वर, नाना प्रकारके विपमज्वर, धातु गतज्वर, अन्तर्वेगज्वर, बहिर्वेगज्वर, इन सव प्रकारके ज्वरोंको यह जयमङ्गल नामका रस नष्ट करता है। तथा वल पुष्टिको वढ़ाता है। यह ज्वरको नाश करने वाला बहुतही उत्तम रस है। इसके सेवनसे पुराना २—३ माससे आनेवाला विपमज्वर तथा जो गरम उपचार शीत उपचारसे भी वढ जाता हो तथा जो ज्वर लीवर, प्लीहाका आश्रय लेकर ठहर रहा हो ऐसे ज्वरोंको नाश करनेमे यह अद्वितीय रस है। इस रसके सेवनसे आंतमे रहे हुये ज्वर पैदा

करने वाले कीटाणु तथा सेन्द्रिय विषभी नष्टहो जाता है। यह भीतरी अथवा ऊपरी दाहको शमन करता है, कफको नाश करता है, मनको प्रसन्न रखता है, अग्निको प्रदीप्त करता है, तथा शरीरको आरोग्य करता है। राजयक्ष्मा जैसे भयंकर रोगोंमें ज्वरकी तीव्रता में निर्वलता तथा व्याकुलता बढ़ गई हो उस समय अन्य स्वर्णघटित औषधिका प्रयोग भयप्रद माना जाता है। लेकिन इस रसके प्रयोगमें किसी प्रकारकी हिच-किचाहटकी दरकार नही निर्भयता पूर्वक दे सकते है। अन्य ज्वरघ्न औषधियोंमें प्रायः वत्सनाभविष रहता है अतः उनके द्वारा हृद्दौर्वल्य हो जाता है। इसके सेवनसे क्षयको पैदा करने वाले कीटाणु नष्ट हो जाते है, तथा शारीरिक उष्माभी मर्यादित हो जाती है। आगन्तुक ज्वरमें भी इससे अच्छा फायदा होता है। इस रसको श्रीशिवने निर्माण किया है। अतः इसका प्रयोग करते समय शंकर भगवानका ध्यान करके देनेसे बहुत शीघ्रही फल प्राप्ति होती है। इस जय मंगलरसमें द्विगुणं स्वर्णभस्मकम् ऐसा पाठ लिखा है। इसलिये बहुतसे वैद्य पारद १ तोलासे द्विगुण यानी २ तोला स्वर्ण लेते है। परन्तु शास्त्रमें समं सर्व समाहृत्य द्विगुण स्वर्णभस्म कम्। इस हिसाबसे सम्मिलित द्रव्योंसे द्विगुण स्वर्ण भस्म होना चाहिये। लेकिन इसमे खर्चा बहुत पडता है हरेक साधारण वैद्य इसको बनाने मे असमर्थ रहेगा अतः उचित समझ करे। शास्त्र विधिमे तो १६ तोला स्वर्णभस्सही होनी चाहिये।

पु० विषमज्वरान्तकलौहम्।

हिङ्गूल सम्भवंसूतं गन्धकेन सुकज्जलीम्।
रसपर्पटीवत्पाच्यं सूतांघ्रिहेम भस्मकम्॥

लोहं ताम्रमभ्रकञ्चरसस्य द्विगुणंक्षिपेत ।
वङ्गञ्चैव प्रवालञ्च रसार्धञ्च विनिःक्षिपेत ॥
मुक्ताशंखं शुक्तिभस्म रस पादिकमेवच ।
मुक्तागृहेच संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत ॥
भक्षयेत्प्रात रुत्थाय द्विगुञ्जाफल मानतः ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं कणाहिङ्गु ससैन्धवम ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति वातपित्तकफोद्भवम् ।
प्लीहानं यकृतंगुल्मं साध्यासाध्यमथापिवा ॥
सततंसन्ततान्यञ्चत्र्याहिकंचतुराह्निकम् ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं मन्दमरोचकम ॥
ग्रहणिमामदोषञ्चकासंश्वासं च दारुणम् ।
मूत्रकृच्छ्रातिसारञ्च नाशयेदविकल्पतः ॥

भावार्थ—पारद ४ तो० गन्धक ४तो० नीलवर्णकी कज्जलीकर रसपर्पटी की तरह पर्पटी बनावे। फिर सुवर्णभस्म १ तोला, लोहभस्म, ८ तो० ताम्र ८ तो०। इसकी जगह रजतभस्म डाले तो वमन होनेका भय नहीं रहता। अभ्रकभस्म ८ तो०, वङ्गभस्म २ तो०, प्रवालभस्म २ तो०, मातोभस्म १ तो०, शंखभस्म १ तो०, सीपभस्म १ तो० इन सबको कज्जलीके साथ घोटकर मोतीकी सीपमे बन्दकर ३-४ कपड़ मिट्टी देकर पुटपाक विधिसे स्वेदित कर रख छोड़ें। इसमेंसे १ रत्तो या २ रत्तीकी मात्रा पिप्पलीचूर्ण हींग सैन्धव नमकके साथ देनेसे वातपित, कफजन्य ८प्रकारके ज्वर, प्लीहा,यकृत, गुल्मसन्तत और सतत, त्र्याहिक, चातुर्थिक, कामला, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, अरुचि, ग्रहणी, आमदोष, कास, भयङ्करश्वास, मूत्रकृच्छ्र, अतिसार

आदिक बीमारीयोंको यह पु० विपमज्वरान्तकलोह नष्ट करता है। इसमें किसी तरहका संशय नही है।

शिलाजित्वादिलौह

शिलाजतुमधु व्यापं ताप्यं लोहरजस्तथा।
क्षीरेणलेहितस्याशु क्षयः क्षयमवाप्नुयात् ॥

भावार्थ—शु० शिलाजीत, मधु, त्रिकटु, स्वर्णमाक्षिकभस्म और लोहभस्म इन सबको समान भाग लेकर खरलमें डाल १-२ प्रहर घोटकर छोड़े। इसमें से उचित मात्रा रोगीके बलाबलको देखकर दूधके साथ सेवन करावे इससे क्षयरोगकी निवृत्ति होती है तथा पाण्डु, शोथ, अरुचि, वमन, यकृत, मांसार्बुद आदि रोग नष्ट हो जाते है। अनेक दिनों तक शीतज्वर आनेके कारण पाण्डुता आनेपर शास्त्रकारोने लोहभस्म युक्त औपधि देनेका विधान बतलाया है। जैसे त्रिफला मण्डूर, नवायसलौह, धात्रलौह, मण्डूरबटी आदि है। इस औपधिमे शिलाजीत मिला हुआ है इसलिये यह मूत्रमें रहने वाले क्षार शरीरमे जो संचित होकर अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न कर देते है, उन सबको फौरन ही निकाल देता है। शिलाजीत मूत्रल, आमदोपको पाचन करने वाला रक्तदोप नाशक शरीरमे संचित अद्भुत क्षारोको मूत्र मार्ग द्वारा श्राव करने वाली सेन्द्रिय औषधि है।

मृगाङ्करसः

रसभस्म स्वर्णभस्म पृथङ्निष्कं प्रकल्पयेत्।
शंखगन्धक मुक्तानां द्वौ-द्वौ निष्कौच चूर्णितम् ॥
मूक्तापादं वराटानां रसपादश्च टंकणम्।
वरारसेन क्राथेन मर्दयेत्प्रहरत्रयम् ॥

तग्द्रोलवं विशोष्याऽथ भाण्डलवण पूरिते ।
पचेद्याम चतुष्कश्च मृगाङ्कोऽयम रसोत्तमः ॥
राजरोगनिवृत्यर्थं चतुर्गुजामितं बुधैः ।

रसयोगसा०

भावार्थ विधि – पारद भस्म १ तोला, स्वर्ण भस्म १तोला, शंख भस्म २ तोला, मोती भस्म, २ तोला, गन्धक २ तोला, कौड़ी भस्म ½ तोला, भर्जित टंकण ¼ तोला, सबको खरलमें डालकर कज्जली बना त्रिफला स्वरस या क्वाथमे तीन पहर तक मर्दन करके गोला बनावे और इसको शराव सम्पुटमें रखकर कपड मिट्टी ३-४ लगा देवे। सूखनेपर लवण यन्त्रमें रखकर चार पहरकी मन्द अग्नि देवे। स्वाग-शीतल होनेपर शराबमेंसे निकालकर रख छोड़े। मात्रा १-रत्तीसे ४ रत्ती तक घृतके अनुपानसे देनेसे राजयक्ष्मा रोगको नष्ट करता है।

उपयोग--यह मृगाङ्क रस नाना प्रकारके उपद्रव सहित क्षय ज्वर, गुल्म, विद्रधि, मन्दाग्नि, स्वरभेद, कास, अरुचि, मूर्च्छा, भ्रम, कामला आदि रोगोंको सत्वर ही नष्ट करता है। तथा क्षय जनित बाधाओंको दूर करके मस्तिष्कमे शान्ति लाता है। इसके सेवनसे निद्रा भी अच्छी आती है। मानसिक घबराहट भी दूर होती है। शरीरमें शक्ति बढ़ती है, इस तरह यह रसायन शीघ्र ही मनुष्यको आरोग्यकर देता है। इसके सेवनके समय पौष्टिक पादार्थ घृत, दूध मलाईका सेवन अधिक मात्रामें करना चाहिये, और विदाही पदार्थोंका तथा स्त्रीका त्यागकर देना चाहिये।

प्लीहान्तक चूर्ण

शु० नोसादर ८ तोला, काला नमक १ तोला, सोना गेरू १ तो०, को मिलाकर चूर्णकर लेव।

मात्रा उपयोग ४ से ८ रत्ती तक दिनमे २ बार ठन्डे जलसे सेवन करावे। इसके सेवनसे यकृत, प्लीहा, उदर रोग, शोथ, मूत्र-दोष आदि बिमारियाँ तथा कालाज्वर जल्दी ही ठीक हो जाता है।

प्लीहान्तक क्वाथ

शरपुंखा १ तोला, हरीतकी छाल १ तोला, गिलोय १ तोला, वासक छाल १ तोला, चिरायता १ तोला, तृणपञ्चमूल १ तोला, कुटकी १ तोला इन सबको मिलाकर कूटकर क्वाथ विधिसे क्वाथ तैयार कर लेवे, इससे प्लीहाजनित ज्वर शीघ्रही आराम होता है।

प्लीहितालपुष्पक्षारः

तालपुष्पोद्भवः क्षारः सगुडः प्लीहनाशनः

ताल जटाक्षारको गुडके साथ सेवन करनेसे प्लीहा रोग नष्ट होता है।

पिप्पली वर्धमानम्

शास्त्रमें पिप्पली वर्धमान प्रयोगकी विधिमे लिखा है कि पिप्पली प्रयोग तीन प्रकारका होता है उत्तम, मध्यम, अधम, जैसे—

दश पिप्पलिकः श्रेष्ठो मध्यमः षट् प्रकीर्तितः
यस्त्रि पिप्पलि पर्य्यन्तः प्रयोगः सोऽवरः स्मृतः ॥

परन्तु इस समयके मनुष्य बहुत कमजोर है। इसमे १० पिप्पलीकी तो बात ही क्या, ३ पिप्लीका प्रयोग भी सहन करनेकी शक्ति नही रखते है। इसलिये मैंने कालाज्वरके रोगीको १ पिप्पलीसे प्रारम्भ करके १० तक बढ़ाई थी, और १०-१० पिप्पली १० रोज तक लगातार दी, फिर २१ वें दिनसे फिर १-१ करके घटाया था। इस साधारण प्रयोगमें ही यह रुग्णा ऽ४ दूध पीती थी, फिर भी गर्मी २ बहुत पुकारती थी। इसलिये मेरी समझमे कमजोर कोमल प्रकृति वाले रोगीको शास्त्र विधिसे न देकर १-२-३ इस क्रमसे देना भी अच्छा

फायदा करता है। अगर १० पिप्पली वाला प्रयोग ही कराना हो तो १० पिप्पलीकी जगह १० दाने लेकर कराना ही उत्तम है; या गुड़ पिप्पली ही देवे तो इसके सेवनसे भी बहुत-से रोगी आरोग्य होते हैं।

रक्ताभिषरण क्रिया तथा आधुनिक परीक्षा विधि।

रक्त किसे कहते हैं

सखल्वाप्यो रसः भुक्त मार्गस्थैःस्रोतोभिराकृष्यमाणः यकृत्प्लीहानौ प्राप्य रागमुपैति। रक्तसंज्ञां चान्तरं लभते।

प्रत्यक्ष शारीरम्

भवति चात्र

रञ्जितास्तेजसात्वापः शरीरस्थेन देहिनाम्।
अव्यापन्ना प्रसन्नेन रक्त मित्यभिधीयते ॥

मनुष्य जब भोज्य, पेय, चोस्य, लेह्य, आहारोंको खाता है, तब उससे बना हुआ रस यकृत् प्लीहामें पहुंचकर रक्त बन जाता है। इसी रक्तके द्वारा सम्पूर्ण शरीरकी पुष्टि होती है। यह रक्त शिरसे लेकर पैरके नख-तक छोटे बड़े सर्व अङ्गोंमें दौडता रहता है। जिस स्थानमे इसकी गमनक्रियाका संचार नहीं होता है वह स्थान निर्बल या संज्ञा हीन मृतः प्राय होजाता है। इसलिये इसको जीवनाधार मानते हैं। जैसा प्रत्यक्ष शारीरमें भी लीखा है।

रक्तंनाम—सकलधातु प्रीणनः सारशरीरस्य रसएव रञ्ज-कारव्येन पित्तेन विपरणमितः तस्यच संग्रह प्ररणास्थानं हृदयं तद्धि हृदयादेव धमनीरनुप्रविश्य कृत्स्नं शरीर मह अहस्त-र्पयति धारयति जीवयति यापयचित मलिनी भूतश्च ततू शिराभिभि प्रविशति हृदयमेव पुनः शुध्यर्थं फुफ्फुस गमनाय।

रक्त शरीरमे रातदिन अनवरत गतिसे घूमता रहता है। इसकी संचालन क्रिया जिसदिन बच्चा होतेही भूमिपर आकर प्रथम श्वांस लेता है तवसे अन्तिम श्वांसतक चालू रहती है। श्वासके साथ ही हृदयगत मांसपेशिया भी सकुचित होने लगती है। जिससे फेफड़े अपना श्वास प्रवासका कार्यचालू करने लग जाते है और हृदय अपना पम्पिङ्गका काम चालूकर देता है। मातासे पृथक् होतेही हृदय बालकको स्वतन्त्र जीवन देना प्रारम्भ करता है जो मृत्यु पर्यन्त रहता है। इसी तरह हृदय भी रक्तको फेकते समय संकुचित होता है और ग्रहण करते समय विकसित होता है। इस तरह संकोच और विकासके समय जो तरङ्ग धमनियोंमे स्पन्दनके रूपमे होती है उसीके द्वारा वैद्य लोग वात, पित्त, कफादि दोपोकी पहिचान करते है। जैसे नाडीपरीक्षामे लिखा है कि धमनी जीव साक्षिणी तच्चेष्टया दुःखं सुखं ज्ञेयं कायस्य पण्डितैः। पुराने अनुभवी वैद्य केवल धमनी परीक्षासे ही रोगका निदान कर लेते थे। ऐसी किम्वदन्ति चली आती है। डाक्टर लोग दोपकी गतिको नहीं पहिचानते है। उनके यहा सिर्फ गणनाही कीजाती है। उनके मतसे युवा और स्वस्थ पुरुपका स्पन्दन १ मिनटमे ७५-से-८० तक होता है। बच्चोंमे अधिक होता है रोगहोनेके कारण गति और संख्यामे फर्क आ जाता है। मूलस्थूल रूपसे एक ही महा धमनी सम्पूर्ण शरीरमे फैली हुई है। जिस प्रकार एकही वृक्षकी जड़, शाखा, प्रशाखा, पत्ते आदि भेद है, उसी तरह इस धमनीके भी कितने ही रूप होते है। इन धमनियों द्वारा ही रक्त सम्पूर्ण शरीरको शोधन करता हुआ तथा शरीरके सम्पूर्ण भागोमें चक्कर करता हुआ जहा जहा जिस अवयवोको खुराक पहुचाता है वहांसे उनके मलोंको अपनेमे मिलाता हुआ शरीरसे वाहर निकालने वाले अवयवोमे पहुचा देता है वहासे यह मल रूप नाना रकमका होकर वाहर आता है। जैसे त्वचासे पसीनेके रूपमे प्रश्वाससे दूषित वायुके रूपमें, वृक्कसे मूत्रके रूपमें वाहर निकल जाता

है। इसी प्रकारसे यह रक्त हमारे शरीरकी शुद्धि भी करता रहता है। इसके अलावा रक्तका काम शरीरमें उष्णता देनेका है। यदि किसी कारणवश रक्तकी गति रुक जाती है तो शरीर ठन्डा पड़ जाता है। विशेषतः बृद्धावस्थामें या तीव्र रोगके कारण रक्त संचार मन्द पड जाता है तव पांव और हाथोकी अङ्गुलियोंके अग्र भागमें शून्यता या ठन्डापन हो जाता है यह अवस्था तीव्ररोगाक्रान्त रोगीके लिये भयप्रद मानी जाती है।

रक्तकी रचना—जब कभी कटनेसे जो रक्त निकलता है, तो वह जलकी तरह पतला होता। परन्तु वाहरकी हवा लगनेसे जल्दी ही जम जाता है। जमनेके वाद इसमें दो भाग दिखलाई देते हैं। एक गाढ़ा दूसरा जलरूप, इस जमे हुये भागको ही अणुवीक्षण यन्त्रकी सहायतासे देखनेपर इसमे वहुतसी वस्तुयें दिखलाई देती हैं जैसे कुछ तन्तु कुछ जाल विछा हुआ तथा इसमे लम्वे लम्वे कणसे कुछ लाल रंगके, कुछ श्वेत रंगके होते है। इन कणोंको 'रक्ताणु" श्वेताणु" कहते है। रक्ताणु शरीरकी पुष्टि करते है। श्वेताणु शोधन। श्वेताणुओंके द्वाराही शरीरको हानि पहुंचाने वाले पदार्थ इसमें घुलकर बहते २ मल निस्सारक अवयवोंके द्वारा वाहर निकाले जाते है। स्वस्थ शरीरमे रक्ताणुओंकी संख्या श्वेताणुओंसे अधिक रहती है। इनका आकार गोल तथा दोनों तरफसे पिचका रहता है। श्वेताणु रंगमे श्वेत रक्ताणुओंसे बड़े होते है।

रोग होनेपर इनकी संख्यामें परिवर्तन होजाता है। श्वेताणुओं की वृद्धि होनेपर शरीर पीला रक्तहीन दिखलाई देता है। जैसा कि मैलेरिया या काला आजार रोगमें। इनके अलावा रक्तमे कई प्रकारके नमक (साल्ट) भी पाये जाते हैं जैसे चूना, मगनेसिया सोडा आदि इस लिये रक्तमे नमकका स्वाद रहता है इसकी प्रतिक्रिया भी क्षारीय होती है। इन रक्ताणुओंमें एक वस्तु और रहती है जिसको थ्रोबोजिन

कहते है यह नहीं कहा जासक्ता कि पहिले सेही वहाँ उपस्थित रहती है या प्रवाहके समय थ्रोंबिन निकलती है। उसी समय रक्त कणों और कटे हुये भागसे एक दूसरी वस्तु निकलती है। जिसको थ्रोंबो-काइनेज कहते है।

इन दोनोके मिलनेसे थ्रोंबिन बन जाती है। रक्तमे एक वस्तु और होती है जिसका फाईब्रिजन कहते है। याने जब कैलशि-यम लवनोंकी उपस्थितिमे थ्रोबिन और फाइब्रिजन दोनो मिलते है। तो फाइब्रिन बन जाता है। यह फाइब्रिन और रक्तकण मिलकर रक्तका जमा हुआ भाग बना देते है। इस तरह रक्त जमकर कटे हुए स्थानका मुंह बन्द कर देता है, जिससे रक्त बहना बन्द हो जाता है।

शरीरमे जो रोगको पैदा करने वाले जीवाणु पहुंचते है, वे केवल रोगको ही पैदा नही करते है किन्तु कुछ विप भी पैदा करते है। रक्त इन विपोंका भी नाश करता है। इनको नष्ट करनेके लिये रक्त ही एक ऐसी वस्तु बनाता है, जो विपोंके बिल्कुल प्रतिकूल होती है। जैसे--शास्त्रोंमे लिखा है कि "विपस्य विपमौपधम" के अनुसार रक्त उन विपोको विषके द्वारा ही नाशकर देता है। आजकलके विज्ञाना-चार्य बहुत-से रोगोंकी इन्जेक्सनके द्वारा जो चिकित्सा करते है, उनका भी यही सिद्धान्त है। यदि हमारे शरीरके हरेक अवयवकी सूक्ष्म-दर्शक यन्त्र द्वारा परीक्षाकी जावे तो हरेक अङ्गमे बहुतसे रोगोंत्पा-दक जीवाणु पाये जायेंगे। हमारे चर्मपर ८० प्रकारके जीवाणु पाये जाते है। ऐसी ही गलेमे कमसे-कम ६ प्रकारके जीवाणु मिलते है। यदि यन्त्र द्वारा फुफ्फुस और गलेमे से निकले हुये मलकी परीक्षाकी जाय तो हममेंसे बहुतोके शरीरमें जिनका स्वास्थ्य अत्युत्तम है और सर्व तरहसे रोगमुक्त है; राजयक्ष्माके कीटाणु मिलेगें। यह रोगो-त्पादक जीवाणु सर्वत्र विद्यमान है। फिर भी न जाने क्या कारण है कि हम इतने भयंकर जीवाणुओंके बीचमे रहते हुये भी इन सबसे

बचे रहते है, और अपना स्वास्थ्य ठीक रख सकते है। इसका क्या कारण है जो दो मनुष्य समान अवस्थामें रहते है, एक रोग ग्रस्त हो जाता और दूसरा स्वस्थ बना रहता है। इसका उत्तर यही है, एक मनुष्यके शरीरमें दूसरेकी अपेक्षा रोगक्षमता शक्ति अधिक है, जिससे रोगोत्पन्न करने वाले जीवोंका विनाश कर सकती है। यह साधारण अनुभव है कि एक मनुष्यको मन्थर ज्वर टाइफाइडका एक वार आक्रमण हो चुका है. उसको सहज ही में दुवारा आक्रमण नहीं होगा। यदि होता है भी तो बहुत हल्का। सम्भव है इस सिद्धान्तके विरुद्ध आज-कल बहुत से उदाहरण मिलते है। लेकिन् साधारण तया यही देखा जाता है कि इस रोगका एक आक्रमण मनुष्यको फिरसे रागग्रस्त नहीं होने देता। जब शीतला का टीका लगाते है तो उससे भो यही होता है। टीकेसे रोगका आक्रमण नही होता, अगर होता भी है तो हल्कासा हो होतो है। टीकेद्वारा शरीरमें एक ऐसा प्रति विप पैदा हो जाता है जो रोग उत्पन्न करने वाले जीवाणुओंको अपना काम नही करने देता अथवा उनको नष्ट करदेता है। जीवाणुओंसे उत्पन्न होनेवले जितने भी रोग है उनके सम्बन्धमें यहो सत्य है। उनके लिये जो नाना तरहके इन्जे-क्सन दिये जाते है, उन सबका प्रयोजन शरीरमें रोगक्षमता स्थापित करना होता है। प्रत्येक रोगको निवारण करनेके लिये विशेप वस्तुएं होती है जो उसी रोगको निवारण कर सकती है।

जो शरीरको रोगसे मुक्त रक्खे ऐसी वस्तुओंको बनाना और शरीरमें क्षमता उत्पन्न करना यह सब काम रक्त हीका है। प्रायः देखा जाता है कि रक्त कैसे २ विचित्र साधनो द्वारा शरीरकी रक्षा करता है। किसी भो अङ्गमें कुछ विकार होनेसे तुरन्त ही अपनी सेनाको प्रतिरोधके लिये दौड़ा देता है। तृणके ढ़ेरमें से सूईका ढूंढ निकालना सहज है लेकिन शरीरमे किस स्थानपर रोगोत्पादक

जीवाणुने प्रवेश किया है, यह जानना बहुत कठीन है। किन्तु रक्तके लिये यह एक साधारण-सी बात है। उसको ऐसी खोज करनेमें कुछ भी परिश्रम नहीं होता, क्योंकि यह प्रकृति का सदासे नियम चला आता है कि वह अपनी बनाई हुई वस्तुओंकी अपने आपसे रक्षा करती है। अपनी वस्तुका नाश उससे नहीं देखा जाता। मानव शरीरकी रचनाके समय प्रकृतिको कितना कष्ट उठाना पडा। बादमें उसकी रक्षाके लिये प्रकृतको ही कितना चातुर्य्य दिखलाना पड़ा जिससे आश्चर्य होता है। प्रकृतिने इस अद्भुत, असीम अगाध यन्त्रको बड़े परिश्रमके साथ बनाया है। असंख्य प्रयोगके पश्चात यह यन्त्र बन सका है। इन प्रयोगोंकी कथा बड़ी लम्बी-चौडी है। बुद्धिमानोंको चाहिये कि वे इसके विषयमें अगर पूरा ज्ञान चाहते हो तो आयुर्वेद शास्त्रको पढ़नेका प्रयत्न करें।

कीटाणु दर्शन-रक्तमें कालाजारके कीटाणु प्राय: एक कयाणुके भीतर या कहीं पर वह्लाकारियोंके भीतर रहते है। परन्तु इस रोगमे श्वेत कायाणुओं की संख्या कम होनेके कारण रक्तमें उनका दर्शन होना कठिन होता है। परन्तु यही निम्नलिखित पद्धतियोंसे रक्त परीक्षा की जावे तो उनके मिलनेकी सम्भावना होती है।

(१) प्रोद्दीपक पद्धति—उपवृक्ककी या मिट्टी अजतिरमीका इन्जेक्सन लगाकर पश्चात रक्त परीक्षा करना। इससे प्लीहामें इकट्ठे हुए कालाजारके कीटाणु श्वेत कायाणु युक्त परिभ्रमणकारी रक्तमे अधिक संख्यामें आ जाते हैं।

(२) विशिष्ट प्रलेप पद्धति—काचकी पटरीके बीचमें रक्तका गाढ़ा प्रलेप करना या पटरीपर प्रलेप बनाते समय रक्तको फैलाने वाली पटरी रक्त फैलाते समय अवशिष्ट रक्तको एकाएक ऊपरको उठाकर अन्तमें सीधी रेखामें करना। गाढ़े प्रलेपमें या अन्तिम लकीरमें

श्वेताणु अधिक संख्यामे उपस्थित रहते है। अत. वहापर देखनेसे प्राय कालाजारके कीटाणु कायाणुके भीतर या वह्ववगरियोकी भीतर कहीपर बाहर दिखलाई देते है।

(३) केन्द्रापसारण—इसमे रोगीके भीतर इन्जेक्सन द्वारा रक्त-५ शी० थीक अन्दाज निकालकर उसके साथ थोड़ा लाके (Loeke)का घोल (सोडियम क्लोराइड ६ धा० पो० क्लोराइड $\frac{1}{2४}$ धान्य क्लोराड $\frac{1}{२४}$ धा० सोडियम साइट्रेट १० धा० जल १००० शि० में मिलाकर वह रक्तकेन्द्रापसरित्र नामक यन्त्रमें ७५० प्रति मिनटकी गतिसे कुछ देरतक घुमाया जाता है। उसके पीछे तलछटको पटरीपर फैलाकर लीशमनमें रङ्गकर देखा जाता है।

(४) ज्वरके समयही रक्त परीक्षाके लिये लेना चाहिये।

(५) इस रोगसें प्लीहारसमे कीटाणुओंकी भरमार रहती है। अतः प्लीहासे वेधनके द्वारा प्लीहारस निकालकर उसका परीक्षण करनेसे निदान बहुत आशानीमे विश्वसनीय होता है। लेकिन इस क्रियाको कुशल चिकित्सक हो करे। और आतुरालयमें ही करे। यदि रोगीका रक्तक्षय अधिकहो गया हो रक्तश्राव होताहो शरीरसे शोथहो प्लीहा पांसुलियोंके बाहर न निकली हो ऐसे रोगीको प्लीहा वेधनही करे, वेधनकर्मके पूर्व तथा पश्चात् रोगीको (केल्शियम लेक्टेड) खिलाना चाहिये वेधन कर्मके पूर्व ३ घन्टेतक रोगीको कुछभी खानेको नहीं देना चाहिये।

वेधन विधि—

रोगीको पीठके बल विस्तरेपर आरामसे लिटाकर उसके दोनों हाथ शिरके नीचे रखे। दाहिनो तरफ कम्पोण्डरको खड़ाकरे ओर कहेकी

१ हाथ प्लीहाके नीचे रखो और एक ऊपर रखकर प्लीहाको स्थिर करो चिकित्सक खुद वाँई तरफ वैठे और ध्यान रोगीकी तरफ रक्खे। वेधनके लिये अन्तिम पसलीके किनारेके नीचे १ इञ्च प्लीहाकी चौडाईका मध्य स्थान उचित रहता है। फिर मजबूत पिचकारी और सुई लेकर विशोधितस्थानमें ऊपर नीचे पार्श्वभागमें प्रविष्ट कर फिर पिचकारीके पिष्टनको २-३ वार ऊपरको खींचकर सूई तुरन्त हटादो। और पिचकारीमें आये हुये प्लीहा रसको काचकी २-३ पटरियोंपर प्रत्येक करके जीम्स या लीशमनके रङ्गसे रंजित करके देखो। डरपोक रोगियोंका वेधन पूर्व उस स्थानको सुन्नकरना उचित है। बच्चोंके वेधनके समय उनको वेहोश करना उत्तम है। वेधन क्रिया करनेके पश्चात स्थानपर कोलोडियन लगाकर या उदुम्बरसारका फोहा लगाकर पट्टीकसकर बाँध देवे। और २-३ घन्टेतक विस्तरेपर सुलाया रखे। तथा नाडीकी भी पूरी सम्हाल रखे प्रायः वेधनके पश्चात भीतरी रक्त श्रावका बडा भारी डर रहता है। नाड़ी परीक्षणसे इसका पता लग जाता है। वेधनके पश्चात तथा पूर्व २-३ घन्टे तक खानेको भी नही देना चाहिये। इसी तरह यकृतसे भी रस निकालकर परीक्षाकी जाती है। इसमें रक्तश्रावका डर बहुत कम रहता है वेधनके १-२ घण्टा वादही रोगी चलने-फिरने लायक हो जाता है। इसलिये अभ्यन्तरीय अङ्गगत जीवाणु देखनेकी आवश्यकता होतो प्लीहा वेधकी अपेक्षा यकृत वेधकरना अधिक उचित है। सिर्फ दोष यही है कि प्लीहाकी अपेक्षा यकृत रसमें कीटाणु कम संख्यामें मिलते है। वैसे लसिकाग्रन्थीमेंसे और अस्थिमज्जारससे रस निकालकर अथवा त्वचासे रक्त निकालकर भी की जाती है। वैसे इसके सम्मान लक्षण, वाले और भी कितनेक रोग हैं, इसलिये निदानके समय ध्यान पूर्वक कालाजारको पृथक कर लेना चाहिये कुछ रोगोंके लक्षण दिये भी जाते है।

लाक्षणिक तुलनात्मक कोष्ठ

काला जार	विषम ज्वर	मन्थर ज्वर
(१) प्रारम्भ में जिह्वा। २-३ सप्ताह तक मैली बादमें साफ	जिह्वा साफ नही होती	जिह्वा साफ नही होती।
(२) नासासे रक्त श्राव होता है भूख बहुत लगती है।	जिह्वासाफनहीं होती तथाभूखकमलगतीहै हल्लासवमनेच्छामुख में कडवापन रहता है।	रक्तश्राव होता है खाने में अरुचि।
(३) मलोत्सर्ग होता है	प्रायः मलावरोध या अतिसार	प्रारम्भमेमलावरोध दूसरे सप्ताहमें अतिसार आध्मान रक्त श्राव।
(४) कामला धीरे धीरे बढ़ता जाता है	किसी किसी को होता है	प्रायः नहीं होता
(५) ज्वर प्रायः अर्ध विसर्गीदोवार तीनवार रोज चढ़ता उतरता है चार सप्ताहसे अधिक अवधि	तीसरे चोथे दिन या प्रतिदिन आनेवाला विसर्गी या अर्ध विसर्गी	धीरे धीरे बढ़ता है सतत चार सप्ताहमें उतरता है
(६) प्लीहा उत्तरोत्तर धीरे २ कहीं पीडायुक्त कम, कठिन।	जल्दी बढ़ती है ज्वर आनेपर घट जाती है और कठिन होती है	बहुत थोडी बढ़तीहै मृदु
(७) स्थिति रोगावधिकी दृष्टिसेअच्छीस्वाभाविक लक्षण प्रलापादिकों का अभाव	घातकहोनेपर प्रलापादि उपद्रव या वेहोशी।	रोगावधिकी दृष्टि से अधिक खराब निद्रा नाश, प्रलापादि वातिक लक्षण
(८) चेहरा शोथ युक्त पाण्डुवर्ण	सूखा हुआ रक्तवर्ण	सुस्ती
(९) मूत्र स्वाभाविक	गहरे रंगका	अल्पमात्रामें लाल रङ्गका मटियाला।

डाक्टरीमें इस रोगके लिये निम्न लिखित औषधि देते है। (युरिया स्टिवमिल एन्टीमनीन टारट्रेट का इञ्जेक्सन दिया जाता है।

ग्रन्थिकज्वर (प्लेग) महामारी

यह एक भयानक संक्रामक रोग है। जिस समय इसका प्रकोप होता है तब गांवके गांव जिलेके जिले इससे खाली होजाते है। आयुर्वेदमें इसका विशेष विवरण नही मिलता है सिर्फ अग्निरोहिणीके नामसे ही विवेचन किया जाता है। यहा पर शंका होती है कि इतना बड़ा भारी सर्व चिकित्सा शास्त्रोंका आदि अथर्ववेदका उपवेद आयुर्वेद शास्त्र है फिर भी उसमे प्लेग जैसी महामारीका वर्णन विशद रूपसे क्यों नहीं मिलता है। उत्तरमें यही निवेदन है कि चरक सुश्रुतादि संहिताओंके निर्म्माण कालमें ऐसे पाप जनित रोग पैदा ही नहीं होते थे उस समयकी जनता पापादि १० निषिद्ध कर्मोंसे दूर रहती थी। इसलिये ही ऐसे रोग पैदा हीं नहीं होते थे। अगर होते भी थे तो हरेक घरमें हरेक नगरमें हरेक मन्दिरमे गंगादि पवित्र स्थानोमें यज्ञानुष्ठानादि होते ही रहते थे। इसलिये जब कभी भी इन रोगोंके उत्पन्नहोनेका समय उत्पन्न होता था तबही शान्ती हो जाती थी जैसे सुश्रुत सहितामें भी लिखा है।

कदाचिद् व्यापन्ने ष्वपि ऋतुपु कृत्याभि शापरक्षः क्रोधाधर्मैरुप ध्वंसन्ते जनपदाः, विपौपधि पुष्पगन्धेन वायुना उपनीतेन आक्रम्यते यो देशः।

अतः इसको जनपदोध्वंसकारी रोगोंमें ही मानलिया। लक्षण जो अग्नि रोहिणीसे होते हैं वही इस रोगमें होते है।

तद्यथा अग्निरोहिणी लक्षण

कक्षा भागेषु ये स्फोटाः जायन्ते मांसदारुणाः।
अन्तर्दाह ज्वरकरा दीप्त पावक सन्निभाः॥
सप्ताहाद्वा दशाहाद्वा पक्षाद्वा घ्नन्ति मानवम्।
तामग्निरोहिणीं विद्यादसाध्यां सान्निपातकीम्॥

भावार्थ—सन्धिस्थानोंमें अत्यन्त दारुण दाह ज्वर करने वाली जलती हुई अग्निके समान जो फोड़े उत्पन्न करती है उसको अग्नि-रोहिणी रोग कहते हैं। यह सन्निपातज रोग है इसमे वायुकी अधिकता वालीकी ७ दिनकी मियाद होती है। पित्तोल्वणवालीकी १० दिवसकी अवधि होती है। कफोल्वणकी १५ दिवसकी अवधि होती है। अगर सान्निपातिक होती है तो असाध्य होती है। प्रथम तीव्र ज्वर १०४-१०५ तक होता है साथमें कम्प भी रहता है, गांठ किसी रोगीको प्रारम्भमें ही निकल आती है किसीको चौथे पांचवे रोज निकलती है। किसीको १ ही गांठ निकल कर रह जाती है, किसीको वहुतसी निकल आती है तथा इस रोगीको हाथ पैरोंमे बहुत फूटनी रहती है अति शिथिलता, तृषा, प्रलाप, उन्माद, मूर्च्छा, भ्रम, निद्रानाश, शिर पीड़ा, नेत्रोमे ललाई, अतिसार, मलावरोध, व्याकुलता, मोह, संज्ञानाश, जिह्वाकाली खरदरापन लिये धमनी शिथिल या चंचल आदि लक्षण होते है। गांठ निकलनेकी जगह शोथ कभी पहिले कभी पीछे होता है। गांठ पककर फूटनेसे रोगी वच जाता है। अथवा ३-४—७ दिनमे मर जाता है। १० दिनके बाद बहुधा आराम होता देखा गया है।

इसका होनेका सामान्य कारण यह है कि यह रोग मलिनता साथमें एक विस्तर पर बहुत आदमियों के एक साथ सोनेसे, साथमें भोजन करनेसे, गन्दे मकानमें बहुत पुरुषोके एक साथ निवास करनेसे होता है।

आधुनिक निदान—यह रोग पांच प्रकारका माना गया है। ग्रन्थिक सन्निपात ल्युबोनिक प्लेग (Bubonic plague) (२) कृमी जनित ग्रन्थिक सन्निपात सेप्टिसीमिक प्लेग (Septicimic plague) (३) फुफ्फुस खन्ड ग्रन्थिक सन्निपात (४) सेरीब्रल प्लेग Cerabral plague) (५) गेस्टो इन्टस्टाईनल प्लेग।

समान्य लक्षण

(१) ल्युबोनिक प्लेग—इस प्लेगमें कक्षा, वंक्षण, बगलमें ग्रन्थी निकलती है या ग्रन्थी लसिका ग्रन्थीमें सूजन आकर बन जाती है। आयुर्वेदमें इसको ग्रन्थिक सन्निपात कहते हैं।

(२) सेप्टिसीमक प्लेग—इस प्लेगमें रक्तके अन्दर जहर उत्पन्न हो जाता है। इससे ज्वर तीव्र होता है। आयुर्वेदमें इसको कृमिजन्य ग्रन्थिक सन्निपात कहते हैं।

(३) न्युमोनिक प्लेग—इस रोगमें फेफड़ोंमें सूजन आकर कफ-जन्य लक्षण होते हैं। इसलिये इसको आयुर्वेदमें फुफ्फुस प्रदाहक ग्रन्थिक सन्निपात कहते है।

(४) सेरेब्रल प्लेग—इस प्लेगमें तन्द्रा विशेष आती है। इस रोगमे मस्तिष्कके भीतरके आवरणमें शोथ होजाता है। अतः आयु-र्वेदमें इसमको मस्तिष्का वरण प्रदाहक ग्रन्थिक सन्निपात कहते हैं।

(५) गेस्टोइन्टेस्टाईनल प्लेग—इस रोगमे वमन विरेचन अधिक होता है। इसलिये इसको आयुर्वेदमें आन्त्रिक प्रदाहक ग्रन्थिक सन्निपात कहते है।

सम्प्राप्ति—इन पांचवोंमें ल्युबोनिक प्लेग (ग्रन्थिक सन्निपात ही महामारीके रूपमें फैलकर देशके-देशके उजाड़ देता है। सर्वप्रथम इस रोगके कारण चूहे होते है। बीमार चूहोंपर पिस्सू रहते है। वे जब मनुष्योको काटते है, तब इस रोगकी उत्पत्ति होती है। यह पिस्सू जमीनपर, गन्दे बिछोनोमें सोनेवाले पुरुषों पर विशेप आक्र-मण करते है। उन्हीके कपडोंमे छिपकर एकसे-दूसरे स्थानपर चले जाते है। इस तरह पिस्सू ही सर्व जगह इस रोगके प्रचारक हैं। न्युमोनिक प्लेग रोगग्रस्त पुरुषके संसर्ग द्वारा श्वांस मार्गसे इसके कीटाणु श्वांस नलिकामें प्रवेशकर जाते है। फिर धीरे २ अपना आधिपत्य जमाकर फेफड़ोमें रोग पैदाकर देते है। इन कीटाणओ

को डाक्टरीमें बेसलिस पेस्टिस नामसे कहते है। इस प्लेगका निर्णय रक्त परीक्षा द्वारा सुगमतासे हो सकता है। इस प्लेगका आक्रमण गरीब और धनी सबपर समान रूपसे होता है। ग्रन्थिक प्लेगमें और इसमें यही अन्तर है।

विशेष लक्षण—ग्रन्थिक ज्वरमें प्रारम्भसे ही तीव्र ज्वर ४ रोज तक रहता है। बादमें सन्धि स्थानमें सूजन आकर गांठ निकल आती है। कहीं २ पर पहिले गांठ निकलकर मन्द ज्वर कम्पादि उपद्रव हो जाते हैं तथा किसी २ को बहुतसी गांठ निकल आती है। प्रलाप, निद्रानाश, संज्ञाहीन, हाथ पैरमें फूटनी आदि आयुर्वेदोक्त समान लक्षण मिलते है।

कृमिजन्य ग्रन्थिक सन्निपात (सेप्टिसिमिक प्लेग) के लक्षण

इस रोगमें कभी २ प्रारम्भमे तीव्र ज्वर उपद्रव सहित होता है। कभी उपद्रव बादमें होते है। कहीपर न्युमोनिक प्लेगके कीटाणु गाठ को पैदा करके रक्तमें प्रवेशकर जाते है। तब लसीका ग्रन्थियाँ अधिक नही सूजती है। तथा किसी २ रोगीको २-३ दिन बाद काले २ चकत्ते सारे शरीरमें हो जाते है। उस समय ज्वर १०६ तक बढ़ जाता है। रोगीको बेचेनीयुक्त दाह प्रलाप नेत्र लाल, मूत्रमें रक्त-वर्ण आदि लक्षण हो जाते हैं। इसरोगसे आक्रान्त रोगी ५-७ दिन मे ही मृत्युको प्राप्त हो जाता हैं।

फुफ्फुस खण्ड ग्रन्थिक सन्निपात (न्युमोनिक प्लेग

इस रोगमें पहिले हाथ-पैरोमें फूटमी शिरमें दर्द, वमन, भ्रम, बेचैनी, दाहादि समान्य लक्षण प्रतीत होते है। फिर ज्वर तीव्र हो जाता है तथा खांसी श्वांस, रक्तष्ठीवन फेफड़ोंमें सूजन आदि लक्षण दिखलाई देते है। स्टेथिस्कोप द्वारा परीक्षा करनेपर न्युमो-नियांकी आवाज मिलती है। इस रोगमें ग्रन्थि पैदा नहीं होती। किसी २ रोगीके छातीपर सूजन दिखाई देता है। यह रोग अत्यन्त असाध्य होता है।

मस्तिकावरण प्रदाहिक ग्रन्थिक सन्निपात (सेरीब्रल प्लेग)

इस रोगमें ज्वर किसी रोगीको प्रारम्भसे ही १०२ तक बढ़कर मस्तिकावरणमें सूजन पैदाकरके तन्द्रा कर देता है जिससे रोगी बेहोशकी मॉफिक पड़ा रहता है। आंखोको रोशनी बर्दास्त नहीं होती है। प्रायः अभिन्यास ज्वरके लक्षण हो जाते है।

आन्त्रिक प्रदाह ग्रन्थिक सन्निपात (गेस्टोइन्टस्टाईनल प्लेग)

इस रोगमें प्रथम ज्वर होता है। फिर पेटमें जलन सहित दर्द होकर वमन, अतिसार, रक्तातिसार हो जाता है। प्यास अधिक लगती है। यह रोग भी असाध्य माना गया है। किसी-किसीको लाल मसूरीकाकी तरह फुंसिया भी निकल आती है।

साध्यासाध्य लक्षण गाठ निकलकर जल्दी ही बैठ जाय या पककर फूट जाय, ज्वरका वेग मन्द पड़ जावे, और भोजनमें रूचि उत्पन्न हो जावे, दस्त बँधा हुआ आने लगे, चेहरेकी कान्ति सुन्दर दिखाई देने लगे तथा १० दिन तक रोगी जीवित रह जावे तो, रोग साध्य समझा जाता है। अन्यथा ज्वर तीव्र रहे, कमजोरी दिन-पर दिन बढ़ती नजर आवे। गाठ पके नहीं, बेहोशी बढ जावे, पेशाब बन्द हो जावे। रक्तश्राव हो तो रोग असाध्य माना जाता है। अन्यत् ज्ञानेन्द्रियशक्ति नष्ट हो जावे या अतिसार हो जावे, तथा रक्त मिश्रित कफ आवे, श्वासका वेग बढ़ जावे तो रोग असाध्य मान।

प्लेगसे बचनेका उपाय—जिस समय चूहे मरने लगे उस समय उस स्थानको छोड़ देना चाहिये, और सर्व जगह चूना बिछा देना चाहिये। यदि सम्भव हो तो मकानमें हवन करादेना चाहिये। इससे घरकी गांवकी दूषित वायु शुद्ध हो जाती है।

जैसे-सुश्रुत संहितामें भी लिखा है। तत्र स्थानपरित्याग शान्तिकर्म प्रायश्चित मंगल जप होमोपहारेज्याञ्जलि

नमस्कार तपो नियमदया दान दीक्षा भ्युपगम देवता ब्राह्मण गुरुपरैर्भवितव्य मेवं साधु भवति।

अन्य उपाय

सरसोंका तेलका शरीर पर मालिश करके नीमके पते डालकर गरम किये हुए जलसे स्नान करना चाहिये, कपडोंमे धूपका धुवाँ देना चाहिये कपूरको हर समय साथ में रखना चाहिये। स्वच्छ विछोनेदार ऊँचे पलंगपर हवादार मकानके मजिल पर सोना चाहिये। रोगीको देख कर या मरे हुये चूहोंको देखकर घबराना नही चाहिये। घबराहटसे मानसिक प्लेग भी हो जाता है डाक्टरीमें इस रोगसे वचनेके लिये ऐन्टी प्लेगवेन्क्सीनका इञ्जेक्सन लगाते है। इसके लगानेमें रोगीके अन्दर कृत्रिम निरोधक शक्ति आ जाती है। डाक्टर लोग कार्बोलिक एसिडको विशेष उपयोगमें लेते है, उनका यह भी कथन है कि अगर चूहा घरमे मर जाय तो उसको किरासन तेलसे भिगोकर जला देना चाहिये।

चिकित्सा—इस रोगसे पीड़ित रोगीको स्वच्छ मकानमें रखकर ही जैसी हालत हो उसके अनुसारही चिकित्सा करनी चाहिये। आयुर्वेद में इसरोगमे निम्नलिखित औषधियाँ फायदा करती है अभयादिकाथ, द्वात्रिशत्काथ, त्रिफलाकाथ, दशमूलकाथ, चन्डेश्वररस, कस्तूरीभैरवरस मकरध्वज, मल्लभस्म, महामृत्युञ्जयरस, कालकूटरस, संजीवनीबटी, हेमगर्भपोट्टलीरस आदि औषधियां तथा ग्रन्थि नाशक भी कितने ही योग हैं वे भी फायदा करते है। सुश्रुत मतसे इसरोगमें सोगी लगाना जोंक लगाना, तथा दाह क्रिया करना अत्यन्त हितकर है। आदिमे जैसे हरेक सन्निपातमें लंघन कराया जाता है उसी तरहसे लंघन कराना हितकर है तथा पीनेके लिये लवङ्ग श्टतशोतजल या पंचकोल या द्वात्रिशत्काथ द्वारा श्टतशोत किया हुआ जल देना चाहिये। दोष पाचन होनेपरही पथ्यमें जलवाली साबू वगैरह देने चाहिये। सर्वप्रथम ज्वरकी

तरफ तथा ग्रन्थोकी तरफ विशेष ध्यान देनेकी आवश्यकता है गाठपर लगानेके लिये कितने ही लेप लिखता हूं इनमें जो भी उचित समझें करें।

(१) ग्रन्थोदारणलेप प्रतीसारणीयक्षार ग्रन्थीहरलेप, आदि।

ग्रन्थीदारणलेप चित्रकमूलकक्षार, दन्तीमूल, थूहर आकका, पत्ता, भिलावा, कसीस. गुड़, इनको आकके दूधमें या थोहरके दूधमें पीसकर गरम करके लेप करना चाहिये।

उपयोग—इस लेपसे गलगण्ड, प्लेग तथा अन्य जहरी गाठे शीघ्र ही फूट जाती है। परन्तु यह लेप मर्म स्थान पर नहीं लगाना चाहिये।

(२) ग्रन्थोहरलेप

संखिया १ तो० कुचला १ तो० शृङ्गीविप १ तो० कबूतरकी बींठ १ तो० इन सबको पानीमे पीसकर गरम करके लेप करे तथा ऊपरसे गरम सेक देवे तो यह प्लेगकी गाठको बहुत शीघ्र ही बैठा देता है।

(३) हल्दी चूना मधूमें मिलाकर लेपकरे

(४) प्याजको कूटकर हल्दी मिलाकर गरम करके सेक करे।

(५) भिलावेका तेल लगानेसे भी फायदा होता है

(६) गन्दा बिरोजा ३ तो० मोम १ तो० संखिया ½ तो तिल तेल ६ तो की मरहम बनाकर लगानेसे गाठ बैठ जाती है

विशेष करके इसरोगमे जोंक लगानेसे सींगी लगानेसे दाह क्रिया करनेसे तथा आक दूधसे थोहर दूध लगानेसे अच्छा फायदा होता देखा गया है। रोगके समय वातावरणको शुद्ध करनेके लिये घरमे लोहबान, गुग्गुल, नीमका पत्ता, आमलासारगन्धककी धुवा देनी चाहिये।

सन् १८७५ मे मैंने राजपूतानामें बहुत भयंकर प्लेग हुआ था। उस समय कुछ इस-रोगसे ग्रसित रोगी देखे उनमेसे एक रोगी जिस औषध से मेरे सामने ठीक हुआ था उसका विवरण लिख रहा हूँ।

रोगो नाम बनारसीलाल उम्र १३ ब्राह्मण रोग प्लेग ग्राम जसरापुर

इसको अचानक सायंकाल ठण्ड लगकर ज्वर १०५ होगया माथेमें दर्द जी मिचलाता था २-३ उल्टी भी हुई हाथ पैरो में बहुत फूटनी थी, प्यास बहुत लगती थी आँखे लाल हो रही थी। उस समय वहा तथा उसके आस पासके गावोंमें प्लेगकी बीमारी चल रहा था। इसलिये निदानमें किसी तरहकी अशुविधा नहीं हुई फौरन ही पहिचान लिया गया कि इसको प्लेग हो गया है इसको निवासस्थानसे हटा कर अन्य पासके शु० स्थानमें ले गये औषधको व्यवस्था नहीं थी एतदर्थ चिड़ावासे मेरे पिताजीको बुलाया गया। वहां उन्होंने रोगीको देखा यह रोगी हमारे ही घरमें था पिताजीने निम्नलिखित दवाकी व्यवस्था की।

प्रातः सायं	म० रा०
मल्लचन्द्रोदयरस १ रत्ती	मृत्युंजयरस
दशमूलक्वाथ मधुसे	पानरस मधुमे
	पथ्यमें कुछ नहीं

ज्वरके चौथे रोज जंघाकी सन्धिमें १ गांठ निकल आई तब उसको देखकर चूना, हल्दी मधुमें मिलाकर लगाया इस दवाको हो ७ रोजतक चालू रखा गया ज्वर ऊपरमें १०३ नीचेमें १०२ तक ही बना रह गांठ बहुत बढ़ गई लेकिन पक्की नहीं एतदर्थ उन्होंने ग्रन्थीहरलेपका प्रयोग किया जिससे गाठ १० वे रोज फूट गई पीप निकलने लगा तथा ज्वर भी कम हो गया प्रलापादि उपद्रव शान्त हो गये। परन्तु उसके पासही मेरे ताउजी और रहते थे उनपर भी प्लेगका असर हो गया और वे भी बीमार हो गये उनमे भी उपरोक्त लक्षण थे परन्तु १-१ करके ५ गांठें निकली जिसमेंसे चार तो फूट गई लेकिन पाचवी गांठके निकलनेसे उनका शरीरान्त हो गया। तब पिताजी बनारसीको लेकर चिडावे आ गये और वहां भी इसको यही दवा खिलाते रहे जिससे वह एक महीने में ठीक हुआ। इसके बादमें उन्होने कितने ही रोगियोंको जिनके पास लेपकी व्यवस्था नहीं थी उनको ग्रन्थी दारणके लिये आकका दूध तथा

थोहरका दूधका ही लेप कराया खानेको ऊपरवाली औषधि दी जिससे बहुत रोगियोंको फायदा हुआ।

इसरोगमें डा० डी० गोपालुचालूकी हेमाद्रि पानक दवासे भी अच्छा फायदा होता है। ऐसा सुना गया है। यह दवा मद्रासमें मिलती है।

डाक्टरी मतसे चिकित्सा

इस रोगीको विशेप रूपसे उत्तेजित रखना चाहिये। रोगीको रूग्णवायु मण्डलसे निकालकर स्वच्छ वायुमण्डमें लेजाना चाहिये। रोगीको कार्वोलिक लोसनमें रुई भिगोकर सुंघनेको देना चाहिये रोगीको जिस मकानमे धूप अच्छी तरह से आती हो तथा हवाका निकाश हो ऐसेमे रखना चाहिये रोगीके पास भीड नहीं रहनी चाहिये। मल मूत्रको जमीनमे गडवा देना चाहिये। चिकित्सा डाक्टर लोग इस रोगसे वचनेके लिये हाफकिन्स सिरम (Halfkinsh) लगा लेते हैं। इससे बहुधा रोग नहीं होता आजकल प्लेग वेक्सिन भी लगाते है परन्तु उससे ज्वर वहुत तीव्र होता है रोग होनेपर साईलीनक १-२ वून्द दिया करते है। या कार्वोलिकएसिड् भी १-२ बूंद तक जलमे मिलाकर देते है। कोई कोई डाक्टर टिञ्चराइडीन १-२ बूद दिनमे ३-४ बार देते है। यह उपरोक्त दवाये विष नाशक हैं। इससे अतिरिक्त हृदयको उत्तेजित करनेके लिये।

टिञ्चर सिन्कोना कम्पोझिटा

एमोनिया कार्व	Ammonia Carb
टि० नक्षवमिका	Tr. Nuxvomica
टि० डिजीटेलिस	Digitelis
एड्रोनलीन	Adrenaline

का इञ्जेक्शन भी देते हैं।

युनानि चिकित्सा वनफ्सा, नीलोफर, चन्दन, कर्पूर इनको गुलाब जलमें पीसकर लेप करना चाहिये। रसोत, गिले अरमानी ममीराका

लेप करना चाहिये पथ्यमें शर्वत अनार शर्वत सेव वीहो० खट्टा नीम्बूका शर्वत भी देते हैं। अब हम आयुर्वेदीय औषधियोंके नुसखे जो इस रोगमें काम आते है उनकी निर्माण विधि लिखते हैं।

द्वात्रिंशदाख्य क्काथ

भारंगी' चिरायता, नीमछाल, नागरमोथ, कुटकी वच, सोंठ, कालीमिर्च, पोपल, वासक-फल, इन्द्रायनजड, रास्ना, अनन्तमूल, पटोल-पत्र, देवदारु, हल्दी, पाठा, अरलूकीछाल, ब्राह्मी, दारुहल्दी, गिलोय, निशोत, अतीश, पुष्करमूल, त्रायमाण, कंटकारी छोटी, बड़ी कंटकारी, इन्द्रजौ, हरड़ छाल, बहेडा छाल, आमला, कचूर इन ३२ औषधियोंको समान भाग लेकर जो कूटकरके २ तोला लेकर क्वाथ विधिसे तैयार करा-सेवन करावे।

उपयोग—इस क्वाथके सेवनसे १३ प्रकारके सन्निपात, त्रिदोषज-शूल, हिक्का, श्वास, अर्श, सन्धिवात, अरुचि, उरुस्तम्भ, अन्डवृद्धि, कंठ रोग आदि उपद्रव शान्त हो जाते है। तथा सूतिका रोगमे भी अच्छा फायदा करता है। प्राय: हमारे यहां प्रसूताको इसीसे शृत शीत किया हुआ जल पीनेको दिया जाता है।

॥ चण्डेश्वरो रसः ॥

रसंगन्ध विषं ताम्रं मर्दयेदेकयामकम्।
आर्द्रकस्य रसेनैव मर्दयेत्सप्तवारकम्॥
निर्गुण्ड्याः स्वरसे पश्चान्मर्दयेत्सप्तवारकम्।
गुञ्जार्धमार्द्रक रसैर्दत्वा हन्तिज्वरं क्षणात्॥
वातजं पित्तज श्लेष्म द्विदोषज मपिक्षणात्।
सुशीतल जल स्नाने तृष्णार्तें क्षीर भोजनम्॥
एतत्समो रसो नास्ति वैद्यानां हृदयङ्गमः।
एष चण्डेश्वरो नाम सर्व ज्वर कुलान्त कृत्॥

शु०पारा, शु० गन्धक, शु० वत्सनाभ, ताम्रभस्म, इन सर्वको मर्दन करके अदरख रसको ७ भावना देकर सम्भालुके पत्तोंके स्वरसकी ७ भावना देवें तैयार होनेपर ½ रत्ती की गोलियां बनालेवे। अनुपान अदरखका रस मधुमें। इसके सेवनसे वातज, पित्तज कफज, अथवा द्विदोषज सभी प्रकारके ज्वर शीघ्र ही नष्ट होजाते है। इसके सेवनके बाद स्नानकी इच्छा हो तो शीतल जलसे स्नान करावे। भूख लगनेपर गायका दूध पिलाव। वह चण्डेश्वर रस वैद्योंके हर समय याद रखनेकी वस्तु है ज्वर नाशक औषधियोंमें यह सर्वोत्तम योग है।

महामृत्युञ्जय रस चिकित्सा तत्त्र प्रदीपसे उद्धृत

शु० मल्ल, शु० हरताल, शु० वच्छनाग, शु० जमाल गोटा ये सवे १-१ तोला शु० हिंगुल ४ तो०, शु० कत्था ४ तो० इन सर्वको बारीक करके सत्यानाशीके स्वरस १२ घन्टे मर्दन करके ½ रत्तीकी गोली बना लेवे।

मात्रा—दिनमें ३ बार १-१ गोली अदरख रस मधूमे देवे

उपयोग - यह औषध प्लेगको दूर करनेमें अत्यन्त उपयोगी है तथा अन्य कफ प्रधान सन्निपातोमें भी अच्छा काम करता है। जहां ज्वरका वेग तीक्ष्ण हो साथमे रक्तातीसार हो वहा नहीं देना चाहिये।

मल्लभस्म

शङ्खः पूरित कुक्षिः शतमल्ल युजा दिनेश दुग्धेन।
दन्तावलि पुटसिद्धः श्वासे कासे ज्वरे प्रसिद्धोऽयम्॥

रसयोग सागर

साफ मोटे शंखमें ५ तोला संखिया पीसकर भरदे और ऊपरसे आकका दूध भर आकके पत्तोसे मुंहको ढककर मुल्तानि मिट्टीके साथ कुटी हुई रूईसे मजवूत कपड़मिट्टी करके हांडीमें रखकर गजपुटकी आंचमें जलावे। स्वांग शीतल होनेपर निकाल लेवे। इसमें ½ रत्तीसे १ रत्ती तक उचित अनुपानसे देनेसे प्लेग, श्वास, कास और शीतज्वर

नष्ट होजाता है सोमल तीक्ष्ण और उष्ण वीर्य होनेसे कफ और आमका शमन करता है पित्तकी बृद्धि करता है। तथा रक्ताभिसरण क्रियाको बढ़ाता है। शारीरिक विष पैदा करने वाले कीटाणुओंको नष्ट करके भयंकर बीमारीयोंको हरता है कफ प्रधान वात प्रधान बीमारीयोंमें प्रारम्भसे ही इसका प्रयोग किया जाय तो बीमारीके बढ़ावको रोक देता है। कफ जनित अन्तिम अवस्था के समय भी यह अपना पूर्ण प्रभाव दिखाये विगर नही रहता।

सूचना-यदि ज्वर तीव्र हो, नेत्र लाल हो, पित्त जनित अन्य भी लक्षण प्रतीत हो तो इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये। उस समय प्रयोग करनेसे रक्ताभिसरण क्रिया बढ़कर मस्तकमे रक्त चढ़ जाता है। इसके प्रयोगके समय पेशाबमें कमी मालूम दे अथवा ज्वर आ जाय तो शीघ्र ही बन्द करके फन्नल औषधि दे देना चाहिये।

कालकूट रस

रुद्रसङ्ख्यं विषं चैव त्रिभागः सूत एव च।
गन्धकः पञ्चभागः स्याच्छिला स्याद्दतु भागिका॥
ताम्र भस्म चतुर्भाग मृतु भागञ्च टंकणम्।
तालकं रसंसंख्याकं वह्निमूलं तथैवच॥
त्रिकटो द्वादशज्ञेया स्त्रिफला दश-भागिका।
हिङ्गुनश्चन्द्रभागः स्याद्वचायाश्च तथैवच॥
एवं खल्वेच संस्थाप्य आर्द्रकं वह्निमूलकम्।
जम्बीरं लशुनञ्चैव शार्ङ्गेष्टार्कस्य मूलकम्॥
लाङ्गली स्वर्णमूलञ्च सिन्धु-नागदलं तथा।
अङ्कोल शिग्रुमूलानि प्रत्येकं याम मात्रकम॥

पञ्चकोल कषायेण पञ्चमूलेन मर्दयेत् ।
गुञ्जामात्र प्रमाणेन वटकान् कारयेत्ततः ॥
वटीमेकां प्रयुञ्जीत शृंगवेराम्भसायुताम् ।
सर्वज्वर हरोयोगः सन्निपात कुलान्तकः ॥
स्नानं कुर्यात् प्रयत्नेन श्रीखण्डलेप माचरेत् ।
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं खर्जूरादि फलान्यपि ।
ताम्बूल चर्वणं कूर्यात्क्रमादेवं समाचरेत् ।
कालकूट रसोनाम महेशेन प्रकाशितः

भावार्थ—शु० वत्सनाभ १ तोला, शु० पारद ३ तोला, शु० आमलासार गन्धक ५ तोला, शु० मैनशिल ६ तोला, ताम्र भस्म ४ तोला, शु० सुहागा ६ तोला, शु० हरताल ६ तोला, चित्रकमूलछाल ६ तो० त्रिकूट १७ तोला, त्रिफला १० तोला, शु० हींग १ तोला, वच १ तो० उपरोक्त द्रव्योंमेसे कज्जली वनाकर काष्ठौषधियोंका कपड़ छानचूर्ण मिला देवे फिर अदरख रस, चित्रकमूल छालका काथ, जम्मीरीका स्वरस, लशुनस्वरस, काकजंघा स्वरस, आकमूल छाल स्वरस, कालिहरि स्वरस, धतूरमूल रस, वंगला पान स्वरस, अंकोमूलका स्वरस, सहिजनामूलका स्वरस, पञ्चकोल काथ, पञ्चमूल काथकी १-१ भावना देकर एक एक रत्तीकी गोलिया वनाकर छायामे सुखाकर रख छोड़े मात्रा १ रत्ती अदरख स्वरस मधुसे सर्व प्रकारके ज्वर विशेषकरके प्लेग रोगको तथा अन्य सन्निपातको नष्ट करनेमे अत्यन्त उपयोगी है ।

उपयोग—यह रसायन अतितीक्ष्ण और उष्णवीर्य है । इसका प्रयोग खूब सम्हलके करना चाहिये । जब रोगीकी नाड़ी लुप्त प्राय हो गई हो याने स्पर्शमें हाथको ज्ञान न हो तो हृदयावसादक लक्षण प्रतीत होते है । तथा रक्त कहींसे न निकलता हो तभी इसका प्रयोग करना

चाहिये। इसके प्रयोगके बाद नाड़ीकी गति बहुत-ही शीघ्र बढ़ जाती है। इससे रक्तका दबाव भी बढ़ जाता है। अतः यदि इसके देनेके बाद आखोंमें ललाई दिखालाई दी जावे तो फौरन बन्द कर देना चाहिये। यह कालकूट रस कफ प्रधान और वात संसर्गी सन्निपातमें दिया जाता है। इसके सेवनसे इस रोगमे बहुत ही अच्छा फायदा होता हैं। परन्तु अधिक मात्रामे उपयोग करनेसे हानिकी सम्भावना है। कफ प्रधान सन्निपातमे भी रोगीकी दोषकी अवस्था देखकर ही देना चाहिये। प्रायः अभिन्यासके जहां लक्षण दिखलाई दे वहां इसके प्रगोगसे अच्छा लाभ होता है। यह रस धनुर्वातकी भी अव्यर्थ औषधि है। इसके प्रयोगसे धनुर्वातको उत्पन्न करने वाले कीटाणुओंका नाश होता है। गर्भवती स्त्रीको कभी भी नहीं देना चाहिये।

* समाप्त *

शुद्धाशुद्ध-पत्रिका

सूत्रम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
२	६	प्रश्नेः	प्रश्नैः
,,	८	आयुवेद	आयुर्वेद
३	२	परिकीय	परकीय
४	२०	वस्तुमें	वस्तुए
६	६	श्वासनालिका	श्वास-नलिका
,,	११	गाली	गीली
७	१६	श्लेपमल	श्लेष्मल
८	११	भयादात्य	भदात्यय
१४	२५	कृष्णवाच	कृष्णवर्णश्च
१४	१५	आद्र	आर्द्र
१६	६	टम्प्रेचर	टेम्प्रेचर
१८	१३	दीघ	दीर्घ
२३	६	आवाज	आवाज
३१	१६	आतो	आंतोमें
३२	६	वाय	बांयें
३४	१	स्पश	स्पर्श
३५	४	प्रात्य	प्रेत्य
,,	५	भवीत	भवति
३६	४	सम्पूग	सम्पूर्ण
,,	६	मलिका आ	मलिका ओं
,,	१६	उत्तपादि	उत्तापादि
५६			

सूत्रम	पंक्तिः	अशुद्धम	शुद्धम
४७	१३	अध्यशपन	अध्यशन
४६	१	स्टेटिस	स्टेथिस
,,	१२	युवावस्था	युवावस्था
५६	६	अणुविक्षण	अणुवीक्षण
५७	१	नोसादार	नोसादर
७१	२२	परियाप्त	पर्याप्त
७२	१५	टाइफाइ	टाइफायड
७४	५	आणुवीक्षण	अणुवीक्षण
७७	१	मच्चीकरण	सच्चीकरण
७६	१५	वायू	वायु
,,	२१	अत्याधिक	अत्यधिक
८२	१५	जिवाणु	जीवाणु
६२	१८	ह्वास	ह्रास
६४	१	द्व	द्रव
१०१	६	प्रथक	पृथक्
१०४	६	स्तन्द्रा	स्तन्द्रा
,,	७	मदस्तम्भा	मदस्तम्भो
१०४	११	निभ्रम	निर्भ्रमं
,,	१२	स्रोत सेम्पकः	स्रोतसाम्पाक,
,	१४	शृणुः	शृणु
१०५	२१	अवाज़	आवाज
१०८	२३	विम्रंस	विभ्रंश.
११०	३	बाक्	वाक्
		विणमूष्म्	विणमूत्र
१११	२२	प्रमुच्यते	प्रमुच्यते

सूत्रम	पंक्ति	अशुद्धम्	शुद्धम्
११२	६	यश्चात्	पश्चात्
११७	१०	आग्निमान्व	अग्निमान्द्य
”	१८	एसिर्ड	एसिड
१२१	१४	वृ सैन्धवाजि	वृ० सैन्धवादि
१२५	१	षादिकम	पादिकम
”	६	मुग्रकम्	मुग्रकम
१२६	१	मा रिचेन	मरिचेन
”	२	भर्दितम	मर्दितम्
”	१८	ह्योती है	होती हैं
१२७	११	पुनर्नवाणाम्	पुनर्नवानाम्
”	१२	चूर्णिमिश्रं	चूर्णमिश्रम
”	१६	त्रिधातव्वो	विधातव्यो
१३०	१६	सिह	सिही
१३१	८	आर्द्र कस्य	आर्द्र कस्य
”	११	मदुताल	मृदुस्ताल
”	२०	वक्त्रः	वक्त्रे
१३५	१८	पाचयेत्	पाचयत्यपि
”	२०	असम्वध	असम्वद्ध
१३६	८	संषज्ञ	संज्ञः
”	७	मव्या	मन्या
”	१८	लिदयात्	लिह्यात्
१३७	२१	तृष्ठा	तृष्णा
”	२२	इतकी	इनकी
१३८	१४	व्रजक्षार	वज्रक्षार
१३९	२२	व्ययोहयेत	व्यपोहयेत्

सूत्रम्	पंक्ति	अशुद्धम्	शुद्धम्
१४१	६	धनाधनेः	महाधनः
१४१	८	रसमूर्च्छा	भ्रममूर्च्छा
,,	१०	चन्द्रकलाप्रदः	चन्द्रकलारसः
१४२	११	यादव	यादवजो
१४३	१६	सुजानागढ़	सुजानगढ
१४४	८	ब्राःह्मादि	ब्राह्मयादि
,,	१०	आयास काञ्जिक	आयाम का ञ्जिक
१४८	१३	रसाम्र	रसाभ्र
१४६	१	इहाष्य	इहाप्य
१५१	४	रम	रस
१५२	३	उपरीक्त	उपरोक्त
१५२	१७	उतका	उसका
१५३	३	तन्द्रऽतीव	तन्द्राऽतीव
१५७	१६	न्यूपोनियाँ	न्यूमोनियाँ
,,	२२	मूर्च्छो	मूर्च्छा
,,	५	वाताद्दि	वातादि
,,	१२	इन्फुल एञ्जा	इन्फ्लुएञ्जा
,,	१६	उपसग	उपसग
१५६	२६	बात बलास गेवा	बात बलासजेवा
१६०	४	वद्यराज	वैद्यराज
१६१	१	प्रशान्त्यैः	प्रशान्तये
,,	७	ददन्ति	ददति
,,	६	दिप्ति	दीप्ति
,,	१०	कुर्यान्	कुर्यात्
,,	,,	तन्द्रि	तन्द्रा

सूत्रम	पंक्तिः	अशुद्धम	शुद्धम्
१६७	४	दोगयो	दोगई
१६६	६	यज्ञविधे	यच्चविधे
७२	१	च्छावास	श्वास
,	१८	रसाध्याये	रसाध्यः
१७४	७	अग्रिमन्द	अग्निमन्द
१७४	८	लीढ्ा	लीढ्वा
१७४	१३	कर	कर
५	७	बृहगम्	बृंहणम्
१७१	११	निहान्ति	निहन्ति
१७६	१२	निहन्त्यसूल	निहन्त्यसून्
,,	१४	प्रदुस्य	प्रदूस्य
१८०	२१	रोगस्वसृड्	रोगेस्वसृड
१८३	,,	हयिङ्ग	हूपिङ्ग
१८७	१०	प्रस्करादि	पुष्करादि
१६०	५	कज्जलिकां	कज्जलिका
,,	७	सुन्हरकस्य	सुन्दरकस्य
१६१	११	कमाराणा	कुमाराणाम
१६४	४	पीडा	पीडा
१६४	४	वहन्ति	वदन्ति
१६४	३	श्रुति ह्वासा	श्रुति ह्रास
१६५	१३	पक्मा	उपक्मा
१६७	१४	वोथ	शोथ
१६६	१६	शुभ्ययार्णच	शुष्यभाणश्च
१६६	१५	अम्यज्य	अभ्यज्य
१६६	५	अभ्यङ्क	अभ्यङ्ग

पृष्ठम	पंक्तिः	अशुद्धम	शुद्धम
,,	२०	वेविचक्षण	वैद्यविचक्षण.
२००	१०	शोकयो	शाकयो
२०१	२३	ग्रधाणा	गृध्राणा
२०७	१८	शास्थीय	शास्त्रीय
२०७	२०	शुण्ठी	शुण्ठी
२०८	४	प्टीवी	ष्ठीवी
२०८	४	वंकृत	वंकृतौ
२१०	५	समग्रो	समग्रौ
,,	६	स्वासौ	श्वासा
,,	१७	लंघानादिक	लंघनादिक
२१४	२६	चृ धमनी	च्रु० धमनी
२२७	१६	औगधियां	औषधिया
२३३	१४	प्रत्यद्भत	अत्यद्भुत
२३७	१०	क्षणा	क्षणात्
२३८	५	शष्यर्थिने	शुष्यर्थिने
२३८	१३	तन्द्री	तन्द्रा
,,	२१	चूर्णि कृतं	चूर्णी कृतम्
२४०	३	गुरुत्व	गुरुत्वं
२४१	१६	कारियेन दुटिका	कारियेद् गुटिका
,,	१६	कर्पूर	कर्पूरं
२४६	२३	ज्वरति शाय	ज्वराति शाय
२५३	७	पुरण्यः	पुण्यः
२५४	५	पूर्वाक्त	पूर्वोक्त
,,	२	जीति कोषफले	जातिकोष फलं तथ।
,,	,,	तदर्धतः	तदर्धकम्

सूत्रम	पंक्ति	अशुद्धम	शुद्धम्
२५३	२०	प्रस्वप्रार्क	प्रस्वप्नार्कम्
२७०	२३	पीत	पीतं
२८०	१०	तृणपचरमूल	तृणपंचमूल
२८६	५	मगमद	मृगमद
२६१	५	स्वल्फ लवंगादि	स्वल्प लवंगादि
२६६	६	टेकण	टंकण
३०२	१०	एतदथ	एतदर्थ
३०३	१	व्यवसाय	व्यवस्था
३०४	११	नागर	नागर
३०६	२१	वीजज्ज	वीजश्च
३०६	२१	उत्तजना	उत्तेजना
३०६	४	दोषाश्च	दोषांच
३०७	२	निरियस्य	निष्पिस्य
३०७	३	धोरा	घोरान्
३०८	२१	शत्रकृतान	शत्रुकृतान
३११	४	मदितम्	मर्दितम
,,	८	ध्द्रुवम	दुग्ध वम
,,	११	नाशायत्याशु	नाशयत्याशु
३१२	६	उपामार्ग	अपामार्ग
,,	५	मद्येत्	मर्दयेत्
,,	११	ताम्वुली	ताम्बूली
३१४	१३	करोत्याग्नि	करोत्यग्नि
३१४	५	तलस्थ	तलस्थः
,,	५	भागः	भागाः
,,	६	ताम्वुली	ताम्बूली

सूत्रम्	पंक्तिः	अशुद्धम	शुद्धम
,,	१२	मेधायु कान्तिजनः	मेधायुः कान्ति जननः
३१८	२	गुञ्जो	गुञ्जा
३२०	१०	कामशोक भवस्तथा-	कामशोक भवन्तथा -
३२८	२०	बृदन्त्र	बृहदन्त्र
३२६	१२	पुनरालक	पुनरावर्त्तक
३३०	२४	षेडङ्ग	षडंग
,,	५	वृक्ष	वृक्षः
३३६	६	कुशाइयं	कुशाद्वयम
,,	,,	तर्वाविरित्युक्तः	तर्वादिरित्युक्त'
,,	१८	कमल लाल	कमल नाल
३३७	२२	नन्दाग्निरपि	मन्दाग्नेरपि
	२१	श्लीपद्	श्लीपदं
३३९	२	कुलिङ्ग	कुलिङ्ग
,,	३	रसज्ञा	रसज्ञान
,,	२२	चारिद	वारिद
३४०	,,	जड़ा	जडाम्
३४१	३	दघाद्रवेषु	दघात् द्रवेषु
३४१	१	स्यागदण्डूपः	स्याद्गण्डूपः
,,	,,	रोपणर्श्वैव	रापणाश्वेव
,,	,,	गण्डपे	गण्डूषे
३४३	४	रसस्त्राद	रसा स्वाद
,,	,,	रोपणेखंव	रोपणाश्वंव
३४३	१२	भिपग्भिः	भिषग्भिः
३४४	४	भाङ्गर्म	भ.रंग्यः

सूत्रम्	पंक्ति	अशुद्धम्	शुद्धम्
"	६	विडग	विडंग
"	८	आएवधोरिष्ट	आरग्वधोऽरिष्ट
३४५	४	कठुका	कटुका
"	१४	भाङ्गी	भार्ङ्गी
"	१५	शिद्धं	सिद्धं
"	"	मोह	मोहः
३४५	१४	भाङ्गी	भारंगी
"	"	शिध्रं	सिद्धम्
३४५	१५	बृक	वृक्क
"	१८	खिवाहट	खिचाहट
"	२४	मूर्च्छा जर्गत	मूर्च्छाऽन्तर्गत
३४६	३	मुधृत्य	मुद्धृत्य
"	२१	प्रवाध	प्रवोध
३४८	४	वमन	वमन
३५०	४	भाक्षिग्यति	माक्षिप्याऽति
"	६	बलं	बलम्
"	"	माक्षिताः	माश्रिताः
"	६	सनास	सन्यास
"	१४	पुरपो	पुरुषो
"	१६	दुवलता	दुर्वलता
"	"	वाले	वाले
		गठीया	गठिया
३५१	६	बिकसित	विकसित
"	२२	संन्यस्त सञ्ज्ञाः	संन्यस्त संज्ञः
३५२	१८	शिरीषाधञ्जञ्जनम	शिरीषाघञ्जनम्

सूत्रम्	पंक्ति	अशुद्धम	शुद्धम्
,,	१६	पवोधाय	प्रवोधाय
३५३	२	सर्वपम	सर्षपम्
,,	४	सैन्धव	सैन्धव
,,	११	मूद्ध जत्रजाः	मूर्ध्व जत्रुजाः
,,	१५	शुध्र दीनानि संज्ञाव	शुद्ध हीनाति संज्ञानि
,,	२१	स्तोतोम	स्त्रोतोमें
		चता विकार	चेतो विकार
३५५		शेठी	शुण्ठी
३५६	३	कृमी	कृमि
३५७	८	वोला	वोला
३६०		शातोपचारः	शीतोपचारः
,,	२१	धृष्टवा	धृष्टवा
३६१	८	धर्मरीक्षतं	धर्मरक्षितम
३६२	३	विस्मत	विस्मृति
,,	१	बिमर्घ	विमर्द्य
३७५	२५	बमन	वमन
,,	२६	तोरेणी	तोरोगी
३८१	२	चंतुभुज	चतुभु ज
,,	३	गोक्षर	गोक्षुर
३८१	५	कांजीक	काञ्जिक
३८२	१५	कबीराज	कविराज
३८३	११	वक्ष्ययन्त्त	वक्ष्यन्ते
,,	१६	ताद्वादश	ताः द्वादश
,,	,,	सविपाषट	सविषाःषट
३८४	१	मूछी	मूर्च्छा

सूत्रम्	पंक्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
,,	२	आसाध्य	असाध्य
३६४	१	सवर्गासि	सर्वांर्शांसि
,,	१८	सत्यकृत्वाः	सप्तकृत्वः
३६५		सप्त	सप्त
३६६	६	शाताह्वा	शाताह्वा
,,	७	शरी	शठी
३६७	१	शरारगम	शरीरगम्
३६८	१	रसयनवर	रसायन वरं
,,	१६	भार्गीं	भार्गी
	१६	इलायजी	इलायची
३६६	२	मुस्द	मुस्त
,,	७	मुदिम्	मुदितमेत
३६६	८	मनापीभिः	मनीषिभिः
४००	११	गदयहम	गदापहम
४१४	५	द्विगुञ्जा	द्विगुञ्जा
,,	६	ससैन्धनम्	ससैन्धवम
४१५	४	व्याप	व्योषं
,,	२३	मूक्ता पादं	मुक्तापादं
४१६	१	तद्गोलक	तद्गोलकं
,,	२	ऽयम	ऽयं
,,	३	निबृत्यर्थ	निबृत्यर्थं
११७	१६	श्रष्ठो	श्रेष्ठो
४१८	१२	अव्यापत्रा·	अव्यापन्नाः
,,	२१	प्ररणास्थानं	प्रेरणास्थानम
,,	२३	याषयचित्त	यापयति

सूत्रम्	पंक्तिः	अशुद्धम	शुद्धम
,,	,,	ततु	तत्तु
,,	२४	शिराभि चे प्रविशति	शिराभिरभि प्रविश्य
४२२	२५	द्ढ	दृढ़
४२३	१२	कर	करें
४२३	१४	वहाकारियों	वहाकारियों
,,	२३	कयाणु	कायाणु
४२४	२	वहृवव गरियो	गह्वगह्वरियो
४३६	२	हाती	होती
४२७	१७	क्रोधाधम	क्रोधाऽधर्मं
४३५	१५	कार्वोलिक एसिड	कार्वोलिक एसिड
४३६	२५	चण्डश्वरो	चण्डेश्वरो
४४०	६	प्रगोग	प्रयोग